М. ГОРЬКИЙ

В ЛЮДЯХ

ИЗДАТЕЛЬСТВО ЛИТЕРАТУРЫ
НА ИНОСТРАННЫХ ЯЗЫКАХ

МОСКВА

जनता के बीच

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह

अनुवादक : नरोत्तम नागर

१
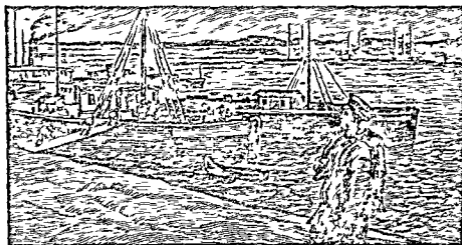
यह लीजिये, मैं अब यहा हू। नगर के बड़े बाज़ार की एक दुकान "फैन्सी जूता" स्टोर म काम सीखने के लिए मुझे एक जगह मिल गई है।

मेरा मालिक गाठ-गाभी-सा एक गोल मटोल जीव है—गोबर-पथा सा थल-पथल चेहरा जिसके आदि-अन्त का कुछ पता नही चलता, काई-जमे हरे दात और कीच-भरी पनीली आखें। मुझे लगा कि वह अधा है, और इस बात की जाच करने के लिए मैंने मुह बिचकाया।

तभी निश्चल और दृढ लहजे में उसने कहा

"तोबडा न बनाओ!"

बडी घिन मालूम हुई यह सोचकर कि अपनी कीच-भरी आखो से वह मेरी टोह ले रहा है। मुझे एकाएक विश्वास नही हुआ। हो

सकता है कि अन्दाज से ही उसने यह भाप लिया हो कि मैं मुंह चिढा रहा हूं?

"मैंने कहा न कि अपनी थूथनी को वाबू में रखो!" उसने अपने मोटे होठों को जुम्बिश तक न दी, और पहले से भी अधिक निश्चल अन्दाज में कहा।

"और तुम्हारे ये हाथ,—इन्हें तुम क्यों नोचते रहते हो?" मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो उसकी रूखी फुसफुसाहट मेरी ओर रेंगती हुई बढ रही हो।—"याद रखो, नगर के बड़े बाज़ार की बडी दुकान के तुम दरबान हो। दरवाजे पर प्रतिमा की भाति सीधे-सतर खडे रहना तुम्हारा काम है!"

अब मुझे क्या मालूम कि प्रतिमा की भाति सीधे-सतर खडे होना क्या होता है, और अपनी बाहो और हाथों को न खुजलाना भी मेरे वश की बात नहीं है। खुजली ने बुरी तरह मेरे शरीर में प्रवेश कर लिया है और मेरे हाथ, कोहनी तक, लाल चकत्तों और रिसते हुए घावो से भरे है।

मेरे हाथो को मालिक ने एक नज़र देखा, फिर पूछा:

"घर पर तुम क्या काम करते थे?"

मैंने बता दिया। मटकी ऐसी उसकी खोपड़ी हिल उठी जिस पर उसके खिचडी बाल ऐसे लगते थे मानो लेही से चिपके हुए हों।

उसने डंक सा मारा:

"क्या कहा, चिथडे बटोरते थे—यह तो भीख मागने से भी बुरा है, चोरी करने से भी बदतर!"

"जी, मैं कभी-कभी चोरी भी करता था," कुछ गर्व के साथ मैंने उसकी जानकारी बढाई।

उसने यह सुना और अपनी हथेलियों के बल आगे की ओर झुक गया—ठीक वैसे ही जैसे कि झपटने से पहले बिलाव पजो पर अपना बदन तौलता है। खोहनुमा सूनी आखो से उसने मेरी ओर ताका और फिर काउण्टर पर मे फुकार उठा

"क्या-आ-आ? क्या कहा तुमने—चोरी भी करते थे?"

मैंने उसे बता दिया कि किस चीज़ की और कैसे मैंने चोरी की थी।

"अच्छा, अच्छा, जाने दो उन बातो को। लेकिन अगर तुमने मेरे जूतो पर या मेरे पैसो पर हाथ साफ किया तो समझ लेना, पुरखे तुम्हारे नाम को रोएगे और तुम जेल में पड़े-पड़े चक्की पीसोगे।"

बड़े ही शान्त और निश्चल स्वर में उसने यह कहा। लेकिन मेरे हृदय में उसका डर बैठ गया, और म उससे और भी अधिक घृणा करने लगा।

मालिक के अलावा दुकान में दो आदमी और काम करते ह। एक तो मेरा ममेरा भाई साशा—याकोव का बेटा, और दूसरा लाल चेहरेवाला बडा बाबू, बहुत ही चलता पुर्ज़ा और चिकना-चुपडा। साशा खूब ठाठदार मालूम होता—खाकी रग का फ्राकनुमा कोट, बाकायदा कलफ-चढी कमीज़, और टाई। गर्व के मारे वह मेरी ओर देखता तक नही।

इस दिन जब नाना मुझे अपने साथ लेकर पहली बार मालिक के पास आए और साशा से उन्होंने मुझे मदद देने के लिए कहा तो साशा का बदन तन गया और भौंहे चढा कर बोला

"लेकिन एक शर्त है। जो मैं कहूँ, वही इसे करना होगा।"

नाना ने मेरे सिर पर अपना हाथ रखा और उसे आगे की ओर झुकाते हुए बोले

"सुना तुमने, जो यह कहे वही करना। यह तुम से बड़ा है—उम्र में भी, और ओहदे में भी।"

रोब के साथ साशा ने अपनी आंखों को टेरा। फिर बोला:

"नाना की सीख याद रखना, समझे!"

और उसने, पहले दिन से ही, पूरी बेरहमी से अपने बड़प्पन का रोब जताना शुरू कर दिया।

लेकिन मालिक उसे भी डाटता। एक दिन बोला·

"काशीरिन, यह आखे टेरना बन्द करो।"

"नही तो....मैं .मैं कहा.. .?" साशा का मुंह लटक गया।

मालिक आसानी से पीछा छोड़ने वाला नही था। बोला:

"और यह थूथनी लटकाना किसने सीखा है? ऐसा न हो कि ग्राहक तुम्हे बकरी समझने लगे।"

बड़े बाबू का चेहरा खुशामद से खिल गया। मालिक के मोटे होंठ भी कानो तक फैल गये और साशा, शर्म से बुरी तरह लाल हुआ, काउण्टर की ओट मे छिप गया।

मुझे इस तरह का हसी-मजाक अच्छा नही लगता था। ऐसे अजीब-अजीब शब्दों का वे प्रयोग करते कि मालूम होता, मानो किसी गैर जुबान मे बातें कर रहे हो।

जब कोई महिला दुकान मे आती तो मालिक का हाथ जेब से बाहर निकल आता, अपनी मूंछो को वह सहलाते और चेहरे पर एक मीठी मुस्कान चस्पाँ हो जाती, कपोलों पर झुर्रियो की वन्दनवार सज जाती, लेकिन उनकी खोहनुमा आंखे पहले की भाति ही भाव-शून्य बनी रहती। बड़े बाबू तन कर सीधे हो जाते, उनकी कोहनिया दोनो बाजू शरीर से सट जाती और उनके हाथ, मानो कुरबान होने के लिए फड़फडा उठते। नजर का टेरना छिपाने के

लिए मामा अपनी आंखा को मिच-मिचाने लगता और मैं, दरवाज़े से चिपका हुआ लुक छिप कर अपने हाथों को खुजलाता और ग्राहक का हृदय जीतने के उनके कौशल को देखता रहता।

पात्र में जूता पहनाने के लिए जब बड़े बाबू किसी महिला के सामने झुकते तो अपने हाथों की उंगलियों को अदबदाकर पंखे की भांति आश्चर्यजनक ढंग से फैला लेते। उनके हाथों का पोर-पोर थिरकने लगता और वह कुछ इस अन्दाज़ से पांव का स्पर्श करते मानो डरते हों कि कहीं वह टूट न जाये, हालांकि पांव बहुधा मोटा और बेडौल होता था—भुने कधों वाली उस बोतल के समान जो उलट कर गरदन के बल खड़ी कर दी गई हो।

एक बार इन्हीं महिलाओं में से एक सहसा बल खाकर दोहरी हो गई, और झटके से अपना पांव छुड़ाते हुए बोली

"हाय राम, तुम तो बुरी तरह गुदगुदाते हो।"

बड़े बाबू कब चूकने वाले थे। तुरन्त जवाब दिया

"शायद आपको गुदगुदी अच्छी लगती है।"

महिला के चारा ओर वे कुछ इस तरह मटराने कि हंसी रोकने के लिए मैं अपना मुह फेर लेता। लेकिन बड़े बाबू के तौर-तरीके कुछ इतने मज़ेदार होते थे कि मुझसे रहा न जाता और मैं मुड़-मुड़ कर देखता। और मुझे लगता कि लाख कोशिश करने पर भी मैं अपनी उंगलियां को इतनी नज़ाकत के साथ कभी नहीं फैला सकूंगा, न ही दूसरे लोगों के पांवों में जूते पहनाने की कला में कभी इतनी दक्षता प्राप्त कर सकूंगा।

दुकान के पिछले भाग में एक छोटा सा कमरा था। मालिक बहुधा इस कमरे में चले जाते और मामा को भी वहीं बुला लेते। जब दुकान में बड़े बाबू होते और जूता खरीदने के लिए आई महिला। मुझे याद है कि एक बार सुनहरे बालों वाली किसी स्त्री

का पाव सहलाते-सहलाते उसने अपनी उगलिया मिलाई और होठों से सटा कर उन्हे चूम लिया।

"ओह, बड़े शैतान हो तुम!" स्त्री खिलखिला उठी।

बड़े बाबू ने चटकारा लेते हुए अपने होठो पर जीभ फेरी और आह-ऊह के सिवा उसके मुह से और कुछ न निकला।

बड़े बाबू की मुद्रा देखते ही बनती थी। मुझे इतनी जोरो से हसी छूटी कि मेरे पाव डगमगा गए। सभलने के लिए मैंने दरवाजे का लट्टू पकड़ा। वह मेरा बोझ क्या सभालता। झटके से दरवाजा खुला और मेरा सिर कांच से जा टकराया। कांच टूटकर जमीन पर आ गिरा। बड़े बाबू ने यह देखा तो गुस्से से सब हाथ-पाव पटके, मालिक ने सोने की भारी अगूठी से मेरे सिर में प्रहार किया। साशा ने भी मेरे कान ऐंठने की कोशिश की और घर लौटते समय मुझे डांटते हुए कड़े स्वर में बोला:

"अगर इसी तरह की हरकतें करते रहे तो निकाल दिये जाओगे! आखिर इतना हंसने की क्या बात थी?"

फिर उसने बताया कि यह भी एक गुर है। स्त्रियो को जो दुकानदार खुश नही रख सकता, वह क्या खाक बिक्री करेगा।

"ऐसे दुकानदार के पास स्त्रिया अपने-आप खिची चली आती है और, जरूरत हो चाहे न हो, एकाध जोड़ा जूता खरीद ले जाती है। क्या तुम इतनी सी बात भी नही समझते? तुम्हे कुछ सिखाना तो नाहक दिमाग खपाना है!"

साशा के ये शब्द मेरे हृदय मे खुब गये। दुकान में एक भी माई का लाल ऐसा नही था जिसने, आज दिन तक, मुझे कुछ सिखाने के लिए भूलकर भी कोई कष्ट किया हो, साशा की तो बात करना ही बेकार है।

हर रोज, सवेरा होते ही, महाराजिन मुझे अपने ममेरे भाई

से एक घटा पहले ही जगा देती। वह एक बीमार और चिडचिडे स्वभाव की स्त्री थी। उठते ही मै समोवर गम करता, जितने भी चूल्हे थे सब के लिए लकडी लाता, जूठे बरतनो को माजता, कपडो को ब्रुश से भाडता और अपने मालिक, बडे बाबू तथा साशा के जूतो पर पालिश करता। दुकान में भाडू देता, गद साफ करता, चाय बनाता, जूतो के बण्डल लोगो के घर पर पहुचाता, और उसके बाद भोजन लाने घर जाता। जब तक मै इन कामो को करता, द्वार पर मेरी जगह साशा सभालता और इस काम को अपनी शान के खिलाफ समभ मुझ पर बरस पडता

"कद्दू की दुम, तुम्हारे बदले मुझे यहा चाकरी बजानी पडती है!"

मै आजाद जीवन बिताने का आदी था,—खेतो और जगलो में, मटमैली नदी ओका के तट पर, या कुनाविनो के रेत-भरे बाजारो में। अपना वर्तमान जीवन मुझे उबा देने वाला और कष्टप्रद मालूम होता। मुझे अपनी नानी की याद आती, अपने मित्रा का अभाव अखरता। यहा कोई ऐसा न था जिससे दो घडी बाते कर मै अपना जी बहलाता। कुत्सित तथा कृत्रिम जीवन का जो रूप यहा मुझे घेरे था, उसमे मेरा दम घुटने लगता।

बहुधा ऐसा होता कि महिलाए आतीं और बिना कुछ खरीदे ही दुकान से विदा हो जाती, और तब मेरा मालिक और उसके दोनो सहायक अपने जी की जलन मिटाते।

"काशीरिन, जूतो को उठाकर एक ओर रख दो!" मालिक आदेश देता और चाशनी में पगी अपनी मुसकान को तहा कर जेब में रख लेता।

"उसे भी यही आकर अपनी थूयनी दिखानी थी,—मुअरिया कहीं की! घर बैठे-बैठे जब मन नही लगा तो खूसट ने बाजार की

धूल छानने का निश्चय किया। सच कहता हूँ, अगर वह मेरी जोरू होती तो मैं उसका मिजाज दुरुस्त कर देता!"

उनकी पत्नी एक दुबली-पतली, काली आँखों और लम्बी नाक वाली स्त्री थी। वह उन पर चिल्लाती थी, खूब हाथ-पाँव पटकती थी, मानो पति न होकर उसका नौकर हों।

बहुधा, सभ्य ढंग से गर्दन झुका-झुका कर और चिकने-चुपड़े वचनों की बौछार करते हुए वे किसी महिला को विदा करते और जब वह चली जाती तो मालिक और उनके सहायक उसके बारे में गंदी और शर्मनाक बातें बघारते। तब मेरे मन में होता कि मैं भाग कर जाऊं, बाजार में उस महिला को पकड़ूँ और उसे वह सब बताऊं जो कि उन्होंने उसके बारे में अपने मुँह से उगला था।

स्वभावतः, यह तो मैं जानता था कि लोग पीठ-पीछे बुरी बात कहने के आदी होते हैं, लेकिन इन तीनों के मुँह से हर किसी के बारे में इस तरह की बातें सुनकर खास तौर से झुँझलाहट होती, मानो इस धरती पर वे ही सब से अच्छे हों और अन्य सब पर फबती कसने के लिए ही उन्हें इस दुनिया में भेजा गया हो। वे अधिकांश लोगों से ईर्ष्या करते, उनके मुँह से किसी की प्रशंसा नहीं निकलती और अपने जखीरे में, हरेक के बारे में वे कुछ न कुछ कुत्सित बातें जमा रखते।

एक दिन दुकान में एक युवती स्त्री आई. चमकदार आखें, गुलाबी कपोल, बदन पर मखमल का चोगा जिस में काले फर का कालर लगा था। काले फ़र से घिरा उसका चेहरा किसी दैवी फूल की भाति खिला हुआ था। और उस समय जब उसने अपना चोगा उतार कर साशा की बाह पर डाला, उसका सौन्दर्य और भी जगमगा उठा। उसके कानों में हीरों के बुंदे चमक रहे थे, और नीले-भूरे रंग के खूब चुस्त गाउन में उसके शरीर की

कमनीय रेखाए और भी उभर आई थी। उस देखकर मुझे सौन्दर्य की देवी वमिलीमा की याद हो आई, और मुझे लगा कि अगर और भी कुछ नही तो यह किसी गवर्नर की पत्नी निश्चय ही होगी। उसके स्वागत-अभिवादन में वे फर्श चूमने लगे, अग्नि-पूजको की भाति वे उसके सामने दोहरे हो गए, मधु में डूबे शब्दो की उन्होने झडी लगा दी। तीनो के तीना, उतावले होकर, पागलो की भाति दुकान में इधर-से-उधर मडराने लगे। शोकेसो के काच में उनके अक्स झलकते और ऐसा मालूम होता मानो प्रत्येक चीज लपटा से घिरी है, पिघल कर एकाकार हो रही है और जैसे अभी, देखते न देखते, वह एक नया रूप और नया आकार-प्रकार ग्रहण कर लेगी।

जल्दी से जूता का एक कीमती जोडा खरीदने के बाद जब वह चली गई तो मालिक ने अपनी जीभ से चटकारा लिया और फुकारते हुए बोला

"कुतिया ह, कुतिया!"

"एक शब्द में—नाटक मे बुरहे मटकाने वाली!" बडे बाबू ने भी नाक भौंह चढाते हुए भुनभुनाकर कहा।

और वे, आपस में, उस महिला के यारो तथा रगीन जीवन के किस्से बयान करने लगे।

दोपहर का भोजन करने के बाद मालिक झपकी लेने दुकान के पीछे वाले छोटे कमरे में चले गये। मौका देख मने उनकी सोने की घडी उठाई उसका ढक्कन खोला और उसके पुर्जों में कुछ सिरका चुआ दिया। मालिक की जब आखें खुली और घडी हाथ में लिए जब वह दुकान में बडबडाते हुए आए तो मेरे आनन्द की सीमा न रही।

"यह एक नयी मुसीबत देखो—मेरी घडी एकाएक पसीने

में तर हो गई! इस तरह की बात पहले कभी नही हुई थी। घड़ी और पसीने मे एकदम तर! कौन जाने क्या मुसीबत आनेवाली है!"

दुकान की इस हल-चल और घर के सारे काम के बावजूद सूनापन मुझे एक क्षण के लिए भी न छोड़ता और मैं बार-बार सोचता: क्या-कुछ मैं करू जिससे परेशान होकर ये लोग मुझे दुकान से निकाल दे?

हिम कणो से आच्छादित लोग दुकान के दरवाजे के सामने से तेजी से गुजरते। ऐसा मालूम होता मानो उन्हे किसी की मुर्दनी मे शामिल होना था, लेकिन देर हो गई और अब, अर्थी का साथ पकड़ने के लिए वे तेजी से कब्रिस्तान की ओर लपके जा रहे है। बोझा-गाड़ियो मे जुते घोड़े बर्फ मे फसे पहियो को खीचने के लिए काखते और जोर लगाते। लैण्ट (व्रत-उपवासों) के दिन थे। दुकान के पीछे ही गिरजा था जिस की घंटियो की उदास ध्वनि प्रति दिन कानो से आकर टकराती। वे बराबर बजती ही रहती और ऐसा मालूम होता मानो कोई तकिये से सिर पर प्रहार कर रहा हो जिस से चोट तो नही लगती, मगर दिमाग भन्ना जाता है।

एक दिन, उस समय जबकि मै दुकान के दरवाजे के नजदीक माल की एक नयी पेटी खोल रहा था, गिरजे का चौकीदार मेरे पास आया। बूढा ठूठ, कपड़े की गुडिया की भाति लिजबिज, चिथड़े हुआ हुलिया, मानो कुत्तों ने घेर कर खूब नोंचा-खरोचा हो।

"बेटा, क्या तुम एक जोडा गैलोश दुकान से तिड़ी करके मुझे नही दे सकते?" उसने पूछा।

मैने कुछ नहीं कहा। वह एक खाली पेटी पर बैठ गया। उसने जमुहाई ली, मुंह के सामने क्रॉस का चिन्ह बनाया और अपनी बात को दोहराते हुए बोला:

"बोला, मेरे लिए इतना करोगे न?"

"चोरी करना बुरी बात है," मैंने उसे बताया।

"फिर भी सब करते हैं। बोलो बेटा, क्या मेरे बुढ़ापे का खयाल नहीं करोगे?" वह मुझे अच्छा लगा। सब से बढ़ कर यह कि वह उन लोगों से भिन्न था जिन के बीच आजकल मेरा जीवन बीत रहा था। उसे इस बात का इतना पक्का विश्वास था कि मैं उसके लिए चोरी करूंगा ही, कि मैं एक जोड़ा गैलाश उठा कर खिड़की से चुपचाप उसे पकड़ा देने को राजी हो गया।

"बहुत खूब," उसने इत्मीनान के साथ कहा और सन्ताप का कोई खास भाव प्रकट किये बिना बोला।—"कहीं मुझे चकमा तो नहीं दे रहे? ठीक है, ठीक है, तुम उनमें से नहीं हो जो लोगों को बेवकूफ बनाते हैं।"

एक या दो मिनट तक वह चुपचाप बैठा हुआ अपने बूट की एड़ी से नम और गंदी बर्फ को कुरेदता रहा। फिर उसने अपना मिट्टी का पाइप सुलगाया और सहसा ऐसी बात उसने कही कि मैं चौंक उठा

"और अगर बात का ही क्या भरोसा कि मैं खुद तुम्हें बेवकूफ न बना रहा हूं? अगर मैं उन्हीं जूतों को लेकर तुम्हारे मालिक के पास जाऊं और कहूं कि तुमने आधे रूबल में उन्हें मेरे हाथ बेच दिया है तो तुम क्या करोगे? उनकी कीमत है दो रूबल से भी ज्यादा, और तुमने बेच दिया है आधे रूबल में। केवल इसीलिये ना कि कुछ मुनाफा जेबखर्च के वास्ते भी हो जाये,—क्या, ठीक है न?"

मुझे जैसे काठ मार गया। गूंगे की भांति मैंने उसकी ओर देखा, मानो उसने सचमुच ही मेरी, उसे वह पूरा कर भी चुका हो। और वह अपनी आंखों को जूते पर टिकाए और पाइप

से नीला धुआ छोडते हुए जो उसके सिर के चारो ओर मंडरा रहा था, इत्मीनान के साथ गुनगुने स्वर मे बोलता ही गया:

"और कौन जाने, खुद तुम्हारे मालिक ने ही मेरे पीछे पडकर मुझे इस बात के लिए उकसाया हो कि 'जाओ, और मेरे उस छोकरे की जाच करके देखो कि कही वह चोरी तो नहीं करता'। बोलो, क्या करोगे तब तुम?"

"मै तुम्हे जूते नही दूगा," झुंझला कर मैने कहा।

"नही, एक बार वचन देने के बाद तुम अब पीछे कैसे हट सकते हो?"

उसने मेरा हाथ थाम लिया और मुझे अपनी ओर खीचा। फिर अपनी ठडी उगली से मेरे माथे को ठकठकाते हुए बोला:

"तुम तैयार कैसे हो गये, मानो जूते भेट करना तुम्हारे बाएं हाथ का खेल हो,—क्यो? क्या मानते हो?"

"खुद तुम्हीने तो इसके लिए कहा था, कहा था न?"

"कहने को तो मै दुनिया भर की चीजो के लिए कह सकता हू। अगर मै कहूं कि गिरजे मे चोरी करो, तो क्या तुम वहा चोरी करोगे? इस प्रकार तुम किस-किस के बहकावे मे आते रहोगे, मेरे नन्हे भोदू भट्ट!"

उसने मुझे धकेल कर अलग कर दिया और खड़ा हो गया।

"मुझे चोरी के जूते नही चाहिये। फिर मै ऐसा जैण्टुलमैन भी नही हू जो जूतो के बिना रह नही सकता। मै तो मजाक कर रहा था। तुमने मेरा विश्वास किया, इसलिए मै तुम्हे गिरजे के घटेघर पर चढने दूगा, ईस्टर के दिन आना। तुम घटा बजा सकोगे, और नगर का समूचा दृश्य तुम्हे वहा से दिखाई देगा।"

"नगर तो मेरा देखा-भाला है।"

"घटेघर से और भी सुन्दर दिखाई देता है।"

धीमे डगो से, जूतो की नोक को बर्फ मे गढाते हुए, वह वहा से चल दिया और अन्त में, गिरजे के एक कोने के पास से मुड कर, आखों से ओझल हो गया। उसे जाता हुआ देखते समय म एक दुखद बेचैनी से हैरान हो उठा—क्या सचमुच वह बूढा मुझसे मजाक कर रहा था, अथवा मेरी जाच करने के लिए मालिक ने उसे भेजा था? दुकान पर वापिस लौटने का मुझे साहस नही हुआ।

तभी, साशा दौडता हुआ आगन में आया और चिल्ला कर बोला

"इतनी देर हो गई, न जाने यहा कौन से पापड बेल रहे हो!"

एकाएक गुस्से की लहर मेरे शरीर में दौड गई। सडसी हाथ में उठते ही उसका चिल्लाना बन्द हो गया।

म जानता था कि वह और बडे बाबू मालिक के यहा चोरी करते थे। वह या जूतो का एक जोडा उठा कर वे स्टोव की चिमनी में छिपा देते और दुकान बन्द करते समय चोरी के जूतो को कोट की आस्तीन में छिपा कर घर ले जाते। मुझे यह अच्छा नहीं लगता, और इससे मुझे डर भी मालूम होता। मालिक की चेतावनी को मै भूला नही था।

"क्या तुम चोरी करते हो?" मैने साशा से पूछा।

"नही, मै नही," उसने कठोरता से कहा। "चोरी बडे बाबू करते है। मै तो केवल उनकी मदद करता हू। वह कहते है—म जैसा कहू, वैसा करो। अगर मै न करू तो वह किसी समय भी अपनी गंदी चाल में मुझे फसा सकते है। और जहा तक मालिक की बात है, किसी जमाने में वह खुद भी दुकान में बडे बाबू का काम कर चुके है। वह सभी हथकण्डो से परिचित है। इसलिए तुम अपना मुह बन्द रखना।"

बोलते समय वह बराबर आईने में अपना चेहरा देखता और

"मूर्खों की नानी, बोले मूर्खों की बानी!"

"हा मूर्खों की नानी—शैतान की खाला से तो अच्छी हूँ जिसकी चतुराई से भगवान भी डरता है!"

उसका बातें करने का ढग माशा को खासतौर से बुरा मालूम होता। जब वह उसे चिढाता तो अपनी दृष्टि से उसे ध्वस्त करते हुए वह कहती

"मुआ तिलचट्टा, मोरी का कीडा। भगवान भी कहता होगा कि बडी गलती हुई इसे दुनिया म भेज कर!"

एक स अधिक बार मुझे फुसलाकर माशा ने इस बात के लिए तैयार करने की कोशिश की कि मैं उसके तकिये में पिने खोस दू, जब वह सोती हो तो उसके मुह पर काली पालिश या काजल पोत दू, या उसके साथ इसी तरह की अन्य कोई हरकत करू। लेकिन मे महाराजिन से डरता था और मुझे पक्का विश्वास था कि वह मुझे तुरन्त पकड लेगी। वह बहुत ही उचटी हुई सी नीद सोती थी। बहुधा ऐसा होता कि वह सोते-सोते जग जाती, लैम्प जलाती और किसी एक कोने में नजर गडाए ताकती रहती। कभी-कभी वह उठकर स्टोव के पीछे मेरे बिस्तरे के पास चली आती, मुझे झझोडती और बैठी हुई आवाज में फुसफुसाती

"न जाने क्यो मुझे नींद नहीं आती, आल्योशा। डर-सा लगता है। कुछ बात ही करो।"

और मैं, अध-जगी हालत मे, उसे कोई कहानी सुनाता और वह, अपने बदन को आगे-पीछे झुलाती, चुपचाप बैठी सुनती रहती। मुझे ऐसा मालूम होता मानो उसके गम बदन से माम और लोबान की गध आ रही हो, और यह कि वह जल्दी ही मर जायेगी, शायद इसी क्षण। डर के मारे मैं और भी जोर से बोलने लगता, लेकिन वह हमेशा टोक देती

"शिः, तुम उन हरामजादो को भी जगा दोगे और वे समझेगे कि यहा प्रेमालाप हो रहा है।"

वह हमेशा एक ही मुद्रा मे और उसी जगह पर बैठती—बदन को एक दम झुकाकर दोहरा लिए, हाथो को घुटनों के बीच खोसे और हड्डियाँ भर रह गई अपनी टागों को कस कर एक-दूसरे से सटाए। घर के कते मोटे सूत का लबादा वह पहनती थी। लेकिन चपटी छातियो वाले उसके शरीर की पसलिया, पिचके हुए पीपे की सलवटो की भांति, उसमे से भी साफ उभरी हुई दिखाई देतीं। बड़ी देर तक वह इसी तरह चुपचाप बैठी रहती और फिर सहसा फुसफुसा उठती.

"मै मर जाती तो इन सब दुखो से छूट जाती।"

या शून्य मे किसी को लक्ष्य कर वह कहती:

"माना कि मैंने अपने जीवन के दिन पूरे कर लिए, लेकिन इस से क्या?"

वह आव देखती न ताव, और कहानी के बीच में ही उसका कटु स्वर सुनाई देता:

"अब जाकर सोओ!"

फिर वह उठती और उसका शरीर, धीरे-धीरे धुंधला पड़ता हुआ, रसोई के अंधेरे मे विलीन हो जाता।

साशा, उसकी पीठ पीछे, उसे बूढी डायन कहता।

एक दिन मैने उसे उकसाया·

"उसके मुंह पर कहो तो जानें।"

"मै क्या उससे डरता हूं?" उसने जवाब दिया।

फिर तुरन्त ही उसने अपने माथे को सिकोडा और बोला:

"नही, मै उसके मुंह पर नही कहूंगा। कौन जाने, वह सचमुच मे डायन हो।"

घृणा और चिडचिडापन एक क्षण के लिए भी उसका साथ नही छोडता। अन्य सब की भांति वह मेरे साथ भी कोई रू-रियायत नहीं बरतती। सुबह के छै बजे ही वह मेरी टाग पकड कर खींचती और चिल्लाती

"बहुत खर्राटे ले चुके! उठकर अब लकडी लाओ, समोवर गर्म करो, आलू छीलो!"

उसका चिल्लाना सुनकर साशा की भी आखें खुल जाती।

"क्या आसमान सिर पर उठा रखा है?" वह बडबडाता। —"मैं मालिक से जाकर शिकायत करूगा कि मुझे सोने तक नही देती।"

नींद न आने के कारण सूज कर लाल हुई उसकी आखें साशा की दिशा में कौंद जाती और वह, हड्डियों के अपने ढाचे को लिए, द्रुत गति से रसोई में उठा-धरी करने लगती।

"मुआ कहीं का! भगवान भी पछताता होगा अपनी इस भारी भूल को देखकर। मेरे पाले पडता तो चमडी उधेड कर रख देती!"

"नासपीटी!" साशा उसे कोसता और फिर बाद में, दुकान जाते समय, मुझसे कहता —"मैं इसका पत्ता कटा कर छोडूगा। इसकी आख बचा कर म खाने में नमक झोक दूगा। जब हर चीज जहर मालूम होगी तो वे इसे निकाल बाहर करेंगे। या फिर मिट्टी का तेल। यह काम तो तुम आसानी से कर सकते हो न?"

'तुम खुद क्यों नहीं करते?'

"डरपोक!" उसने भुनभुनाकर कहा।

और महाराजिन, हमारे देखते-देखते, मर गई। एक दिन समोवर को उठाने के लिए झुके-झुके ही वह सहसा ढेर हो गई, मानो किसी ने उसकी छाती पर आघात किया हो। वह बाजू के

वल लुढ़क गई, उसकी वाहों में ऐंठन हुई और मुंह के एक कोने से खून टपकने लगा।

हम दोनों तुरन्त ही भांप गए कि वह मर चुकी है, लेकिन भय से त्रस्त हम वहीं खड़े-खड़े केवल उसे देखते रहे, मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। आखिर साशा भाग कर रसोई से वाहर गया और मैं, किंकर्तव्यविमूढ़, खिड़की के शीशे से बदन सटाए सड़क की रोशनी की दिशा में रुख किये खड़ा रहा। मालिक आए, चिन्ताग्रस्त भाव से भुके उसके चेहरे का स्पर्श किया, फिर बोले:

"अरे, यह तो एकदम मर चुकी है। भला सोचो तो, यह क्या हुआ?"

कोने में देवी-देवताओं का आला था। वहां चमत्कार के पुंज निकोला सन्त की एक छोटी-सी प्रतिमा रखी थी। उसकी ओर भुकते हुए मालिक ने तुरन्त त्रास का चिन्ह वनाया। फिर प्रार्थना पूरी करने के वाद दरवाजे की ओर मुंह करके वह चिल्लाया:

"काशीरिन, भाग कर जाओ और पुलिस को खवर करो!"

पुलिसमैन आया, कुछ इधर-उधर खटरपटर करने के वाद उसने एक मुद्रा अपनी जेव के हवाले की और चला गया। इसके शीघ्र वाद ही मुर्दा ढोने वाले एक ठेले को अपने साथ लिए वह वापिस लौट आया। सिर और पांव पकड़ कर उन्होंने महाराजिन को उठाया और उसे वाहर ले गए। मालिक की पत्नी दरवाजे से झांक कर यह सव देख रही थी।

"फर्श साफ करो!" चिल्लाकर उसने मुझ से कहा।

"यह भी अच्छा हुआ कि वह सांझ के समय ही मरी," मालिक ने कहा।

मेरी समझ में नही आया कि इसमें ऐसी अच्छा होने की क्या बात थी। रात को, उस समय जब हम सोने के लिए गए, साशा का भय से बुरा हाल था। बोला

"बत्ती न बुझाना!"

"क्या, डर लगता है?"

उसने अपना सिर कम्बल से ढंक लिया और बहुत देर तक चुपचाप पड़ा रहा। रात भी एकदम चुप और निस्तब्ध थी, मानो वह भी कान लगा कर कुछ सुनना चाहती हो। और मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो अगले ही क्षण घंटियाँ बजने लगेंगी और नगर के लोग भय से आक्रान्त होकर इधर-उधर भागना और चिल्लाना शुरू कर देंगे।

साशा ने कम्बल से बाहर अपनी थूथनी की एक झलक दिखाते हुए, धीमे स्वर में कहा

"चलो, स्टोव पर चल कर दोनो एक साथ सोए।"

"स्टोव के ऊपर तो बहुत गर्म होगा।"

उसे जसे फिर साप सूंघ गया।

"कितनी अचानक वह मर गई," अन्त में वह बोला,—"और मैं था कि उसे डायन समझ रहा था। मेरी आखो में तो नींद गायब हो गई है।"

"यही मेरा भी हाल है।"

उसके बाद उसने बताना शुरू किया कि किस प्रकार मुर्दे अपनी कब्रों में से उठ कर आधी रात तक नगर का चक्कर लगाते और अपने सगे-सम्बधियो तथा घरों की खोज करते है।

"मुर्दों को केवल अपने नगर की याद रहती है," उसने फुसफुसा कर कहा, मोहल्लों-टोलों और घरो की नहीं।"

निस्तब्धता अब और भी गहरी हो गई, और ऐसा मालूम

हुआ मानो अंधेरा भी अधिकाधिक घना होता जा रहा है। साशा ने अपना सिर उठाया।

"मेरी पेटी में बड़ी-बड़ी चीजें हैं, देखोगे?" उसने पूछा।

उसकी पेटी बहुत दिनों से मेरे अचरज का विषय बनी हुई थी कि न जानें उसने उसमें क्या-क्या छिपा रखा है। वह हमेशा उस पर ताला जड़े रखता। और उसे खोलते समय हद से ज़्यादा सावधानी बरतता। अगर मैं कभी झांक कर देखने की कोशिश करता तो वह कड़े स्वर में टोकता:

"दूर हट, क्या बिज्जू की भांति ताक रहा है!"

अब, खुद उसके कहने पर, जब मैंने देखने की इच्छा प्रकट की तो वह उठकर बिस्तरे पर बैठ गया और सदा की भांति मालिकाना अन्दाज़ में उसने आदेश दिया कि मैं पेटी को उठा कर उसके पांव के पास रखूं। कुंजी को एक ज़ंजीर में डालकर उसने गले में पहन रखा था और साथ में उसका बपतिस्मा क्रास भी लटका हुआ था। एक बार रसोई के अंधेरे की ओर देखने के बाद रौब के साथ उसने अपनी भौंहों को सिकोड़ा, फिर पेटी के ताले को खोला और अन्त में, ढक्कन पर इस तरह फूंक मार कर मानो वह गर्म हो, उसने पेटी को खोला। पेटी में कई जोड़े रखे थे। उसने उन्हें बाहर निकाल लिया।

पेटी का आधे से भी ज्यादा हिस्सा गोलियों के बक्सों, चाय के पैकिटों के रंग-बिरंगे कागज़ों, सार्डीन मछली और काली पालिश के खाली डिब्बों से भरा था।

"यह सब क्या है?"

"अभी दिखाता हूं।"

पेटी को अपनी टांगों के बीच लेकर उसे भींचते और ऊपर झुकते हुए उसने फुसफुसा कर एक मन्त्र-सा पढ़ा:

"हे परम पिता, स्वर्ग में वास करनेवाले "

मुझे उम्मीद थी कि पेटी में खिलौने देखने को मिलेंगे। म खिलौनो से सदा वचित रहा था। यो कहने को मै खिलौनो के प्रति उपेक्षा का भाव दिखाता था, किन्तु मन ही मन मे उनसे ईर्ष्या करता था जिनके पास खिलौने होते थे। यह सोच कर मै मन ही मन प्रसन्न होता कि माशा के पास, उसकी गम्भीरता और रूखेपन के बावजूद खिलौने होने चाहिए। निश्चय ही उसके पास खिलौने हैं जिन्हें शर्म के मारे उसने वहीं छिपा रखा है। उसकी यह लज्जा मुझे भली मालूम होती।

उसने पहले डिब्बे को खोला और उसमें से चश्मे का एक जोडा फ्रेम निकाला। उसने उन्हे अपनी नाक पर लगाया, मेरी ओर बडी नजर से देखा और फिर बोला

"इन में शीशा नही है तो क्या हुआ। बिना शीशे के भी इनका वैसा ही रौब पडता है।"

"जरा मुझे दो। म भी लगा कर देखू।"

"ये तुम्हारी आखो से मेल नही खाते। ये काली आखो के लिए है, और तुम्हारी आखें कुछ भूरी है।" उसने मुझे समझाया, दो टूक अन्दाज में। उसका स्वर, अप्रत्याशित रूप मे, कुछ इतना ऊचा हो गया कि भयभीत दृष्टि से उसने कई बार रसोई की ओर देखा।

काली पालिश के एक टीन में तरह-तरह के बटनो का जखीरा मौजूद था।

"ये सब मुझे बाजार में पडे हुए मिले।" उसने शेखी बघारते हुए कहा। "ये सब अकेले मैंने ही जमा किए ह। पूरे सैंतीस ह।"

तीसरे डिब्बे में पीतल की बडी-बडी पिनें थीं। ये भी सडक पर पडी मिली थीं। कुछ मोचियो के काम की कीलें और कुछ

जूतों के बक्सुवे—घिसे-पिटे, तुडे-मुडे, गनिम बस एक-दो ही थे। एक हाथीदात की मूठ थी और एक पीतल की, दरवाजों में जैसी लगी रहती है। एक जनानी कघी और एक पुस्तक—सपनो तथा भाग्य का भेद बताने वाली। इनके अलावा इसी कोटि की अन्य कितनी ही चीजे थीं।

चिथडो और हड्डियों की खोज करते समय अगर मै चाहता तो एक महीने के भीतर इस से दस गुना कवाड़ जमा कर सकता था। साशा के इस जखीरे को देख कर मुझे बड़ी निराशा और झुंझलाहट हुई और उसके प्रति दया से मेरा मन भर गया। वह प्रत्येक चीज को वडे ध्यान से देखता, वडे चाव से अपनी उंगलियों से उसे सहलाता, उसके मोटे होठ इस प्रकार भिचे हुए थे मानो कर्तव्य-पालन मे दत्त-चित्त हों, वडी-वडी पकौडा-सी आखें, मानो अपना स्नेह उडेलने के लिए, वाहर को निकली हुई थीं। लेकिन चश्मे के फ्रेम ने, उसके चेहरे की सारी सरलता और कौतुक भाव को, वड़ा ही अटपटा बना दिया था।

"इस सब का तुम क्या करोगे?"

चश्मे के भीतर से उसने मुझ पर एक उड़ती हुई नजर डाली और अपनी आयु के अनुरूप फटी हुई सी आवाज मे वोला:

"क्यों, तुम्हे कुछ चाहिये?"

"नही, धन्यवाद।"

एक क्षण तक वह कुछ नही वोला। मेरे इन्कार करने और उसके जखीरे मे दिलचस्पी न दिखाने से, स्पष्ट ही, उसके हृदय मे चोट लगी थी।

"एक तौलिया ले लो," आखिर उसने कहा, "इन सब चीजो को चमकाएंगे। देखो न, इन पर कितनी धूल जमा हो गई है।"

सब चीजो को चमकाने और उन्हे पेटी में रखने के बाद

दीवार की ओर मुंह करके वह बगल के बल लेट गया। बाहर बारिश शुरू हो गई थी, पानी छत से टपक रहा था और वायु के थपेड़े खिड़की से टकरा रहे थे।

"ज़रा ज़मीन सूख जाने दो, बगीचे में तुम्हें एक ऐसी चीज़ दिखाऊंगा कि तुम्हारे होश फाख्ता हो जाएंगे!" मेरी ओर मुँह किए बिना ही उसने कहा।

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और चुपचाप बिस्तरे में घुस गया।

कुछ क्षण बाद वह सहसा उछल कर खड़ा हो गया, दीवार को अपने पंजों से नोचने लगा और ऐसी आवाज़ में बोला जो, बिना किसी सन्देह के उसके भय को प्रकट करती थी

"मेरे रोम-रोम में डर समा गया है हे भगवान, डर ने मुझे कितना घबरा दिया है! मुझ पर दया करो, भगवान!"

खुद मुझे भी भय के मारे पसीना छूटने लगा, शरीर ठंडा पड़ गया। मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो महाराजिन, मेरी ओर पीठ किए, खिड़की के पास खड़ी हो, शीशे से माथा सटाए, ठीक उसी मुद्रा में जिस में कि वह मुर्गों का लड़ना देखा करती थी।

साशा ने सुबकी भरी और दीवार को उसी प्रकार नोचता रहा। मैं उठा और लपक कर रसोई के फर्श को इस प्रकार पार किया मानो उस पर दहकते हुए कोयले बिछे हों। उसके बिस्तर में घुस कर मैं उसकी बगल में लेट गया।

बहुत देर तक हम दोनों की आंखों से आंसू बहते रहे और अन्त में हम थक कर सो गये।

कुछ दिन बाद हमारी एक छुट्टी हुई। केवल दोपहर तक हमने काम किया। दोपहर का भोजन घर जाकर करना था। जब मालिक और उसकी पत्नी विश्राम करने के लिए चले गए तो साशा ने भेद-भरे ढंग से मुझ से कहा

उसने मुझे कुछ ऐसी सूनी दृष्टि से देखा कि लगता था जैसे वह एकाएक अन्धा हो गया है। फिर, मेरी छाती पर आघात करते हुए, वह चिल्ला उठा

"काठ के उल्लू! तुम मुझसे जलते हो, बस और कुछ नहीं! इसीलिए तुम्हें यह पसन्द नहीं आया! शायद तुम्हें इस बात का भी घमंड है कि कातेनाया सड़क के अपने बगीचे में तुम्हारा घर-तल इससे कहीं अधिक सुन्दर था।"

"और नहीं तो क्या," मैंने बिना किसी दुविधा के जवाब दिया और मुझे उस कोने की याद हो आई जो कि मैंने अपने लिए सजाया था।

साशा ने अपना फ्राककोट उतार कर दूर फेंक दिया। उसने अपनी आस्तीनें चढ़ा लीं, थूक कर अपनी हथेलियों को मला और बोला

"अच्छा तो आओ, अभी तय हो जाएगा कि हम दोनों में से कौन जबर है।"

लड़ने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी। इन सब चीजों से मैं पहले ही ऊब चुका था और अपने ममेरे भाई के क्रुद्ध चेहरे की ओर देखना भी मुझे भारी मालूम हो रहा था।

वह लपक कर मेरी ओर झपटा, छाती में सिर मार कर उसने मुझे गिरा दिया और वह मेरे ऊपर चढ़ बैठा।

"जीना चाहते हो या मरना?" वह चिल्लाया।

मैं उससे ज्यादा मजबूत था, और मेरा खून पूरी तरह खौल उठा था। अगले ही क्षण, मुंह के बल धरती पर वह फनफना रहा था और उसने अपना सिर हाथों से ढक लिया था। उसकी यह हालत देख मैं पूर्णतया कांप गया, उसे उठाने की मैंने कोशिश की लेकिन दुलत्तियां झाड़ कर उसने मुझे अलग कर दिया। इससे मैं

और भी आशंकित हो उठा। मेरी समझ में नहीं आया कि क्या करूं। इसी असमंजस में पड कर मैं वहाँ से चल दिया। लेकिन उसने अपना सिर उठाया और कहा:

"अब तुम बचकर नहीं जा सकते। मैं यहाँ से टस-से-मस नहीं हूंगा। मालिक खोजता हुआ जब यहा आकर मुझे देखेगा तब मैं सारा भण्डा फोड दूंगा और वह तुझे निकाल बाहर करेगा।"

उसने कोसा और धमकिया दी। मेरे सिर पर पागलपन सवार हुआ और मैं मुड़कर फिर खोह की ओर लपका। ईंटो को मैंने उखाड डाला, ताबूत और चिड़े को उठा कर दूर, बाडे के उस पार, फेंक दिया और भीतर का सारा ताम-झाम खोद-खोद कर उसे पांव से रौंद डाला।

"लो, यह लो! और देखो, यह गई तुम्हारी समाधि!"

मेरे इस क्रोध का उसपर अजीब प्रभाव पडा। वह उठ कर बैठ गया। उसका मुँह कुछ खुला था। भौंहे सिकुड कर एक-दूसरे से सटी थी। वह मेरी ओर निर्वाक ताक रहा था। और जब मैं तोड-फोड़ कर चुका तो वह बिना किसी उतावली के उठा, उसने अपने को झाडा और फ्राककोट पहन कर स्वर मे शान्त आतंक भर कर बोला:

"अब देखना क्या होता है। तुम्हें ही इसका भुगतान करना पड़ेगा। खास तौर से तुम्हारे लिए ही मैंने यह बनाया था। यह एक टोना था — समझे!"

मेरी तो जैसे जान निकल गई। उसके शब्दो के आघात ने मेरे घुटने ढीले कर दिये। मुझे ऐसा मालूम हुआ जैसे मेरे शरीर की हर चीज ठंडी पड गई हो। मुडकर एक बार भी देखे बिना ही वह वहा से चल दिया। उसकी निस्तब्धता ने मुझे पूर्णतया पस्त कर दिया था।

मैंने निश्चय किया कि अगले ही दिन इस नगर को, मालिक को, साशा और उसके जादू-टोने को, इस समूचे बेमानी और भयावह जीवन को, छोड कर यहा से चल दूगा।

अगले दिन, सुबह के समय, जब नयी महाराजिन ने मुझे जगाया तो वह चिल्ला उठी

"हे भगवान, तुम्हारे चेहरे को यह क्या हुआ है?"

मुझे ऐसा लगा कि मेरा हृदय जवाब दे रहा है। हो न हो, टोने ने अपना असर दिखाना शुरू कर दिया है। अब कुछ भी शेष नही रहेगा।

लेकिन महाराजिन पर हसी का कुछ ऐसा दौरा सवार हुआ और वह इस तरह खिलखिला कर हसी कि म खुद भी हसे बिना नही रह सका। मैने उसके आइने में झाक कर देखा। मेरे चेहरे पर काजल की एक मोटी परत चढी थी।

"क्या यह साशा की करतूत है?" मैंने पूछा।

"और नही, तो क्या मैंने किया है?" महाराजिन ने हसते हुए कहा।

मने जूतो पर पालिश करना शुरू किया। जैसे ही मने अपना हाथ एक जूते में डाला ता मेरे हाथ में एक पिन गड गई।

"यही है साशा के जादू-टोने का असर!" मने मन-ही-मन कहा।

पिनें और सुइया सभी जूता में छिपी थी, और इस चतुराई से कि मेरे हाथा में गडे बिना न रह। मने ठडे पानी की एक बाल्टी उठाई और उसे टोना-विशेषज्ञ के सिर पर उडेल दिया जो अभी तक सो रहा था, या नीद का बहाना किए पडा था।

लेकिन मेरा मन अभी भी भारी था। ताबूत, चिडा, उसके भूरे और सिकुडे हुए पंजे, उसकी छोटी-सी मोमयाई चोच और उसके चारा ओर की चमचमाहट जो इन्द्रधनुषी आभा की समानता

का निष्फल प्रयास कर रही थी... यह सब मेरे दिमाग में इतना छा गया था कि उससे पीछा छुड़ाना मुश्किल था। तावूत ने मेरी कल्पना मे भीमाकार रूप धारण कर लिया, पक्षी के पंजे वढने और आकाश की ओर अधिकाधिक ऊँचे उठने लगे, एक दम सजीव और स्पन्दनशील!

मैने उसी साझ सब कुछ छोड़-छोड कर भागने की योजना वनाई। लेकिन दोपहर के भोजन से ठीक पहले उस समय जव कि मै तेल के स्टोव पर शोरवा गर्म कर रहा था, मै सपने देखने मे रम गया और शोरवा उफन कर गिरने लगा। स्टोव वुझाने की उतावली मे उसपर रखा वरतन उलट कर मेरे हाथो पर आ गिरा। नतीजा यह हुआ कि मुझे अस्पताल भेज दिया गया।

अस्पताल का वह दुस्वप्न मुझे याद है। खाकी और सफेद कफन लपेटे आकृतियो के दल थरथराते पीले शून्य मे प्रकट होते, कराहते और भनभनाता एक लम्वा आदमी, जिसकी भौहे मूँछों के समान थी, वैसाखी लिए, अपनी काली लम्वी दाढी को वरावर नचाता और चिल्लाता रहता.

"देख लेना, महापूजनीय धर्मपिता से मै तुम्हारी रिपोर्ट करूगा!"

अस्पताल के पलंगो को देखकर मुझे कव्रिस्तान की याद आ जाती। छत की सीध मे नाक ताने उनपर लेटे हुए मरीज मुझे मृत चिडो की भाति मालूम होते। पीली दीवारे डोलने लगती, छत मे वादवान की भाति लहरे उठती, फर्श उभारा लेता और पलंग आगे-पीछे झूमने लगते। प्रत्येक चीज आशाविहीन थी और हृदय मे कंपकपी पैदा करती थी। खिड़कियों से वाहर पेडो की नगी-वूची टहनिया किन्ही अदृश्य हाथों द्वारा फटकारे गए हण्टर की भाति मालूम होती थी।

दरवाजे में एक क्षीण, लाल सिर वाली, लाश नाचती। छोटे-छोटे हाथो से कफन को खीचकर वह अपने चारो ओर समेटती और चीखती

"मै कुछ नही जानता। अपने इन पागलो को अपने पास ही रखो!"

और बैसाखी वाला आदमी चिल्लाता

"महापूजनीय धर्मपिता! "

नानी और नाना तथा अन्य सब से हमेशा यही मैंने सुना था कि अस्पताल में लोगो को भूखा मारा जाता है। मेरे मन में यह बात बैठ गई कि म भी अब दो चार दिन का ही मेहमान हूँ। चश्मा लगाए एक स्त्री जो कफन सा लपेटे थी, मेरे निकट आई और बिस्तर के सिरहाने लटकी सलेट पर उसने खडिया से कुछ लिखा। खडिया के कुछ कण चुरमुरा कर, मेरे बालो में भी आ गिरे।

"तुम्हारा नाम क्या है?" उसने पूछा।

"कुछ नही।"

"तुम्हारा कोई नाम नही है?"

"नही।"

"देखो, बकवास न कर, मेरी बात का सीधे-सीधे जवाब दो, नही तो मार खाओगे।"

मार पडेगी, इस बात का तो मुझे पहले से ही विश्वास था। और ठीक इसी लिए मैने जवाब देने से इन्कार भी किया था। बिल्ली की भांति सूँ-सू कर और बिल्ली ही की भांति चार पावो से वह विलीन हो गई।

दो लैम्प जला दिये गये जिनकी पीली चिमनिया निखुडी हुई दो आखो की भांति छत से लटकी थी—भुनती और चकित

भाव से टिमटिमाती, मानो दोनो फिर एक-दूसरे के निकट आने का प्रयत्न कर रही हों।

"आओ, ताश की एक बाजी खेलें," किसीने कोने में से कहा।

"केवल एक ही बाँह से मैं कैसे खेल सकता हूँ?"

"ओह, तो उन्होंने तुम्हारी एक बांह साफ कर दी, क्यों?"

मेरे मन मे यह बात बैठते देर नही लगी कि ताश खेलने के कारण ही उसकी बाँह काटी गई है और मै, हैरान हो, सोचने लगा कि मारने से पहले न जाने मेरी भी ये क्या-क्या दुर्गति करेंगे।

मेरे हाथों मे जलन होती थी और वे बुरी तरह दुखते मानो कोई मेरी हड्डियो को नोच रहा हो। भय और दुःख से मै मन ही मन कराहता और अपनी आंखो को बन्द कर लेता जिससे मेरे आँसू किसीको न दिखाई दे, लेकिन वे उमड़ आते और मेरी कनपटियो पर से बहकर कानों तक पहुँच जाते।

रात घिर आई। मरीज़ अपने-अपने बिस्तरो पर पहुंच गए, खाकी की कम्बलो के नीचे उन्होंने अपने-आप को छिपा लिया और निस्तब्धता प्रति क्षण गहरी होती गई। केवल एक आवाज थी जो कोने मे से आकर इस निस्तब्धता को भंग करती थी:

"कोई नतीजा नही निकलेगा। दोनों ही पशु है—पुरुष भी और स्त्री भी..."

मै नानी को पत्र लिखना चाहता था कि जल्दी से आकर मेरी जान बचाओ, नही तो ये लोग मुझे मार डालेंगे। लेकिन मै लिखता कैसे... न तो मेरे हाथ काम करते थे, न ही मेरे पास कागज था। मैंने तय किया कि यहां से भाग चलना चाहिए।

ऐसा मालूम होता मानो रात ने कभी विदा न होने का निश्चय कर लिया है। पलग से पैर धीरे से खिसका कर मै नीचे उतर गया और दोहरे दरवाजे की ओर चला। दरवाजे का एक भाग

सुना था और वहाँ, कोरीडोर में रखी बेंच पर, तम्बाकू के धुएं में घिरे सेही जैसे एक सिर पर मेरी नजर पडी। बाल उसके सफेद थे और उसकी धंसी हुई आंखें एकटक मुझपर जमी थी। छिपने का समय नही था।

"यह कौन मटरगश्ती कर रहा है? यहां आओ।"

आवाज में मुलायमियत थी। धमकी का उसमें जरा भी पुट नही था। मै उसके पास गया और दाढी से भरे एक गोल चेहरे पर मेरी नजर पडी। सिर के सफेद बाल खूब बढे हुए थे और रुपहले आलोक की भांति चारो ओर फैले थे। उसकी पेटी में तालियों का एक गुच्छा लटका था। उसके बाल और दाढी कुछ और बडे होते तो वह सन्त पीतर के समान दिखाई देता।

"क्या तुम वही हो जिसके हाथ जल गए थे? रात के समय यहां क्यो घूम रहे हो? यह बात यहाँ के नियम-कायदो के खिलाफ है।"

उसने धुएँ का एक बादल मेरे मुँह की ओर छोडा, अपनी बांह मेरी कमर में डाली, और अपनी ओर खींचते हुए बोला

"डर लगता है?"

"हां।"

"शुरू-शुरू में यहां सभी को डर लगता है। लेकिन डरने की कोई बात नही है, खास तौर से मुझसे। मैं किसीको नुकसान नहीं पहुंचा सकता। तम्बाकू पियोगे? ठीक है—तम्बाकू से तुम्हारा वास्ता भी क्या? तुम बहुत छोटे हो, अभी दो चार वर्ष और प्रतीक्षा करो। तुम्हारे माता पिता कहां है? क्या कहते हो—न तुम्हारी मां है, न पिता? बिलकुल ठीक—उनकी तुम्हें जरूरत भी क्या है? उनके बिना भी तुम काम चला सकते हो। मतलब यह कि अगर तुम मरोड़ नहीं न दिखाओ, तुम बराबर आगे गा।"

उसके शब्द मुझे अच्छे लगे। इतने अच्छे कि कह नही सकता। बहुत दिनो से किसी ऐसे आदमी से मेरी भेंट नही हुई थी जो सीधे-सादे, मित्रतापूर्ण और समझ में आने वाले शब्दो में बात करता हो।

वह मुझे वापिस मेरे पलग पर ले गया।

"कुछ देर मेरे पास बैठो," मैने अनुरोध किया।

"जरूर बैठूंगा," उसने उत्तर दिया।

"तुम कौन हो?"

"मै एक सैनिक हू, सच्चा सैनिक, जो काकेशस के युद्ध मे लड़ा था। असली लडाइयाँ और यह एकदम स्वाभाविक भी है। सैनिक लड़ाइयों के लिए ही तो जीता है। यही उसका जीवन है। मै हगेरियाइयो से लड़ा हूं। चेर्केसो और पोलो से लड़ा हूं। युद्ध, मेरे भाई, एक बहुत ही बडी शैतानी है!"

एक क्षण के लिए मैने अपनी आखे बन्द कर ली, और जब मैने उन्हे खोला तो उसी जगह जहाँ सैनिक बैठा था, मुझे अपनी नानी काली पोशाक पहने दिखाई दी। सैनिक अब मेरी नानी की बगल मे खड़ा था। वह कह रहा था:

"सो तुम्हारी राय मे कोई जीवित नही बचा, सब मर गए। क्यों, यही न?"

चमकता हुआ सूरज एक स्वच्छन्द बालक की भाति आया और चला गया—वार्ड की प्रत्येक चीज़ को तुर्तफुर्त अपनी लाली से रगता और उसके बाद विलीन होता हुआ, प्रकाश की नयी निधि के साथ लौट कर फिर से फूट पड़ने के लिए।

नानी झुककर मेरे निकट आई और बोली:

"यह क्या हुआ, मेरे लोटन कबूतर? उन्होने तुम्हारा अगभग तो नही किया? मैने उस लाल सिर वाले लकड़बग्घे से कहा कि..."

"एक मिनट ठहरो। कानून-कायदे के अनुसार मैं अभी सब ठीक किए देता हूँ," सैनिक ने जाते हुए कहा।

"मुझे लगता है कि सैनिक बलखोा का रहने वाला है," अपने कपोलो से आँसू पोछते हुए नानी ने कहा।

मुझे अभी भी ऐसा मालूम हो रहा था मानो मैं सपना देख रहा हूँ। मै कुछ नही बोला। एक डाक्टर आया, उसने मेरे हाथो की मरहमपट्टी की और फिर नानी और मैं एक गाडी में शहर से चल दिये।

"और तुम्हारा वह नाना है न, उसका दिमाग तो एकदम सफाचट हो गया है," नानी ने कहा,—"इतना कजूस कि तुम्हारी आखो में से भी अपनी चीज निकाल ले। जीनमाज़ दिलस्त से अब तेरे नाना ने दोस्ती गाठी है। अभी हाल में नाना की प्रार्थना पुस्तक में से उसने सौ रूबल का एक नोट तिडी कर लिया। इसके बाद वह धुहराम मचा कि कुछ न पूछो,—अरे बाप रे!"

सूरज तेज़ी से चमक रहा था और बादल सफेद पक्षिया की भाति आकाश में तैर रहे थे। वोल्गा का पानी जम कर बर्फ हो गया था और उसके आर-पार तख्ते बिछा कर एक मार्ग बना दिया गया था। तख्तो के इस मार्ग को, उस जगह से हमने पार किया जहा बर्फ भनभना कर उभरती आ रही थी और पानी की एक पतली परत तख्तो के नीचे सनसनाती बह रही थी। बाज़ार में स्थित गिरजे के लाल गुम्बदा के सुनहरी क्राम चमचमा रहे थे। रास्ते में चौडे मुँह की स्त्री हमें दिखाई दी जो सिर पर रेशमी विला का गट्ठा लिए आ रही थी। बसन्त आ रहा था, शीघ्र ही ईस्टर का उत्सव-काल शुरू हो जाएगा!

मेरा हृदय भारद्वाज पक्षी की भाति कूक उठा।

"नानी, तुम कितनी प्यारी हो!"

नानी को इससे जरा भी अचरज नही हुआ।

"यह स्वाभाविक ही है, तुम मेरे नाती जो हो।" नानी ने सीधे-स्वभाव से कहा। "लेकिन बड़बोली बने बिना मैं यह कह सकती हूँ कि जिनसे मेरा कोई नाता नही है, वे भी मुझे प्यार करते हैं। यह सब मां मरियम की बरकत है!"

फिर, मुसकराते हुए बोली:

"शीघ्र ही वह उत्सव मनाएगी—फिर से जीवित हो उठे अपने बेटे के साथ। लेकिन मेरी बेटी वार्यूशा..."

और वह चुप हो गई, फिर कुछ नही बोली।

२

नाना से आगन मे ही मेरी मुठभेड़ हो गई। घुटनो के बल बैठे वह कुल्हाड़ी से एक बाँस को नोकीला बना रहे थे। उन्होंने कुल्हाड़ी उठाई, मानो मेरे सिर पर फेंक कर मारना चाहते हो। फिर अपनी टोपी उतारते और तिरस्कारपूर्ण अन्दाज मे चिकोटी-सी काटते हुए बोले:

"आ गए नवाब साहब, हमारे अत्यन्त माननीय महामहिम! आइए, स्वागत है आपका! नौकरी को भी धता बता आए? अच्छा है, अब करना जो मन मे आए। बस, मेरे सिर न पडना,—समझे!"

"रहने दो, हमे सब मालूम है," नानी ने, हाथ झटकाते हुए, नाना का मुँह बंद कर दिया। हमने कमरे मे पाँव रखा। समोवर को गर्म करते हुए नानी बोली:

"तुम्हारे नाना इस बार सब कुछ गवा बैठे। उन्होने अपनी सारी जमा-पूंजी अपने धर्मपुत्र निकोलाई को सौंप दी और रसीद तक न ली। निकोलाई ने झाँसा दिया कि वह उनके नाम से

व्यापार करेगा। पता नहीं कैसे क्या हुआ, लेकिन नाना एकदम सफाचट रह गए। सारी पूजी गायब हो गई। और यह सब इसलिए हुआ कि हमने कभी गरीबो की मदद नही की, दुखियो के प्रति कभी दया-भाव नही निभाया। सो परमपिता परमात्मा ने मन में सोचा काशीरिन परिवार के साथ मैं ही क्यो भलमनसाहत बरतूं? सच कहती हूं, भगवान के मन में जरूर यही बात आई होगी। और उसने सभी कुछ ले लिया।"

एक उडती नजर से इधर-उधर देखने के बाद नानी ने फिर कहना शुरू किया

"भगवान का हृदय कुछ पसीजे, बूढे को वह इतना कष्ट न दे, इसका मैं थोडा-बहुत उपाय कर रही हू। रात को मैं जाती हूँ और अपनी आय में से कुछ आस पास के घरो के द्वार पर, चुपचाप, छोड आती हू। चाहो तो आज रात तुम भी मेरे साथ चलो। मेरे पास कुछ पूजी है।"

नाना ने भुनभुनाते हुए भीतर पाँव रखा।

"क्या सब कुछ भकोसने की फिक्र में हो?"

"तुम्हारी कोई चीज हम नहीं हडप कर रहे हैं,' नानी ने कहा,—"चाहो तो तुम भी हमारे साथ शामिल हो सकते हो। सब का पूरा पड जाएगा।"

वह मेज पर बैठ गए।

"मुझे तो बस एक प्याला भर दो," उन्होंने दबे हुए स्वर में भुनभुनाते हुए कहा।

कमरे में कुछ भी नहीं बदला था, प्रत्येक चीज जैसी-की तैसी थी, सिवा इसके कि मां वाले कोने में उदास सूनापन छाया था, और नाना के बिस्तरे के पास वाली दीवार पर कागज का एक टुकडा लटका था जिसपर, छापे के बडे-बडे अक्षरों में, लिखा हुआ था

"यीमू, मेरी आत्मा का उद्धार करना और मृत्यु की घड़ी जीवन के जितने भी दिन बाकी है, सब में अपनी दया बनाए रखना

"यह किसने लिखा है?"

नाना ने कोई जवाब नही दिया। कुछ रुक कर नानी मुसकराते हुए कहा:

"इस कागज का मूल्य सौ रूबल है।"

"तुम क्यो बीच में टाँग अडाती हो।" नाना ने चिल्ला क कहा। "मेरा धन है, मै चाहे गैरो में लुटाऊं!"

"लुटाने को अब रहा ही क्या है, और जब था तब एक-ए पाई दात से पकडते थे।" नानी ने शान्त भाव से कहा।

"चुप रहो!" नाना चीख उठे।

हर चीज वैसी ही थी जैसी कि होनी चाहिए—ठीक पहले जैसी।

कोने मे एक ट्रंक पर कपडे रखने की टोकरी रखी थी उसमे कोल्या सो रहा था। वह जाग उठा। भारी पलको मे छिपी उसकी आखो की नीली चमक मुश्किल से ही दिखाई देती थी वह अब और भी उदास, खोया-खोया-सा, एक छाया-मात्र रह गया था। उसने मुझे पहचाना तक नही और चुपचाप मुंह मोड़ कर अपनी आखें बन्द कर ली।

बाहर गली में भी दु:खद समाचार सुनने को मिले। व्याखिर मर चुका था—पैगन-सप्ताह के भीतर उसे चेचक माता उठा ले गई। खावी अपना बधना-बोरिया उठा कर नगर चला गया था, जब कि याज की टाँगे मारी गई थी और वह घर से बाहर तक नही निकल पाता था। यह सब बताते हुए काली आखो वाले कोस्त्रोमा ने झुंझला कर कहा:

"देखते-देखते सब उठ गए।"

"सच कहा, ले-देकर एक व्याखिर ही तो मरा है?"

"एक ही बात है। हमारी गली में जो नही रहा, उसे एक तरह से मरा हुआ ही समझो। मिलना-जुलना और मित्रता सब बेकार है। किसीसे मित्रता करो, जान-पहचान बढाओ, और तभी वे उसे कही काम पर भेज देते है या वह मर जाता है। तुम्हारे अहाते मे, चेस्नोकोव परिवार में, कुछ नये लोग आए है—येवसे-येवो परिवार के लोग। उनमे एक लडका है। नुस्का उसका नाम है। लडका बिल्कुल ठीक और खूब चुस्त है। उसके अलावा दो लडकिया है। एक छोटी है और दूसरी लगडी, बैसाखी लेकर चलती है। देखने में बडी सुन्दर।"

एक मिनट तक कुछ सोचने के बाद उसने फिर कहा

"मै और चुरका उससे प्रेम करते है, और हम हर घडी लडते-झगडते है।"

"क्या लडकी से?"

"अरे नहीं, लडकी से नही, बल्कि एक-दूसरे से। लडकी से तो जरा भी नही झगडते।"

यह तो म जानता था कि बडे लडके और यहाँ तक कि बडे लोग भी प्रेम में फस जाते है, और मै यह भी जानता था कि उनका यह प्रेम, मोटे रूप में, कितना गदा होता है। लेकिन इस समय म घबरा गया और कोस्त्रोमा के लिए मैने दुख का अनुभव किया। उसके बेडौल चौकटे और उसकी काली आखे देख कर न जाने क्यो मै अचकचा गया।

उसी दिन, साझ के समय, मैने उस लगडी लडकी को देखा। सीढियो से आगन म उतरते समय उसकी बैसाखी नीचे गिर पडी और वह, मास ऐसी उगलियों से जगले के जरिये को दबाये वही खडी रह गई—असहाय, कमजोर और क्षीणकाय। मैने बैसाखी को

उठाना चाहा, लेकिन मेरे हाथों में बधी पट्टी ने बाधा दी। काफी देर तक, निगशा और झुंझलाहट से भरा, मैं नेसाग्वी को उठाने की कोशिश करता रहा और वह मुझसे कुछ ऊँचाई पर खड़ी, धीरे-धीरे मुसकराती रही।

"तुम्हारे हाथों में क्या हुआ?" उसने पूछा।

"जल गए।"

"और मैं लंगडी हूँ। क्या तुम हमारे इसी अहाते में रहते हो? क्या तुम्हे अस्पताल मे बहुत दिनो तक रहना पडा? मुझे तो बहुत दिन लगे—इतने कि रूह कांप उठती है!" उसने उसास भरते हुए कहा।

वह एक पुरानी और ताजा कलफ की गई पोशाक पहने थी—सफेद रग की जिसपर घोड़े की नाल ऐसे नीले छापे छपे थे। बाल कंघी से सुलझे और एक घनी छोटी चोटी में गुथे उसके वक्ष पर पडे थे। उसकी आखें बडी और गम्भीर थी जिनकी शान्त गहराइयो मे नीली अग्नि शिखाए दमकती और उसके क्षीण पिचके हुए चेहरे को आलोकित करती थीं। उसकी मुसकराहट भी सुहावनी थी। लेकिन मुझे वह अच्छी नही लगी। रोगी-ऐसा उसका समूचा शरीर जैसे कहता प्रतीत होता था:

"कृपया मुझे न छूना!"

यह कैसे हुआ कि मेरे साथी इसके प्रेम मे पड गए?

"मैं बहुत दिनों से बीमार हूँ," बिना विलम्ब के, यहाँ तक कि आवाज मे कुछ गर्व का पुट भी भरते हुए, उसने मुझे बताया। "हमारी पड़ोसिन ने मुझपर टोना कर दिया। लडाई तो उसकी हुई मेरी माँ से और इसका बदला लेने के लिए उसने टोना कर दिया मुझपर। लेकिन तुम बताओ, क्या अस्पताल मे तुम्हारे साथ बुरी बीती?"

"हाँ।"

उसकी उपस्थिति में मुझे बडा अटपटा लग रहा था और मैं भीतर अपने घर में चला आया।

आधी रात के करीब नानी ने धीरे से मुझे जगाया।

"चलोगे नही? अगर तुम दूसरो का भला करोगे तो तुम्हारे हाथ जल्दी ठीक हो जाएगे।"

उसने मेरी बाँह पकडी और मुझे पकडे हुए अधेरे में इस तरह से चली मानो मैं अधा हूँ। रात काली और नम थी, हवा तेज गति से बहने वाली नदी की भाति थमने का नाम नही लेती थी, और रेत इतना ठडा था कि पाव सुन्न हुए जाते थे। नगर निवासियो के घरो की अधेरी खिडकियो के पास नानी चुपचाप सावधानी से जाती, तीन बार त्रास का चिन्ह बनाती, खिडकी की ओटक पर पाच कोपेक और तीन बिस्कुट रख एक बार फिर त्रास का चिह्न बनाती और, तारो-रहित आकाश की ओर आखें उठाए, फुसफुसा कर कहती

"स्वर्ग की पवित्र रानी, सब पर दया करना—हम सभी तो पापी है तुम्हारी नजरो में, देवी माँ!"

अपने घर से हम जितना ही दूर होते जाते अधेरा उतना ही घना होता जाता, प्रत्येक चीज उतनी ही अधिक सुनसान मालूम होती। ऐसा मालूम होता मानो रात के आकाश की अतल गहराइया ने चाद और तारो को सदा के लिए निगल लिया हो। एक कुत्ता भाग कर बाहर आया और मुह बाए हमारे सामने खडा हो गया। अधेरे में उसकी आखें चमक रही थी। भय के मारे मैं नानी से चिपक गया।

"डरो नहीं," नानी ने कहा, "यह एक कुत्ता ही तो है। भूत प्रेत इस समय बाहर नहीं निकलते, मुर्गे बोल चुके है।"

नानी ने कुत्ते को पुचकारा और उसका सिर थपथपाते हुए कहा

"देखो कुत्ते, मेरे नाती को अब और अधिक न डराओ, समझे।"

कुत्ते ने मेरी टांगों से अपना बदन रगड़ा और हम तीनो आगे बढ़े। नानी बारह बार खिड़कियो के पास गई और उनकी ओटक पर अपना 'गुपचुपदान' रख लौट आई। आकाश उजला हो चला। मलेटी घर अंधकार में से उभर आए, नापोलनाया गिरजे की बुर्जी चीनी मिट्टी की भांति सफेद चमकने लगी और कब्रिस्तान की ईंट की दीवारें, जालदार बाड़े की भांति, अर्द्ध पारदर्शी हो उठीं।

"तुम्हारी यह बूढी नानी तो थक गई," मेरी नानी ने कहा, "अब घर चलना चाहिए। गृहणियाँ जब सवेरे उठेंगी तो देखेंगी कि पवित्र मरियम ने बच्चों के लिए कुछ भेज दिया है। जब घर मे पूरा नहीं पडता तो थोड़ा सहारा भी बहुत मालूम होता है। तुमसे क्या कहूँ आल्योशा कि लोग कितनी गरीबी में जीवन बिताते है और कोई ऐसा नही है जिसे उनका कुछ ध्यान हो।

"अमीर आदमी नही करता चिन्ता भगवान की,
कयामत के दिन की और भगवान के न्याय की।
सोने की माया मे वह है कुछ ऐसा फंसा,
गरीबों के प्रति दिल मे न उपजे दया।
मरने पर जाएगा सीधा नरक,
सोने की माया मे होगा गरक।

"दुःख की बात तो यही है। हम एक-दूसरे का ध्यान रख
हुए जीवन बिताएँ तो भगवान भी हम सबका ध्यान रखे। मुझे
बात की खुशी है कि तुम अब फिर मेरे पास आ गए!"

खुश तो मैं भी था, लेकिन खामोश तरीके से। मुझे कुछ ऐसा अस्पष्ट सा अनुभव हो रहा था मानो मैंने किसी ऐसी चीज का सम्पर्क प्राप्त किया हो जिसे कभी नहीं भूला जा सकता। मेरे बरावर में वह कुत्ता चल रहा था जिसका रग खाकी, लोमडी ऐसा चेहरा और सदय तथा क्षमा-याचना-सी करती आंखें थीं।

"क्या यह अब हमारे साथ ही रहेगा?"

"क्यों नहीं, अगर इसका मन करता है तो हमारे साथ ही रहे। यह देखो, मैं इसे बिस्कुट दूंगी, मेरे पास दो बच रहे हैं। आओ, कुछ देर बेंच पर बैठ कर सुस्ता ले। न जाने क्यों, मुझे बडी थकान मालूम हो रही है।"

हम बेंच पर बैठ गए जो एक फाटक के पास थी। कुत्ता हमारे पांव के पास पसर कर सूखे बिस्कुट को चिचोडने लगा।

"यहां, इस घर में एक यहूदिन रहती है। उसके नौ बच्चे हैं, सब तरा-ऊपर के। 'कहो कैसे चल रहा है',—एक दिन मैंने उससे पूछा। उसने कहा —'चलना क्या है, बस भगवान का ही भरोसा है'।"

नानी के गरम बदन से चिपक कर मेरी आंखें लग गई थीं।

जीवन एक बार फिर तेज गति से बह चला—छलछलाता और हिलारें लेता। प्रत्येक नये दिन की प्रशस्त धारा अनगिनती घटनाओं की छाप से मेरा हृदय भर देती जो कभी मुझे विस्मय विमुग्ध या आतंकित करती, कभी दुःख पहुंचातीं या मेरे विचारों को उत्तेजित करती।

लगड़ी लड़की से यथासम्भव वार-वार मिलने, उससे वातें करने, या दरवाज़े के पास पडी वेच पर उसके साथ केवल चुपचाप वैठे रहने की इच्छा मेरे हृदय मे भी शीघ्र ही प्रवल हो उठी। उसके सग चुपचाप वैठने में भी सुख मिलता।' वह पक्षी की भाति साफ-सुथरी रहती और दोन प्रदेश के कज्जाको के जीवन का आश्चर्यजनक वर्णन करती। अपने चाचा के साथ, जो मलाई वनाने के किसी कारखाने में मिकेनिक थे, एक लम्वे अर्से तक वह दोन प्रदेश मे रह चुकी थी। इसके वाद उसके पिता, जो फिटर का काम करते थे, निजनी नोवगोरोद चले आए।

"मेरे एक चाचा और है जो खुद जार के यहाँ काम करते है।"

छुट्टी की सांझ गली के सव लोग अपने घरों से वाहर आ जाते। किशोर लड़के और लड़कियाँ कब्रिस्तान की ओर निकल जाते जहाँ वे दल वाध कर गाते-वजाते, वडे लोग शरावखानों मे पहुँचते, गली में केवल स्त्रियाँ और वच्चे ही रह जाते। स्त्रियाँ वेंचों या घरो के पास खाली रेत पर ही वैठ जातीं और लडाई-झगडों तथा इधर-उधर की अपनी वातो से आकाश सिर पर उठा लेतीं। वच्चे गेद, लकडी-वेडी और 'शरमाज़लो' के खेल खेलते और उनकी माताएँ खेल मे दक्षता दिखाने पर उनकी प्रशसा करती या औघड़पन का परिचय देने पर उन्हे दुतकारतीं। शोर इतना होता कि कान सुन्न हो जाते और दिन की वातें भुलाए न भूलतीं। वड़ों की उपस्थिति और उनकी दिलचस्पी से हम वच्चों में और भी हलचल मच जाती और हम भयानक तेजी तथा होड के साथ खेल में डूव जाते। लेकिन खेल में हम चाहे कितना भी क्यो न डूवे हो, कोस्त्रोमा, चुरक और मै लगडी लड़की के पास जाने और अपनी हिम्मत का वखा करने का समय निकाल ही लेते।

"तुमने देखा नही लुदमिला, कि किस तरह एक ही चोट में मैंने सभी निशाना को गिरा दिया!"

वह एक मीठी हसी हस कर अपना सिर भटका देती।

पहले हमारा समूचा दल हमेशा खेल में एक ही ओर रहने की कोशिश करता था, लेकिन अब मने देखा कि चुरका और कोस्त्रोमा विरोधी पक्षो में रहना पसद करते है, और एक-दूसरे के खिलाफ अपनी समूची शक्ति तथा चतुराई लगा देते है, यहाँ तक कि मारपीट और रोने-धोने की नौवत आ जानी है। एक दिन दोनो को अलग करने के लिए बडो को हस्तक्षेप करना पडा और उन पर पानी उँडेला गया मानो, आदमी न होकर वे कुत्ते हो!

लुदमिला उस समय बेंच पर बैठी थी। अपना सही-सालिम पाव वह धरती पर पटकती और जब लडनेवाले गुत्थम-गुत्था होकर लुढकते हुए उसके निकट आते तो वह उन्हे अपनी बैसाखी से दूर धकेल देती और भय से चीख कर कहती

"बन्द करो यह लडाई!"

उसका चेहरा पीला पड जाता, मानो बेजान हो। आखें धुधली और फटी-फटी-सी हो जातीं। ऐसा मालूम होता मानो उसे दौरा आनेवाला हो।

एक अन्य बार लकडी-बेंडी के खेल में चुरका से बुरी तरह हार खाने के बाद कोस्त्रोमा गल्ले की एक दुकान में जई की पेटी के पीछे मुँह दुबका कर पड गया और उसने, सुबक-सुबक कर, नि शब्द रोना शुरू कर दिया। भयानक दृश्य था। उसने अपनी बत्तीसी इतने जोरो से भींच ली थी कि उसके जबडे के पुट्ठे सूज उभर आए थे और उसका क्षीण चेहरा ऐसा मालूम होता था मानो पथरा गया हो। नीचे को भुकी उसकी काली आखो से बडे-बडे

आंसू गिर रहे थे। मेरे दम-दिलासा देने पर उसने अपने आंसुओं को पी लिया और हांफते हुए बोला:

"देख लेना, उसके सिर पर ऐसा पत्थर मारूंगा कि नील-नील हो जाएगा!"

चुरका उद्धत मुद्रा धारण किए था। गली में बांकेबीन की तरह चलता मानो स्वयंवर में जा रहा हो—टोपी को सिर के एक ओर तिर्छी किए, जेबों में हाथ डाले।

"मैं शीघ्र ही धूम्रपान शुरू करने वाला हूँ," दांतों के बीच से थूकने की अपनी नवीनतम उपलब्धि का प्रदर्शन करते हुए उसने कहा। "दो बार तो मैं धूम्रपान कर भी चुका हूँ, लेकिन अभी कुछ पटरी नही बैठी, चक्कर आने लगता है।

मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। मैं देखता कि मेरे साथी मुझसे दूर होते जा रहे हैं, और अनुभव करता कि लुदमिला के कारण ही ऐसा हो रहा है।

एक दिन, सांझ के समय, अपने बटोरे हुए चिथड़ों और हड्डियों की मैं छान-बीन कर रहा था। तभी लुदमिला आई और अपनी बैसाखी पर झूलते तथा अपना दाहिना हाथ हिलाते हुए खडी हो गई।

"हल्लो!" तीन बार अपने सिर को हल्के से हिलाते हुए उसने कहा। "क्या उस दिन कोस्त्रोमा तुम्हारे साथ गया था?"

"हां।"

"और चुरका?"

"चुरका अब हमारे साथ नही खेलता। और यह सब तुम्हारा ही दोष है। वे तुम से प्रेम करते है और इसीलिए आपस में लडते है।"

उसका चेहरा लाल हो उठा, किन्तु उद्धत स्वर में बोली·

"यह क्या कहते हो? इसमे मेरा दोष क्या है?"

"क्या नहीं, तुमने उन्हें अपने से प्रेम क्यों करने दिया?"

"मैं क्या उनसे कहने गई थी कि तुम मुझसे प्रेम करो?" उसने गुस्से में जवाब दिया और यह कहते हुए विदा हो गई—"क्या बकवास है! मैं उनसे बड़ी हूँ। चौदह वर्ष की मेरी आयु है। अपने से बड़ी लड़कियों से भी क्या कोई प्रेम करता है?"

"बस रहने दो।" उसके हृदय को आहत करने के लक्ष्य से मैंने चिल्ला कर कहा। "दुकानदार क्लिस्त की बहन को ही देख लो न? वह सचमुच में बड़ी है। लेकिन इससे क्या? ढेर सारे लड़के उससे छेड़खानी करते रहते हैं!"

लुदमिला ने तेजी से घूम कर मेरी ओर मुँह किया और ऐसा करने में उसकी बैसाखी रेत में गहरी गड़ गई।

"तुम कुछ नहीं जानते, अभी निरे बच्चे हो!" उसने आँसुओं में भीगी आवाज में कहा। उसकी सुंदर आँखों में बिजली कौंध रही थी।—"दुकानदार की बहन तो एक चरित्रहीन स्त्री है, लेकिन मैं—क्या तुम मुझे भी वैसा ही समझते हो? मैं अभी छोटी हूँ। मुझे उस तरह से न कोई छू सकता है, न चिकोटी काट सकता है। नहीं, मेरे साथ वह सब नहीं किया जा सकता। अगर तुमने 'कामचदाल्का' का उत्तरार्द्ध पढ़ा होता तो तुम इस तरह की बात नहीं करते!"

वह भुनभुनाती चली गई। उस पर मुझे दुख हुआ। उसके शब्दों में कुछ ऐसी सचाई थी जिससे मैं परिचित नहीं था। मेरे साथी क्या उसे तंग करते हैं? तिसपर उनका दावा यह है कि वे उससे प्रेम करते हैं।

अगले दिन, अपनी ज्यादती की क्षति-पूर्ति करने के लिए, मैंने दो कोपेक की 'जौ की चीनी' खरीदी। मैं जानता था कि लुदमिला की यह एक प्रिय चीज है।

"कुछ लोगी?"

"चले जाओ यहां से! मैं तुमसे मित्रता रखना नहीं चाहती" उसने जबर्दस्ती गुस्से में भर कर कहा। लेकिन मिठाई उसने ली, यह कहते हुए:

"भलेमानस, इसे कागज में तो लपेट लिया होता। जरा अपने हाथ तो देखो, कितने गंदे हैं।"

"मैंने तो बहुतेरा धोया, लेकिन मैल छूट कर न दिया।"

उसने मेरा हाथ अपने हाथों में ले लिया। उसके हाथ सूखे और गर्म थे। उसने मेरा हाथ उलट-पलट कर देखा। फिर बोली:

"तुमने अपने हाथ नष्ट कर लिए है।"

"तुम्हारी उंगलिया भी तो एकदम छिदी हुई है।"

"यह सुई से हुआ है। मै बहुत सीती हूं।"

कुछ मिनट रुककर, इधर-उधर ताकने के बाद, बोली:

"चलो, कही निराले मे चल कर बैठें और 'कामचदाल्का' पढ़ें। बोलो, पढना पसन्द करोगे?"

मनचीती जगह खोजने में कुछ समय लग गया। अन्त मे हमने निश्चय किया कि स्नानगृह का दरवाजा ठीक है। अंधेरा हो गया था, लेकिन हम खिडकी के पास बैठ सकते थे जो सायबान और कसाईखाने के बीच छितरे मैले मैदान की ओर खुलती थी। लोग बिरले ही उधर आते थे।

सो वह वहां, खिड़की के पास, बैठ गई। उसकी लंगडी टाग बेंच पर फैली थी और दूसरी अच्छी टाग फर्श पर। चिथडा हुई एक पुस्तक उसकी आंखों के सामने थी और नीरस तथा समझ में न आनेवाले शब्दों की धारा उसके मुंह से प्रवाहित हो रही थी। लेकिन मुझे उसने अभिभूत कर लिया। फ़र्श पर मै बैठा था और मुझे ऐसा लगता था मैं उसकी गम्भीर आंखों से निकलती दो

नीली लपटो को पुस्तक के पन्नो पर तिरते हुए देख सकता था—कभी वे आँसुओ के कारण धुधली हो जाती और वह थरथराती आवाज में, समझ में न आनेवाले अनजाने शब्द-समूहो का उच्चारण करती। मै इन शब्दो को पकडता और विभिन्न प्रकार से जोड-तोड बैठाकर उन्हें एक छद में बाधने की कोशिश करता। इस काम में मै इतना उलझ जाता कि पुस्तक के बारे में कुछ समझने का अवसर ही न मिलता।

मेरा कुत्ता घुटनो पर सिर रखे सो रहा था। मैने उसका नाम 'आधी' रख छोडा था। कारण कि वह लम्बी टागों वाला, भबरा और बहुत ही तेज कुत्ता था, और जब वह भौंकता था तो ऐसा मालूम होता मानो धुआँ निकलने की चिमनी में पतझड की तेज वायु सनसना रही हो।

"सुन रहे हो न?" लडकी ने पूछा।

मैने सिर हिला दिया। शब्दो का आलजाल, प्रति क्षण, मुझे अधिकाधिक विचलित करता और मै अधिकाधिक बेचैनी और व्यग्रता के साथ, शब्दो को एक नए क्रम में गूथ कर उन्हे किसी गीत के शब्दो की भाति सजाना चाहता—मानो प्रत्येक शब्द एक उज्ज्वल और दमकता हुआ तारा हो।

जब अधेरा हो जाता तो लुदमिला अपना कृश हाथ नीचे गिरा लेती जिसमें वह पुस्तक थामे थी।

"बढिया है न?" वह पूछती। "मैने तो पहले ही कहा था कि पुस्तक बढिया है।"

इसके बाद, स्नानगृह के दरवाजे पर, बहुधा हमारी बठक जमती। और सबसे बडे सन्तोष की बात तो यह थी कि लुदमिला ने 'धामचदाला' का पीछा शीघ्र ही छोड दिया। उसकी अन्तहीन कहानी का एक शब्द भी मेरे पल्ले नही पडा था। अन्तहीन इसलिए

कि दूसरे भाग के बाद (जिसे हमने पढ़ना शुरू किया ही था) एक तीसरा भाग और था, और लुदमिला ने बताया कि इनके अलावा एक चौथा भाग भी है।

उन दिनों जब वर्षा होती तो वहाँ बैठने में विशेष आनन्द आता, केवल शनिवारों को छोड़ कर क्योंकि शनिवार के दिन स्नानघर गर्म किया जाता था।

वर्षा झमाझम बरसती और किसी को घर से बाहर न निकलने देती। फलतः हमारी अंधेरी खिड़की के पास किसी के फटकने का कोई खटका नहीं रहता। लुदमिला की जान इस बात से बेहद सूखती थी कि कहीं हम पकड़े न जाएँ।

"क्या तुम्हें पता है कि हमें इस तरह बैठा देखकर वे क्या सोचेंगे?"

यह मैं जानता था, और इसलिए पकड़े जाने से मैं भी डरता था। वहाँ हम घण्टों बैठे बातें करते। कभी मैं उसे नानी की कहानियाँ सुनाता, और कभी लुदमिला मेदवेदित्सा नदी के तटवर्ती कज्जाकों के जीवन का वर्णन करती।

"वहाँ के क्या कहने!" उसास भर कर वह कहती। "यहाँ की भांति नहीं। यहाँ तो केवल भिखारी ही रह सकते हैं।"

मैंने निश्चय किया कि बड़ा होने पर मैं मेदवेदित्सा नदी की जरूर सैर करूंगा।

इसके शीघ्र बाद ही स्नानघर के द्वार पर हमारी बैठकों का सिलसिला खत्म हो गया। लुदमिला की माँ को एक फर-विक्रेता के यहाँ काम मिल गया और वह सुबह सवेरे घर से चली जाती, उसकी बहन स्कूल चली गई और उसका भाई एक टाइल-फैक्टरी में काम करता था। जब मौसम खराब होता तो खाना बनाने, कमरे और रसोई को ठीक-ठाक करने में मैं उसका हाथ बटाता।

"तुम और मैं ऐसे ही रहते हैं जैसे पति और पत्नी," वह हंस कर कहती। "केवल हम एकसाथ नहीं सोते। सच पूछो तो हमारा जीवन उनसे भी अच्छा है—पति तो कभी अपनी पत्नियों की मदद नहीं करते।"

जब भी मेरे पास कुछ पैसे होते तो मैं कोई मीठी चीज खरीदता और हम दोनों चाय बनाते-पीते और बाद में ठंडा पानी डाल कर समोवर को ठंडा कर देते जिससे लुदमिला की चिड़चिड़ी मां यह न ताड़ सके कि हमने समोवर को गर्म किया था। कभी-कभी नानी भी आकर हमारे साथ बैठ जाती, बेल बुनती या कसीदा काढ़ती और हमें बहुत ही बढ़िया कहानियां सुनाती और जब नाना बाहर चला जाता लुदमिला हमारे यहां आती और दीन-दुनिया की चिन्ता से मुक्त हम खूब खाते-पीते। नानी कहती

"कितना ठाठदार जीवन है हमारा, क्या है न? पैसा अपने पास हो तो कोई चूं नहीं कर सकता, चाहे जो खाओ पियो!"

वह हमारे मिलने-जुलने को बढ़ावा देती।

"यह अच्छा है कि लड़के और लड़की एक-दूसरे से मिलें-जुलें, केवल उन्हें कोई पागलपन की हरकत नहीं करनी चाहिए।'

और अत्यन्त सीधे-सादे ढंग से नानी हमें बताती कि 'पागलपन की हरकत' से उसका क्या मतलब है। उसके शब्दों में सुन्दरता होती, प्रेरणा होती और मैं सहज ही समझ जाता कि फूलों को उस समय तक नहीं छेड़ना चाहिए जब तक कि वे पूरी तरह से खिल न जाएं, अन्यथा न तो वे सुगंध देंगे, न ही उनमें फल आएंगे।

'पागलपन की हरकत' करने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि लुदमिला और मैं इन चीजों के बारे में बात नहीं करते थे जिनका जिक्र आम तौर पर साधारणतया

चुप्पी साध ली जाती है। लेकिन इन चीजों के बारे में हम नहीं बातें करते जब ऐसा करना हमारे लिए जरूरी हो जाता। कारण स्त्री-पुरुष-सम्बन्धों के भोंडे चित्र तो वैसे ही इतनी बार और इतने अनचाहे रूप में हमारी आँखों के सामने उछल कर आते थे कि हम दोनों विक्षुब्ध हो उठते थे।

लुदमिला के पिता येवमेंयेन्को की उम्र चालीस से कम न होगी। लेकिन था वह छैलछबीला: घुंघराले बाल और चेहरे पर मूंछ घनी और भारी भौंहे जो एक अजीब गर्वीले अन्दाज में नाचती रहतीं थीं। स्वभाव का इतना चुप्पा कि देखकर अचरज होता। मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने उसे कभी बोलते सुना हो। जब वह अपने बच्चों को प्यार करता तो गूंगे-बहरों की भांति आवाज़ करके रह जाता, और अपनी पत्नी को पीटते समय भी उसके मुंह से एक शब्द न निकलता।

छुट्टी के दिनों में, सांझ के समय, नीले रंग की कमीज चौड़ी मोरियों की मखमली पतलून और चमकदार बूट जूतों से वह लैस होता, कधे से बड़ा-सा हथबाजा लटकाता और घर से निकल कर दरवाज़े पर आ खड़ा होता — चुस्त और दुरुस्त, परेड के लिए तैयार सैनिक की भांति। शीघ्र ही दरवाजे के सामने चहल-पहल शुरू हो जाती। लड़कियों और स्त्रियों के दल, बत्तखों के झुंड की भांति सामने से गुजरते। कभी वे कनखियों से देखतीं — कुछ छिप कर पलकों की ओट में से। कभी वे खुलकर नज़रें लड़ातीं, — मानो भूखी आंखों से उसे चट कर जाना चाहती हैं। उधर वह, अपनी काली आँखों से, उनके एक-एक अंग को टटोल कर देखता, उनका जायज़ा लेता। आँखों का यह कुत्सित आदान-प्रदान जिस में वाणी का कोई स्थान नहीं था, और पुरुष के सामने स्त्रियों का यह जड़ प्रदर्शन — मानो इसके सिवा उनकी और कोई गति न हो, मानो

स्त्री-पुरुषों और कुत्ते कुतियों में कोई भेद न रह गया हो। जिसको भी वह चाहेगा, जिस किसी की ओर भी वह अपनी पुरुष दृष्टि से इशारा करेगा, मानो वही उसके सामने आकर बिछ जाएगी, सड़क की धूल चाटने लगेगी।

लुदमिला की माँ बड़बड़ाई

"क्या बकरे की भांति आँखें नचा रहा है—निर्लज्ज सूअर!"

कद में ऊँची और सींक-सी पतली, लम्बा और नोचा-खरोचा-सा चेहरा, छोटे-छोटे छटे हुए बाल जो उस समय काट दिये गए थे जब मियादी बुखार उसके गले पड़ गया था। देखने में वह ऐसी मालूम होती मानो कोई पुरानी घिसी-पिटी भाड़ हो।

बगल में ही लुदमिला बैठी होती और इधर-उधर की बातें करके अपनी माँ का ध्यान बटाने का निष्फल प्रयत्न करती।

"मेरी जान न खा, लगड़ी चुड़ैल!" बेचैनी से अपनी आँखें मिचमिचाते हुए उसकी माँ बुदबुदा कर कहती। उसकी छोटी-छोटी मगोल आखों में एक अजीब सूनापन और थिरता दिखाई देती — मानो उन्होंने किसी चीज़ को छुआ हो और फिर उसीसे चिपक कर, वहीं की वहीं थिर रह गई हो।

"गुस्सा न करो मा, उससे कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा," लुदमिला कहती। "ज़रा उस चटाई बनाने वाले की विधवा को तो देखो, उसने क्या सिगार किया है!"

माँ उस वृहदाकार विधवा की ओर देखती। फिर आसुओं में भीगे निर्मम स्वर में कहती

"म क्या सिगार करना और बनना-सवरना नहीं जानती? लेकिन तुम तीनों मेरी जान लगो तब न? भीतर और बाहर, तुम लोगों ने कुछ भी बाकी नहीं छोड़ा, मुझे पूरी तरह से नोच खाया!"

चटाई बनाने वाले की विधवा क्या थी मानो कोई छोटा-मोटा-सा घर थी। उसका वक्ष छज्जे की भांति आगे को निकला हुआ था। कस कर बांधे हुए हरे रूमाल से घिरा उसका लाल चेहरा ऐसा मालूम होता था मानो वह एक झरोखा है जिसे सांझ के सूरज की लाली ने रंग दिया है।

येवसेयेन्को ने फिरा कर अपना हथबाजा संभाला और वक्ष से सटा कर उसे बजाने लगा। वाद्य-यंत्र से समृद्ध स्वरलहरियां निकलीं और दूर-दूर तक एक जादू-सा छा गया। इस छोर से उस छोर तक समूची गली के लड़के, आपा भूल कर, वहां जमा हो गए और सुध-बुध बिसरा कर सुनने लगे।

येवसेयेन्को की पत्नी फुकार छोड़ती:

"जिस दिन किसी के हत्थे चढ जाओगे, वह मार पड़ेगी कि सारा रास रंग भूल जाएगा!"

आडी नज़र से वह एक बार अपनी पत्नी की ओर देखता और उसकी बात को मानो इस एक नज़र से ही उड़ा देता।

चटाई बनाने वाले की विधवा ज़्लिस्त की दुकान के सामने वाली बेंच पर तन्मय-सी बैठी रहती। उसका सिर एक ओर को झुका था और वक्ष धौंकनी की भांति गहरी उसासें भरता।

कब्रिस्तान के उस पार का मैदान छिपते हुए सूरज की लाली से सिन्दूरी हो उठता और गली एक तेज नदी का रूप धारण कर लेती जिस मे रंग-बिरंगे शोख कपड़ों मे लिपटे मांस के लोथड़े तैरते और बच्चे बगूलो की भांति चक्कर लगाते। वायुमण्डल मादक हो उठता। धूप में तपे रेत से पचमेल गंध उठती जिसमे बूचड़खाने से आनेवाली चर्बीमायल गंध—रक्त की लपक—सबसे तेज़ होती। जीनसाज़ो के अहाते से खालों की नमकीन तेज़ाबी गंध आती। स्त्रियों की चखचख और चुचुआहट, नशे में धुत्त पुरुषों का शोर, बच्चो की तेज़

चिल्लाहट और हथवाजे के मीठे स्वर मिल कर एक ऐसे सगीत का रूप धारण कर लेते जिसकी धड़कन दूर-दूर तक सुनाई देती—मानो प्रसवमान धरती गहरी उसासें ले रही हो। सभी कुछ अनगढ, नगा और उघड़ा था, और इस कुत्सित जीवन के प्रति जो इस हद तक निर्लज्ज पाशविकता में डूबा था और इतनी उत्कट व्यग्रता के साथ अपनी गर्वीली शक्ति की निकासी के लिए मार्ग खोज रहा था, व्यापक तथा सबल विश्वास का सचार करता।

और इस सामूहिक शोर-शराबे में से कभी-कभी कुछ ऐसे जानदार शब्द उछकर आते जो हृदय मे खुब जाते और स्मृति म जम कर बैठ जाते।

"एक साथ उस पर टूट पडने से किसी के कुछ पल्ले नही पडेगा। बारी-बारी से अपना भाग्य आजमाओ!"

"जब हम खुद अपने पर तरस नही खाते तो फिर दूसरे ही हम पर क्या तरस खाए?"

"मालूम होता है, परमात्मा ने यो ही मजाक में नारी का निर्माण कर दिया है!"

रात घिरने लगती। वायु में और भी ताजगी आ जाती। शोर-शराबा शान्त हो चलता। लकडी के घर मानो बढ और फल कर छायाओ का बाना धारण कर लेते। सोने का समय हो जाता। कुछ बच्चो को जबर्दस्ती घरो में खदेड दिया जाता, कुछ वही बाडा के नीचे, अपनी माताओ के पावो पर या गोद म, सो जाते। बडे बच्चे भी अब चुप हो जाते, एकदम शान्त, मानो शतानी करना जानते ही न हो। येवमेयेन्को, न जाने कब, विलीन हो जाता— मानो वह छाया बन कर उड गया हो। चटाई बनाने वाले की विधवा भी गायब हो जाती और हथवाजे की गहरी ध्वनि अब कब्रिस्तान के उस पार कहीं बहुत दूर से आती मालूम होती।

दुकानदार का वीस वर्षीय लडका वाल्योक, मोटा-थलथल, लाल गालो वाला, टहलता हुआ आता और हमारी वाते सुनता।

"तावूत पर सुवह तक सोनेवाले को मै वीस कोपेक और दस सिगरेट देने के लिए तैयार हूँ, लेकिन अगर तुम डर कर भागे तो मुझे खूव जी भर कर तुम्हारे कान खीचने का अधिकार होगा। बोलो, क्या कहते हो?"

सभी चुप हो एक-दूसरे का मुँह देखने लगते। लुदमिला की माँ इस खामोशी को तोड़ती।

"मूर्खता की बातें न करो!" वह वोली।—"लड़को को इस तरह के काम करने के लिए क्यों उकसा रहे हो?"

"मुझे एक रूवल दो तो मै यह काम करने को तैयार हूँ," चुरका वुदवुदाता।

"वीस कोपेक मे जाते नानी मरती है, क्यो?" स्वर मे घृणा का पुट भरते हुए कोस्त्रोमा कहता।—"देख लेना वाल्योक, इसे तुम एक रूवल दोगे तव भी यह नही जाएगा। यह व्यर्थ की डीग मार रहा है।"

"अच्छी वात है। मैं एक रूवल ही दूँगा!"

यह सुनकर चुरका उठता और वाडे के साथ वदन को सटाए चुपचाप वहाँ से खिसक जाता। कोस्त्रोमा मुँह मे अपनी उँगलियाँ डाल कर सीटी की तेज आवाज उसके पीछे छोड़ता और लुदमिला व्यग्र स्वर में कहती:

"हाय राम, आखिर इतना वढकर वोलने की आवश्यकता ही क्या थी?"

"कायर हो तुम सव!" वाल्योक कोंचते हुए कहता।—"और अपने को गली के सव से वढिया लड़ैत समझते हो। ऊँह, तुम्हे तो पिल्ले कहना चाहिए—कुतिया के पिल्ले!"

उसका इस तरह काचना अखर गया। मोटा गावदुम वाल्योक हमें कभी अच्छा नही लगता। वह हमेशा बच्चो को कोई न कोई शैतानी करने के लिए उकसाता, लडकियो और स्त्रिया के बारे में गदे किस्से सुनाता और उन्हे उनकी खिल्ली उडाना सिखाता। बच्चे उसके कहने में आ जाते और बाद में इसका बुरी तरह फल भुगतते। न जाने क्या, मेरे कुत्ते से उसे खास चिढ थी। वह हमेशा उसपर पत्थर फेकता, और एक दिन तो उसने रोटी के टुकडे में सूई रखकर उसे खिला दी।

लेकिन चुरका का इस तरह से मुँह की खाकर खिसक जाना मुझे उससे भी ज्यादा अखरा। वाल्योक से मैंने कहा

"मुझे एक रूबल दो, म जाने के लिये तैयार हू।"

मुझे चिढाने के लिए उसने मुँह फुलाकर मेरी ओर देखा, और रूबल लुदमिला की माँ के हाथ में देने लगा।

"नही, मुझे नही चाहिए, मैं नही रखूगी तुम्हारा रूबल!" लुदमिला की माँ ने कहा और गुस्से में भर कर चली गई। लुदमिला ने भी रूबल लेने से इन्कार कर दिया। वाल्योक अब और भी शेर हो गया, और लगा हमें चिढाने। मैं बिना रूबल लिए ही जाने को तैयार था कि तभी नानी आ गई। उसने सारा हाल सुना, रूबल अपने हाथ ले लिया और शान्त स्वर मे मुझसे कहा

"अपना कोट कंधो पर डाल लो, और एक कम्बल भी ले लेना, सुबह होते ठड हो जाती है।"

नानी के शब्दों ने मुझमें हिम्मत का सचार किया कि डरने की ऐसी कोई बात नही है।

वाल्योक ने शर्त रखी कि सुबह होने तक सारी रात मैं ताबूत पर ही या तो बैठा रहूँ या सो जाऊँ, जो भी हो मैं वहाँ से न हटूँ, — चाहे ताबूत हिले-डुले या उस समय डगमगाए जब

फालीनिन उससे बाहर निकलना शुरू करे। अगर मैं उछल कर खडा हो गया तो बाजी हाथ से जाती रहेगी।

"खूब अच्छी तरह से समझ लो," वाल्योक ने कहा,—"मैं सारी रात तुम्हें ताकता रहूँगा।"

जब मैं कब्रिस्तान के लिए रवाना हुआ तो नानी ने मुझ पर क्रास का चिन्ह बनाया और मुझे चेताते हुए कहा:

"अगर तुम्हें कुछ दिखाई भी दे तो अपनी जगह से हिलना नही। बस, मरियम का नाम लेना, सब ठीक हो जाएगा।"

मैं तेज डगो से चल दिया। एक ही चिन्ता मुझे थी। वह यह कि जिस किस्से को मैंने उठाया है, वह जल्दी-से-जल्दी पूरा हो जाए। वाल्योक, कोस्त्रोमा तथा अन्य कुछ लटके भी मेरे साथ हो लिए। ईटों की दीवार को पार करते समय मेरी टाँग कम्बल में फस गई और मैं गिर पडा। लेकिन मैं फुर्ती से उछल कर खड़ा हो गया मानो खुद धरती ने पीछे से लात मार कर मुझे फिर से खडा कर दिया हो। दीवार के दूसरी ओर मुझे खिलखिलाने की आवाज सुनाई दी। मेरे हृदय मे जैसे एक झटका सा लगा, और सारे बदन में शीत की एक कंपकपी सी दौड गई।

गिरता-पडता मै काले ताबूत के पास पहुँचा। एक ओर से वह रेत मे धंसा था, दूसरी ओर उसके छोटे-छोटे पाव दिखाई देते थे। ऐसा मालूम होता था मानो किसी ने उसे उठाने की कोशिश की हो, मगर सफल न हो सका हो। मैं ताबूत के एक किनारे पर बैठ गया और अपने आस-पास एक नजर डाल कर देखा: ढूहो से भरा कब्रिस्तान भूरे क्रासो का घना जगल मालूम होता था। क्रासो की लपलपाती हुई छायाए क्षीण हाथो की भांति कब्रों के कसमसाते ढूहों का आलिगन करती प्रतीत होती थी। जहाँ-तहाँ, कब्रो के बीच, दुबले-पतले और सूखा रोग ग्रस्त बर्च वृक्ष उगे थे जिनकी

डाले एक दूसरे से पृथक कब्रों के बीच सम्पर्क स्थापित कर रही थी। उनकी परछाइयों की कसीदाकारी को वेध, मरकटे आदि उग आए थे। कब्रिस्तान का उदासीभरा ऊबड-खाबडपन सचमे भयानक मालूम होता था। बर्फ के एक भीमाकार बगुले की भांति कब्रिस्तान का गिरजा खडा था और हरकत शून्य बादलो मे क्षीणकाय चाद चमक रहा था।

याज के पिता ने जो एक "जगखाया देहकान" था, बडी अलसाहट के साथ गिरजे का घटा बजाया। हर बार, जब भी वह घटे की रस्सी खीचता, छत की चादर के एक टूटे हुए हिस्से में उलझ कर पहले तो वह चू-चरर की आवाज करती और उसके बाद घटे की सोग में डूबी लघु आवाज सुनाई देती।

मुझे चौकीदार की बात याद हो आई। वह अक्सर कहा करता

"भगवान और चाहे जो करे, पर किसीकी सुख की नीद न छीने।"

सभी कुछ भयानक और दमघोट था। रात ठडी थी, फिर भी मै पसीने में तर हो गया। अगर बूढ़े वालीनिन ने अपने ताबूत में से निकलना शुरू किया तो कौन जाने, मै भाग कर चौकीदार की कोठरी तक भी पहुच सकूगा या नही?

मैं कब्रिस्तान के कोने-कोने से परिचित था। याज और अपने अन्य साथियो के साथ यहाँ आकर बीसियों बार हम धमाचौकडी मचा चुके थे। और यहाँ, गिरजे के पास, मेरी मा की कब्र थी।

अभी पूरी तरह सोना नही पडा था। बस्ती की ओर से कहकहो की आवाज और गीतो के टुकडे अभी भी रह-रहकर सुनाई देते थे। पहाडियो के उधर कही दूर से, या रेल्वे के उन खड्डो से जहाँ मजदूर रेत खोदकर निकालते थे, या पडोस के कानीजोवका

र से, हथवाजे के चीखने और सुबकियों-सी रोने की आवाज आ
ी थी। सदा नशे में धुत्त रहनेवाला लोहार मियानोव क्रिस्तान
दीवार के उस पार लड़खड़ाता हुआ आया। गीत सुनकर मैं उसे
हचान गया। वह गा रहा था:

मेरी माँ है बड़ी शैतान
करती वही जो लेती मन में ठान
सब को देती वह दुत्कार
करती बस नाना से प्यार।

जीवन और चहल-पहल की इन आखिरी सांसों को सुनकर कुछ हिम्मत बधी, लेकिन घंटे की प्रत्येक ठनठन के साथ सन्नाटा गहरा होता गया, और निस्तब्धता नदी की भांति उमड़ती-घुमड़ती चरागाहों पर छा गई, अपने सिवा अन्य हर चीज़ का अस्तित्व उसने मिटा दिया, अपने में उसे समा लिया। मेरी आत्मा सीमाहीन, अथाह शून्य में डूबकर बुझ गई—शून्य के एक ऐसे सागर में वह पूर्णतया विलीन हो गई जिसमें केवल पकड़ाई न देने वाले तारे जीवित रहते और जगमगाते हैं, उनके सिवा अन्य हर चीज नष्ट हो जाती है, मुर्दा और अवाछनीय।

अपने कम्बल को चहुओर बदन से लपेट कर और पाँव सिकोड कर मैं बैठ गया। मेरा मुंह गिरजे की ओर था, और हर बार जब भी मैं हिलता-डुलता, ताबूत चरमर करता और रेत किरकिरा उठता।

मेरे पीछे ही ज़मीन से किसी चीज़ के टकराने की ठक से आवाज हुई—पहले एक बार, फिर दूसरी बार, और इसके बाद ईंट का एक ढेला ताबूत के पास आ गिरा। यह भयावह था लेकिन मैंने तुरत भाप लिया कि वाल्योक और उसके हमजोल

मुझे डराने के लिए दीवार के उस पार से ये सब फेंक रहे हैं। यह सोचकर कि दीवार के उस पार लोग मौजूद हैं, मैंने दिलजमई का अनुभव किया।

मैं अपनी माँ के बारे में सोचने लगा। एक बार मेरे सिगरेट पीने की बात जान कर जैसे ही माँ ने मुझे मारना शुरु किया तभी मैंने कहा

"मुझे हाथ न लगाना। बिना मारे ही मेरा बुरा हाल है। मेरी तबीयत ठीक नही है।"

मार के बाद म तन्दूर के पीछे जा छिपा। माँ की आवाज कानो मे आई, वह नानी से कह रही थी

"कितना हृदयहीन लडका है। इसके मन में किसी के लिए ममता नही है।"

माँ की यह बात सुनकर मुझे बडा दुख हुआ। जब कभी भी माँ मुझे मारती-पीटती तो मुझे उस पर तरस आता, और उसके लिए मै लज्जा का अनुभव करता था। ऐसा विरले ही होता जब वह मुझे बिना कसूर मारती हो।

दुख पहुचानेवाली चीजो की जीवन में कोई कमी नही थी। अब इन लोगो को ही लो जो दीवार के उस पार मौजूद थे। उन्हे अच्छी तरह से मालूम था कि यहाँ, इस कब्रिस्तान मे, अकेले बठे रहना ही कुछ कम भयानक नही था। लेकिन वे थे कि मेरी रुह को और भी अधिक कब्ज करने पर तुले थे। आखिर क्या?

मेरे मन में हुआ कि उनसे चिल्ला कर कहू

"शैतान तुम्हें जहन्नुम रसीद करे!"

लेकिन कब्रिस्तान में शैतान का नाम लेना खतरनाक था। निश्चय ही वह यहीं कहीं, आस पास में छिपा होगा। मेरी बात सुन कर अगर वह नाराज हो गया तो

रेत मे अवरक के कणो की वहुतायत थी और वे चाँद की
गनी मे धुधले-धुधले से चमक रहे थे। उन्हे देख कर मुझे याद
या कि एक दिन उस समय जब किसी डोंगी में लेटे-लेटे मै
ाका नदी के पानी में देख रहा था, ठीक मेरी आंखो के सामने
हसा एक नन्ही सी मछली प्रकट हुई, वगल के वल लोट-पोट
र उसने मानवीय चेहरे का रूप धारण कर लिया, पक्षियो जैसी
छोटी-छोटी गोल आँखो से उसने मेरी ओर ताका और फिर पेड
से गिरे शहतूत के पत्ते की भांति फरफराती, डुबकी लगा कर
पानी की गहराइयो मे गायव हो गई।

मेरी स्मृति अत्यन्त क्रियाशील हो उठी और जीवन की
कतिपय घटनाओ को वटोर कर वह एक ऐसी वैरीकेड खडी कर
रही थी जिससे उन तमाम डरावनी चीजो से अपनी रक्षा कर सके
जिनकी रचना करने पर मेरी कल्पना ने उस समय कमर कस
ली थी।

उदाहरण के लिए अपने छोटे-छोटे मजवूत पांवो से रेत मे
खड़वड़ करती एक सेही मेरी ओर आई। उसे देख कर मुझे घर के
कोने-कोने में छिपे भूत का ध्यान हो आया। निश्चय ही वह भी
इतना ही छोटा और इतना ही भोड़ा होता होगा।

इसके तुरंत वाद ही मुझे अपनी नानी का ध्यान आया जो
तन्दूर के सामने पसर कर यह मन्त्र पढ़ा करती थी:

"मेरे नन्हे भूत, मुवे तिलचट्टो को हजम कर जा!"

नगर की सीमाओ से दूर, वहुत दूर, मेरे दृष्टि-क्षेत्र से
परे, आकाश मे उजाला फैलने लगा। प्रात.काल की ठडी हव
मेरे कपोलो में सुइयाँ सी चुभाने लगी। नीद के मारे मेरी पलवे
भारी हो गई। अपने शरीर को समेट कर मैने गुडमुडी सी वन

ली और सिर कम्बल से ढक लिया। आए, जिस बला को भी अब आना हो!

नानी ने आकर मुझे जगाया। वह मेरे बगल में खडी कम्बल को खीच रही थी और कह रही थी

"उठ अब! तुझे पाला तो नही मार गया? बहुत डर तो नही लगा?"

"डर तो लगा, लेकिन किसीसे कहना नहीं। यह किसी को नही मालूम होना चाहिए।"

"इसमें छिपाने की क्या बात है?" नानी ने कुछ अचरज से पूछा। "अगर वहाँ डर की कोई बात न होती तो एक तुम्ही क्या, कोई भी इस काम को कर सकता था!"

हम दोनो घर की ओर चले। रास्ते में नानी ने नरमी से कहा

"मेरे लाटन कबूतर, दुनिया में हर चीज का खुद तजुर्बा करके देखना होता है। जो खुद सीखने से कन्नी काटता है, उसे दूसरे भी नही सिखाते।"

साझ तक मैं अपनी गली का 'हीरो' बन गया। जो भी मिलता, मुझसे पूछता.

"क्या डर नही लगा?"

और म जवाब देता

"डर क्यो नही लगता?"

सिर हिला कर वे जवाब देते

"हम तो पहले ही कहते थे!"

दुकानदार की पत्नी ने, भरे-पूरे विश्वास के साथ, जोरो से घोषणा की

"इसका मतलब यह कि कालीनिन का कब्रिस्तान से निकल कर चक्कर लगाना एकदम झूठी बात है। अगर यह बात सच

होती तो क्या वह इस लडके से डर कर क़ब्र में ही दुबका रहता? नही, टॉग पकड कर वह इसे कब्रिस्तान से बाहर इतने जोरों से फेंकता कि खुदा जाने यह कहाँ जाकर गिरता!"

लुदमिला ने मुझे चाव-भरे अचरज से देखा, और मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो नाना भी मुझसे खुश है—उनकी बत्तीसी बाकाय-दा खिली हुई थी। केवल चुरका ऐसा था जो जल कर बोला:

"इसे कौन खटका? इसकी नानी दुनिया-भर के जादू-टोने जानती है न?"

३

मेरा भाई कोल्या सुबह के सितारे की भांति योही चुपचाप ओझल हो गया। वह, नानी और मै बाहर सायबान मे जमा तख्ते के ढेर पर सोते थे जिनपर पुराने चिथड़े और गूदड़ फैले थे एक भोडी सी दीवार के पीछे मकान-मालिक का मुर्गीघर था अलसाई और पेट मे दाना पडी मुर्गियो की कुटकुट और उन परों की फडफडाहट हम हर साझ सुनते और स्वर्णिम मुर्गा जब ह सुबह भर-पूर गले से बाग देता तो हमारी नीद उचट जाती।

एक दिन नानी जब सुबह ही सुबह उठी तो झुझला व बोली.

"मेरे हाथ पड़ जाए तो एक ही झटके मे इसकी गर मरोड़ दूं!"

मै पहले ही जग गया था और दीवार की दराजो मे आने वाली सूरज की किरनों और उनमे तैरते रेत के रुपहले क को देख रहा था जो परियो की कहानी के शब्दो की भांति चमक रहे थे। तख्तो के ढेर मे चूहे खड़बड़ कर रहे थे और छोटे-छ — तिलचट्टे जिनके परों पर काली चित्तियाँ थी, घूम-फिर रहे

मुर्गियों की बीट और कूड़े-कचरे की गंध से घबरा कर कभी-कभी मैं सायबान से रेंग कर बाहर निकल आता और छत पर चढ़ कर वहाँ से पड़ोसियों को जागते हुए देखता—डीलडौल में लम्बे-चौड़े, नींद से बोझिल और मुंदी हुई सी आँखें!

एक खिड़की में से फेरमानोव का चटाईनुमा सिर प्रकट होता। वह नाव चलाता था और नशे में धुत्त रहता था। अपनी गुम्मा सी आँखों को मिचमिचा कर उसने सूरज की ओर देखा और मुंह से सूअर की भांति आवाज निकाली। फिर नाना की शक्ल दिखाई देती—तेजी से अहाते में आते अपने सिर के गिने-चुने लाल बालों को दोनों हाथों से खुजलाते हुए। ठंडे पानी से हाथ-मुंह धोने की जल्दी में वह गुसलखाने की ओर लपके जा रहे थे। मकान-मालिक की महाराजिन नजर आती जिसकी जुबान कैंची की भांति चलती थी। उसका भूरे धब्बों वाला चेहरा और नोकनुकीली नाक कौवा पक्षी की भांति मालूम होती। खुद उसका मालिक भी किसी बूढ़े और मोटे कबूतर से कम नहीं था, और अहाते के अन्य सब लोग भी मुझे किसी न किसी पशु या जंगली जन्तु की याद दिलाते थे।

सुहावनी और साफ-सुथरी सुबह थी, लेकिन न जाने क्यों मेरा हृदय भारी था और यहाँ से दूर भाग जाने को जी चाहता था, जहाँ मैं अकेला और कोई न हो। मैं जानता था कि यहाँ कितना भी अच्छा दिन क्यों न हो, लोगों के हाथ में पड़ कर वह मटियामेट हो जाएगा।

एक दिन जब कि मैं छत से लेटा हुआ था, नानी ने मुझे बुलाया और सिर से बिस्तर की ओर इशारा करते हुए धीमे से बोली।

'कोल्या मर गया।'

उसका नन्हा शरीर लाल मलमल के तकिये से लुढक कर फैल्ट की चटाई पर आ गया था। उसका नीला वदन उघडा हुआ था। कमीज सिकुड-सिमट कर गरदन से लिपट गई थी और उसका फूला हुआ पेट तथा घावो से वदनुमा टाँगे दिखाई दे रही थीं। उसके हाथ कमर के नीचे धसे हुए थे। ऐसा मालूम होता था मानो उसने उठने का प्रयत्न किया हो, लेकिन उठ न सका हो। उसका सिर कुछ एक ओर को लटक गया था।

कघे से अपने वालो को सुलझाते हुए नानी वोली:

"भगवान ने अच्छा किया जो इसे अपने पास वुला लिया। भला, इस मरियल शरीर को लेकर यह जीता भी किस तरह?"

नाना भी आ गए और शरीर के पास झूमने-झूलने के वाद वहुत ही हल्के हाथ से उन्होने वच्चे की मुँदी हुई आँखो को छुआ।

नानी ने तेज स्वर मे कहा·

"विना धुले हाथो से इसे क्यों छू रहे हो?"

नाना वुदवुदाए:

"दुनिया मे पैदा हुआ, दो-चार दिन सास ली, दाना-पानी चुगा—और सव फुर्र!"

नानी ने वीच मे टोका:

"यह क्या वडवड़ा रहे हो?"

नाना ने सूने अन्दाज से नानी की ओर देखा और वाहर अहाते मे चले गए। जाते हुए वोले:

"मेरे पास एक दमडी नही है। इसे दफ़नाने के लिए तुम से जो वने, करना।"

"कमीना, मक्खीचूस!"

मै भी वाहर खिसक गया और सांझ होने के वाद ही घर की ओर मुंह किया।

कोस्त्या को अगले दिन सवेरे दफना दिया गया। मैं गिरजे में नहीं गया और जब तक सारा कार्य समाप्त नहीं हो गया, अपनी माँ की कब्र के पास बैठा रहा। माँ की कब्र खोद कर साफ दी गई थी जिससे मेरा छोटा भाई उसीमें दफनाया जा सके। मेरा कुत्ता और याज़ का बाप भी मेरे साथ बैठे थे। याज़ के बाप ने करीब-करीब मुफ्त में ही कब्र खोद दी थी और मेरे पास बैठा अपनी इस उदारता पर शेखी बघार रहा था।

"तुम मेरे मित्र हो, इसलिए मैं इतना गम खा गया। नहीं तो एक रूबल से कभी कम नहीं लेता।"

मिट्टी का पीला गढा बुरी तरह गंधा रहा था। मैंने उसमें झांक कर देखा और काले मिट्टी-चढे तख्तों पर मेरी नजर पडी। मैं जरा सा भी हिलता और रेत की धारा सरसरा कर गढे की तलहटी में गिरने लगती। और इसीलिए, जान बूझ कर, मैं अपने बदन को हिलाता जिससे रेत की धारा उन तख्तों पर गिरे और वे ढक जाएं।

याज़ के बाप ने पाइप मुँह से लगाया और धुएँ का कश खीचते हुए कहा

"शैतानी न करो, लड़के।"

नानी अपने हाथों में एक छोटा सा सफेद ताबूत लिए आई। याज़ का बाप—वह "जगखाया दहकान"—गढे में कूद गया, नानी के हाथों से उसने ताबूत लिया और उसे वहीं काई-चढे तख्तों के पास, जमा दिया। फिर वह उछल कर गढे से बाहर आ गया और रेत को अपनी टाँगो तथा फावडे से सरका कर गढे में भरने लगा। उसका पाइप लोबान की भांति धुआँ छोड रहा था। नानी और नाना ने भी, बिना कुछ बोले, उसका हाथ बटाया। न वहाँ कोई पादरी था, न भिखारियों का जमघट था। क्रासों के इस जंगल

में हम चार लोगों के सिवा वहां और कोई नहीं दिखाई देता था।

चौकीदार को—याज के बाप को—मजदूरी देते समय नानी ने उसे आड़े हाथों लिया:

"लेकिन तुमने मेरी बेटी का ताबूत भी झंझोड़ डाला, क्यों?"

"मैं क्या करता? उसे बचाने के लिए मैंने कुछ मिट्टी तो पड़ोस की कब्र तक की खोद डाली। निश्चिन्त रहो। तुम्हारी लड़की का ताबूत जैसा का तैसा है।"

नानी ने माथा झुका कर कब्र की मिट्टी के प्रति सम्मान प्रकट किया, अपनी नाक बिसूरी और सुबकियां भरते हुए कब्र से विदा ली। नाना भी पीछे-पीछे हो लिए। अपने फ़्राकनुमा कोट को जो चिथड़े-चिथड़े हो गया था, खींच कर उन्होंने बदन से सटा लिया और अपनी आंखों को टोपी के नीचे छिपा लिया।

सहसा नाना ने कहा:

"अनजोती भूमि में हमने अपना बीज डाला था।" और मेड़ पर से उड़ने वाले कौवे की भांति लपक कर नाना हम सब से आगे निकल गए।

मैंने नानी से पूछा:

"नाना ने यह क्या कहा?"

नानी ने जवाब दिया:

"भगवान जाने। उसे भी निराली ही सूझती है।"

बड़ी उमस थी। नानी धीमे डगों से आगे-आगे चल रही थी। गर्म रेत मे उनके पांव धस जाते थे। रह-रह कर वह रुक जातीं और रूमाल से अपने माथे का पसीना पोंछती।

आखिर, बड़ी कोशिश के बाद, मैंने नानी से पूछा:

"कब्र के भीतर जो वह काला-काला दिखाई देता था, क्या वह मा का ताबूत था?"

"हाँ," नानी ने तीखे स्वर में कहा।—"वह बूढा खूसट न जाने कैसी कब्र खोदता है! एक साल होने नहीं आया और कार्या गंधाने भी लगी। यह सब रेत की करामात है। पानी रिस रिस कर भीतर पहुँच जाता है। उससे तो मिट्टी कहीं अच्छी होती है।"

"कब्र में क्या सभी गधाने लगते है?"

"हाँ, सभी। केवल सन्तो को छोड कर।"

"लेकिन तुम कभी नही गधाओगी!"

नानी ठिठक कर खडी हो गई। मेरे सिर की टोपी को सीधा किया। फिर गम्भीर स्वर में बोली

"ऐसी बातें सोचना गलत है। नही, तुम्हें ऐसी बाते नही सोचनी चाहिएं—कभी भी नही!"

मैंने मन ही मन में कहा

"कितनी बुरी और कितनी कुत्सित होती है मृत्यु! कितनी घिनौनी!"

मेह जो गिरता जा रहा था।

जब हम घर पहुचे तो देखा कि नाना ने समोवर गर्म कर रखा है और मेज सजी है। नाना ने कहा

"चाय तैयार है। आज मै अपनी ही पत्तियाँ डालूँगा—सब के लिए। ओह आज कितनी उमग है!"

फिर वह नानी के पास गए और उनके कधों को थपथपाते हुए बोले

'तुम चुप क्यों हो, मातकिन?"

नानी ने हाथ हिलाया और बोली

"तुम्ही बताओ, मै क्या कहूँ?'

"यही तो! भगवान की मार इसीको कहते हैं। धीरे-धीरे सभी कुछ तीन-तेरह होता जा रहा है। अगर परिवार मिल कर रहे, एक-दूसरे से कभी अलग न हों, हाथ की उँगलियों की भांति..."

नाना ने एक मुद्दत से इस अन्दाज़ में बातें नहीं की थी—इतने कोमल ढग और इतने शान्तिपूर्ण अन्दाज़ में। मुझे लगा कि उनकी बातें सुन कर मैं अपने हृदय के दुःख और उस पीले गड्ढे को भूल जाऊँगा जिसमें वे काले-काले धब्बे दिखाई दिए थे। मैंने नाना की ओर कान लगा दिए।

तभी तेज आवाज़ में नानी बोल उठी:

"चुप भी रहो। इन शब्दों को रटते तुम्हारा जीवन बीत गया, लेकिन क्या कभी उनसे किसीका भला हुआ? होता भी कैसे, सारी उम्र तुम लोगों को नोचते-खाते ही रहे, वैसे ही जैसे जग लोहे को खाता है।"

नाना ने भिनभिना कर नानी की ओर देखा और फिर चुप हो गए।

साझ के समय फाटक पर लुदमिला से भेंट हुई। मैंने उसे सुबह का सारा हाल बताया। लेकिन मेरी बातों का उसपर कोई असर नहीं पड़ा।

"बे माँ-बाप का अनाथ होना अच्छा है। अगर मेरे माँ-बाप मर जाएँ तो अपनी बहिन को अपने भाई के पास छोड़ मैं जीवन भर के लिए साधुनी बन जाऊँ। इसके सिवा मैं और कर भी क्या सकती हूँ? लगड़ी होने की वजह से मेरा विवाह कभी होगा नहीं—मैं काम कर नहीं सकती। और अगर विवाह हो भी गया तो लंगड़े बच्चों को ही मैं जन्म दूँगी।"

मोहल्ले की अन्य सभी सयानी स्त्रियों की भांति बड़ी समझदारी से उसने बातें की, लेकिन उस साझ के बाद न जाने क्यों उसमें

मेरी दिलचस्पी का अन्त हो गया। सच तो यह है कि उस दिन के बाद मेरा जीवन ही कुछ ऐसे ढर्रे पर चल पडा कि उससे मिलने का मौका तक न मिलता।

भाई की मृत्यु के कुछ दिन बाद नाना ने मुझसे कहा

"आज जल्दी सो जाना। कल सूरज निकलते ही मैं तुम्हे जगा दूँगा और दोनो लकडियाँ बटोरने जगल चलेंगे।"

नानी ने कहा

"और मैं जडी-बूटियाँ बटोर कर लाऊँगी।"

हमारी बस्ती से डेढ-दो कोस दूर, दलदली भूमि में, बच और चीड वृक्षो का जगल था। झाडियो और टूटी हुई टहनियो की वहाँ भरमार थी। एक बाजू वह ओका नदी तक और दूसरे बाजू मास्को जाने वाली सडक से भी परे तक फैला था। नम झाडियो झुरमुटो से परे, काले रग के एक ऊचे तम्बू की भाति, देवदार वृक्षो का एक झुण्ड था जो "साविलोव की अयाल" कहलाता था।

काउण्ट शुवालोव इस सारे जगल का मालिक था और इसकी कोई खास देख-भाल नही करता था। कुनाविनो के निवासी इसे अपनी बपौती समझते थे और जलाने के लिए झाडिया बटोर ले जाते थे, इधन के लिए बेजान और कभी-कभी तो जानदार वृक्षो तक को काट डालते थे। पतझड शुरु होते ही हाथो में कुल्हाडियाँ और कमर मे रस्सी बाधे दस-दस और बीस-बीस के दलो में नाग आते और जाडा-भर के लिए ईंधन बटोर कर ले जाते।

पौ फटते ही हम तीनो चल दिए और ओस में भीगे रुपहले हरे मैदान को हमने पार किया। धीरे-धीरे, गम्भीर और उदास मुद्रा में, ओका नदी पार दियातलोवो की भभूका पहाडियो तथा सफेदीमायल निजनी नावगोरोद के हरे-भरे बाग-बगीचो, गुम्बदो और मीनारो के ऊपर किसी बडे दार्शनिक की भाँति रगी सूरज का उदय हो

रहा था। शान्त और गंदली ओका नदी की ओर से हवा के शान्त और नींद में मदमाते झोंके आ रहे थे। सुनहरी रंग के बटरकप फूल ओस के बोझ से झुके सिर हिला-हिला कर झूम रहे थे, नीले रंग के घटीनुमा फूल मूक दृष्टि से धरती की ओर देख रहे थे, रंग-बिरंगे बारह्-मासी फूल मानो निर्मम धरती का सीना फोड़ गर्व से सिर उठाए थे और गुलाबी रंग की वे कलियाँ—रात की शोभा—लाल सितारों की भांति चटक रही थीं।

सामने ही जंगल था। दूर से ऐसा मालूम होता था मानो अपनी अनजान और रहस्यपूर्ण शक्तियों को बटोरे वह हमारी ओर बढ़ा आ रहा हो। पांख निकले चीड़ वृक्ष भीमाकार पक्षियों की भांति मालूम होते थे और बर्च वृक्षों को देख कर परियों का धोखा होता था। खेतों के उस पार से दलदली भूमि की तेजाबी गंध आ रही थी। मेरा कुत्ता जो अपनी लाल जीभ निकाले मेरे साथ-साथ चल रहा था, एकाएक रुक गया, नाक सिकोड़ कर उसने कुछ सूंघा और लोमड़ी जैसे अपने सिर को उसने इस ढंग से हिलाया मानो कुछ निश्चय न कर पा रहा हो।

नाना के बदन पर नानी की ऊनी जाकेट और एक पुरानी पिचकी हुई सी टोपी सजी थी। मन ही मन मुसकराते, तकले ऐसी अपनी टांगों को चुपचाप उठाते, वह इतने दबे पांव आगे बढ़ रहे थे मानो अभी किसीपर झपट्टा मारनेवाले हों। नानी नीले रंग का सलूका और काले रंग का घाघरा पहने थी। सिर पर एक सफेद रूमाल बंधा था। वह इतनी तेजी से लुढ़कती-मुड़कती चल रही थीं कि साथ देना मुश्किल था।

जंगल के हम जितना ही नजदीक पहुँचते जाते, नाना की चेतनता भी उतना ही अधिक बढ़ती जाती। वह कुनमुनाए, गहरी सांस खींच कर फेफड़ों में खूब वायु भरी और फिर बोलना शुरू

किया—पहले कुछ अटक-अटक कर और अटपटे अन्दाज़ में, फिर चुहचुहाते हुए और सुघर-सुन्दर रूप में, ऐसा मालूम होता था मानो उन पर नशा-सा छाता जा रहा हो।

"जगल भगवान के लगाए हुए बाग-बगीचे है। अन्य किसी ने नही बल्कि हवा ने—भगवान के मुँह से निकली दैवी साँस ने—इन्हे लगाया है। जिगुली की बात है, बहुत पहले की जब मै जवान था और नाव चलाने का काम करता था—आह, अलेक्सी, तुम्हे वह सब देखना भला कहाँ नसीब होगा जो मै देख चुका हूँ! ओका के किनारे-किनारे, कासीमोवो से लेकर मुरोम तक, बस जगल ही जगल। या फिर वोल्गा के उस पार—ठेठ उराल तक—जगलो के सिवा और कुछ नही! मानो एक अन्तहीन और अद्‌भुत सौदर्य हिलोरें ले रहा हो!"

नानी ने भौहो के नीचे से मेरी ओर देखा और आँख से नाना की ओर इशारा किया, और नाना थे कि अपनी धुन में चले जा रहे थे—टीलो और ठूठो से ठोकर खाते, लडखडाते और सभलते, और मानो अजुलि भर-भर कर हल्के फुलके शब्दो को बिखेरते जो मेरी स्मृति म जम कर बैठ जाते।

"जहाज़ सूरजमुखी के तेल के पीपो से लदा था और हम उसे खीच रहे थे। मकर के दिन मेला होता है न, उसी में हमें पहुँचना था। हमारा एक फोरमैन था। नाम किरिल्लो, पुरेख का निवासी। और हमारे साथ एक तातार सारग था, कासीमोवो का रहनेवाला—और अगर मै भूलता नही तो आसफ उसका नाम था। हाँ तो, जब हम जिगुली पहुँचे, बहाव के रुख ऐसी आँधी आई कि उसके थपेडो ने हमारी जान ही निकाल ली, पाव वही के वही रुक गए, दम फूल गया और हम बस हाँफते ही रह गए। सो हम तट पर आ गए और सोचा कि कुछ

दलिया ही उबाल लें। मई का महीना था और धरती पर वसंत छाया था। वोलगा अच्छा-खासा सागर बनी हुई थी और हंसो के झुँड की भांति, हज़ारों की सख्या में भागदार लहरे कास्पियन सागर की ओर अभियान कर रही थीं। और वसंत का हरियाला बाना धारण किए जिगुली की पहाड़ियाँ आसमान छूती थीं, सफेद बादल उन पर विचरण करते थे और सूरज धरती पर सोना बरसाता था। सो हम सुस्ताने बैठ गए, जी भर कर प्रकृति के इस समूचे सौन्दर्य का हमनें पान किया और हमारे हृदयों में तरलता छा गई। नीचे नदी के किनारे उत्तरी ठण्ड थी, लेकिन यहाँ तट पर बडा सुहावना मालूम होता था और भीनी-भीनी सुगध आ रही थी। साझ के ढलते ही हमारा किरिल्लो जो बड़ी उम्र और गम्भीर स्वभाव का किसान था, उठकर खडा हो गया और अपने सिर से टोपी उतारते हुए बोला: 'हाँ तो लड़को, अब न मै तुम्हारा मालिक हूँ और न नौकर। तुम अब अकेले ही अपना काम सभालना। मुझे जगल बुला रहे है, सो मै चला!' हम सब जहाँ-के-तहाँ मुँह बाये बैठे रहे। भला ऐसा भी कभी हुआ है? अकेले अपने बूते पर हम आगे कैसे जा सकते थे, जब तक कि हमारे साथ कोई ऐसा आदमी न हो जो मालिक के सामने हम सब की जवाबदारी ले सके—जब आँखे ही न होंगी तो कोई चले-फिरेगा कैसे? माना कि यह हमारी जानी-पहचानी वोल्गा ही है, लेकिन इस से क्या, हम फिर भी भटक सकते हैं। और मानव सब से अधिक निरकुश, सबसे अधिक बनैला जन्तु होता है—भगवान भी चाहे तो उसे नही रोक सकते। सो डर नें हमें घेर लिया। लेकिन वह था कि अपनी ज़िद्द पर अड़ा रहा: "बस रहने दो! मै बाज़ आया इस जीवन से। गड़रिये की भांति तुम्हे हाँकते रहना मुझे पसन्द नही। मै जंगल का राजा हूँ। सो मै चला!" हम में से कुछ थे जो उसकी मरम्मत करने और उसे रस्सियो से बाध

कर जकड़ने के लिए उतावले हो उठे। लेकिन कुछ ऐसे भी थे जो उसके पक्ष में थे। वे चिल्लाए 'ठहरो!' और तातार सारंग बोला 'मैं भी उसके साथ नौ दो ग्यारह होता हूँ!' ऐसा मालूम होता था, मानो सारंग का दिमाग फिर गया हो। मालिक पर उसकी दो फेरों की मजदूरी चढ़ी थी, और यह तीसरा फेरा भी आधा पूरा हो चुका था—उन दिनों को देखते एक भारी रकम उसे मिलती। रात होने तक हम इसी प्रकार जूझने-चिल्लाते रहे। लेकिन जब अंधेरा घना हो आया तो एकदम सात जने चले गए—हमें वहाँ अकेला छोड़ कर! अब हम पन्द्रह या सोलह ही रह गए। जंगल के जादू को क्या तुम मामूली चीज समझते हो?"

"क्या वे डाकुओं से जा मिले?"

"कौन जाने, डाकुओं से जा मिले या जप-तप करने लगे। उन दिनों लोग आज की भांति बाल की खाल नहीं निकालते थे।"

क्रास का चिह्न लगाते हुए नानी ने कहा

"आह माँ मरियम, क्या हाल हो गया है तेरी सन्तानों का देख कर हृदय कराह उठता है।"

"शैतान के चंगुल में न फंसें, इसीलिये तो भगवान ने हम सब को बुद्धि प्रदान की थी।"

जगह-जगह कूब-सी निकली दलदली भूमि और कोढ़ वृक्षों के मरियल झुरमुटों के बीच से एक गीली पगडंडी जाती थी। उसके सहारे हमने जंगल में प्रवेश किया। मुझे लगा कि पुरेग निवासी किरिल्लो की भांति अगर हमेशा जंगल में ही रह जाए तो कितना बढ़िया हो। जंगल में न तो लड़ाई-झगड़ा था, न नशे में धुत लोगों की चीख-पुकार थी, न कोई छीना-झपटी थी। यहाँ न नाना की कंजूसी की याद आती थी, न माँ की रेतीली कब्र की। हृदय को दुखाने

और जी को भारी बनाने वाली प्रत्येक चीज मानो जगल का स्पर्श पाकर विदा हो गई थी।

जब हम एक सूखे स्थल पर पहुँचे तो नानी ने कहा:

"यह जगह ठीक है। बैठ कर अब कुछ पेट में भी डाल लें।"

अपनी टोकरी में से नानी ने राय की रोटी, हरी प्याज, खीरे, नमक और कपड़े मे लिपटा घर का पनीर निकाला। नाना ने बेचैनी से आँखे मिचमिचा कर इन सब चीजों की ओर देखा।

"और मुझे देखो—अपने लिए कुछ लाना मै एकदम भूल गया!"

"कोई बात नही। हम सब इसी मे निबट जाएगे।"

देवदार के एक ऊँचे वृक्ष के ताबे से तने से पीठ लगा कर हम बैठ गए। वायु मे बिरोजे की गध फैली थी, घास की पत्तिया झूम रही थी और खेतों की ओर से हल्की बयार बह रही थी। गट्ठे पड़े अपने हाथो से नानी तरह-तरह की जडी-बूटियाँ तोडती जाती और मुझे बताती जाती कि अमुक पौधे मे यह गुण है, सन्तजौन घास अमुक रोग को दूर करती है, कटीली झाड़ी मे जादू का असर भरा पड़ा है और चिपचिपा दलदली गुलाब भी गुणों मे किसी से कम नही है।

नाना ईंधन के लिए झाड़-झखाड काट रहे थे और मेरा काम था कि उसे बटोर कर एक जगह जमा करते जाना। लेकिन मै चुपचाप खिसक कर नानी के पास झुरमुटो में पहुँच गया। वृक्षो के सबल और सशक्त तनो के बीच ऐसा मालूम होता मानो नानी तैर रही हों और रह रह कर जब वह नम, सीको से ढकी धरती की ओर झुकती तो ऐसा मालूम होता जैसे पानी में डुबकी लगा रही हों। धरती इतनी मुलायम थी कि चाहो तो उसे सुई से खोद डालो।

और नानी, मानो अपने-आप से, बराबर बातें करती जाती थी:

"अब इन कुकुरमुत्तो को देखो, कितनी जल्दी निकल आए—

यानी इस बरस ज्यादा नहीं होंगे। हे भगवान, गरीबों का ध्यान रखने में तुम भी चूक जाते हो। जिनके घर में चूहे दण्ड पेलते हैं, उनके लिए तो ये कुकुरमुत्ते भी बहुत बड़ी न्यामत है।"

मैं चुपचाप, बिना कोई आवाज़ किए, नानी के पीछे लगा था। मैं नहीं चाहता था कि वह मुझे देखे, और नानी की नजरों से बचने के लिए मैं भारी कोशिश कर रहा था। नानी कभी भगवान से बात करती थीं, कभी मेंढकों से और कभी घास पात से। मैं चाहता था कि नानी की इस बातचीत का तार कभी न टूटे, वह बराबर चलता रहे।

लेकिन नानी ने मुझे देख ही लिया।

"नाना के पास जी नहीं लगा, क्यों?"

काली धरती हरे बेल-बूटों से सजी थी और नानी झुक कर दोहरी हो गई थीं। झुके झुके ही नानी ने मुझे बताया कि एक बार भगवान का पारा बुरी तरह चढ़ गया। मानवजाति से वह इतने नाराज हो गए कि उन्होंने समूची धरती को बाढ़ से प्लावित कर दिया, जितने भी जीवधारी थे, सभी डूब गए।

"लेकिन माँ मरियम ने, समय रहते, अपनी टोकरी उठाई, सभी बीजों को बटोर कर उसमें रखा और कहीं दूर ले जाकर बोलीं 'बड़ा भला हो जो तुम समूची धरती को, इस छोर से उस छोर तक, अपनी किरनों से सुखा दो। दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है। वे तुम्हारा सदा गुण गाएंगे। सो सूरज ने धरती को सुखा दिया, और माँ मरियम ने छिपाकर रखे हुए बीजों को बो दिया। भगवान ने अब धरती की ओर देखा वह फिर पहले की भांति हरी भरी और आबाद थी—ढोर डंगर, पेड़-पौधे और आदमी, सभी वहां मौजूद थे। भगवान के तेवर चढ़ गए। बोले 'यह कौन है जिसने यह दुस्साहस किया है? तब माँ मरियम ने

सारी वात वता दी। लेकिन खुद भगवान को भी कुछ कम दुःख न था — धरती को उजड़ा-उजड़ा और सूनसान देखकर उनका हृदय भी मसोस उठता था। सो वह बोले: 'तुमने यह अच्छा किया जो धरती को आवाद कर दिया, माँ मरियम!'"

नानी की यह कहानी मुझे पसंद आई। लेकिन इसे सुनकर मुझे अचरज भी हुआ। पूरी गम्भीरता के साथ मैंने पूछा:

"क्या सचमुच में ऐसा ही हुआ था? माँ मरियम तो वाढ़ के वहुत वाद पैदा हुई थी न?"

अव नानी के चकित होने की वारी थी।

"तुम्हे यह वात कहां मालूम हुई?"

"स्कूल में — कितावों में लिखी है।"

यह सुन नानी का जी कुछ हल्का हुआ। वोली:

"स्कूलों में ऐसी ही वातें सिखाते हैं, क्यों? और कितावें — उनके चक्कर मे कभी न पड़ना। दुनिया भर की झूठी वातों के सिवा उनमें और लिखा ही क्या है?"

और एक हल्की और छोटी हंसी उनके चेहरे पर खेल गई।

"वेवकूफों की वात तो देखो। कहते हैं, भगवान पहले से मौजूद थे, माँ वाद में आई। भला, जव माँ ही नही थी तो भगवान को जन्म किसने दिया?"

"मुझे क्या मालूम?"

"मुझे क्या मालूम — स्कूल में यही तो पढ़ाया जाता है — मुझे क्या मालूम!"

"पादरी ने वताया था कि मरियम ने याकिम और अन्ना के यहाँ जन्म लिया था।"

"इसका मतलव यह है कि वह मरिया याकिमोवना थी।"

नानी का पारा एकदम गरम हो गया। कडी नजर से मेरी आँखों में देखा। बोली

"अगर फिर भी कभी ऐसी बात मुँह से निकाली तो देख लेना, मुझसे बुरा कोई न होगा—चमडी उधेड कर रख दूंगी!"

कुछ देर बाद नानी ने समझाया

"माँ मरियम सदा से है—अन्य सबसे भी बहुत पहले से। भगवान ने उनके गर्भ से जन्म लिया और फिर "

"और ईसा मसीह?"

नानी ने उलझन में पडकर आँखें मूद लीं।

"ईसा मसीह ईसा अरे हाँ ?"

मैंने देखा कि नानी से जवाब देते नहीं बन रहा है। यह मेरी जीत थी। नानी को मैंने 'सृष्टि' के रहस्यों में उलझा लिया था, और यह मुझे बडा अटपटा मालूम हुआ।

हम जगल में बढते ही गए और ऐसी जगह पहुँचे जहाँ सूरज की सुनहरी किरनें नीले धुधलके को बीध रही थीं। ऐसा मालूम होता था मानो हम दूसरी ही दुनिया में पहुँच गए हो। सुहावना और सुखद जगल अपनी निजी और निराली आवाज मे गूँज रहा था—सपने में डूबी उनीदी आवाज, जो खुद हमें भी स्वप्निल बना रही थी, अपने साथ-साथ जो खुद हमें भी सपनो की दुनिया में खींच रही थी। कहीं श्रासविल पक्षी टिटिया रहे थे, कहीं टिटमाउस चहचहा रहे थे, कहीं कुकू के खिलखिला कर हसने की आवाज आ रही थी, कहीं ओरियोल सीटी बजा रहे थे, ईर्ष्या से भरे गोल्डफिंच निरन्तर गीत गाने में मगन थे और वे विचित्र पक्षी — देवदार फिंच — दार्शनिकों की भाँति अपना एक अलग शब्द-जाल बुन रहे थे। हरे रंग मेंढक हमारी टाँगों के बीच उछल रहे थे, और पास में रहनेवाला एक साँप जडों की ओट में से, जो कि

उसके छिपने की जगह थी, अपना सुनहरी फन निकाले झांक रहा था। नन्हे दातो से चटर-पटर करती एक गिलहरी, अपनी दुम फुलाए, देवदार वृक्ष की टहनियो में से कूद गई। इतनी चीजे थी कि बस देखते ही रहो। और मन फिर भी यही कहे कि अभी और देखो, बस देखते ही जाओ।

देवदार वृक्षो के तनों के बीच भीमाकार आकृतियों की एक छाया-सी दिखाई देती और अगले ही क्षण हरी गहराइयो में जहाँ नीला और रुपहला आकाश झलक रहा था विलीन हो जाती। धरती पर गहरी काई का शानदार कालीन बिछा था जिस पर नीले और लाल बेरो के गुच्छो की कसीदाकारी बनी हुई थी। हरी घास के बीच लाल बेर रक्त की बूदो की भाति चमकते थे और कुकुरमुत्तों की भीनी गंध जी को ललचा रही थी।

नानी ने उसास लेते हुए माँ मरियम का नाम लिया:

"दुनिया की जोत, माँ मरियम।"

ऐसा मालूम होता था मानो जंगल उसका हो, और वह जंगल की। भारी-भरकम भालू की भाति झूमती वह चल रही थी, हर चीज को देखती, हर चीज पर मुग्ध होती और कृतज्ञता के शब्द गुनगुनाती। ऐसा लगता मानो सहृदयता उसके शरीर से प्रवाहित होकर जंगल में मिल रही हो। नानी का पांव पड़ने पर जब काई दब कर सिमटती-सिकुड़ती और पांव उठ जाने पर जब वह फिर से उभरती-फैलती तो मैं एक खास आनन्द का अनुभव करता।

जंगल मे घूमते-घूमते मुझे डाकुओ का ध्यान हो आया और मैं रह-रह कर सोचने लगा कि कितना अच्छा हो अगर मैं भी डाकू बन जाऊँ, अमीरो को लूट कर गरीबो का घर भरूँ। कितना अच्छा हो अगर इस दुनिया मे सभी खुशहाल और खाते-पीते हो, न वे एक-दूसरे से जले, न कुत्सित कुत्तो की भाति एक-दूसरे पर गुर्राए!

और कितना अच्छा हो कि नानी के भगवान और माँ मरियम के पास जाकर मैं उनसे भेंट करूँ और उन्हें बताऊँ—सम्पूर्ण सत्य उनके सामने खोल कर रख दूँ कि लोग कितना दुखद और कितना भयानक जीवन बिताते थे और मरने के बाद भी कितनी बुरी तरह एक-दूसरे को रेत में दफ़नाते थे। और यह कि किस अनावश्यक तथा गैरज़रूरी दुखों ने धरती को दबा रखा था। और जब मैं यह देखता कि माँ मरियम पर मेरी बात का असर हुआ है, मेरी बात का वह यक़ीन करती है, तो मैं उनसे कुछ ऐसी समझ मांगता जिससे दुनिया की चीज़ों को बदला जा सके, उन्हें पहले से बेहतर बनाया जा सके। मैं उनसे, माँ मरियम से, कहता कि मुझे कुछ ऐसा बनाओ जो लोग मेरा विश्वास करें, और मैं निश्चय ही उनके लिए अच्छे जीवन का रास्ता खोज निकालता। माना कि मैं अभी छोटा ही था, लेकिन इस से क्या? ईसा मसीह मुझ से एक ही साल तो बड़े थे और उनकी बातों को सुनने के लिए एक से एक बुद्धिमान मन्दिर में आते थे।

मैं अपने विचारों में इतना डूबा था कि मुझे कुछ ध्यान न रहा और एक गहरे, खोहनुमा, गढ़े में मैं जा गिरा। एक ठूंठ की डाल से रगड़ खाकर मेरी पसलियाँ चरमरा गईं और सिर की चमड़ी उधड़ गई। गढ़े की तलहटी में ठंडे और चिपचिपे कीचड़ में मैं लिपटा पड़ा था। बाहर निकलने की मैंने कोशिश की, पर निकल न सका। मन ही मन खीज और शर्म से मैं गड़ा जा रहा था। चिल्ला कर नानी को पुकारते डर लगता था, लेकिन इसके सिवा और चारा भी क्या था।

नानी ने पलक मारते मुझे बाहर निकाल लिया और क्रास का चिन्ह बनाते हुए बोली

"शुक्र है परमात्मा का! गढ़ा नहीं, यह भालू की माँद था।

गनीमत समझो कि वह उस समय मांद में नहीं था। लेकिन अगर वह मौजूद होता तो...?"

और नानी के चेहरे पर, आंसुओं के बीच, हंसी खेलने लगी। इसके बाद एक झरने पर ले जाकर नानी ने मेरे घाव धोए, दर्द दूर करने के लिए घावों पर कुछ पत्ते रखे, उन्हें अपने सलूके में बांधा और मुझे पकड़ कर किसी रेल्वे-गार्ड की झोंपड़ी में ले गई। सारा शरीर इस बुरी तरह दुख रहा था कि मैं अपने पांवों घर नहीं पहुँच सकता था।

फिर भी आए दिन, बिला नागा, मैं नानी से कहता:

"चलो, जंगल चलें।"

और नानी बड़ी खुशी से इसके लिए तैयार हो जाती। हम रोज जंगल जाते, जड़ीबूटियाँ और बेर बटोरते, कुकुरमुत्ते और जंगली बादाम जमा करते। इन सब चीज़ों को नानी बाज़ार में ले जा कर बेचती और इससे जो पैसा मिलता, उसमें हम गुज़र करते।

इस प्रकार, पतझड़ बीतने तक, यही सिलसिला चलता रहा।

नाना का वही हाल था। उनकी खाने की चीज़ों को हम कभी हाथ से छूते तक नहीं थे। फिर भी वह चीख कर कहते:

"हरामखोर!"

जंगल मुझमें शान्ति और खुशहाली की भावना जाग्रत करता, और यह भावना मुझे अपने हृदय के दुख और मन खट्टा करने वाली अन्य सभी बातों को भूलने में मदद देती। इसके अलावा जंगल में देखने-परखने की मेरी शक्ति का भी अद्भुत विकास हुआ, मेरी दृष्टि पैनी हो गई, मेरे कान आवाज़ों को और भी तेजी से पकड़ने लगे। याद रखने की मेरी शक्ति बढ़ी और दिमाग़ का वह खाना जिस में देखी-सुनी चीज़ें जमा रहती हैं, और भी बड़ा हो गया।

और नानी — उनकी कुछ न पूछो। जितना ही मै उन्हे देखता, उतना ही चकित होता। नानी की सूझ-बूझ मुझे अधिकाधिक चकित, और अधिकाधिक कायल करती जाती। यो तो मैं नानी को हमेशा ही अन्य सबसे अलग, और अन्य सबसे ऊँचा समझता था — धरती के जीवो म सबसे अधिक सहृदय, सबसे अधिक समझदार। और मेरे इस विश्वास को नानी ने हर घडी पुष्ट ही किया। एक दिन की बात है। साझ का समय था। कुकुरमुत्ते बटोरने के बाद हम घर लौट रहे थे। जगल के छोर पर पहुँच कर नानी सुस्ताने के लिए बैठ गई और मै, कुछ और कुकुरमुत्ते बटोरने की आशा से, चल दिया।

सहसा नानी की आवाज सुन मैंने मुड कर देखा। नानी रास्ते के बीचो बीच निर्द्वन्द्व भाव से बैठी थी और हमारे बटोरे हुए कुकुरमुत्तो की जडें काट काट कर अलग कर रही थी। नानी के पास म ही भूरे रग और पतले बदन का एक कुत्ता खडा था। कुत्ते की जीभ बाहर निकली हुई थी।

नानी कह रही थी

"देखो, अब जाओ। अपना रास्ता नापो। कह दिया न, बहुत नटखटपन न दिखाओ। जाओ, भगवान तुम्हारा भला करे!"

कुछ ही दिन पहले वाल्योक ने मेरे कुत्ते को जहर देकर मार डाला था। मेरे मन में हुआ कि इस नये कुत्ते को ही क्यो न पाल लिया जाए। मै पथ की ओर लपका। कुत्ते ने अपने सिर को मोडे बिना ही कमान की भाति एक विचित्र ढग से अपना बदन तान लिया, और हरे रग की अपनी सर्द सूखी आखो से मेरी ओर देखा। फिर एक छलाग मार कर और अपनी दुम को टागो के बीच दबाए जगल में गायब हो गया। उसकी चाल-ढाल और तेवर कुत्तो ऐसे नही थे, और सीटी बजा कर जब मैंने उसे बुलाना चाहा तो वह जगली जन्तु की भाति तेजी से झाडियो में घुस गया।

गरदन। एक बार तो डर के मारे मेरी घिग्घी-सी बंध गई। लेकिन फिर मैंने कहा—अच्छा बाबा, अगर तुम भेड़िया हो तो भेड़िया ही सही। तुम्हारे दर्शन मैं कर चुकी, अब जाओ। गनीमत यही है कि गर्मियों के दिनों में भेड़िये ज्यादा उत्पात नहीं करते।"

जंगल में भटकना तो नानी जैसे जानती ही नहीं थीं। चाहे जो हो, घर का पथ पकड़ने में वह कभी नहीं चूकती थीं। घास-पात की गंध से ही वह पता लगा लेती कि अमुक स्थान पर किस किस्म के कुकुरमुत्ते होते हैं और अमुक स्थान पर किस किस्म के। बहुधा नानी मेरी जानकारी की भी परीक्षा लेतीं:

"लाल कुकुरमुत्ते किस पेड़ के नीचे उगते हैं? अच्छे और विषैले सिरोयेजका की क्या पहचान है? झाड़ियों की ओट में किस प्रकार के कुकुरमुत्ते उगते हैं?"

किसी पेड़ के वल्कल पर खरोंच का नन्हा सा निशान देखकर नानी गिलहरी के बिल का पता लगा लेती। मैं पेड़ पर चढ़ता और गिलहरी के बिल में जाड़े के लिए जमा सारी गिरी निकाल लेता। इस तरह, कभी-कभी, पूरी एक पसेरी तक गिरी हाथ लग जाती।

एक बार, उस समय जब कि मैं पेड़ पर चढ़ा गिलहरी की जमा-पूंजी निकालने में व्यस्त था, किसी शिकारी ने बन्दूक छोड़ी और एक साथ सत्ताइस छर्रे मेरे बदन में घुस गए। नानी ने ग्यारह छर्रे तो सुई से खोद-खोद कर निकाले, बाकी कई साल तक मेरे बदन में ही घुसे रहे और धीरे-धीरे, एक-एक करके, अपने आप बाहर निकलते रहे।

नानी ने जब छर्रे निकाले तो मैंने उफ तक न की। नानी उससे खुश हुई। बोली:

"अच्छे लडके ऐसे ही होते है। जिसने दर्द पर काबू पा लिया उसने मानो मोर्चा ही सर कर लिया।"

कुकुरमुत्तो और गिरियो की बिक्री से जब कभी कुछ फालतू पैसा मिल जाता तो वह रात को पास-पडोस के घरो का चक्कर लगाती और खिडकियो की ओटक पर अपना 'गुपचुप दान' रख आती। लेकिन खुद चिथडो और पैवन्द लगे कपडो में ही लिपटी रहती। चाहे कोई त्योहार हो या उत्सव, नानी की इस वेशभूषा में कभी कोई अन्तर न पडता।

नाना कुढकर बडबडाते

"इसने तो भिखमगो को भी मात कर दिया। देख कर शर्म मालूम होती है।"

"शर्म की इसमें क्या बात है? न तो मै तुम्हारी लडकी हूँ, और न कोई कुवारी छोकरी ही जिसे अभी तक पति नही मिला।"

घर में अब नित्य ही खटपट होती।

"मैने क्या औरो से ज्यादा पाप किए है?" चोट खाए स्वर में नाना चिल्लाते।—"लेकिन भगवान है कि सारी सजा मुझे ही देने पर तुला है!"

नानी उन्हे और भी चिढाती

"शैतान को कोई भी धोखा नही दे सकता।"

फिर, अकेले में, मुझे समझाती

"देखो न, बूढे के सिर पर शैतान का भय किस बुरी तरह सवार है। डर ने उसे एकदम जर्जर बना दिया है। हाय मेरे राम, देख कर दया आती है!"

गर्मी के उन दिनो में जंगल में घूमने से मेरा शरीर तो तगडा बन गया लेकिन मेरी मिलनसारी खत्म हो गई। अपने संगी-

साथियों और लुदमिला के जीवन में मेरी कोई दिलचस्पी नहीं रही। उसके सयानेपन से मैं ऊब चला।

एक दिन जब नाना नगर से लौटे तो वह बुरी तरह भीग गए थे। शरद के दिन थे और वारिश हो रही थी। नाना ने दरवाजे पर खड़े होकर चिड़िया की भांति पर फड़फड़ाए और गर्व से तनते हुए बोले:

"बहुत दिन मज़े कर लिए, काहिल की औलाद! अब कल से तुम्हारी गरदन पर काम का जुवा रखा जाएगा।"

नानी ने झुंझला कर पूछा:

"कहाँ रखा जाएगा काम का यह जुवा?"

"तुम्हारी बहन मात्रियोना के यहाँ — उसके लड़के के पास।"

"लेकिन मालिक, तुमने यह अच्छा नहीं किया।"

"तू तो सठिया गई है। जब देखो, बेकार की बातें ही करती है। वहाँ रह कर यह नक्शानवीस बन जाएगा।"

विना कुछ कहे नानी ने अपना सिर झुका लिया।

उसी साँझ मैंने लुदमिला को बताया कि मैं नगर जा रहा हूँ। भारी आवाज़ में वह बोली:

"मेरा विस्तरा-बोरिया भी नगर के लिए जल्दी ही गोल होगा। पिता जी मेरी टांग कटवा देना चाहते हैं। उनकी राय है कि टांग कटने से मैं अच्छी हो जाऊंगी।"

गर्मियों में वह सूख कर और भी दुबली हो गई थी। उसके चेहरे पर नीलापन छा गया था और आँखें अब खूब बड़ी बरबट्टी सी दिखाई देती थीं।

मैंने पूछा:

"क्या तुम्हें डर लगता है?"

"हाँ", उसने जवाब दिया और बिना आवाज़ किए चुपचाप रोने लगी।

उसे उदास देखकर ढाढ़स बंधाने के लिए मेरे पास कुछ भी तो नहीं था। नगर के जीवन से उसकी ही नहीं, खुद मेरी भी रूह कांपती थी। बहुत देर तक हम दोनों भारी उदासी में डूबे, चुपचाप, एक-दूसरे से चिपके बैठे रहे।

अगर गर्मियों के दिन होते तो मैं नानी के सिर पड़ता और कहता कि चलो, भीख मांगने चलें। नानी बचपन में यह काम भी कर चुकी थीं और इसके लिए अब फिर तैयार हो जातीं। लुदमिला को भी हम अपने साथ ले लेते। वह एक छोटे से ठेले में बैठ जाती और मैं उसे खींचता।

लेकिन यह तो शरद के दिन थे। सड़कों पर गीली हवा सनसनाती थी और आकाश अनगिनती बादलों से घिरा रहता था। धरती के चेहरे पर मानो पानी फिर गया था, कीचड़ ने उसे गंदा बना दिया था और उसका मुँह गुस्से से फूल कर कुप्पा हो गया था।

४

मैं अब फिर नगर में जाकर रहने लगा। सफ़ेद रंग का, मानो कफ़न-लपेटे, एक दो मंजिला मकान था जिसके पेट में अनगिनती लोग समाए थे। घर यों तो नया था, लेकिन मालूम ऐसा होता था मानो वह किसी रोग का शिकार हो, मानो वह कोई मान जन्म का भूखा भिखारी हो जिसे एकाएक धनवान बन जाने के बाद पहली बार पेट भरने का मौका मिला हो और अल्लम-गल्लम सभी कुछ खा लेने के कारण जिसका पेट अफर गया हो। उसका मुख सड़क

सड़क के रुख, जिधर मकान का सामना होना चाहिए था, हर मंजिल में चार-चार। नीचे की खिड़कियाँ अहाते में एक तंग गलियारे की ओर खुलती थीं, और ऊपर की खिड़कियों से बाड़े के उस पार गंदा नाला और धोबिन का छोटा-सा घर दिखाई देता था।

असल में गन्दी-ऐसी वहाँ कोई चीज नहीं थी। मकान के सामने यही गंदा नाला फैला था जिस पर दो जगह संकरे बाँध बने हुए थे। उसका बायाँ छोर जेलखाने को छूता था। पास ही, नाले के किनारे, बस्ती का कूड़ा-करकट और मैला जमा होता था और नाले की तलहटी में काई की एक मोटी हरी तह जम गई थी जो बराबर रिसती और उफनती रहती थी। दाहिना सिरा गंदे पवेरिदन जोहड़ में जाकर खत्म होता था। नाले का मध्य भाग ठीक हमारे घर के सामने था जिसके आधे हिस्से में कूड़ा-कचरा भरा था और कंटीली झाड़ियाँ, घास-पात तथा सरकंडे उगे थे। बाकी आधे हिस्से में पादरी दोरीमेदोन्त पोक्रोवस्की ने अपना बगीचा लगा रखा था। बगीचे के बीच में एक ग्रीष्म घर था जिसकी हरी खपच्चियाँ पत्थर मारने पर छिन्न-भिन्न होकर हवा में झूलने लगती थीं।

दुनिया-भर की गन्दगी मानो इसी एक जगह पर आकर जमा हो गई थी। देख कर दम घुटता था। शरद ऋतु के कारण यहाँ की कूड़ा-कचरा मिली लाल रंग की मिट्टी कोलतार की भाँति चिपचिपी हो गई थी। पाँवों मे वह इस बुरी तरह चिमट जाती कि छुडाए न छूटती। छोटी-सी जगह में गन्दगी की इतनी भरमार मैंने पहले कभी नही देखी थी। खेतों और जंगलों की स्वच्छता मे रमने के बाद नगर के इस कुत्सित कोने मे रहना इतना अखरता कि कह नही सकता।

नाले के उस पार टूटे-फूटे मटमैले बाडा की पात दिखाई देती थी। उनमें खाकी रग का वह मकान भी था जिसमें म उन दिना रहना था जब जूतो की दूकान में छोकरे के रूप में काम करता था। इस मकान को अपने इतना निकट देख मुझे और भी बुरा मालूम होता। मेरे भाग्य मे क्या इसी बस्ती में रहना बदा था?

अपने नये मालिक से म पहले से परिचित था। वह और उसका भाई कभी मेरी मां से मिलने आया करते थे, और उसका भाई बडे ही मजेदार ढग से पिनपिना कर कहता था

"आन्द्रेई पापा! आन्द्रेई पापा!"

दोनो के दोनो अब भी बिल्कुल वैसे ही थे। बडे भाई की तोते ऐसी नाक और लम्बे बाल थे। वह अच्छे दिल का आदमी मालूम होता था। छोटा भाई वीक्तर पहले की भाति अब भी वैसे ही घुटमुहा था, और उसके चेहरे पर भूरे घ-चे पडे थे। उनकी मां मेरी नानी की बहिन थी, लेकिन उसका स्वभाव नानी से बिल्कुल भिन्न था—चिडचिडा और झगडालू। बडे लडके का विवाह हो चुका था। उसकी पत्नी काली आंखो वाली, मैदे के आटे की डबल रोटी की भाति सफेद और मोटी-ताजी थी।

शुरू के कुछ दिनो म ही उसने मुझे दो बार जताया

"तुम्हारी मां को मैंने काले चमकदार मोती जडा एक रेशमी लबादा दिया था।"

लेकिन न जाने क्यों, उसकी यह बात मुझे कुछ जची नही कि उसने मां को रेशमी लबादा भेंट किया था, और यह कि मा ने उसे स्वीकार कर लिया था। अगली बार जब फिर उसने लबादे का जिक्र छेडा तो मने कहा

"लबादा न हुआ गया मुसीबत हो गई। अगर दिया भी था तो कौन बडी बात हो गई।"

यह सुन वह सुन्न रह गई।

"क्या-आ-आ-आ? तूने मुझे समझ क्या रखा है?"

गुस्से के मारे उसका चेहरा लाल चकोतरा बन गया, उसने अपने दीदों को घुमाया और पति को आवाज दी।

कान में पेंसिल खोंसे और हाथ में परकाल लिए पति ने क्वार्टर में पाँव रखा। अपनी पत्नी की शिकायत सुनने के बाद उसने मुझसे कहा:

"समझे, यहाँ मुँहफट बनने से काम नही चलेगा!"

फिर वह बेमर्जी से अपनी पत्नी की तरफ घूम गया:

"इस तरह की बकवास से मेरा दिमाग न चाटा करो!"

"बकवास... तुम इसे बकवास कहते हो! जब तुम्हारे अपने घर के आदमी ही..."

"भाड़ में जाएँ अपने घर के आदमी।" उसने कहा, और फिर लपक कर बाहर चला गया।

नानी के ऐसे भी सम्बन्धी हो सकते है, यह बात मेरे गले में अटक कर रह जाती। नित्य ही मै देखता कि सगे-सम्बन्धी एक-दूसरे से जितना बुरा व्यवहार करते है, उतना अजनबी भी नही कर पाते। एक-दूसरे की कमजोरियो और बेहूदगियो को जितना अधिक वे जानते थे, उतना कोई बाहरी आदमी कैसे जान सकता था। सो वे जम कर एक-दूसरे के बारे मे कुत्सा फैलाते, बात-बे-बात आपस में लड़ते और झगड़ते।

मुझे अपना मालिक पसन्द आया। वह कुछ इतने मन-भावने ढंग से अपने बालों को पीछे की ओर झटका देता, और उन्हे कानों की ओट में कर लेता कि बहुत ही भला मालूम होता। उसे देखकर न जाने क्यो मुझे "वाह भाई खूब!" की याद हो आती।

वह अक्सर खूब खुल कर हंसता। हंसते समय उसकी भूरी आंखें प्रसन्नता से चमकने लगती और उसकी तोते ऐसी नाक के दोनो ओर बहुत ही लुभावनी झुर्रियां पड जाती।

"यह चाचें लडाना बन्द करो! घर न हुआ, मुर्गीखाना हो गया!" मुसकराते हुए वह अपनी मां और पत्नी से कहता, उसके छोटे-छोटे और सूत्र मटकर जमे हुए दात मोती से झलकने लगने।

दोनो की दोनो आए दिन लडती और झगडती थी। यह देखकर मुझे वडा अचरज होता कि कितनी जल्दी और कितनी आसानी से ये एक-दूसरे का मुंह नोचने पर उतर आती है। सुबह तडके ही वे उठती और आधी की भाति उखाड-पछाड करती कमरो में इस प्रकार घूमती मानो घर में आग लगी हो। दिन-भर वे इसी प्रकार तोवा-तिल्ला मचाए रहती और केवल दोपहर के भोजन, चाय और साझ के खाने के समय जब वे मेज़ पर बैठती तो घर में कुछ शान्ति दिखाई देती।

खाने पर वे बुरी तरह टूटती। भोजन की खूब नुक्ताचीनी करती और अलस भाव से ऐसे बोल बोलती जो फूस में चिगारी का काम करते। सास चाहे जो भी पकाती, बहू ताना कसे बिना नही चूकती

"मेरी मां इस चीज़ को दूसरे ही ढग से बनाती थी!"

"ऊंह, दूसरे ढंग से बनाती थी! यह क्यों नही कहती कि गुड-गोबर एक करके रख देती थी!"

"गुड-गोबर तो तुम एक करती हो। मां की बनाई चीज़ खाओ तो उंगलियां चाटती रह जाओ!"

"तब तुम यहां क्यो पडी हो? अपनी मां के पास जाकर क्यो नही रहती?"

"म इस घर की मालकिन जा हूं!"

"और मै तुम्हारी बांदी हूं,—क्या?"

"तुमने फिर चोंचें लड़ाना शुरू कर दिया, मुर्गियो!" पति बीच में ही टोकते।—"आखिर कोई बात भी हो! जब देखो तब बिल्लियों की तरह पंजे चलाने को तैयार!"

घर में हर चीज़ इतनी बेढंगी, बेडौल और अटपटी थी कि कहते नहीं बनता। रसोईघर से अगर भोजन के कमरे में जाना हो तो एक छोटे-से तंग और संकरे पाखाने में से गुज़रना पड़ता था। ले-देकर समूचे घर में एक ही पाखाना था। खाने की चीज़ें और समोवर सब इधर से ही ले जाकर मेज पर सजाए जाते थे। इस पर नित्य ही मज़ाक होता और कोई-न-कोई मज़ेदार घटना घटती रहती। मेरे कामों में एक काम यह भी था कि हाथ-मुंह धोने की टंकी कभी खाली न होने पाए। मैं पाखाने के दरवाज़े के ठीक सामने और बराण्डे की ओर जाने वाले दरवाज़े की बगल में रसोईघर में सोता था। मेरा सिर रसोईघर के स्टोव की गर्मी से भन्नाने लगता और पाँव बराण्डे वाले दरवाज़े से आनेवाली ठंडी हवा से सुन्न हो जाते। रात को जब मैं सोता तो फर्श पर बिछी तमाम चटाइयों को बटोर कर अपने पाँवों पर डाल लेता।

ड्राइंगरूम बहुत ही उदास और सूना-सूना-सा लगता जिसमें खिड़कियों के बीच दीवार पर दो लम्बे आईने लटके थे, फर्श पर ताश खेलने की दो छोटी मेज़ें और बारह सीधी पीठवाली कुर्सियाँ पड़ी थीं, और 'नीवा' पत्रिका का ग्राहक होने के नाते पुरस्कार में मिली और रुपहले चौखटों में जड़ी तस्वीरें दीवारों के सूनेपन को तोड़ने का व्यर्थ प्रयत्न कर रही थीं। इसी के साथ एक छोटा-सा कमरा और था जो सस्ती बाज़ारू किस्म की गद्देदार मेज़-कुर्सियों और अलमारियों से अटा था जिनके खानों में चांदी के बरतनों और चाय पीने के सेटों की नुमाइश-सी सजी थी। ये सब चीज़ें शादी में मिली थीं। रही-सही कसर पूरी करने के लिए छत से तीन

लैम्प लटके थे जो आकार-प्रकार में एक-दूसरे से होड़ लेते मालूम होते थे। सोने के कमरे में खिड़की एक भी नहीं थी। उसमें एक भीमाकार पलग, ट्रक और कपड़े रखने की अलमारियों की भरमार थी जिनसे पत्नी के तम्बाकू और मेहदी-कमीले की बू आती थी। ये तीनों कमरे हमेशा खाली पड़े रहते थे और समूचा परिवार भोजन करने के छोटे-से कमरे में ही कसमसाता और हर घड़ी एक-दूसरे से टकराता रहता था। सुबह आठ बजे नाश्ता करने के तुरत बाद पति और उसके भाई अपनी मेज को फैला लेते, सफेद कागज की पड़त से उसे ढक देते और ड्राइग के औजार, पेन्सिलें और रोशनाई से भरी प्यालियाँ लाकर काम में जुट जाते। एक मेज के दूसरे छोर पर रहता, और दूसरा ठीक उसके सामने। मेज के अजर-पजर ढीले हो चुके थे। वह हिलती थी और समूचे कमरे को घेरे थी। जब कभी छोटी मालकिन और बच्चे को खिलाने वाली दाई भीतर से बाहर आती तो मेज से टकराए बिना न रहती। तभी वीक्तर चिल्ला कर कहता

"देखकर नहीं चला जाता!"

मालकिन आहत चेहरे से अपने पति की ओर देखती और कहती

"वास्या, इसे मना कर दो कि मुझपर इस तरह न चिल्लाया करे।"

पति शान्त स्वर में समझाता

"जरा सभल कर चला करो जिससे मेज न हिले।"

"तुम क्या जानते नहीं कि मेरे पेट में बालक है, और यहाँ इतनी घिचपिच है कि बचकर निकलना मुश्किल है।"

"अच्छी बात है। हम अपना ताम झाम उठा कर ड्राइगरूम में चले जाएगे।"

"हाय राम, तुम भी कैसी बातें करते हो? ड्राइंगरूम मेहमानों को बैठाने की जगह है या काम करने की?"

पाखाने के दरवाजे में मेरी बूढ़ी मालकिन मात्रियोना ईवानोवना का चेहरा दिखाई देता—चूल्हे में से निकली चुकन्दर की भांति लाल!

"उसकी बात तो सुनो, वास्या!" उसने चिल्ला कर कहा।—"एक तुम हो कि काम करते-करते मरे जाते हो और एक यह है कि बच्चे-कच्चे जनने के लिए इसे चार कमरे भी छोटे पड़ते हैं! अच्छी राजकुमारी से शादी की है तुमने, जिसके भेजे में सिवा गोबर के और कुछ नहीं है!"

वीक्तर उपेक्षा से खिलखिला उठा। पति चिल्ला कर कहता:

"बस-बस, अब ज्यादा कान न खाओ!"

लेकिन उसकी पत्नी, अपनी सास पर तीखे बाणों की बौछार करते और जी भर कर कोसते हुए मेज पर औंधी गिर पड़ी और लगी सिसकने:

"मै यहा नही रह सकती! मै गले में रस्सी बांध कर लटक जाऊँगी!"

"मुझे काम भी करने देगी या नही, कम्बख्त!" गुस्से से सफ़ेद पति चिल्लाया।—"घर न हुआ पागलखाना हो गया! आखिर तुम लोगों का दोजख भरने के लिए ही तो मै यहाँ खड़े होकर अपनी कमर तोडता हूं, मुर्गी की बच्चियो!"

पहले-पहल ये झगड़े मुझे खूब भयभीत करते थे। एक बार तो मेरी जान ही सूख गई। पत्नी ने गुस्से में डबल रोटी काटने का चाकू उठाया, पाखाने में घुसकर भीतर से चटखनी चढ़ा ली, और लगी वहशियों की भाति चीखने-चिल्लाने। एक क्षण के लिए सारे

घर में सन्नाटा-सा छा गया। फिर पति भाग कर दरवाजे के पास पहुंचा, और झुक कर एकदम दोहरा हो गया।

"मेरी कमर पर चढ़ जाओ, और खिड़की तोड़ कर दरवाजे की चटखनी खोल डालो।" उसने चिल्ला कर मुझसे कहा।

लपक कर मैं उसकी पीठ पर चढ़ गया और मैंने दरवाजे का शीशा तोड़ डाला। लेकिन चटखनी खोलने के लिए जैसे ही मैं नीचे की ओर झुका कि पत्नी ने चाकू की मूठ से मेरे सिर पर प्रहार किया। जो हो, दरवाजा मैंने खोल दिया। इसके बाद पति अपनी पत्नी पर बुरी तरह झपटा, उसे खींचता हुआ भोजन करने के कमरे में ले गया, और उसने उसके हाथ से चाकू छीन लिया। मैं रसोईघर में बैठा अपना चोट खाया सिर सहला रहा था और मन-ही-मन सोच रहा था कि व्यर्थ ही मैंने इतनी मुसीबत मोल ली। चाकू इतना खुट्टल था कि गरदन तो दूर, उससे मक्खन तक नहीं काटा जा सकता था। न ही मालिक की पीठ पर चढ़ने की कोई खास जरूरत थी। शीशा तोड़ने के लिए मैं कुर्सी पर भी खड़ा हो सकता था। फिर अच्छा होता अगर कोई बड़ा आदमी चटखनी खोलता— लम्बी बाहें होने पर यह काम सहज ही हो जाता।

इस दिन के बाद मैंने इस घर की घटनाओं से भयभीत होना छोड़ दिया।

दोनों भाई गिरजे में गाते थे। कभी-कभी काम करते समय भी वे धीमे स्वरों में गुनगुनाया करते। बड़ा भाई पुष्प कण्ठ से गुनगुनाता

उछलती लहरों में खोई,
प्रिय की प्रेम निशानी।

और छोटा भाई कोमल स्वर में साथ देता

की खिड़की में से शरद की सुबह उदासी से भीतर झाँकती, और सूरज की ठंडी किरनों में उसकी भूरी आकृति अंधाधुंध तेजी से फर्श पर झुकती और क्रास के चिन्ह वनाती रहती। उसके छोटे से सिर पर वंधा रूमाल खिसक कर उतर जाता और उसके रंग-उड़े महीन वाल उसके कंधों से उलझने लगते। उसका वायां हाथ तेजी से हरकत करता और अपने रूमाल को फिर से सिर पर खिसकाते हुए वह वड़वड़ा उठती:

"यह चिथड़ा भी चैन नहीं लेने देता!"

क्रास का चिन्ह वनाते समय वह अपने माथे, कधों और पेट पर जोरों से हाथ मारती और भगवान के दरवार में अपनी फरियाद की पुकार छोड़ती:

"हे भगवान, अगर तुम्हें मेरा जरा-सा भी ख्याल हो तो मेरी इस वहू को कसकर सजा देना। जिस तरह वह मेरा अपमान करती है और मुझे सताती है, वैसे ही तुम भी उसे आड़े हाथों लेना। और मेरे वेटे की आँखे खोलना, उसे इतना समझ देना जिससे वह वहू की असलियत पहचान, और वीक्तर को सही नजर से देख सके, और वीक्तर पर दया रखना, उसे अपने हाथ का सहारा देना, भगवान!"

वीक्तर भी यहाँ, रसोईघर में ही, एक ऊँचे तख्ते पर सोया था। माँ का रोना-झींकना सुन उसकी भी नींद उचट गई और उनींदे स्वर में चिल्लाया:

"सवेरे ही सवेरे तुमने फिर रोना-कोसना शुरू कर दिया! तुम पर भी जैसे खुदा की मार है, माँ!"

"वस-वस, तू सोता रह। वहुत वातें न वना," माँ फुसफुसाकर दवे हुए स्वर में कहती। इसके वाद, एक या दो मिनट तक, वह

चुपचाप आगे-पीछे की ओर झूमती और फिर वदले की भावना से फनफना कर चीख उठती

"भगवान करे उनकी हड्डिया तक जम कर बर्फ हो जाए, और उनका सारा खून सूख जाए!"

मेरे नाना भी कभी इतनी कुत्सित प्रार्थनाए नहीं करते थे।

प्रार्थना करने के वाद वह मुझे जगाती।

"उठ खडा हो! क्या नवाब की भाति ऐंठ रहा है, मानो इसीलिए हमने तुझे यहा रखा हो? उठ, समोवर तैयार कर और लकडियां भीतर लाकर रख। अहा, रात फिर छेपटियाँ चीरना भूल गया, क्यो?"

उसकी फनफनाहट-भरी बडवड से वचने के लिए मैं खूब फुर्ती स काम करता, लेकिन उसे खुश करना असम्भव था। आधी की भाति मनमनाती वह रसोईघर में आती और फुकार उठती

"शि शि-शि, शैतान की औलाद! अगर वीक्तर को जगा दिया ता फिर देखना, कमे कान उमेठती हूँ! अच्छा जा, भाग कर दूकान से सामान ले आ।"

नाश्ते के लिए मै हर रोज छोटी मालकिन के वास्ते दो पौंड पाव रोटी और कुछ टिकियां खरीद कर लाता था। जव म रोटी लेकर घर लौटता तो दोनो सन्देह-भरी नजर से उसे उलट-पलट कर देखती, हथेलियो पर रख कर उसका वजन जाचतीं और पूछती :-

"यह कम तो नहीं है? इसके साथ क्या एक टुकडा और नहीं था? अच्छा, जरा इधर आकर अपना मुह तो खोल!"

इसके वाद वे इस तरह चिल्लाती मानो मदान मार लिया हो

"देखा, इसका टुकड़ा यह खुद चट कर गया — साफ़ निगल गया! इसके दाँतों में रोटी के कण चिपके हैं!"

काम करना मुझे अखरता नहीं था। बड़े मज़े से मैं घर की धूल झाड़ना-बुहारना, फ़र्श को रगड़ना, पीतल के बरतनों को चमकाना, दरवाज़ों की मूठों और बटनों को साफ़ करना, और तश्त-रियों को धोना। जब घर में शान्ति होती तो स्त्रियाँ अक्सर कहतीं:

"काम तो यह मेहनत से करता है।"

"और साफ़-सुथरा भी रहता है।"

"लेकिन बहुत गुस्ताख़ है।"

"ज़रा यह भी तो सोचो कि किन हालतों में इसका लालन-पालन हुआ है!"

दोनों ही चाहतीं कि मैं उनका मान करूँ, उनके साथ अदब से पेश आऊँ। लेकिन मैं उन्हें आधा पागल समझता। उनके किसी काम न आता, उनका कहना नहीं मानता और हमेशा मुँह-दर-मुँह जवाब देता। छोटी मालकिन से जब यह छिपा न रहा कि उसकी बातों का मुझ पर उलटा ही असर होता है तो उसने बार-बार कहना शुरू किया:

"अच्छा होता अगर कंगलों के अपने उसी परिवार में पड़ा रहता। यहाँ आकर अपनी औकात भूल गया। मालूम है, तेरी माँ तक को मैंने एक बार काले मोती जड़ा रेशमी लबादा पहनाया था!"

जब मुझसे नहीं रहा गया तो एक दिन मैंने उससे कहा:

"तो क्या अपने उस लबादे के बदले में अब तुम मेरी खाल उतरवाना चाहती हो!"

घबराकर वह चिल्लाई:

"हाय भगवान, यह भी क्या लडका है। इसका बस चले तो घर में आग ही लगा दे।"

यह सुन मैं सकपका गया—आखिर मैं घर में आग क्यों लगाऊगा?

मेरे बारे में दोना हर घडी मालिक के कान खाती और वह मुझे सख्ती से डाटता

"बस बहुत हो चुका। अगर अपनी हरकत से बाज न आए तो ।"

लेकिन एक दिन तग आकर उसने अपनी पत्नी और माँ को भी आडे हाथो लिया

"तुम दोनो की अक्ल भी न जाने कहाँ चरने गई है! जब देखा तब उस लडके की गरदन पर सवार, मानो वह कोई घोडा हो! और कोई होता तो सब छोड-छाड कभी का भाग गया होता, या काम करते-करते उसका अब तक कचूमर निकल गया होता!"

यह सुन स्त्रियाँ बुरी तरह भुनभुना उठी और उनकी आँखो म आँसू चमकने लगे। गुस्से में पाँव पटकते हुए उसकी पत्नी चिल्लाई

"और तुम्हारी बुद्धि क्या तुम्हारे इन गोवा-भर लम्बे बालो में खो गई है जो खुद इसके सामने इस तरह की बाते करते हो? तुम्हारी बाते सुनने के बाद यह और भी सरकश हो जाएगा। तुम्हें इतना भी खयाल नही कि मेरे पेट में बालक है। आँखें मूद, जो मन में आता है, उगल डालते हो!"

उसकी माँ ने भी शिकायत के स्वर में रोना बिसूरना शुरू किया

"भगवान बुरा न करे, लेकिन मेरी बात गाठ-बांध लो कि तुम लडके को इस तरह सिर पर चढा कर खराब कर डालोगे।"

और दोनों तोबड़ा चढ़ाए वहाँ से खिसक गई। मालिक अब मेरी ओर मुड़ा और सख्ती से बोला:

"यह सब तुम्हारी करतूत का ही नतीजा है। मैं तो चाहता था कि तुम आदमी बनो। इसीलिए तुम्हारे नाना के पास से मैं तुम्हें ले आया। लेकिन तुम्हारे भाग्य में चिथड़े बटोरना लिखा है। सो तुम्हें फिर वापिस भेज देता हूँ। मजे से चिथड़े बटोरते फिरना!"

अपमान की यह कड़वी घूंट मेरे गले में अटक गई। पलट कर मैंने जवाब दिया:

"तुम्हारे पास रहने से तो चिथड़े बटोरना कहीं अच्छा है। तुम मुझे यहाँ काम सिखाने के लिए लाए थे। लेकिन तुम ने मुझे सिखाया क्या है—गधे की भांति केवल घरका बोझा ढोना!"

मालिक ने हल्के हाथ से मेरे बाल पकड़ लिए और धीरे से सिर हिला कर मेरी आँखों में देखते हुए अचरज के साथ कहा·

"तुम्हारे शैतान होने में कोई कसर नहीं है। लेकिन भाई मेरे, शैतानी यहाँ नहीं चलेगी... नहीं, बि-ल-कु-ल न-हीं!"

मुझे पूरा यकीन था कि वह मेरा बंधना-बोरिया गोल कर देगा। लेकिन दो दिन बाद अपने हाथो मे पेन्सिल, रूलर, टी-स्क्वेयर और कागज का एक पुलिन्दा लिए उसने रसोईघर में पाव रखा।

"चाकुओं पर पालिश करने के बाद इसकी नकल उतार देना," उसने कहा।

यह किसी दो-मजिला मकान के अग्रभाग का नक्शा था जिसमे अनगिनती खिडकियाँ और पलास्तर की सजावट का काम बना था।

"लो, परकाल का यह जोडा संभालो। इससे सभी रेखाओ को पहले नापना और उसके बाद नुक्ते डाल कर निशान बनाते

जाना। फिर, रूलर की मदद से, नुक्तो को मिलाते हुए रेखाएं खीचना। पहले लम्बान के रुख मे रेखाएँ खीचना — ये पडी रेखाए होगी, फिर ऊपर-नीचे वाली रेखाए खीचना — ये खडी रेखाए होगी। बस, इस तरह पूरी नक्ल उतार लेना।"

साफ-सुथरा और सलीके का काम तथा कुछ सीखने का यह अवसर पाकर मुझे खुशी हुई, लेकिन कागज और परकार आदि की ओर सहमी नजर से मैने देखा, वे मुझे अच्छा-खासा आल-जाल मालूम हुए।

लेकिन मै पीछे नही हटा। अगले ही क्षण हाथ धोकर मै काम में जुट गया। मने तमाम पडी रेखाओ के नुक्ते लगाए और रूलर से लकीरे खीचकर उन्हे जोड दिया। यह सब तो बडे मजे में हो गया। बस, एक ही बात जरा गडबड थी। न जाने कैसे, तीन लकीरे फालतू खिच गई थी। इसके बाद मैने तमाम खडी लकीरो के निशान बनाए और उन्हे भी मिला दिया। और मेरे अचरज का ठिकाना न रहा जब मैने देखा कि यह तो कुछ और ही बन गया है। इस घर की शक्ल-सूरत एकदम बदली हुई थी। खिडकियाँ ऊपर खिसक कर दीवारो के बीच की खाली जगह में पहुच गई थी, और उनमें से एक तो घर की छत को पार कर हवा में ही लटक रही थी। घर का मुख्य फाटक खिसक कर दूसरी मजिल पर पहुँच गया था, कार्निस छत से भी ऊची उठ गई थी, और रोशनदान की खिडकी चिमनी के छोर से जा लगी थी।

सकपकाया-सा बडी देर तक मै इस अजूबे की ओर देखता रहा। कोशिश करने पर भी मेरी समझ में न आया कि यह सब कैसे हो गया। मेरी आँखें गीली हो आईं। आखिर अपनी कल्पना के सहारे मैने स्थिति को सभालने का निश्चय किया। सभी का र्निसो और छत की मुडेरो पर मैने चिडे-चिडिया, कौवो और कबूतरो

की तस्वीरें बना दीं, और खिड़कियों के सामने की खुली जगहों को मैंने टेढ़ी-मेढ़ी टांगों वाले आदमियो से भर दिया। उनके हाथो में मैंने एक-एक छतरी भी थमा दी, लेकिन उनके टेढे-मेढेपन में इससे भी कोई ख़ास कमी नहीं आई। इसके बाद समूचे कागज पर तिर्छी लकीरे डाल मै अपने मालिक के पास पहुँचा।

मालिक की भौहे तन गई, बालों की एक लट को अपनी उँगली मे लपेट कर उसने बटा, और मुंह फुला कर पूछा:

"यह सब क्या हरकत है?"

"यह बारिश हो रही है", मैंने कहा,—"बारिश में सभी घर उल्टांग हो जाते है, क्योंकि खुद बारिश भी उल्टी-सीधी गिरती है। और पक्षी — ये सब पक्षी है — कोर्निसों पर सिकुड़े-सिमटे बैठ है। जब बारिश होती है तो सभी पक्षी इसी प्रकार घुग्घू से हो जाते है। और ये लोग अपने-अपने घर पहुँचने की जल्दी में हैं। उस लड़की को देखिए जो रपट कर गिर पड़ी है, और वह आदमी जो नींबू बेच रहा है।"

"तुम्हारे पाँव चूमने चाहिए मुझे।" मालिक ने मेज़ पर झुकते हुए कहा, यहाँ तक कि उसके लम्बे बाल कागज़ पर खरखराने लगे। उसका समूचा बदन हँसी से हिल रहा था।

"तुम...तुम पूरे चोच हो...तुम्हारा तो इस दुनिया से ही सफाया कर देना चाहिए!"

तभी छोटी मालकिन भी मटका-सा अपना पेट लिए आ मौजूद हुई, और मेरी करतूत पर नज़र डाल कर देखा।

"मार खाकर ही यह ठीक होगा।" उसने अपने पति को उकसाया।

पति पर इसका असर नही हुआ। बिना किसी झुंझलाहट के बोला:

"ओह नही, शुरू-शुरू में खुद मेरा भी यही हाल था।"

लाल पेन्सिल से उसने मेरी गलतियो पर निशान बना दिये और मुझे एक दूसरा कागज देते हुए बोला

"फिर कोशिश करो। एक बार, दूसरी बार, तीसरी बार— जब तक ठीक न बने, इसे बनाते ही रहना।"

मेरा दूसरा प्रयत्न पहले से अच्छा था। केवल एक खिडकी अपने स्थान से खिसक कर बाहर बरसाती के फाटक पर आ गई थी। लेकिन घर सूना-सूना-सा रहा। यह मुझे कुछ अच्छा नही मालूम हुआ। सो सभी काट-छोट के लोगो से मैने उसे आबाद कर दिया। खिडकिया पर युवतियाँ बैठी पखा झल रही थी। युवक सिगरेट का धुआ उडा रहे थे और एक युवक जो सिगरेट नही पीता था, अपनी नाक के मुह बद किये अन्य सब की ओर देख रहा था। बाहर बरसाती में एक गाडी खडी थी और उसकी ओट म एक कुत्ता लेटा था।

मालिक ने गुस्से से पूछा

"तुम फिर यह गडबड क्यो कर लाए?"

मैने बताया कि आदमियो के बिना घर बडा सूना-सूना-सा लग रहा था। लेकिन उसने मुझे डाटना शुरू किया

"यह क्या खुराफात है! अगर कुछ सीखना चाहते हो तो कायदे से काम करो! व्यर्थ की ऊल-जलूल बातो से बाज आओ!"

और अन्त में मूल से मिलता जुलता दूसरा चित्र बना कर जब मैं उसके पास ले गया तो वह बहुत खुश हुआ।

"देखो। अब ठीक बन गया न? अगर इसी तरह कोशिश करते रहोगे तो बडी जल्दी तरक्की करोगे।"

और उसने मुझे एक नया काम सौंपा

"हमारे अपने घर का एक नक्शा तैयार करो, जिसमें सब

उमकी यह हालत देख मुझे दुख हुआ—कितना दवा-पिसा और कितना निरीह। एक घडी के लिए भी स्त्रियो की चिल्ल-पो उसका पीछा नही छोडती थी।

यह बात तो मने इससे पहले ही भाप ली थी कि बूढी मालकिन को मेरा काम सीखना पसन्द नही है और रोडे अटकाने में भी वह अपनी शक्ति-भर कोई कसर नही छोडती थी। इसलिए, काम में जुटने से पहले, म उससे यह पूछना कभी नही भूलता था

"अब और कोई काम तो नही है, मालकिन?"

खीजकर वह जवाब देती

"जब होगा तब अपने-आप बता दूगी। मेज पर बैठ कर मक्खियाँ मारने के सिवा तुझे और क्या काम आता है?"

और कुछ मिनट बाद ही, किसी-न किसी काम के लिए, वह मुझे अदबदाकर भेजती या कहती

"जीना साफ क्या किया है, निरी बेगार काटी है। कोने-कोने धूल से अटे पडे है। जाओ, झाडू लेकर दोबारा साफ करो।"

लेकिन वहाँ पहुचने पर मुझे कही कोई धूल नही दिखाई देती।

"इसका मतलब यह कि म झूठ बोल रही थी, क्या?" वह चिल्ला कर मेरा मुह बन्द करना चाहती।

एक बार कागजो पर क्वाम उलट कर उसने मेरी सारी मेहनत पर पानी फेर दिया। दूसरी बार उसने पूजा के दीये का सारा तेल उडेल दिया—पूरी बोतल ही उलट दी। बच्चो की भाति वह इस तरह की हरकते करती, बच्चो की भाति अपनी इन हरकतो को वह छिपा नही पाती और आसानी से पकड में आ जाती। इतनी जल्दी और इतनी आसानी से नाराज होते या हर चीज और हर व्यक्ति के बारे म इतने जोश के साथ शिकायते करते मैंने

अन्य किसीको नही देखा। चुगली खाना, एक-दूसरे की बुराई या शिकायत करना यो तो सभी को अच्छा लगता है, लेकिन उसकी तन्मयता देखते बनती थी, ऐसा मालूम होता था मानो कोई गायक, सुध-बुध भूल कर, गीत गा रहा हो!

अपने बेटे से उसका प्रेम किसी पागलपन से कम नही था। उसके प्रेम का ज़ोर कुछ इतना अधिक था कि देखकर मैं हंसना चाहता और डर भी लगता। ऐसा मालूम होता मानो कोई मदांध शक्ति उमड-घुमड़ रही हो। सुबह की पूजा-प्रार्थना के बाद वह तन्दूर पर चढ जाती, और उसके ऊपरी तख़्ते पर अपनी कोहनियां टिका कर पूरी तन्मयता से फुसफुसाती:

"मेरे भाग्य का सहारा, मेरे रक्त और मांस का टुकड़ा, हीरे की भाति खरा और फरिश्ते के परो की भांति हल्का-फुल्का! तू सो रहा है। सो, मेरे जिगर के टुकड़े, सो! मीठे सपनो की चादर अपने हृदय पर डाल कर सो। और वह देख, सपनों में तेरी दुलहिन तेरे लिए पलक-पावड़े बिछाए है। कितनी सुन्दर—एकदम गोरी-चिट्टी, मानो राजकुमारी या किसी धनी सौदागर की बेटी हो! तेरे दुश्मनों को काल चट कर जाए, माँ के गर्भ मे ही उन्हें लक़वा मार जाए! और तेरे मित्र सैकड़ों वर्ष जिएं, और झुंड की झुड कुंवारी लड़कियाँ सदा तुझपर न्योछावर हों, बत्तखो के दल की भाति तेरे पीछे फिरती रहे!"

यह सुन मेरे पेट में बल पड़ जाते। औघड़ और काहिल बीत्तर देखने में बिल्कुल खुटकबढई ऐसा था—लम्बी नाक और शोख रंग के बेल-बूटेदार कपड़े, जिद्दी और मूर्ख!

माँ की फुसफुसाहट से कभी-कभी उसकी नींद उचट जाती और उनींदे स्वर मे वह बड़बड़ाता:

"तुम्हे शैतान भी तो नही उठा ले जाता, माँ! यहाँ खड़ी-

खडी मुंह से थूक उडा रही हो! तुम्हारे साथ तो दो घडी टिकना भी एक मुसीबत है!"

इसके बाद, बहुत कर, वह चुपचाप नीचे उतर जाती और हसते हुए कहती

"अच्छा तो मैं चली। नवाब साहब की नीद मे खलल पड गया, क्या?"

लेकिन कभी-कभी उसकी टागें ढीली पड जाती, और तन्दूर के किनारे वह धम्म से ढह जाती, मुह खोले और इस तरह हाफते हुए, मानो कोई गर्म चीज खाने से उसकी जीभ जल गई हो। तीखे शब्दों की फिर बौछार होती

"क्या कहा कलमुहे, तेरी अपनी मा को शैतान उठा ले जाए! कपूत, मेरी कोख में आते ही तू मर क्यो नही गया? तूने जन्म ही क्यो लिया, शैतान की दुम! मेरे माथे के कलक!"

ताडीखाने के गदे और बाजारू शब्द उसके मुह से निकलते—भयानक और घिनौने!

वह बहुत कम सोती थी। नीद में भी जमे उसे चैन नही मिलता था। कभी-कभी रात के दौरान में वह कई बार तन्दूर मे नीचे उतरती, काउच के पास उस जगह पहुँचती जहाँ मैं सो रहा था, और मुझे जगा देती।

"क्या, क्या बात है?"

"शोर न करो", त्रास का चिह्न बनाकर और अधेरे में किसी चीज की ओर देखते हुए वह फुसफुसाती,—"ओह भगवान मेरे मसीहा आलीजाह सन्त वारवारा अकाल मृत्यु से हम सब की रक्षा करना !"

फिर कापते हाथो से वह मोमबत्ती जलाती। उसकी धुधली रोशनी में चीजें और भी अटपटा तथा विकृत रूप धारण कर लेती और

"गुसलखाने में मैंने उसे नहाते देखा है। उसके शरीर का पोर-पोर मेरा देखा और परखा हुआ है। पता नहीं, उसकी किस चीज पर वह इतना लट्टू है? क्या दुनिया में और स्त्रियाँ नहीं रहीं जो पुरुष अब ऐसी चुचमुँहियों पर मुग्ध होने लगे हैं?"

पुरुष और स्त्रियों के सम्बंधों का जिक्र करते समय वह चुन-चुनकर गंदे-से-गंदे शब्दों का इस्तेमाल करती। शुरू-शुरू में जब भी मैं उसकी बातें सुनता तो बड़ी घिन मालूम होती, लेकिन शीघ्र ही बड़े ध्यान और गहरी दिलचस्पी से मैं उसकी बातें सुनने लगा, मानो उसके शब्दों के पीछे कोई कटु सत्य प्रकट होने के लिए कसमसा रहा हो।

"स्त्री की शक्ति महान है," हथेली को मेज पर पटक कर वह जोरों से कहती।—"खुदा तक को उसने नहीं बख्शा। क्या तुम भूल गए कि हौवा की वजह से सभी लोगों को दोजख का मुँह देखना पड़ता है?"

स्त्री की ताकत का बखान करने में वह कभी नहीं थकती, और हर बार मुझे ऐसा मालूम होता मानो इस तरह की बातें करके वह किसी को डरा रही है। उसकी यह बात मुझे कभी नहीं भूली कि हौवा ने खुदा को भी नहीं बख्शा।

हमारे अहाते में एक और घर था जो उतना ही बड़ा था जितना कि हमारा। इस घर के आठ खनों में से चार में फौजी अफसर रहते थे। फ़ौज का पादरी एक अन्य खन में रहता था। साईस-अर्दलियों और खाना बनानेवालियों, धोबिनों और घर की नौकरानियों की चमचख से अहाता हर घड़ी गूंजता रहता। रसोईघरों में नित्य ही नये गुल खिलते, प्रेम और आशनाई के शिगूफे छूटते, आँसुओं और मारपीट तक की नौबत आती। सिपाही आपस में लड़ते, खाई खोदने और घरों में काम करनेवाले मजदूरों तक से

भिड जाते। और स्त्रियाँ — वे तो मानो मार खाने के लिए बनी ही थी। अहाता क्या था, मानो भले-चगे युवको की पाशविक और वेलगाम भूख का, नगी कामुकता और वासना का सागर हिलोरें ले रहा था। मेरे मालिक और मालकिन जब दोपहर का खाना खाने चाय पीने या साझ का भोजन करने बैठते तो कोरी कामुकता और बेमानी बर्बरता म डूबे इस जीवन और उसकी उखाड-पछाड के गदे किस्सो का पूरी बारीकी और बेशर्मी से चटखारे ले-लेकर बयान करते, और खुद भी उसी गदगी मे डूबते-उतारते। बूढी मालकिन अहाते की एक-एक बात की खबर रखती और रस ले-लेकर उसे दोहराती।

छोटी मालकिन चुपचाप इन किस्सो को सुनती और उसके गदराए हुए होठो पर मुसकराहट थिरकने लगती। वीक्तर हसी से दोहरा हो जाता, लेकिन मालिक नाक-भौंह सिकोड कर कहता

"बस भी करो, माँ!"

"हाय राम, तुम्ह तो मेरा बोलना भी नही सुहाता!" माँ शिकायत करती।

वीक्तर शह देता

"कोई बात नहीं, माँ। तुम्हे भला कौन रोक सकता है। यह घर ही कुछ ऐसा है !"

बडे लडके के हृदय में माँ के प्रति दया का भाव था, लेकिन कुछ सहमा-सा। वह हमेशा माँ के साथ अकेला रहने से बचता, और अगर सयोगवश कभी ऐसा हो भी जाता तो माँ उसकी पत्नी को लेकर शिकायतो का अम्बार लगा देती और अन्त में धन की माग करने से कभी न चूकती। दो-तीन रूबल और कुछ रेजगारी निकाल कर वह झट से उसके हाथ पर रख देता और जैसे-तैसे उससे अपना पीछा छुडाता।

"तुम्हें धन की भला अब क्या ज़रूरत है, माँ? यह नहीं कि मुझे देने दुःख होता है, लेकिन सवाल यह है कि लेकर करोगी क्या?"

"यही थोड़ा-बहुत भिखारियों को खैरात करती हूँ, और देव-मूर्त्ति के लिए मोमबत्तियाँ भी मंगानी होती है।"

"भिखारियों की बात न करो, माँ! सब से बड़ा भिखारी तो तुमने अपने घर में पाल रखा है। वीक्तर का तुम सत्यानास करके छोड़ोगी, माँ!"

'कितना ओछा हृदय है तुम्हारा। तुम्हें अपना भाई भी फूटी आँखों नहीं सुहाता!"

बेचैनी से हाथ हिला कर वह माँ के पास से चल देता।

वीक्तर मुँहफट था और माँ का जरा भी लिहाज नहीं करता था। खाने की चीज़ों पर वह बुरी तरह टूटता, और उसका मन कभी नहीं भरता। रविवार के दिन बड़ी मालकिन मालपुवे बनाती और उसके लिए एक अतिरिक्त हिस्सा निकाल कर अलग रखना कभी नहीं भूलती। इस हिस्से को मर्तबान में छिपाकर वह काउच के नीचे रख देती जिसपर मैं सोता था। गिरजे से लौटते ही वह सीधे मर्तबान पर झपट्टा मारता और बड़बड़ा कर कहता:

ऊंट की दाढ़ में जीरा! थोड़े मालपुवे और रख देती तो क्या तेरा कुछ बिगड़ जाता। बूढ़ी चमरखट्टो!"

"ज्यादा बोलो नहीं। चुपचाप निगल जाओ। अगर किसी ने देख लिया तो..."

"तो क्या? मैं साफ़ कह दूंगा कि शैतान की मौसी खुद इस बूढ़ी खूसट ने मेरे लिए ये मालपुवे चुरा कर रखे थे!"

एक दिन मैंने मर्तबान निकाला और दो-एक मालपुवे खुद चट कर गया। वीक्तर ने मेरी खूब मरम्मत की। वह मुझसे उतना ही

घृणा करता था जितना कि मैं उससे। वह मुझे चिढ़ाता, दिन में तीन बार अपने जूतों पर मुझसे पालिश कराता, अपने तख्ते पर लेटने के बाद लकड़ी की पट्टियाँ खिसका कर मेरे सिर का निशाना साधता और दराज के बीच में जोरों से थूकता।

अपने बड़े भाई की भांति जिन्हें बात बात में 'नाच न नचाओ,' या इसी तरह के दूसरे फिकरे कसने की आदत थी, वह भी कुछ खास ढले ढलाए फिकरे दोहराने की कोशिश करता। लेकिन उसके फिकरे हद से ज्यादा बेहूदा और बेतुके होते थे।

"मा, अटन्शन! मेरे मोजे कहा है?"

बेमानी सवालों से वह मेरी जान खाता। जैसे

"अलेक्सेई, क्या तुम बता सकते हो कि 'बुलबुल' लिख कर हम उसे 'गुलगुल' क्यों पढ़ते हैं? जिस तरह कुछ लोग 'चाकू' को 'काकू' कहते हैं बस ही 'चाबुक' को 'काबुक' क्या न कहा जाए। और यह 'कुच' शब्द क्या 'कूची' से बना है? अगर ऐसा है तो "

उनकी चालचाल और बातचीत करने का ढंग मुझे बहुत बुरा लगता। जन्म से ही नाना और नानी की साफ-सुथरी और सुघर भाषा की घुट्टी पीकर मैं बड़ा हुआ था। वैसे शब्दों का गठबन्धन कर जब वे प्रयोग करते तो शुरू-शुरू में मुझे बड़ा अजीब लगता। मेरी समझ में न आता कि यह क्या गोरखधंधा है। 'भयानक रूप से मजेदार', "शान मारना", "भीषण प्रसन्नता", या इसी तरह के शब्द दूसरे से इस्तेमाल करते। और मैं सोचता कि जो 'मजेदार' है वह 'भयानक' कैसे हो सकता है, भोजन या गाने के साथ मारने का भला क्या सम्बन्ध हो सकता है, और 'प्रसन्नता' के साथ 'भीषण' शब्द की जोड़ कैसे बैठ सकती है?

और मैं उनसे सवाल करता

"इस तरह बोलना क्या ठीक है?"

झुंझला कर वे जवाब देते:

"बस-बस, ज्यादा उस्तादी झाड़ने की कोशिश न करो! नहीं तो तुम्हारे कानो को तोड़ कर गुलदस्ता बना दिया जाएगा!"

मुझे यह भी गलत मालूम हुआ। कान भी क्या कोई पेड़-पौधा या फूल-पत्तियां है जिन्हे तोड कर गुलदस्ते में सजा दिया जाएगा?

यह दिखाने के लिए कि मेरे कानो को तोड कर सचमुच गुलदस्ता बनाया जा सकता है, उन्होने मेरे कान खीचे। लेकिन मैं निश्चल खड़ा रहा और अन्त में विजय के स्वर मे चिल्ला कर बोला:

"अहा, कान खीचने को तुम कान तोड़ना कहते हो! मेरे कान तो अभी भी वही है, जहाँ पहले थे!"

चारो ओर जिधर भी नज़र उठा कर देखता, पूरी हृदयहीनता से लोग एक-दूसरे को सताते, दुनिया-भर की चालें चलते और घिनौने नंगपन का प्रदर्शन करते। यहाँ की गंदगी और नंगपन ने कुनाविनो के काठ बाजार और चकलाखाने को भी मात कर दिया था जहाँ कदम-कदम पर वेसवा घर थे और हरजाई औरतो की सड़को पर भरमार दिखाई देती थी। कुनाविनो की गंदगी और हृदयहीनता के पीछे तो फिर भी किसी ऐसी चीज का आभास मिलता था जिसने इस गदगी और हृदयहीनता को अनिवार्य बना दिया था: जानलेवा ग़रीबी, भुखमरी और श्रम जिसने उबा देने वाली घिसघिस का रूप धारण कर लिया था। यहाँ लोग आराम से रहते थे, चैन से जीवन बिताते थे, और श्रम के बदले तुराफ़ानी हलचल मे डूबते-उतारते थे। ऐसा मालूम होता था मानो, छूत के रोग की भाति, झुंझलाहट-भरी अलसाहट और ऊब की काली छाया मडरा रही हो, मानो हर चीज़ को उसने अपने जाल में जकड लिया हो, घुन की भाति उसे खोखला बना दिया हो।

मैं बेहद उदास रहता। हृदय में जैसे सौ-सौ बिच्छू डंक मारते। और जब कभी नानी मुझसे मिलने आती तब तो मानो मेरी जान पर ही बन आती। वह हमेशा पीछे के दरवाज़े से रसोई मे दाखिल होती। पहले वह देवमूर्तियों के सामने क्रास का चिन्ह बनाती, इसके बाद अपनी छोटी बहन के सामने झुकते समय वह एकदम दोहरी हो जाती। उसका इस तरह झुकना मुझे पूर्णतया कुचल देता, ऐसा मालूम होता मानो ढाई मन का बोझ मेरे ऊपर आ गिरा हो।

एकदम ठडे, उपेक्षापूर्ण अन्दाज में मालकिन कहती

"अरे, तुम यहाँ कहाँ से टपक पडी, अकुलीना?"

मै नानी को देख कर भी नही देखता। इस अन्दाज में वह अपने होठो को काटती कि उसके चेहरे का भाव एकदम बदल जाता। ऐसा मालूम होता मानो यह नानी का चेहरा नही है। वह वहीं, डोल के पास, दरवाज़े के साथ लगी बेंच पर चुपचाप बैठ जाती और मुह से एक शब्द भी न निकालती—एकदम गुमसुम, मानो उसने कोई अपराध किया हो। अपनी बहन के सवालो के जवाब भी वह दबे और सहमे हुए से स्वर म देती।

मुझसे यह सहन न होता। झुझला कर कहता

"हाँ क्या पापड बेलने के लिए बैठी हो?"

दुलार-भरी कनखियो से वह मेरी ओर देखती, और प्रभावपूर्ण ढग से कहती

"बहुत जबान न चला। तू क्या इस घर का मालिक है?"

"इसके तो ढग ही निराले है," बूढी मालकिन कहती,—"चाहे जितना इसे मारो या डाटो, पर यह हर बात में अपनी टाग अडाने से बाज़ नही आता!" और इसके बाद शिकायतो का सिलसिला शुरू हो जाता।

कभी-कभी, बड़े ही कुत्सित ढग से, वह अपनी बहन को कोचती :

"तो तुम अब माग-तांग कर गुजर करती हो, अकुलीना?"

"यह तो फिर भी गनीमत है!"

"लेकिन किसी के सामने हाथ फैलाना... जब लाज ही बाकी न रही तो फिर क्या रहा!"

"ईसा मसीह भी तो माग-ताग कर ही गुजर करते थे।"

"ईसा मसीह की इस तरह मिट्टी पलीद न करो। हराम की खाने और धर्म को पाव-तले रौदने वाले ही ऐसी बाते करते है। बुढापे में तुम्हे यह क्या सूझी? ईसा मसीह क्या भिखारी था? वह भगवान का बेटा था। वह भीख क्यो मागता? बाइबल मे लिखा है कि एक दिन वह आएगा और सभी के भले-बुरे कर्मो का जायजा लेगा—जो जिन्दा है उनके भी और जो मर गए है उनके भी—यह न समझो कि जो मर गए है, वे बच जाएगे। तुम गल-सड कर चाहे धूल मे क्यो न मिल जाओ, उसकी नजरो से फिर भी न छिप सकोगे। तुम और वसीली, दोनों अपनी करनी का फल भोग रहे हो, और अभी और भोगोगे। बापरे, कितना घमड था तुम्हे। क्या वे दिन याद नही जब अपना धनी रिश्तेदार समझ कर मैंने तुम्हारे आगे हाथ फैलाया था और तुमने मुझे ठुकरा दिया था?"

नानी ने अविचलित स्वर मे जवाब दिया :

"मुझसे जो बना, तुम्हारे लिए सदा करती रही। फिर भी अगर भगवान की यही मर्जी है तो..."

"उसी का तो तुम्हे यह फल मिल रहा है, और अभी तो यह शुरुआत ही है!"

उसकी जुबान रुकने का नाम नहीं लेती, और उसके शब्द

नानी के हृदय पर कोडे बन कर बरसते। मुझे बडा अटपटा मालूम होता और समझ में न आता कि नानी यह सब कैसे बरदाश्त करती है। नानी का यह रूप मुझे जरा भी अच्छा नही लगता, और वह मेरी नजरो से नीचे गिर जाती।

तभी छोटी मालकिन कमरे में आती और अहसान-सा जताते हुए कहती

"चलो, खाने के कमरे में चलो। हाँ-हाँ, सब ठीक है। बस, चली आओ!"

नानी को उठता देख बडी मालकिन फिर तीर छोडती

"अपने पाव तो साफ कर लिए होते, चर्र-मर्र चरने की माल!"

मेरे मालिक का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठता। नानी को देखते ही वह कहते

"ओह, भोली-भाली सन्त अकुलीना! कहो, कैसी हो? बूढा काशीरिन तो अभी जिन्दा है न?"

नानी के चेहरे पर अत्यन्त स्नेहपूर्ण मुसकराहट खेलने लगती।

"और तुम्हारा क्या हाल है? क्या अब भी उसी तरह काम में जुटे रहते हो? कुछ तो आराम कर लिया करो!"

"आराम कैसा? यहाँ तो भगवान ने जन्म-कैद की सजा दी है। सारी उम्र चक्की पीसनी पडेगी!"

मालिक के साथ नानी की बातचीत में अपनाव और सहृदयता का भाव रहता। वह इस तरह बात करती जैसे बडे छोटो से करते है। कभी-कभी मालिक मेरी माँ का भी जिक्र करता, कहता

"तुम्हारी लडकी वारवारा वसीलियेवना, एक ही औरत थी वह भी—एकदम चुस्तदुरुस्त, पूरी मैनिक!"

"तुम्हे याद है न," नानी की ओर मुह करते हुए उसकी

पत्नी कहती,--"मैंने उसे एक लबादा दिया था—काले रेशम का, और काले ही मोती जड़ा!"

"हां, हां, याद है।"

"एकदम नया मालूम होता था!"

"ऊंह, लबादा, सबादा—जीवन का कबाड़ा!" मालिक बड़बड़ाया।

"यह क्या—क्या कहा तुमने?" उसकी पत्नी ने अचकचा कर पूछा।

"कुछ नहीं—कुछ भी तो नहीं। सुखी दिन अतीत की चीज़ बनते जा रहे है, और उसी तरह अच्छे आदमी भी..."

पत्नी के माथे में चिन्ता की रेखाएं दौड़ गई। बोली:

"तुम्हारे मुंह से ऐसी बाते क्यों निकलती है? क्या हो गया है तुम्हे?"

इसके बाद नानी तो नये बेबी को देखने चली गई और मैं चाय के बरतन आदि साफ़ करने के लिए रह गया। तभी मालिक ने धीमे और सपनों मे खोए से स्वर मे कहा:

"तुम्हारी यह बूढी नानी खूब है।"

उसके इन शब्दों को सुन कर मेरा हृदय गदगद हो गया। लेकिन अकेले में मुझसे नही रहा गया। दु:खते हृदय से मैंने नानी से कहा:

"तुम यहाँ आती ही क्यो हो? क्या तुम नही देखती कि ये किस किस्म के लोग है?"

"हाँ आल्योशा, मै सब कुछ जानती हूं," नानी ने उसास भरते हुए कहा और मेरी तरफ़ देखा। नानी के अद्भुत चेहरे पर एक बहुत ही कोमल मुसकराहट जगमगा उठी, और मैंने तुरत लज्जा का अनुभव किया। सचमुच, नानी की आँखो से कुछ छिपा नही था—वह सब कुछ देखती थी, सभी कुछ जानती थी वह

उस उथल-पुथल तक से परिचित थी जो कि उस समय मेरे हृदय में हो रही थी।

नानी ने चौकस होकर इधर-उधर नजर डाली और यह देखकर कि आस पास में कोई नहीं है, मुझे अपनी बाँहों में खींच लिया और उमडते हुए हृदय से बोली

"अगर तुम न होते तो मैं यहाँ कभी नहीं आती — इन लोगों से भला मेरा क्या वास्ता? फिर नाना बीमार हैं और उनकी बीमारी के चक्कर में मेरा सारा समय चला जाता है। मैं कुछ काम नहीं कर पाती, इस लिए हाथ भी तंग है। उधर बेटा मिखाइलो ने अपने साशा को धता बता दिया है, सो उसका खाना-पीना भी मुझे ही जुटाना पडता है। इन्होंने तुम्हें छै रूबल साल देने का वायदा किया था। सो मैंने सोचा कि अगर ज्यादा नहीं तो कम से कम एक रूबल इनमें मिल ही जाएगा। क्यों, आधा साल तो होने आया न तुम्हें इनके यहा काम करते?" नानी और भी नीचे झुक गई और फुसफुसाकर मेरे कान में कहने लगी "उन्होंने मुझसे तुम्हें डाटने के लिए कहा है। शिकायत करते थे कि तुम कहना नहीं मानते। अगर तुम कुछ दिन और यहा टिक सको — एक या दो साल तक — किसी तरह और निभा सको जब तक कि तुम खुद अपने पावों पर जम कर खडे न हो जाओ बोलो, कोशिश करोगे न, मेरे लोटन कबूतर?"

मैंने वायदा तो कर लिया, लेकिन था यह बेहद कठिन। जीवन क्या था, एक भारी और उबा देने वाला बोझ था, जिसके नीचे मैं कुचला जाता था। कुछ पैसों के लिए इतने ताने-तिश्ने सहना, सुबह से लेकर रात तक घनचक्कर की भाति सब की चाकरी बजाना, मुझे ऐसा मालूम होता मानो दुःस्वप्नों की दुनिया में मेरा जीवन बीत रहा है।

कभी-कभी मेरे मन में होता कि यहां से भाग चलूं। लेकिन कम्बख्त जाड़ा अपने पूरे जोर पर था। रात को बर्फ की आंधियां चलती, तिदरी में हवा सांय-सांय करती और ठंड से जकड़ी लकड़ी की छतें चरमरा उठती। ऐसे में भाग कर मैं जाता भी कहां?

बाहर जाकर खेलना मेरे लिए मना था, सच तो यह है कि मुझे खेलने की फुरसत ही नहीं मिलती थी। जाड़ों के छोटे दिन योंही काम की चकर-घिन्नी में गायब हो जाते थे।

लेकिन सप्ताह में दो बार मुझे गिरजा जरूर जाना पड़ता—एक तो शनिवार के दिन सन्ध्या-प्रार्थना के लिए, दूसरे रविवार के दिन लम्बी प्रार्थना के लिए।

गिरजा जाना मुझे अच्छा लगता। किसी लुके-छिपे सूने कोने की मैं खोज करता और वहां जाकर खड़ा हो जाता। दूर से देखने में बड़ा अच्छा लगता—ऐसा मालूम होता मानो पत्थर के फर्श के ऊपर प्रवाहित मोमबत्तियों के सुनहरी प्रकाश की प्रशस्त धारा में देव-प्रतिमाओं की वेदी तैर रही हो। देव-प्रतिमाओं की काली आकृतियों में हल्का-सा कम्पन पैदा होता और राज-द्वारों की सुनहरी झालरें झूम कर झिलमिला उठती। नीले शून्य में लटकी मोमबत्तियों की लौ सुनहरी मधुमक्खियों की भांति मालूम होतीं और स्त्रियों तथा लड़कियों के सिर फूलों की भांति दिखाई देते।

कोरस-गान शुरू होता और हर चीज मानो उसका स्वर-लहरियों के साथ थिरकने लगती, हर चीज मानो इस पार्थिव जगत से ऊपर उठकर परियों के लोक में पहुंच जाती, समूचा गिरजा हौले-हौले डोलने लगता, मानो काजर की भांति काले शून्य में पालना झूल रहा हो।

कभी-कभी मुझे ऐसा मालूम होता कि गिरजा किसी झील में गोता लगा कर दुनिया की आंखों से दूर, खूब गहराई में,

छिप गया है जिससे कि वह अपना एक अलग और अन्य सब से भिन्न जीवन जिता सके। यह शायद नानी के एक देव गीत का असर था जो सपना के एक काल्पनिक नगर कितेज के बारे में था। अपने चारा ओर की हर चीज के साथ-साथ मै भी बहुधा उनींदा-सा झूमने लगता—कारस-गान की स्वर लहरियां मुझे थपकियां देतीं, नि शब्द प्रार्थनाए और पूजा करनेवालों की उसासें मेरी पलको का मूद देतीं, और मै नानी के उस उदासी भरे मधुर देव-गीत को मन ही मन गुनगुनाने लगता

सुबह् का था समय, शुभ और पवित्र।
बज रही थीं घटियां गिरजो में मातिन प्रार्थना की।
तभी किया धावा धर्म-द्वेषी तातार लुटेरा ने
घोडा पर कसे जीन, कील-काटो और अस्त्रा से लैस
घेर लिया आनन-फानन में प्यारे नगर कितेजग्राद को!
ओ इस दुनिया के प्यारे स्वामी,
ओ प्यारी मरियम अविजेय!
खुदा के बन्दो की खातिर उतरो इस धरती पर,
न पडे कोई विघ्न उनकी पूजा प्रार्थना में,
दैवी प्रकाश से हो नागरिकों के हिय का अधेरा दूर!
पवित्रता तेरे मन्दिर की कर सके न कोई नष्ट,
न रौंदी जाए लाज नगर कन्याओं की,
न फिरे नन्हे बच्चों के गलो पर तेग,
न आए बडे बूढों और दुबला पर आच।
परम पिता जेहावाह तथ खुदा के
और थी मां मरियम अविजेय।

कर दिया उन्हें विचलित और व्यथित
लोगों के क्रन्दन और दुःख की गुहारों ने।
और दिया आदेश महान खुदा जेहोवाह ने
अपने सब से बड़ा फरिश्ते मिखाइल को:
मिखाइल, मानव-लोक में जरा जाओ तो
कितेजग्राद की धरती को जरा हिलाओ तो
फटे धरती और फूट पड़ें पानी के सोते
छिप जाए कितेजग्राद, पानी की लहरों मे
तातार लुटेरो की पहुंच से दूर—बहुत दूर!
और खुदा के बन्दे
हों, अपनी प्रार्थनाओं में सलग्न,
अविरल और अविश्रान्त,
सुबह, साझ और आठो याम,
वर्ष प्रति वर्ष—
बहे जब तक जीवन की अनन्त धारा!

उन दिनो नानी के देव-गीत मेरे रोम-रोम में वैसे ही समाये थे जैसे मधुमक्खियो के छत्ते मे शहद। यहाँ तक कि मेरे विचार और कल्पनाएं तक उन्ही गीतो के सांचे मे ढली होती थी।

गिरजा में जाकर मै कभी प्रार्थना नही करता था, नाना की द्वेष-भरी मिन्नतों और मानताओं तथा उदास ईश-प्रार्थनाओ को नानी के भगवान के सामने दोहराते मेरी जुबान अटकती। मुझे पक्का यकीन था कि नानी का भगवान भी उन्हें उतना ही नापसद करेगा जितना कि मै करता हूं। इसके अलावा वे सब किताबो में छपी-छपायी थी। दूसरे शब्दो मे यह कि किसी भी पढे-लिखे व्यक्ति की भाति भगवान को भी वे जुबानी याद होगी।

इस कारण जब कभी मेरा हृदय किसी मधुर उदासी से उबचुभ करता या दिन-भर के छोटे-मोटे आघातों से कराह उठता तो मैं अपनी निजी प्रार्थनाएं रचने का प्रयत्न करता। और उसके लिए मुझे कोई खास प्रयास भी नहीं करना पड़ता। अपने दुखी जीवन पर मैं एक नज़र डालता और शब्द अपने-आप आकार रूप ग्रहण कर प्रकट होने लगते

भगवान, ओ मेरे भगवान
हूं मैं कितना दुखिया
विनती मेरी,
झटपट मुझे बड़ा बना दे!
बहुत सहा—सह चुका बहुत मैं,
न होना मुझपर गुस्सा
गर हो जाऊं मैं तंग
और कर दूं इस जीवन का अन्त!
मरती यहां सभी की नानी
नहीं सिखाते, नहीं दिखाते
गाना-धुन, कुछ नहीं बताते
और यह बुढ़िया आफत की परकाला
जीवन को जंजाल बनाती,
सदा डांटती, कान खींचती।
बन्द उसका मुंह काला।
भगवान, ओ मेरे भगवान,
हूं मैं कितना दुखिया!

खुद रची हुई इन "प्रार्थनाओं" में से कितनी ही मुझे आज दिन भी याद हैं। बचपन में जिस तरह दिमाग काम करता है,

उसका भारी-भरकम आकार देख कर मुझे लकड़ी के उस कुंदे की याद हो आई जो न जाने कैसे आँगन में से लुढ़क कर सड़क पर आ गया था और ढलान पाकर किसी अज्ञात मंजिल की ओर आगे बढ़ चला था। उसे लुढ़कता देख कुत्ते का कौतुक जगा और वह भी उसके साथ-साथ लपक चला।

कभी-कभी खिलखिलाती जवान लड़कियों और उनके चहेतों से मुठभेड़ होती और मैं मन-ही-मन सोचता कि ये लोग भी गिरजे से भाग आए हैं और अब यहाँ अपनी संध्या प्रार्थना कर रहे हैं।

खिड़कियाँ रोशनी से चमचमाती रहतीं। उनकी दराज़ों में से स्वच्छ हवा में कभी-कभी एक अजीब किस्म की गंध आती—भीनी और अपरिचित गंध जो एक भिन्न प्रकार के जीवन का आभास देती। और आड़े-तिरछे होकर मैं यह पता लगाने का प्रयत्न करता किस तरह के लोग यहाँ रहते हैं, कैसा जीवन वे बिताते हैं। उस समय जबकि सभी भले लोगों को सन्ध्या-प्रार्थना में शामिल होना चाहिए, ये लोग यहाँ आकर हँसते और अठखेलियाँ करते हैं, एक खास किस्म का सितार झनझनाते और खिड़कियों में से मधुर स्वर-लहरियाँ प्रवाहित करते हैं।

दो सूनी सड़कों—त्सिगानोस्काया और मग्लीनावस्काया—के कोने पर स्थित एक छोटा, एक-मंजिला घर मुझे खास तौर से अजीब मालूम हुआ। ईस्टर के भजन-कीर्तनों से पहले की बात है। मौसम बदल चला था और बर्फ पिघलने लगी थी। इन्हीं दिनों, बादली किसी रात में, इस घर के पास से मैं गुज़रा और वहीं ठिठक कर रह गया। गंध के साथ-साथ खिड़की की दराज़ों में से एक अद्भुत आवाज़ भी आ रही थी, ऐसा मालूम होता था मानो कोई बहुत ही मज़बूत और बहुत ही भला व्यक्ति होंठों को बन्द

किये गा रहा हो। बोल तो समझ में नहीं आते थे, लेकिन धुन बहुत ही जानीपहचानी और समझी-बूझी मालूम होती थी। मैं उसे समझ भी लेता, लेकिन उसके साथ जिस बेसुरे ढग मे तार का बाजा झनझना रहा था, वह मानो गीत के प्रवाह और उसकी बोधगम्यता को छिन्न-भिन्न कर देता था। मैं एक ढूह पर बैठ गया और मुझे लगा कि मानव-कण्ठ से नहीं, बल्कि किसी जादू-भरे, हृदय को मरोड देने की अद्भुत शक्ति से सम्पन्न वायोलीन से यह सगीत प्रवाहित हो रहा है। उसका एक-एक स्वर वेदना में डूबा था। कभी-कभी उसका स्वर इतना तेज हो जाता कि समूचा घर थरथरा उठता, खिडकियों के काच झनझनाने लगते, पिघली हुई बर्फ छत पर से टपाटप गिरती, और आँसुओ की बूँदें मेरे गालों पर से ढुलकने लगतीं।

मैं अपने-आप में इतना खो गया था कि चौकीदार के आने का मुझे पता तक नही चला। धक्का देकर उसने मुझे ढूह पर से गिरा दिया।

"यहाँ किस लोफरी की ताक में बैठे हो?" उसने पूछा।

मैंने बताया:

"ज़रा गाना...!"

"गाना सुन रहा था,—ऊह! बस, नौ-दो ग्यारह हो जाओ यहाँ से!"

मैं जल्दी-से नौ-दो ग्यारह हो गया और इमारतो के पीछे से घूम कर फिर उसी घर के सामने आ गया। लेकिन अब कोई गा नही रहा था। खिड़की में से अब चुहल और अठखेलियों की उल्टी-पल्टी आवाज़े आ रही थी जो उस उदास सगीत से इतनी भिन्न थी कि दोनो मे कोई मेल नही था। मुझे लगा मानो वह संगीत मैंने सपने मे सुना था।

करीब-करीब हर शनिवार को मै उस घर के चक्कर लगाता, लेकिन वह सगीत केवल एक ही बार और सुनने को मिला। वसन्त के दिन थे। पूरी आधी रात तक, बिना रुके, सगीत चलता रहा। इसके बाद जब मै घर लौटा तो खूब मार पडी।

जाडो के दिन, आकाश में तारे जडे हुए और नगर की सूनी सडकें, मै खूब घूमता और तरह-तरह के अनुभव बटोरता। मै जान बूझ कर उप-बस्तियो की सडके टटोलता। नगर की मुख्य सडको पर जगह-जगह लालटेन जलती थी। मेरे मालिको की जान पहचान के लोगो में से अगर कोई मुझे देख लेता तो उन्हे खबर कर देता कि मै सध्या प्रार्थनाओ से गायब रहता हूँ। इसके सिवा नगर की मुख्य सडको पर शराबियो, पुलिस वालो, और शिकार की खोज में निकली हरजाई स्त्रियो से टकराने पर घूमने का सारा मजा किरकिरा हो जाता था। नगर से बाहर की निराली सडको पर मै निश्चिन्त होकर घूमता। चाहे जहाँ जाता और निचले तल्ले की चाहे जिस खिडकी में झाक कर देखता — बशर्ते कि उस पर परदा न पडा हो, या पाले ने उसे ढक न दिया हो।

इन खिडकियो में से मै अनेक प्रकार के दृश्यो की झाँकी लेता। कहीं लोग प्रार्थना करते दिखाई देते, कहीं चूमा-चाटी करते, कही एक-दूसरे के बाल नोचते, कहीं ताश खेलते और कहीं, पूरी गम्भीरता से, दबे हुए स्वरो में बातचीत करते। एक के बाद दूसरे दृश्य मेरी आँखो के सामने से गुज़रते—मूक और मछलियो की भाति तैरते हुए, मानो सन्दूकची के शीशे पर आँखें गडाए मै बारह मन की धोबन वाला खेल देख रहा हूँ।

निचले तल्ले की एक खिडकी मे से दो स्त्रियो पर मेरी नजर पडी—एक बिल्कुल युवती, दूसरी कुछ बडी। दोनो मेज पर बैठी थी। उनके सामने मेज के दूसरी ओर एक छात्र बैठा था,

उसके लम्बे बाल थे और खूब हाथ हिला-हिला कर वह उन्हे कोई पुस्तक पढ कर सुना रहा था। युवती कुर्सी से पीठ लगाए बैठी थी और बड़े ध्यान से सुन रही थी। उसकी भौहे सिकुड़ कर एक-दूसरे से मिल कर एक सीधी रेखा के रूप में तन गई थी। बड़ी स्त्री ने जो बहुत ही दुबली-पतली थी और जिसके बाल ऊन के गाले मालूम होते थे, सहसा दानो हाथों से अपना मुंह ढक लिया और सुबक-सुबक कर रोने लगी। युवक ने अपनी पुस्तक नीचे पटक दी, युवती उछल कर खड़ी हो गई और भाग कर कमरे से बाहर चली गई। तब युवक उठा और मुलायम बालो वाली स्त्री के सामने घुटनो के बल गिर कर उसके हाथ चूमने लगा।

एक अन्य खिडकी में से एक लमतड्ग दाढीवाले आदमी पर मेरी नजर पडी। लाल ब्लाउज पहने एक स्त्री को वह अपने घुटनो पर इस तरह झुला रहा था मानो वह कोई छोटा बच्चा हो। साथ ही वह कुछ गाता भी मालूम होता था। कारण कि रह-रह कर वह भट्टा-सा अपना मुंह खोलता और दीदे मटकाता। स्त्री खिलखिला कर दोहरी हो जाती, उछल कर उसकी बाँहो मे आ गिरती और अपनी टागों को हवा मे नचाने लगती। खीच कर वह फिर उसे अपने घुटनों पर ले लेता। वह गाता और वह खिलखिला कर दोहरी हो जाती। बहुत देर तक मैंने उन्हे देखा, और मुझे लगा कि उनका यह गाना और खिलखिलाना सारी रात इसी तरह चलता रहेगा।

यह तथा इसी तरह के अन्य कितने ही दृश्य मेरी स्मृति मे सदा के लिए अकित हो गए। इन दृश्यों को बटोरने मे बहुधा मै इतना उलझ जाता कि घर देर से पहुंचता और मालिको के हृदय मे सन्देह का किडा कुलबुलाने लगता। वे पूछते:

"तुम किस गिरजे में गए थे? क्या पादरी ने बाइबल का पाठ किया था?"

वे नगर के सभी पादरियों से परिचित थे और जानते थे कि किस गिरजे में बाइबल के किस परिच्छेद का पाठ होगा। मैं झूठ बोलता तो वे आसानी से पकड़ लेते।

दोनों स्त्रियां भी नानावाले क्रोधमूर्ति भगवान की पूजा करती थीं—एक ऐसे भगवान की जो चाहता कि सब उससे डरें, सब उसका आतंक मानें। भगवान का नाम सदा उनके होठों पर नाचता रहता, उस समय भी जब कि वे लड़ती-झगड़तीं।

"ज़रा ठहर तो कुतिया, भगवान तेरी ऐसी खबर लेगा कि तू भी याद रखेगी!" वे एक-दूसरे पर चीखतीं।—"तेरी वह दया बिखेरेगा कि तू कहीं मुँह दिखाने लायक न रहेगी!"

ईस्टर के व्रत-उपवास शुरू हुए। पहले रविवार को बूढ़ी मालकिन ने मालपूवे बनाए जो कड़ाई में ही चिपक कर जल गए।

"इन मरों को भी मेरी ही जान खानी थी!" झुंझला कर वह चिल्लाई। आग की तपन से उसका मुँह तमतमा रहा था।

सहसा कड़ाही की गंध सूंघ कर उसके चेहरे पर घटा घिर आई, कड़ाही को उठा कर उसने फर्श पर पटक दिया और चीख उठी

"ओह मेरे भगवान, कड़ाही में चर्बी की गंध आ रही है! पवित्र सोमवार के दिन मैं इसे तपा कर शुद्ध करना भूल गई! मैं अब क्या करूं, हे भगवान!"

वह घुटनों के बल गिर गई और आँखों में आँसू भर कर भगवान से फरियाद करने लगी

"क्षमा करना भगवान, मुझ पापिन को क्षमा करना, मुझपर तरस खाना। मेरी तो बुद्धि सठिया गई है, भगवान! इस बुढ़िया पर दया करना—मैं अब सजा देने योग्य भी तो नहीं रही, भगवान!"

मालपूवे खराब हो गए थे। कुत्ते के सामने डाल दिए गये। कड़ाही भी तपा कर शुद्ध कर ली गई। लेकिन इसके बाद, जब

भी मौका मिलता, छोटी मालकिन बूढ़ी मालकिन को इस घटना की याद दिला कर कोचने मे न चूकती।

"व्रत-उपवास के पवित्र दिनो में तुमने कड़ाही को तपा कर शुद्ध नही किया, गदी कड़ाही मे ही मालपूवे बनाते समय तुम्हारे हाथ कट कर न गिर गए!" झगड़ा होने पर वह कहती।

घर में जो भी बात होती, वे भगवान को घसीटना न भूलती। अपने तुच्छ जीवन के हर अंधेरे कोने मे वे भगवान को भी अपने साथ खीचकर ले जाती। ऐसा करके वे अपने मरे-गिरे जीवन मे कुछ महत्व और बड़प्पन का पुट भरने का प्रयत्न करती, उन्हें ऐसा मालूम होता मानो उनके जीवन का प्रत्येक क्षण कि... ऊँची शक्ति की सेवा में लगा है। हर ऐरी-गैरी चीज के साथ भगवान को चस्पां करने की उनकी आदत के असर से मै भी अछूता न रहा, अनायास ही ओने-कोनों में मेरी नजर पहुंच जाती, और मुझे ऐसा मालूम होता मानो कोई अदृश्य आँखे मुझे ताक रही है। रात के अधेरे मे मुझे इतना डर लगता कि मेरी जान ही निकल जाती। रसोई के उस कोने मे से इस डर का उदय होता जहाँ धुएं में काली पड़ी देवमूर्त्ति के सामने दिन-रात एक दिया जलता रहता था।

देवमूर्त्तियो के खाने से लगी हुई दोहरे चौखटे की एक बड़ी-सी खिड़की थी। खिडकी के उस पार नीले शून्य का अनन्त विस्तार दिखाई देता था। ऐसा मालूम होता मानो यह घर, यह रसोई, और यहाँ की हर चीज़ जिसमें मै भी शामिल था, एक-दम कगारे से अटके हो और अगर जरा-सा भी हिले-डुले तो वर्फ़ से ठंडे इस नीले शून्य मे, तारों से भी परे पूर्ण निस्तत्वता के सागर मे, डूबते चले जाएंगे, ठीक वैसे ही जैसे पानी में फेका गया पत्थर डूबता चला जाता है। और वहाँ, उस अतल गहराई में, मै दीर्घकाल तक दुनिया के प्रलयकारी अन्त की प्रतीक्षा मे [illegible]

पड़ा रहूँगा—डर के मारे सिकुड़ा-सिमटा, हिलने-डुलने तक का साहस न करते हुए।

यह तो अब याद नही पडता कि इस डर से किस प्रकार मैंने छुटकारा प्राप्त किया, लेकिन इस डर से मेरा पीछा छूट गया, और सो भी बहुत जल्दी ही। स्वभावत नानी के भगवान ने मुझे सहारा दिया, और मुझे लगता है कि उन दिनो मे भी एक सीधी-सादी सचाई का मैंने साथ नही छोडा था। वह यह कि मैंने कोई गलती नही की है, और अगर म बेकसूर हू तो दुनिया मे कोई कानून ऐसा नही है जो मुझे सजा दे सके, और यह कि दूसरो के गुनाहो के लिए मुझे कठघरे में नही खडा किया जा सकता।

सुबह की प्रार्थना से भी मै गायब रहने लगा—खास तौर से वसन्त के दिनो में। प्रकृति के नवयौवन का अदम्य उभार गिरजे के आकर्षण पर पानी फेर देता। इसके अलावा मोमबत्ती खरीदने के लिए अगर मुझे कुछ पैसे मिल जाते तब तो कहना ही न था। मोमबत्तियो के बजाय मै गोटियाँ खरीदता और खूब खेलता। प्रार्थना का सारा समय खेल में बीत जाता और घर में अदबदाकर देर से पहुचता। एक बार ईश-भोज और मृतको की प्रार्थना के लिए मुझे दस कोपेक मिले और मैंने उन्हे भी ऐसे ही उडा दिया। नतीजा इसका यह हुआ कि जब धर्म पिता देवमच से थाल लिए उतरे तो मैंने अन्य किसी की रोटी पर हाथ साफ किया।

खेलने का मुझे बेहद शौक था, और खेल से मै कभी नही थकता था। मेरा बदन तगडा और चपल था। गेंद, गोटिया और डडा बेडी मे खूब खेलता था। शीघ्र ही समूची बस्ती में मेरा सिक्का जम गया।

व्रत-उपवास के दिनो में मुझे भी गुनाह मुक्ति के चक्र में से गुजरना पडा। हमारे पडोसी पादरी दोरीमेदोन्त पोक्रोवस्की मेरे गुरु बने—उन्ही के सामने मुझे अपने गुनाह स्वीकार करने थे। मेरे

मन में उनका आतंक बैठा था और वे सब शैतानी हरकतें मेरे हृदय में खड़बड़ मचा रही थी जो कि मै उनके खिलाफ आजमा चुका था। पत्थर मार कर उनके ग्रीष्मागार की खपच्चियों के मैंने परखचे उडाए थे, उनके बच्चो को मारा-पीटा था और अन्य बहुत से जुर्म किए थे जिनकी वजह से वह मुझे बहुत बड़ा पापी समझ सकते थे। एक-एक कर के सभी कुछ मुझे याद आ रहा था, और उस समय जब अपने गुनाह स्वीकार करने के लिए मै उस छोटे से मनहूस गिरजे में जाकर खड़ा हुआ, तो मेरा हृदय बुरी तरह धक-धक कर रहा था।

लेकिन पादरी दोरीमेदोन्त उस समय मानो भलमनसाहत का पुतला बना हुआ था।

"ओह, तुम तो हमारे पडोसी हो!" उसने चकित भाव से कहा।—"अच्छा तो अब घुटनो के बल बैठ जाओ, और अपने गुनाह स्वीकार करो!"

उसने मेरे सिर पर भारी मखमल का एक टुकड़ा डाल दिया। मोम और लोबान की गंध से मेरा दम घुटने लगा और जिन शब्दो को मै पहले ही प्रकट करना नही चाहता था, उन्हें उगलना अब और भी मुश्किल मालूम होने लगा।

"क्या तुम अपने बडो का कहना मानते हो?"

"नही!"

"कहो, मैंने गुनाह किया।"

अनायास ही, न जाने कैसे, मै कह उठा:

"ईश-भोज में खुद धर्म-पिता के थाल से मैंने चोरी की।"

"क्या, यह क्या कहा तुमने? कहाँ चोरी की?" एक क्षण रुक कर पादरी ने स्थिर भाव से पूछा।

"तीन सन्तो के गिरजा में, पोक्रोव गिरजा में और निकोला..."

"बुरी बात है, बेटा। ऐसा करना पाप है — समझे!"

"हां।"

"कहो, मैंने गुनाह किया! तुम बड़े नादान हो। क्या खाने के लिए रोटी चुराई थी?"

"कभी-कभी खाने के लिए, लेकिन कभी-कभी ऐसा होता कि गोटियों के खेल में मैं अपने पैसे हार जाता और ईश-भोज की रोटी के बगैर मैं घर लौट नहीं सकता था, इसलिए चोरी करके जान छुड़ाता।"

पादरी दोरीमेदोन्त ने दबे स्वर में बुदबुदाकर कुछ कहा, फिर दो चार सवाल और किए। इसके बाद, कड़े स्वर में पूछा

"क्या तुम भूमिगत छापेखाने से निकली पुस्तकें भी पढ़ते रहे हो?"

यह सवाल ऐसा था जो मैं समझ नहीं सका। मेरे मुंह से निकला

"क्या?"

"जब्त पुस्तकें, क्या तुमने कभी पढ़ी हैं?'

"नहीं, मैंने नहीं पढ़ीं।"

"अच्छी बात है। तुम गुनाहों से मुक्त हुए। अब खड़े हो जाओ।"

मैंने कुछ अचकचा कर उसके चेहरे की ओर देखा। उसका चेहरा गम्भीर और दया के भावों से पूर्ण था। मैं कट कर रह गया। गुनाह मुक्ति के लिए भेजते समय मालकिन ने मेरी नब्ज़ ही बन्द कर दी थी। ऐसी ऐसी डरावनी बात उसने बताई थी कि अगर मैंने कुछ भी छिपाकर रखा तो मानो प्रलय ही हो जायगी। मालकिन की बातों का असर अभी गायब हुआ था। मैं बोला

"मैंने तुम्हारे ग्रीष्मागार पर पत्थर फेंके थे।'

"यह बुरा किया। लेकिन अब तुम भाग जाओ।"

"और तुम्हारे कुत्ते पर..."

पादरी ने जैसे सुना ही नही। कनखियो से मुझे विदा करते हुए बोले:

"चलो, अब किसकी बारी है?"

विक्षोभ और निराशा से भरा में वहाँ से चला आया। ऐसा मालूम होता था मानो मुझे धोखा दिया गया हो। जिस चीज को लेकर मन ही मन मैंने इतना तूमार बांधा था और हृदय का एक-एक तार झनझना उठा था, वह कुछ भी तो नही निकली—एकदम नीरस, दिलचस्पी से एकदम शून्य। ले-देकर एक ही बात उस में कुछ दिलचस्पी की थी—वह जो रहस्यमय पुस्तकों से संबंध रखती थीं। मुझे उस पुस्तक का ध्यान आया जिसे वह युवक छात्र घर के निचले तल्ले मे दो स्त्रियो को पढ कर सुना रहा था। और मुझे 'वाह भाई खूब' का भी ध्यान आया। उसके पास भी काली जिल्द की कितनी ही मोटी-मोटी किताबे थी जिनमें अजीब-गरीब चित्र बने हुए थे।

अगले दिन पन्द्रह कोपेक देकर मुझे ईश-भोज में भेजा गया। उस साल ईस्टर का उत्सव कुछ देर से आया था। बर्फ पिघल चुकी थी और खुश्क सड़को पर धूल के छोटे-छोटे बगूले उडते थे। मौसम रुपहला और खूब सुहावना था।

गिरजे की दीवार के पास कुछ मज़दूर गोटियाँ खेल रहे थे। मेरा मन ललचा उठा। मैंने सोचा, ईश-भोज से पहले एक-दो हाथ यहाँ भी हो जाएँ तो क्या बुरा है। मैंने पूछा:

"मुझे भी खेलने दोगे?"

"एक खेल का एक कोपेक—समझे!" लाल बाल और मुँह पर चेचक के दाग वाले एक साथी ने गर्व से ऐलान किया।

मैंने भी उतने ही गर्व से जवाब दिया

"बाईं ओर से वह दूसरी गोली है न, उस पर मैं तीन कोपेक लगाता हूं।"

"पहले कोपेक दिखाओ। हम झूठमूठ का दांव नही मानते!"

मने कोपेक दिखा दिए और खेल शुरू हो गया।

मैंने पन्द्रह कोपेक का अपना सिक्का भुना लिया और तीन कोपेक अपने दांव पर लगा दिए। जो कोई उसे पीट देगा तीन कोपेक जीत लेगा, नही पीट सका तो वह तीन कोपक का देनदार हो जाएगा। मेरा सितारा ऊचा था। दो ने निशाना लगाया, और दोनों ही चूक गए। इसका मतलब यह कि वे छै कोपेक के देनदार हो गए। इतने बडे लोगों को मने मात दी, खुशी के मारे मेरे पाव जमीन से ऊचे उठ चले।

"इस पर निगाह रखना," खिलाडियो में से एक ने कहा, —"कहीं ऐसा न हो कि एकाध दांव जीत कर यह भाग निकले।"

यह मेरे सम्मान पर चोट थी। मैने तडाक-से चिल्लाकर कहा

'बाईं ओर, आखिर गोली पर, मेरे नौ कोपेक!"

मेरी इस बहादुरी का खिलाडियों पर कोई रोब नही पडा। लेकिन मेरी ही आयु का एक अन्य लडका चिल्ला उठा

"इस लडके को शतान सिद्ध है। जरा सभल कर खेलना। मैं इसे खूब जानता हू।'

'हुआ करे! हमें भी देखना है कि इसे कैसा शतान सिद्ध है?" एक दुबले-पतले मजदूर ने कहा जिसके बदन से चमडे की गध आती थी।

उसने सावधानी से निशाना साधा और मेरे दांव को पीट दिया।

"बोलो बच्चू, अब क्या कहते हो?" मेरे ऊपर झुकते हुए वह बोला।

"दाहिनी ओर, आखिरी गोली पर, तीन कोपेक और!" मैंने जवाब में कहा।

"देखते जाओ, मैं इसे भी नहीं छोड़ूंगा।" शेखी बघारते हुए उसने निशाना साधा, पर चूक गया।

कायदे के अनुसार एक आदमी तीन से अधिक बार लगातार दाँव नही लगा सकता। सो मैंने दूसरों के नाम से दाँव लगाना शुरू किया और इस तरह चार कोपेक और बहुत सी गोटियाँ जीतीं। इसके बाद दाँव लगाने का जब मेरा नम्बर आया तो मैं अपनी सारी जमा-पूजी हार गया। ठीक इसी समय गिरजे की प्रार्थना भी ख़त्म हुई — घंटियाँ बजने लगी, और लोग गिरजे से बाहर निकल आए।

चमड़ा रंगने का काम करने वाले मज़दूर ने मेरे बाल पकड़ने की कोशिश की और बोला:

"कहो बेटा, घर जाकर अब किसकी मार पड़ेगी — बीवी की या माँ की?"

कोहनिया कर मैं उसके चंगुल से निकल भागा और एक युवक के पास पहुँचा जो खूब बढ़िया कपड़े पहने गिरजे से निकला था। मैंने मुलामियत से पूछा:

"क्या तुम ईश-भोज से आ रहे हो?"

"क्यो, तुम से मतलब?" सन्देह से देखते हुए उसने जवाब दिया।

मैंने उससे जानना चाहा कि ईश-भोज में कैसे क्या हुआ, पादरी ने क्या कहा और ईश-भोज मे शामिल होने वाले दूसरे लोगो ने क्या किया।

युवक ने घूर कर मुझे देखा और सांड़ की भाति गरजते हुए बोला:

"इसका मतलब यह है कि तुम ईश-भोज से भाग आए—क्यो? तुम्हें मैं कुछ नही बताऊँगा। घर पर जब मार पड़ेगी, तब अपने-आप सब पता चल जाएगा।"

मैं अब घर की ओर लपका। मुझे पक्का यकीन था कि घर पर पूछ-ताछ होगी और यह बात खुल जाएगी कि मैं ईश-भोज में शामिल नही हुआ।

लेकिन बूढ़ी मालकिन ने मुझे बधाई देने के बाद केवल एक सवाल पूछा

"पादरी को तुमने क्या दिया?"

"पाँच कोपेक," मने योही अललटप्प जवाब दे दिया।

"तू भी निरा भोंदू ही है!" बूढ़ी मालकिन ने कहा।—"उसके लिए तो तीन भी बहुत होते, और बाकी दो तुम अपने पास रख लेते!"

चारो ओर वसन्त छाया था। प्रत्येक दिन एक नया बाना धारण करके आता, जो दिन बीत गया है उसमे और भी ज्यादा उज्ज्वल तथा और भी ज्यादा सुन्दर। घास की नयी कोपलो और बर्च-वृक्ष की ताजी हरियाली से मादक गंध निकलती। बाहर खेतो की सैर करने और सुहावनी धरती पर लेट कर भारद्वाज पक्षी का चहचहाना सुनने के लिए मन बुरी तरह उतावला हो उठता। लेकिन म था कि यहाँ जाडो के कपडो में ब्रुश करके उन्हे ट्रंक म बन्द करता, तम्बाकू की पत्तियाँ कूटता और गद्देदार फर्नीचर की गर्द भाड़ता—सुबह से रात तक ऐसे कामो म जुटा रहता जिन्हें न तो मैं पसद करता था, और न ही आवश्यक समझता था।

और जो थोडा बहुत समय काम से बचता, वह भी यो ही बेकार चला जाता। मेरी समझ में न आता कि फुरसत की इन घड़ियो का क्या करू। हमारी गली आकर्षण से एकदम सूनी थी,

और उसकी सीमा से बाहर जाने की मुझे मनाही थी। हमारा अहाता खाई खोदने वाले थके-हारे और चिड़चिड़े मजदूरों, फटेहाल बावर्चियों और धोबी-धोबिनों से अटा पड़ा था। और हर साँझ साठ-गाठ के इतने बेहूदा और घृणित दृश्य दिखाई देते कि मैं विक्षुब्ध हो उठता और घबरा कर अपनी आँखें बंद कर सोचता कि मैं अंधा क्यों न हुआ।

कैंची और कुछ रंगीन कागज लेकर मैं ऊपर निदरी में पहुंच जाता और फूल-पत्तियाँ काट कर उनसे छत के शहतीरों और खम्बों को सजाता। इससे मेरे मन की ऊब और नीरसता कुछ हल्की हो जाती। किसी ऐसी जगह जाने के लिए मेरा हृदय बुरी तरह ललकता जहाँ लोग कम सोते हों, कम झगड़ते हों और कभी न खत्म होने वाले अपने रोने-झींखने से भगवान को या कभी न चूकने वाले अपने कड़वे बोलों से लोगों को इस हद तक न सताते हों।

ईस्टर से पहले जो शनिवार आता है, उस दिन हमारे नगर में ओरान्स्की मठ से व्लादिमिर्स्काया मरियम की प्रतिमा का आगमन हुआ। यह प्रतिमा अपने चमत्कारों के लिए प्रसिद्ध थी। जून के मध्य तक वह हमारे नगर की मेहमान रहती थी और इस काल में एक-एक करके बस्ती के सभी घरों में उसे ले जाया जाता था।

एक दिन सुबह के समय मेरे मालिकों के घर भी उसका आगमन हुआ। मैं रसोई में बैठा बरतन चमका रहा था। एकाएक दूसरे कमरे से छोटी मालकिन सकपकाई सी आवाज़ में चिल्लाई:

"जाकर बाहर का फाटक तो खोल। ओरान्स्काया मरियम की प्रतिमा आ रही है!"

मेरे हाथ चिकनाई और पिसी हुई ईंट के चूरे से लथपथ थे। वैसी ही गंदी हालत में मैं लपक कर नीचे उतरा और बाहर का फाटक खोल दिया। दरवाजे पर एक युवक साधु खड़ा था। एक हाथ में उसके लालटेन थी, और दूसरे में लोबान का धूप-दान।

"बड़ी देर लगा दी, क्या अभी तक सो रहे थे?" उसने भुनभुना कर कहा। —"इधर आओ, थोड़ा सहारा दो।"

दो नगर-निवासी मरियम की भारी प्रतिमा उठाए थे। वे उसे लेकर तंग जीने पर चढ़ने लगे। मैंने भी सहारा दिया। प्रतिमा के एक कोने के नीचे मैंने कंधा लगाया और अपने गंदे हाथों से उसे थाम लिया। हमारे पीछे कुछ गोल-मटोल साधु और थे जो अनमने अन्दाज से भारी स्वर में गुनगुना रहे थे

"माँ मरियम सुनो टेर हमारी "

कांपते हृदय से मैंने सोचा

"गंदे हाथों से मैंने मरियम को छुआ, शायद इसी लिए मेरे हाथ सूख जाते रहेंगे।'

दो कुर्सियों को जोड़ कर उनपर एक सफेद चादर बिछा दी गई। प्रतिमा को उन्हीं पर टिका दिया गया। अगल-बगल दो युवक साधु उसे थामे थे—देखने में सुन्दर, चमकदार आँखें, मुलायम गाल और चेहरे प्रसन्नता से खिले हुए। ऐसा मालूम होता मानो वे कोई फरिश्ते हों।

पूजा प्रार्थना शुरू हुई।

घने बालों में छिप गाठ-गठीले से अपने कान को लाल उंगली से खुजलाते हुए एक लम्बे-चौड़े पादरी ने गुनगुनाया

"माँ मरियम, जगत जननी '

अन्य भिक्षुओं ने भी अनमने भाव से साथ दिया

"संकट हरो, दुख दूर करो "

मरियम मेरे हृदय में भी बसी थी और मैं उन्हें जीजान से चाहता था। नानी ने मुझे बताया था कि दुखिया के आँसू पोंछने और उनके जीवन में आनन्द भरने के लिए मरियम ने ही धरती को फूलों से सजाया, हर उस चीज की रचना की जो भली सुन्दर

है। और जब चूमने की रस्म अदा करने का समय आया तो मैंने, इस बात पर ध्यान दिए बिना कि बड़े क्या कर रहे हैं, काँपते हृदय से अपने होठ उसके होठो से सटा दिए।

एकाएक किसी के मजबूत हाथ का धक्का खाकर मैं दरवाजे के पास कोने में जा गिरा। यह तो मुझे याद नहीं कि भिक्षु प्रतिमा को उठा कर उसी समय वहाँ से विदा हो गए या कुछ देर और घर में रहे, लेकिन यह मुझे खूब अच्छी तरह याद है कि मै फर्श पर पडा था, मेरे मालिक तथा मालकिन मुझे घेरे हुए थे और परेशान मुद्रा मे दुनिया-भर की अलाय-बलाय का जिक्र कर रहे थे जो मुझपर नाजिल हो सकती थीं।

"पादरी के पास चल कर हमे इसका उपाय पूछना चाहिए। इस तरह की बाते वह हमसे ज्यादा समझता है," मेरे मालिक ने कहा, और फिर मुझे हल्की-सी डांट पिलाते हुए बोला:

"यह तूने क्या किया, बेवकूफ! क्या तुझे इतना भी नही मालूम कि मरियम के होठो को नही चूमा जाता? और तू स्कूल मे पढता था!"

कई दिन तक एक इसी बात का हौल मेरे दिल मे समाया रहा कि इसकी न जाने मुझे क्या सजा मिलेगी। यही क्या कम था कि गंदे हाथो से मैंने मरियम को छुआ, तिस पर मैंने गलत ढंग से उसे चूम भी लिया। निश्चय ही इसकी मुझे सजा मिलेगी, किसी प्रकार भी मै छूट नही सकूगा।

लेकिन, ऐसा मालूम होता था मानो मरियम ने अनजाने मे किए गए इन गुनाहों को माफ कर दिया था। मेरे मन में बुरी भावना नहीं थी। प्रेम से अनुप्राणित हो कर ही मैंने ये गुनाह किए थे। या फिर यह भी हो सकता है कि मरियम ने मुझे जो सजा

दी वह इतनी हल्की हो कि इन भले लोगो की बारहमासी डाट-फटकार के चक्कर में मुझे उसका पता तक न चला हो।

बहुधा बूढी मालकिन को चिढाने के लिए मै दबे स्वरो में चुटकी लेता

"ऐसा मालूम होता है, मानो मरियम को मुझे सजा देना याद नहीं रहा!"

"अभी क्या है," बडी मालकिन जवाब देती, —"माँ मरियम तुझे एकदम इकट्ठा सजा देगी!"

चाय के गुलाबी नेबुला, टीन के गुच्छो, फूल-पत्तिया और इसी तरह की अन्य छोटी-मोटी चीजो से छत और खम्बो को सजाते समय जो भी मन में आता मै गुनगुनाने लगता और उसे गिरजे के गीतो की धुन में गूथने की चेष्टा करता, उन कालमिको की भाति जो घोडो पर चढे यात्रा भी करते है और गीत भी रचते जाते है

बैठा हुआ तिपरी में
काटता हू कागज मै
गलाता मोम बूद बूद।
गर होता कुत्ता मै
न टिकता क्षण भर यहाँ
जहाँ रहता है दुत्कार!
[illegible] कहने सब
बन्द कर यह सोचना
कहता मां, न [illegible]
[illegible] तो फूटेगा [illegible]!

बूढी मालकिन जब मेरी कारीगरी और सजावट देखती तो वह हूमहूमा कर सिर हिलाते हुए कहती

"रसोईघर को भी क्यों नही तुम ऐसे ही सजा देते?"

एक दिन मालिक भी तिदरी में आए, मेरी कारीगरी पर एक नजर डाली और उसास लेते हुए वोले:

"तुम भी खूव हो, पेश्कोव। पता नही तुम क्या वनोगे? देखो न, यह सव क्या तमाशा है? क्या जादूगर वनने की तैयारी कर रहे हो?"

और उसने मुझे निकोलाई प्रथम के काल का पाँच कोपेक का एक सिक्का भेट किया।

सिक्के को मैने महीन तार से खूव सजा-वजा कर तमगे की भाति लटका दिया। मेरी रग-विरगी सजावट के वीच वह दूर से ही दिखाई देता था।

लेकिन अगले ही दिन वह सिक्कामय सजावट गायव हो गया। मुझे पक्का यकीन है कि बूढी मालकिन ने ही उसपर हाथ साफ किया होगा।

५

आखिर मुझसे नही रहा गया और वसन्त के दिनों में भाग निकला। सुवह का समय था और नाश्ते के लिए मै पावरोटी लेने गया था। मै पावरोटी खरीद ही रहा था कि किसी वात पर रोटीवाले का अपनी पत्नी से झगड़ा हो गया, उसने उसके सिर पर भारी वटखरा दे मारा। वह वाहर की ओर भागी और सडक पर आकर ढेर हो गई। चारो ओर लोग जमा हो गए और उसे एक गाडी मे डाल कर अस्पताल ले चले। मै भी लपककर गाडी के साथ-साथ हो लिया और इसके वाद, पता नही कैसे, एकदम अनजाने में ही वोल्गा के तट पर पहुँच गया। उस समय मेरी मुट्ठी मे वीस कोपेक थे।

वसन्त का दिन वसन्ती मुसकान की वर्षा कर रहा था। वोल्गा के पाट का कोई वार-पार नही था और पानी सागर की भाति हिलोरे ले रहा था। धरती दूर-दूर तक फैली थी और ऐसा मालूम होता था मानो वह हुमक और हुमस रही हो। लेकिन मैं—मैं था कि उस दिन तक चूहे की भाति एक बिल में जीवन बिता रहा था। मैंने निश्चय किया कि अपने मालिक के घर अब नही लौटूगा, न ही अपनी नानी के पास कुनाविनो जाऊगा। नानी को मैंने वचन दिया था, और उसे पूरा न कर सकने के कारण उसके सामने जाते मुझे झिझक मालूम होती थी। और नाना तो जैसे ऐसे अवसरो के लिए लपलपाते ही रहते थे।

दो या तीन दिन तक मैं नदी-तट पर यो ही मटरगश्ती करता रहा। भाईचारे में घाट-मजदूर खाना खिला देते, घाट पर ही उनके साथ मैं रात को सोता। आखिर उनमें से एक ने कहा

"इस तरह टल्लेनवीसी करने से काम नही चलेगा, बचुआ। 'दोब्री' जहाज़ में नौकरी क्यो नही कर लेते? रसोईघर में तश्तरियाँ साफ करने के लिए उन्हे एक आदमी की जरूरत है।"

मैं जहाज़ के दफ्तर में पहुचा। भण्डारे का मैनेजर एक लमतडग दाढीवाला आदमी था—सिर पर रेशम की काली टोपी, और चश्मे के भीतर से झाकती धुधली सी आखें। सिर उठा कर उसने मेरी ओर देखा और शान्त भाव से बोला

"दो रूबल महीना। पासपोर्ट तो है न?"

मेरे पास पासपोर्ट नही था। मैनेजर ने एक क्षण कुछ सोचा। फिर बोला

"अपनी माँ को लेकर आओ!"

भागा हुआ मैं नानी के पास पहुचा। सारी बात मैंने बता दी। नानी ने मेरे इस नये कदम का समर्थन किया और नाना को

ी समझा-बुझा कर तैयार कर लिया। व्यापार के दफ्तर में जाकर ह खुद मेरे लिए पासपोर्ट ले आए। फिर नानी को साथ लेकर मै ाहाज के दफ्तर पहुँचा।

"वहुत ठीक," मैनेजर ने उडती नज़र से हमारी ओर देखा। फिर वोला: "मेरे साथ चले आओ।"

वह मुझे जहाज के पिछले हिस्से मे ले गया जहाँ तगड़े वदन का खानसामाँ सफेद पोशाक पहने और टोपी लगाये मेज के पास वैठा था। वह चाय पी रहा था और साथ ही एक मोटी सिगरेट से धुआँ उडा रहा था। मैनेजर ने मुझे उसकी ओर धकेलते हुए कहा:

"यह वरतन साफ़ करेगा।"

इसके वाद वह उल्टे पाव लौट गया। खानसामें ने अपनी नाक सिकोड़ी, फिर अपनी काली मूछो को फरफराया और मैनेजर को लक्ष्य कर फनफनाते हुए वोला:

"मजदूरी कम हो तो यह शैतान को भी न छोडे!"

अपने भारी-भरकम सिर को जिसके काले वाल खूव महीन छंटे हुए थे, झुंझला कर उसने पीछे की ओर फेंका, फिर अपनी काली आँखो से मेरी ओर ताकते और अपने गालो को कुप्पा-सा फुलाते हुए चिल्लाकर कहा:

"कहाँ से आए हो?"

यह आदमी मुझे कतई पसद नही आया। वावजूद इसके कि वह सिर से पांव तक सफेद कपड़ो मे ढंका था, वह मुझे गदा मालूम हुआ। उसकी उंगलियो पर खूव घने वाल छाए थे, और उसके छाज-से कानों पर भी तिनको की भाति लम्वे वाल खडे थे।

"मुझे भूख लगी है," मैने कहा।

उसने अपनी आँखें मिचमिचाईं, और उसके चेहरे का रूखापन देखते देखते गायब हो गया। प्रशस्त मुसकराहट से वह खिल उठा, उसके लाल गाल लहरियाँ लेते कानों तक फैल गए, और उसके बड़े-बड़े घोड़े ऐसे दांत चमकने लगे। उसकी मूछें विनम्र भाव से झुक गईं और वह एक मोटी ताजी कामल हृदया गृहिणी की भांति मालूम होने लगा।

अपनी चाय का बाकी बचा हिस्सा उसने जहाज़ से नीचे पानी में फेंक दिया, फिर गिलास म ताजी चाय उडेली और रोटी के एक अनछुए टुकड़े तथा सौसेज के एक बड़े स्लाइस के साथ उसे मेरी ओर बढ़ा दिया।

"लो, यह खाओ", उसने कहा।—"तुम्हारे माँ-बाप तो है न? चोरी करना जानते हो? कोई बात नही, जल्दी ही सीख जाओगे। चोरी करने म यहाँ सभी माहिर है।"

उसके मुह से शब्द क्या निकलते थे, मानो भट्ठी के मुह से भभकारे निकलते थे। वह इतना घस कर हजामत बनाता था कि उसके भारी भरकम गालो पर नीली खूटियाँ उमड आई थी। उसकी नाक के इर्द-गिर्द माँस में महीन लाल शिराओ का जाल बिछा था। उसकी कुप्पी-सी लाल नाक मूछो के साथ दगलन्दाजी करती थी, उसका निचला मोटा होठ उपेक्षा से नीचे लटक आया था और मुह के कोने में एक सिगरेट जलती थी। ऐसा मालूम होता था मानो वह अभी गुसलखाने मे स्नान करके निकला हो। उसके बदन से बर्चवृक्ष की टहनियो और मिरचोनी ब्राण्डी की गंध आ रही थी, और उसकी गरदन तथा कनपटियों पर पसीने की बूदें उभर आई थी।

जब मै भरपेट खाना खा चुका तो उसने मेरे हाथ में एक रूबल थमा दिया।

"अपने लिए दो एप्रन खरीद लेना। नहीं, तुम रहने दो। मै खुद ही खरीद कर ला दूँगा!"

उसने अपनी टोपी को सिर पर जमा कर ठीक किया और गडूलने की भाति दाये-वायें हिलता डैक की ओर चल दिया। ऐसा मालूम होता था मानो कोई रीछ झूमता हुआ चला जा रहा हो।

रात का समय था। चौचक चांद हमारे जहाज पर अपनी चादनी छिटकाता वाये हाथ वाली चरागाहों की ओर खिसक चला। हमारा जहाज क्या था, वावा आदम के जमाने की यादगार था। खाकी रग और धुआँ निकलने की चिमनी के सिर पर छल्ले की भांति सफेद घेरा पुता हुआ। रुपहले पानी में छपछप करता अलस भाव से चल रहा था। जहाज को भेटने के लिए नदी के काले तट ने धीरे-धीरे उभरना शुरु किया, और घरों की खिडकियों की रोशनी से झिलमिल करती उसकी परछाइयाँ पानी पर तैरने लगी। गाँव की ओर से गाने की आवाज आ रही थी— ऐसा मालूम होता था मानो गाँव की लड़कियो के दल मिल कर गा रहे हो और उनके गीत की टेक 'आएलूली' से 'हलेलूयाह' की धुन का धोखा होता था।

हमारा जहाज़ तारो के एक लम्वे रस्से के सहारे किसी वजरे को खीच रहा था। इस वजरे का रंग भी खाकी था। डैक पर लोहे का एक वड़ा सा कठघरा था और कठघरे में जलावतनी और कठोर श्रम की सजा पाए कैदी वंद थे। कोने पर खडे सन्तरी की सगीन मोमवत्ती की लौ की भांति चमक रही थी, और गहरे नीले आकाश में टिमटिमाते तारे भी छोटी-छोटी मोमवत्तियो की भाति दिखाई देते थे। वजरे पर निस्तब्धता छाई थी, और चाँद अपनी चाँदनी लुटा रहा था। कठघरे की सलाखो के पीछे गोल भूरी परछाइयाँ दिखाई देती थी। ये कैदी थे, वैठी हुई मुद्रा मे। वोलगा पर उनकी

आँखें टिकी थी। पानी छल-छल करता बह रहा था — पता नहीं वह रो रहा था, या सहमे हुए भाव से हँस रहा था। हर चीज से गिरजे का आभास मिलता था, यहाँ तक कि तेल की गंध लोबान की याद दिलाती थी।

बजरे की ओर देखते-देखते मुझे अपने प्रारम्भिक बचपन की याद हो आई अस्त्राखान से निजनी की यात्रा, नकाब के समान माँ का चेहरा और मेरी नानी जिसकी उँगली पकड़ कर मैंने इस कठोर किन्तु दिलचस्प जीवन में पाँव रखा। नानी, जिसकी याद आते ही जीवन के घृणित और हृदय को कचोटने वाले पहलू मानो ग़ायब हो जाते, हर चीज बदल जाती, पहले से ज्यादा हृदयग्राही और ज्यादा सुखद बन जाती, और लोग पहले से ज्यादा प्रिय रूप धारण कर लेते।

रात इतनी सुन्दर थी कि मेरी आँखों में मोती ढुलक आए। बजरे ने मुझपर जादू-सा कर दिया। वह ताबूत की भांति दिखाई देता था और इस छलछलाती नदी के प्रशस्त वक्ष और इस सुहावनी रात की ध्यानोन्मुखी निस्तब्धता में उसका अस्तित्व बहुत ही अटपटा तथा बहुत ही बेतुका मालूम होता था। नदी-तट की असम रेखाएं जो कभी उभरती और कभी नीचे उतरती थीं, हृदय में स्फूर्ति का संचार करती और मन में अच्छा बनने तथा मानव-जाति का कुछ भला करने की भावना हिलोरें लेने लगती।

जहाज के हमारे यात्री भी कुछ निराले ही थे। मुझे ऐसा मालूम होता मानो वे सब के सब — बूढ़े भी और जवान भी, पुरुष भी और स्त्रियाँ भी — एक ही सांचे में ढले हों। कछुवे की चाल से हमारा जहाज सफ़र करता। वे लोग जिन्हें कुछ जल्दी होती, डाकजहाज से सफ़र करते। और हमारे जहाज की केवल यही शरण लेते जिन्हें विशेष आपाधापी करने की जरूरत नहीं होती, जरदबाजी

के वन्धनो से जो मुक्त होते। सुवह से साझ तक ये खाते और पीते-पिलाते, ढेर सारी तश्तरियों, छुरी-कांटो और चम्मचों को गंदा करते। और मेरा काम था इन तश्तरियों को साफ करना तथा छुरी-कांटो को चमकाना। सुवह के छै वजे से लेकर रात के वारह वजे तक दम मारने की भी फुरसत नही मिलती। दोपहर के दो वजे से लेकर छै वजे तक और रात को दस से वारह तक, काम का जोर कुछ हल्का हो जाता। कारण कि भोजन करने के वाद यात्री केवल चाय, वीयर या वोडका पीते। इन घंटो मे सभी वेटर खाली होते। फनेल के पास एक मेज पड़ी थी। चाय पीने के लिए आम तौर से यही उनका अखाड़ा जमता। वावर्ची स्मूरी, उसका सहायक याकोव ईवानोविच, रसोई के वरतन मांजनेवाला मक्सिम और चौड़े चेचक रुह चेहरे, चिपचिपाती आखोंवाला और कुव निकला वेटर सेर्गेई जो डैक पर यात्रियो को चीजें परसने का काम करता, सभी इस मण्डली मे जमा होते। याकोव ईवानोविच उन्हे गंदी कहानियाँ सुनाता और अपनी मैल-चढी वत्तीसी दिखाते हुए जव वह हँसता तो ऐसा मालूम होता मानो सुवकियाँ ले रहा हो। सेर्गेई का मेढकनुमा मुँह भी हंसते समय इस कान से उस कान तक फैल जाता। मैक्सिम का चेहरा पहले की भाति अव भी चढा रहता, अनिश्चित रग की अपनी वेजान आँखो से वह दूसरो की ओर देखता और वुत की भाति चुपचाप सुनता रहता।

वड़ा वावर्ची रह-रह कर अपनी गूजती आवाज में चिल्ला उठता:

"आदमखोर! मोर्दोवियनों की औलाद!"

मै इन सभी से घिन्नाता। मोटा गंजा याकोव ईवानोविच जव देखो तव केवल स्त्रियो का ही जिक्र करता, सो भी निहायत गदे ढंग से। उसके भावशून्य चेहरे पर नीले चकत्ते पड़े थे। एक गाल पर

छोटे टीले की भाति रसोली निकली थी जिसमें लाल बाल उगे थे। इन बालों को वह सदा उमेठता रहता जो सिकुड-सिमट कर सुई की नोक का रूप धारण कर लेते। जहाज़ पर जैसे ही कोई मिलने-जुलने और हँस कर दो बाते करने वाली स्त्री सवार होती वह उसके सामने बिछ जाता और भिखारी की भाति छाया बना उसके साथ लगा रहता, चाशनी में 'पगे मिमियाते स्वरो में उससे बतियाता, उसके होठो पर भाग उफन आते जिन्ह उसकी गदी जुबान लपलपा कर तेज़ी से चाटती रहती। न जाने क्यो, मुझे ऐसा लगता कि जल्लाद का काम करनेवाले लोग भी ठीक इतने ही मोटे और इतने ही चिक्कट होते होगे।

"स्त्रियो को फसाना भी एक बहुत बडा हुनर है।" एक दिन उसने सेर्गेई और मक्सिम को बताना शुरू किया जो मुँह बाये, मन-ही-मन उमडते-घुमडते, सुन रहे थे और उनके चेहरो पर लाल रग दौड रहा था।

गूजती आवाज़ में स्मूरी घृणा से चिल्लाया

"आदमख़ोर!"

फिर कसमसा कर वह धीरे-धीरे उठा और अपने पाँवो पर तन कर खडा हो गया।

"पेश्कोव, मेरे साथ आओ!" उसने मुझसे कहा।

जब हम उसके केबिन में पहुँचे तो उसने मेरे हाथ में एक छोटी-सी किताब थमा दी जिसपर चमडे की जिल्द बधी थी। फिर वह अपने तख्ते पर लम्बा पसर गया जो कोल्ड स्टोरेज रूम की दीवार में जडा था।

"इसे पढ कर सुनाओ।"

मकारोनी मिवइयो की एक खाली पटी पडी थी। मै उसी पर बैठ गया और अदब से पढकर सुनाने लगा।

"अम्बराकुलम में अगर तारे छिटकते दिखाई दें तो इसका अर्थ है कि स्वर्ग के देवता तुम से प्रसन्न हैं, सारे कलुष और गंदगी से मुक्त होकर तुम दिव्य ज्ञान प्राप्त करोगे।"

मुँह से धुएँ का बादल छोड़ते हुए स्मूरी भुनभुनाया:

"ऊँट के ताऊ! घास चरने के लिए क्या आकाश तक गरदन फैलाते हैं!"

"अगर उभड़ी हुई बाईं छाती दिखाई दे तो इसका अर्थ है निष्कपट हृदय।"

"किसकी बाईं छाती?"

"यह तो कुछ नहीं लिखा।"

"समझ लो कि स्त्री की। होगी कोई छिनाल!"

उसने अपनी आँखें बंद कर लीं और हाथों का सिरहाना बनाकर लेट गया। मुँह के कोने से हिलगी अपनी सिगरेट को जो करीब-करीब बुझ-सी चली थी, सम्भाल कर उसने ठीक किया और इतने ज़ोरों से कश खींचा कि उसके सीने के अन्दर से कोई सीटी-सी आवाज़ आयी और उसका चेहरा धुएँ से ढक गया। कई बार बीच-बीच में जब मुझे ऐसा लगता कि वह सो गया है तो मैं पढ़ना बंद कर देता और उस मनहूस किताब की ओर चुपचाप देखता रहता।

तभी उसकी भींकने ऐसी आवाज़ सुनाई देती:

"पढ़ते क्यों नहीं?"

"वेनेराब्ल ने जवाब दिया. देखो, मेरे नेकदिल फ़्रेयर सूवे-रियन..."

"सेवेरियन..."

"सूवेरियन लिखा है..."

"मारो गोली इसे। अन्त में कुछ कविताएँ छपी हैं। उन्हें पढ़ो।"

मैंने पढना शुरू किया

> ओ मोरी के कीडो!
> न किलबिलाओ इतना,
> करो न दम्भ इतना!
> टकियल तुम्हारी जात
> करोगे तुम क्या हम को मात,
> ओ मोरी के कीडो!

"बस करो!" स्मूरी ने चिल्लाकर कहा।—"यह भी कोई कविता है? लाओ, इसे मुझे दो!"

नीली जिल्द की मोटी किताब को अपने हाथ म लेकर उसने गुस्से से उसके पन्ने उलटे-पलटे और फिर तख्ते के नीचे पटक दिया।

"दूसरी लाकर पढो!"

यह भी एक भारी जजाल था। लोहे के कुन्दे और कील-काटो से लैस काले रग का उसका बकस किताबो से अटा पडा था। अनेक शीर्षक नजर आए "सन्त ओमीर की वाणी", "तोप-खाने के सस्मरण", "लार्ड सेडेनगाल के खतूत", "खटमल भगाने के नुस्खे"। कई पुस्तकें ऐसी थी जिनके आदि-अन्त का कुछ पता नही चलता था। कभी-कभी खानसामें पर धुन सवार होती और वह कहता कि इन सब पुस्तको के बारे में मुझे बताओ। मै उसे सब के नाम पढ कर सुनाता, और वह झुझलाकर बडबडा उठता

"शैतान कही के, लिखते क्या है, मानो औचक म मुँह पर तमाचा-सा मारते है। और किस लिए समझ म नही आता। गेर-वास्सी! भाड में जाए गेरवास्सी! अम्वराकुलम! इन कम्बख्तो को भी न जाने कहाँ-कहाँ की सूझती है!"

अटपटे और अजीब शब्द, ऐसे नाम जो न कभी देखे और

न कभी सुने, स्मृति मे आकर अटक जाते, उन्हे बार-बार दोहराने के लिए मेरी जीभ खुजलाने लगती, मानो उनकी ध्वनि मात्र से ही उनका अर्थ मेरी समझ में आ जाएगा। खिड़की से बाहर कामा नदी गाती और छपछपाती रहती। मेरा मन डैक पर जाने के लिए उतावला हो उठता जहाँ बक्सों के इर्द-गिर्द बोट चलाने और कोयला झोंकने वालों की चौकड़ी जमती। वे गीत गाते, किस्से सुनाते या ताश के खेलो में यात्रियो की जेवें खाली करते। कितना अच्छा होता अगर मैं भी इस समय उनके पास पहुँच जाता, उनके साथ बैठकर उनकी सीधी-सादी और समझ मे आने वाली बातें सुनता और कामा नदी के तटो, बिजली के खम्बों की भाति सीधे खड़े देवदार वृक्षों के ऊंचे तनों और चरागाहों की ओर देखता जहाँ बाढ का पानी जमा होकर छोटी सी झीलें बन गई थी जिनमे नीला आसमान टूटे हुए आईने के टुकड़ों की भाति चमकता दिखाई देता था। हमारा जहाज तट से दूर था और दूर ही रहा, लेकिन साझ के सन्नाटे में आँखो से ओझल किसी गिरजे की घंटियो की आवाज हवा के साथ बहकर आती और आबाद बस्तियो तथा लोगों की हलचल की याद दिलाती। किसी मछियारे का डोंगा रोटी के टुकड़े की भाति पानी पर नाचता नजर आता। फिर एक गाँव निकट आता दिखाई देता जहाँ छोटे लड़को का एक दल पानी मे छपछप खेल रहा था और लाल कमीज पहने एक किसान पीले फीते की भाति फैले रेत पर से चला आ रहा था। दूर से देखने पर हर चीज सुहावनी मालूम होती। ऐसा लगता मानो गुड्डे-गुडियों की बस्ती हो — रंग-बिरंगी, हर चीज खिलौनो की भांति नन्ही-मुन्नी। मन मे उमंग उठती कि समूचे नदी-तट को अपने हृदय से सटा लूँ, प्यार और सहानुभूति का उद्गार बन कर सब कहीं छा जाऊँ — नदी तट पर भी, और उस बजरे पर भी जिसमे कैदी बंद थे।

खाकी रंग का वह बजरा मानो मेरे मन में बसा था। मन्त्र-मुग्ध-सा मैं पटा बैठा रहता और उसके ढुके-पिटे में अग्रभाग को गदला पानी चीर कर अपना रास्ता बनाते एकटक देखता रहता। हमारा जहाज़ गले में रस्सी बंधे सुअर की भांति उसे खींच रहा था। तारों का रस्सा जब ढीला पड़ता तो पानी से टकराता और इसके बाद, नाव के बल बजरे को खींचते समय, पानी को काटता हुआ फिर तन जाता। मन में होता कि बजरे पर जाकर उन लोगों के चेहरे देखूं जो जानवरों की भांति लोहे के कठघरे में बंद थे। पेर्म में जब उन्हें बजरे से उतारा गया तो मैं जैसे-तैसे गैंग-प्लांक पर चढ़ गया और उन्हें देखने लगा दल के दल मटमैले जीव, थैलों के बोझ से दोहरे और अपनी जंजीरों को बजाते, आंखों के सामने से गुजरे। उनमें पुरुष थे, स्त्रियां थीं, उनमें बूढ़े थे और जवान थे, सुन्दर और असुन्दर, सभी तरह के लोग थे—ठीक वैसे ही जैसे कि सब लोग होते हैं, सिवा इसके कि वे दूसरी तरह के कपड़े पहने थे, और सिर-घुटे होने के कारण उनके चेहरे-मोहरे और भी बुरे दिखाई देते थे। वे जरूर डाकू ही रहे होंगे। लेकिन नानी तो डाकुओं के बारे में इतने बढ़िया किस्से सुनाया करती थीं।

स्मूरी इन सब से कहीं ज्यादा दबंग और जानदार लुटेरा मालूम होता था।

"इस तरह बन्दी बनने से तो मर जाना अच्छा!" बजरे की ओर देखते हुए वह बुदबुदाता।

एक दिन मैंने पूछा

"तुम बावर्ची ही क्यों बने, कुछ-और क्यों नहीं बने? इसी तरह अन्य कितने ही लोग चोर और हत्यारे बन कर क्यों रह जाते हैं?"

'मैं बावर्ची नहीं, हैड खानसामां हूं। बावर्ची का काम तो

केवल स्त्रियाँ करती है!" उसने नाक सिकोड़ कर भुनभुनाते हुए कहा। फिर एक क्षण कुछ सोचकर बोला: "जिसका जैसा दिमाग होता है, वह वैसा ही बनता है। कुछ लोग सयाने होते है, कुछ कूढ़ दिमाग और कुछ बिल्कुल गोबर गणेश। अगर ठीक ढग की — जैसे काला जादू तथा इसी तरह अन्य बहुत-सी — किताबे पढने को मिलें तो आदमी सयाना और समझदार बनता है। सभी तरह की किताबे पढो, तब पता चलता हे कि इनमे अच्छी कौनसी है, और बुरी कौनसी। सही किताब खोज निकालने का इसके सिवा और कोई तरीका नही है।"

वह मुझसे सदा यही कहता:

"पढो, अगर कोई किताब समझ मे न आए तो उसे सात बार पढो। अगर सात बार पढ़ने पर भी समझ मे न आए तो उसे बारह बार पढो।"

स्मूरी जहाज़ पर हर किसी को उल्टी-सीधी सुनाता। चाहे वह मैनेजर ही क्यो न हो जिसके मुँह पर ताला पड़ा रहता था। जब वह किसी से बात करता तो अपना निचला होठ उपेक्षापूर्ण अन्दाज मे बाहर निकाल देता, अपनी मूछो को फरफराता और शब्दों को इस प्रकार अपने मुह से निकालता मानो बेर खाकर उन-की गुठलियाँ थूक रहा हो। लेकिन मेरे साथ वह मुलामियत से पेश आता, हालाकि उसकी इस हार्दिकता मे भी कुछ ऐसी बात थी जिससे मुझे डर लगता था। कभी-कभी मुझे ऐसा मालूम होता कि नानी की बहन की भांति उसके दिमाग का भी कोई पुर्जा ढीला है।

"पढ़ना बद करो!" वह कहता और आँखे बंद किए देर तक चुपचाप पड़ा रहता, साँस लेते समय उसकी नाक भरभराती, उसका भारी पेट धौंकनी की भाति उठता और गिरता, उसके हाथ सीने

पर लाश की भांति आडे रखे रहते, उसकी कटी-फटी वालो वाली उगलिया इस प्रकार तुडती-मुडती मानो वह अदश्य सलाइया से कोई अदृश्य मोजा बुन रहा हो। फिर, एकाएक, वह बुदबुदाना शुरू करता

"खोपटियाँ—एक से एक अजीब और निराली, सभालना चाहो तो भी न सभलें! बुद्धि और समझ उनमें दिखाई देती है, लेकिन बहुत कम, भूल-भटके और सो भी असमान रूप में। अगर सभी एकसी मात्रा म बुद्धिमान हो, लेकिन होते कहाँ है? एक की समझ में कुछ आता ह, दूसरे की समझ में कुछ नही आता और तीसरा है कि समझने मे ही इन्कार करता है।"

लडखडाते हुए से शब्द उसके मुंह से निकलते और वह मुझे अपने सैनिक जीवन की कहानियाँ सुनाता। उसकी कहानियो में मुझे कभी कोई तुक नही दिखाई देती और वे मुझे हमेशा बेमजा मालूम होती,—खास तौर से इसलिए भी कि वह कभी शुरू मे शुरू नही करता, बल्कि जहाँ से भी मन होता, वहीं से सुनाना शुरू कर देता।

"सो रेजीमेंट के कमाण्डर ने उस सैनिक को तलब किया और उससे पूछा 'तुम से लफ्टीनेन्ट ने क्या कहा था?' और उसने सभी कुछ बता दिया, कुछ भी छिपा कर न रखा, क्योकि सैनिक का यह फर्ज़ है कि वह सच बोले। लफ्टीनेन्ट ने उसकी ओर इस तरह देखा मानो वह पत्थर की दीवार हो, फिर मुह फेर कर अपनी आँखें बन्द कर ली। ऊह!"

मन ही मन रस लेते हुए उसने एक लम्बी साँस खींची और बुदबुदाने लगा

"माना मुझे मालूम ही हो कि क्या कहना चाहिए और क्या नही! उन्होंने लफ्टीनेन्ट को जेल में बन्द कर दिया, और उसकी माँ आह, मेरे भगवान! कोई तो ऐसा मिलता जो मुझे कुछ सिखाता!"

वड़ी ऊमस थी। ऐसा मालूम होता था मानो हर चीज़ काँप और भनभना रही हो। केविन की लोह-दीवारों से बाहर जहाज का पैडल-चक्र थपथपाता और पानी छलछलाता। खिड़की में से पानी की चौडी धारा उमड़ती-घुमड़ती दिखाई देती, दूर चरागाह की हरियाली नजर आती और वृक्षो के झुरमुट आँखों के सामने उभरने लगते। इन सब आवाजों को सुनते-सुनते मेरे कान इतने आदी हो गए कि निस्तब्धता के सिवा मुझे अन्य किसी चीज़ का भान नहीं होता, हालांकि जहाज के गलियारे मे एक मल्लाह एकरस आवाज मे वरावर दोहराता रहता था.

"सा-आ-त . . . सा-आ-त . . ."

मै हर चीज से अलग रहना चाहता,—न कुछ सुनना चाहता, न करना,—बस किसी ऐसे कोने मे छिप जाना चाहता जहाँ रसोई की गर्म और चिकनी गध प्रवेश न कर सके, और जहाँ वैठ कर पानी पर तैरते हुए इस हलचल रहित और थके-हारे जीवन को अलसायी-उनीदी आँखो से देखा जा सके।

"पढते क्यो नहीं?" झकझोरते हुए स्वर मे स्मूरी आदेश देता।

पहले दर्जे के वेटर तक उससे डरते और ऐसा मालूम होता मानो सहमा-सिमटा, घुन्ना और मुँहवद मैनेजर भी मन-ही-मन स्मूरी से भय खाता है।

"ऐ सूअर!" स्मूरी शरावखाने के चाकरों पर चिल्लाता।—"इधर आ चोर, आदमखोर, अम्वराकुलम!"

मल्लाह और कोयला झोकने-वाले उसकी इज्जत करते, यहाँ तक कि उसकी नजरो में अच्छा वनने का भी प्रयत्न करते। वह उन्हे शोरवे मे से गोश्त की वोटियाँ निकाल कर देता, उनके वाल-वच्चो और गाँव के जीवन के वारे में पूछता। कालिख मे सने और चिक्कट कोयला झोकनेवाले जहाज की तलछट समझे जाते थे। वे

बेलोम्म के रहनेवाले थे। रूसी उन्हें याक बैल कह कर चिढ़ाते और आपस में टक्कर मारने के लिए उकसाते

"याक, याक, जरा दिखा तो अपना जोर!"

स्मूरी जब यह देखता तो उसका पारा गर्म हो जाता। उसकी मूछें फरफराने लगतीं, चेहरा तमतमा जाता और कोयला झोंकनेवालों से वह चिल्लाकर कहता

"तुम इन कस्सपों* से डरते क्या हो? इनका तोबड़ा क्यों नहीं तोड़ डालते!"

एक बार मरव्वाहों के मुखिया ने जो शक्ल-सूरत से अच्छा पर स्वभाव से चिड़चिड़ा था, उससे कहा

"याक और खाखोल**—नीचता में दोनों एक दूसरे से बढ़ कर!"

स्मूरी ने एक हाथ से उसकी पेटी दबोची और दूसरे से गरदन। फिर सिर से ऊंचा उठा कर उसे हिलाते-झंझोड़ते हुए चिल्ला उठा

"बोल, अब क्या कहता है? ऐसा पटकूंगा कि बच्चू का कचूमर निकल जाएगा!"

अक्सर झगड़ा बढ़ जाता और जम कर लड़ाई होती। लेकिन स्मूरी कभी मार नहीं खाता। एक तो इसलिए कि ताकत में वह पूरा देव था, दूसरे इसलिए भी कि कप्तान की पत्नी से उसका मेल-जोल था। वह ऊंचे कद की स्त्री थी, मर्दाना चेहरा और लड़कों की भांति सीधे कटे हुए बाल।

वह वोडका की बोतलों पर बोतलें चढ़ा जाता, लेकिन मदहोश

---

* कस्सप—रूसी के लिए एक अपमानजनक शब्द।

** उक्रइनी के लिए एक अपमानजनक शब्द।

कभी नही होता। सुबह से वह पीना शुरू करता, चार पैगों में ही एक बोतल खाली कर देता, और बीयर तो वह दिन भर चुसकता रहता। धीरे-धीरे उसका चेहरा लाल हो जाता, और उसकी काली आँखें इस तरह फैल जाती मानो उनमें अचरज का भाव भरा हो।

कभी-कभी, साझ के समय, सफेद रंग की भीमाकार प्रतिमा की भाति वह डेक पर घटों बैठा रहता और मुंह फुलाए पीछे छूटती हुई दूरी को घूरा करता। ऐसे क्षणो मे प्राय: सभी उससे और भी ज्यादा डरते, लेकिन मुझे उसपर तरस आता।

याकोव ईवानोविच रसोई से बाहर निकलता: चेहरा लाल और पसीने मे तर वह अपनी गजी खोपडी को खुजलाता और फिर निराशा से हाथ हिलाता हुआ गायब हो जाता। या वह दूर से कहता:

"मछली मर गई .."

"इसका सलाद बना डालो।"

"अगर कोई मछली का शोरबा या उबली हुई मछली मागने लगा तो क्या करोगे?"

"बना डालो। वे सब चट कर जाएगे।"

कभी-कभी साहस बटोर कर मै उसके पास जाता। काख कर मेरी ओर मुडते हुए वह मुझ से पूछता:

"क्यो, क्या चाहते हो?"

"कुछ नहीं।"

"तो मौज करो।"

एक बार मैंने उससे कहा:

"तुम इतने अच्छे हो। फिर भी सब लोग तुमसे डरते क्यो है? तुम उन्हे डराते क्यो हो?"

मेरा सवाल सुन कर वह झुझलाया नही। इससे मुझे भारी अचरज हुआ।

"मैं केवल तुम्हारे साथ ही भला हूँ," उसने जवाब दिया, और फिर कुछ सोचते हुए मीठे स्वर में बोला

"या शायद मैं सभी के साथ भला हूँ। केवल मैं दिखाता नहीं। लोगों को यह कभी नहीं मालूम होना चाहिए कि तुम भले हो, अन्यथा वे तुम्हें नोच खाएंगे। जो भला होता है, लोग उसपर इस तरह चढ़ बैठते हैं मानो वह दलदल के बीच सूखी मिट्टी का कोई टीला हो, और वे उसे पाँव-तले रौंद डालते हैं। जाओ, मेरे लिए कुछ बीयर तो उठा लाओ।'

एक के बाद एक कई गिलास बीयर पीने के बाद उसने अपनी मूछों को चाटा और बोला

"अगर तुम इतने छुनमुन न होकर कुछ बड़े होते तो तुम्हें बहुत-सी बातें सिखाता। मैं भी थोड़ी-बहुत काम की बातें जानता हूँ—निरा बौड़म नहीं हूँ। तुम्हें पुस्तकें पढ़नी चाहिए, पुस्तकों में काम की सभी बातें होती हैं। पुस्तकों से दुर्लभ वस्तु और कोई नहीं है। क्यों, कुछ बीयर पियोगे?"

"बीयर मुझे अच्छी नहीं लगती।"

"यह अच्छी बात है। कभी नशा न करना। नशा एक बहुत बड़ी बला है। वोडका शैतान की देन है। अगर मैं अमीर होता तो पढ़ने के लिए तुम्हें स्कूल भेजता। बे पढ़े आदमी को पूरा बैल ही समझो। चाहो तो उसके कंधों पर जुआ लाद दो, चाहे उसे काट कर खा जाओ—दुम फड़फड़ाने के सिवा वह और कुछ नहीं करता।"

कप्तान की पत्नी ने उसे गोगोल की एक पुस्तक दी "भयानक प्रतिशोध"। मुझे यह पुस्तक बहुत पसंद आई। लेकिन स्मूरी गुस्से में होंठ काटते हुए चिल्ला उठा

"निरी बकवास, एकदम कूड़ा। भला, कौन यकीन करेगा इस खुराफात पर! छोड़ो इसे, मैं कोई दूसरी पुस्तक लाऊँगा!"

उसने मेरे हाथ से पुस्तक छीन ली और कप्तान की पत्नी से एक अन्य पुस्तक ले आया।

"तो, अब उसे पढ़ो—तारास—जरा देखो तो, इसका पूरा नाम क्या है?" अपनी तरंग में बहते हुए उसने आदेश किया। "कहने लगी कि इसमें एक बहुत बढ़िया कहानी है। लेकिन बढ़िया से क्या मतलब? हो सकता है कि यह उसके लिए बढ़िया हो, और मेरे लिए घटिया। और देखो न, वह अपने बाल किस तरह कटाती है? इसी तरह अपने कान भी क्यों नहीं कटा लेती?"

पुस्तक पढ़ते-पढ़ते जब मैं उस स्थल पर पहुँचा जहाँ तारास ओस्ताप को लड़ने के लिए ललकारता है तो वह भरभराई सी आवाज में हँसा।

"बोलो, क्या कहते हो इसके बारे में?" उसने कहा।—"एक के पास दिमाग है, दूसरे के पास घूंसा! लिखने के लिए इन्हें और कुछ नहीं मिलता, ऊँट की औलाद!"

वह ध्यान से सुन रहा था, बीच-बीच में भुनभुनाता भी जाता था।

"ऊँह, यह भी क्या बकवास है। एक ही वार में कंधे से कमर तक आदमी को नहीं काटा जा सकता। एकदम गलत। और बर्छी की नोक पर आदमी को भला कैसे उठाओगे, वह टूट न जाएगी? क्या मैं जानता नहीं, मैं खुद सैनिक रह चुका हूँ।"

आन्द्रेई के विश्वासघात का प्रसंग सुन कर वह बुरी तरह आहत हो उठा:

"हरामी कहीं का! एक स्त्री के पीछे मुँह के बल जा गिरा!"

और उस समय जब तारास ने अपने बेटे के सीने में गोली दागी तो वह उचक कर बैठ गया, अपनी टांगों को उसने तख्ते से नीचे लटका लिया उसके किनारे को दोनों हाथों से पकड़ कर रोने

लगा। धीरे-धीरे उसकी आँखों से आँसू निकलने और उसके गालों पर से लुढकते हुए फर्श पर गिरने लगे। नथुने फड़काते हुए वह बुदबुदाया

"ओह, मेरे भगवान!"

सहसा वह मुझपर चिल्ला उठा

"पढना क्या बद कर दिया, शैतान के पूत!"

वह और भी ज़ोरो से, फफक-फफक कर, रोने लगा उस समय जब ओस्ताप अपने प्राणदण्ड से पहले चीख उठा "क्या मेरी आवाज तुम्हारे कानो तक नही पहुँचती पिता?"

"सभी कुछ समाप्त हो गया," स्मूरी भुनभुनाया!—"कुछ भी बाकी नही बचा। कितना विकट अन्त है! मुझे तो इसने बुरी तरह झझोड दिया। कितने खरे आदमी होते थे उन दिनो! अपने इस तारास को ही देखो, क्या आदमी था वह भी?—एकदम असली!"

उसने पुस्तक मेरे हाथ मे ले ली और ध्यान से उसे देखा। उसकी आँखो से आँसू बह रहे थे और पुस्तक की जिल्द पर टपाटप गिर रहे थे।

"पुस्तक भी कितनी बढ़िया चीज़ होती है!"

इसके बाद "आइवनहो" का पाठ हुआ। स्मूरी को रिचर्ड प्लाटागेनेट का चरित्र पसंद आया।

"बादशाह हो तो ऐसा!" उसने रोबीली आवाज़ में कहा। लेकिन मुझे वह अच्छा नहीं लगा।

मोटे तौर से हमारी रुचि एक-दूसरे से भिन्न थी। "थामस जोन्स की कहानी" और "लावारिस टाम जोन्स की जीवनी" के पुराने संस्करण ने मुझे मन्त्रमुग्ध कर लिया लेकिन स्मूरी घटघटाया

'एकदम बकवास! भाड़ में जाए तुम्हारा थामस। मुझे उसमे

क्या लेना? वढिया पुस्तकों की कमी नहीं है, खोजने से जरूर मिल जाएँगी।"

एक दिन मैंने उसे बताया कि पुस्तको की एक और किस्म होती है: जब्तशुदा पुस्तके, भूमिगत पुस्तके, जिन्हे केवल रात के समय तहखानो मे बैठ कर पढा जाता है।

सुन कर उसकी आँखें फैल गईं, मूछें फरफराने लगीं।

"क्या कहा तुमने? क्यो वे पर की उड़ा रहे हो?"

"मै झूठ नहीं कहता। पाप-स्वीकारोक्ति के समय खुद पादरी ने उनके बारे में मुझसे पूछा था, और उससे भी पहले मैने लोगो को उन्हे पढते और उनपर आँसू बहाते देखा है।"

चुधी-सी आँखो से उसने मेरी ओर देखा।

"आँसू बहाते देखा है? कौन था वह?"

"एक स्त्री जो सुन रही थी, और दूसरी तो डर के मारे भाग ही गई!"

"कही तुम सपना तो नही देख रहे?" अपनी आँखों को धीरे-धीरे सिकोडते हुए स्मूरी ने पूछा। फिर कुछ रुक कर बोला:

"हर जगह कोई न कोई भेद की बात रहती ही है। भेद की बातो के बिना काम भी तो नही चलता...लेकिन मै तो अब बुढा गया हूँ... और मेरा स्वभाव भी वैसा नहीं है... फिर भी इस तरह की बातों का जब खयाल आता है तो .."

बिना रुके घटो तक वह इसी तरह बातें कर सकता था।

एकदम अनजाने मे ही मुझे पढने की आदत पड गई, और चाव के साथ मै पढता। पुस्तको की दुनिया मे रमने के बाद जो इस दुनिया से भिन्न भी थी और दिलचस्प भी, मुझे चारो ओर का जीवन और भी दु:खद मालूम होता।

स्मूरी की दिलचस्पी भी पुस्तकों में बढ़ती गई। अक्सर वह मुझे अपना काम भी न करने देता। कहता

"पेश्कोव, चले आओ और पुस्तक पढ़कर सुनाओ।"

"जूठी रकाबियों का एक ढेर जमा है। उन्हें साफ करना है।"

"मक्सिम साफ कर लेगा।"

वह रकाबियाँ धोनेवालों के मुखिया की गरदन दबोच कर उससे मेरा काम लेता, और काँच के गिलास तोड़ कर वह अपना बदला चुकाता। मैनेजर इस पर नाराज़ होता और निश्चल आवाज़ में मुझे चेतावनी देता

"तुम्हें जहाज़ से निकाल दूंगा।"

एक दिन मक्सिम ने जान-बूझ कर गंदे पानी के बरतन में गिलास पड़े रहने दिए। नतीजा यह हुआ कि जब मैंने बरतन का गंदा पानी जहाज़ से नीचे फेंका तो गिलास भी उसके साथ-साथ जा गिरे।

"असल में कसूर मेरा है," स्मूरी ने मैनेजर से कहा। "गिलासों के दाम मेरे हिसाब में से काट लेना।"

वेटरों ने भी मुझसे जलना और कुढ़ना शुरु कर दिया। मुझे कोंचते हुए कहते

"कहो किताबी कीड़े, खूब हराम की खाते हो आजकल।"

मेरा काम बढ़ाने के लिए वे जान बूझ कर रकाबियों को गंदा कर देते। मुझे लगता कि इस छेड़छाड़ का अन्त अच्छा नहीं होगा, और ऐसा ही हुआ भी।

साँझ का समय था। एक छोटे-से घाट से एक लाल चेहरे वाली स्त्री हमारे जहाज़ पर सवार हुई। उसके साथ एक लड़की भी थी जो पीले रंग का रूमाल और गुलाबी रंग का ब्लाउज़ पहने थी। दोनों नशे में खूब धुत्त थीं। स्त्री बराबर मुसकराती,

झुक कर सभी का अभिवादन करती और उसके मुंह से तोते की भांति शब्द निकलते:

"मुझे माफ करना, मेरे प्यारे साथियो! आज मैंने थोड़ी-सी चढा ली है। मुझे पकड कर उन्होंने अदालत में पेश किया और वहाँ से मैं बेदाग छूट गई, सो मै अब खुशी मना रही हूं।"

लडकी खिलखिला कर हंसती, अपनी धुधली आँखो से सभी पर डोरे डालती और स्त्री की पसलियो को निरन्तर गुदगुदाती।

"बस रहने दो अपनी राम कहानी! जाओ, तुम्हारी एक-एक रग लोगो की जानी-पहचानी है!"

जहाज के सेकड क्लास वाले हिस्से में, उस केबिन के सामने जहाँ याकोव ईवानोविच और सेर्गेई सोते थे, दोनों ने अपना अड्डा जमाया। स्त्री तो शीघ्र ही गायब हो गई, और सेर्गेई लडकी की बगल मे जाकर जम गया। उसका मेढकनुमा चेहरा लिजबिज हंसी मे फैला था।

काम-काज से निबट कर उस रात सोने के लिए मैं मेज़ पर चढा ही था कि सेर्गेई मेरे पास आया और मेरा हाथ खींचते हुए बोला:

"चलो, हम आज तुम्हारी जोड़ी मिलाएंगे!"

वह नशे मे धुत्त था। मैंने उससे अपना हाथ छुडाना चाहा तो मुझे धकियाते हुए बोला:

"चुपचाप चले चलो, नही तो..."

तभी मक्सिम भागा हुआ आ गया। वह भी नशे मे धुत्त था। दोनो ने मुझे पकड़ा और डैक तथा सोते हुए यात्रियो के पास से खींचते हुए मुझे अपने केबिन की ओर ले चले। लेकिन दरवाजे से कुछ हट कर स्मूरी और ठीक दरवाजे के बीचोबीच याकोव

ईवानोविच लडकी का रास्ता रोके खडा था। वह उसकी पीठ पर घूसे बरसा रही थी और नशीली आवाज़ में बार-बार चिल्ला रही थी

"रास्ते छोडो! मुझे जाने दो!"

स्मूरी ने मुझे मक्सिम और सेर्गेई के चंगुल से छुटा लिया, बाल पकड कर दोनो को खीचा और उनके सिरो को एक-दूसरे से टकराया। इसके बाद इतने ज़ोरो से उसने उन्हे धक्का दिया कि वे लुढकते हुए डैक पर जा गिरे।

"आदमखोर!" वह याकोव पर चिल्लाया और झटके-से उसके मुँह पर दरवाज़ा बन्द कर दिया। फिर मुझे धकियाते हुए गुर्रा उठा

"दफा हो यहा से!"

मै जहाज़ के पिछले हिस्से की ओर भाग गया। बादला घिरी रात थी, नदी पर अधेरा छाया था। जहाज़ के पीछे पानी में दो भूरी धारियाँ बट कर एक-दूसरे से दूर होती हुई अदृश्य तटो की ओर भागी जा रही थी। इन धारियो के बीच बजरा चल रहा था। कभी दाहिनी और कभी बाईं ओर लाल रोशनियाँ दिखाई देती और फिर, किसी चीज़ को आलोकित किए बिना ही नदी के घुमावो के पीछे तुरत गायब हो जाती। उनके ओझल हो जाने के बाद रात और भी अधिक काली तथा और अधिक बोझिल मालूम होने लगती।

बावर्ची आकर मेरे पास ही बैठ गया। गहरी साँस खीचते हुए उसने अपनी सिगरट सुलगाई।

"क्या वे तुम्हे उस छछूदर के साथ बद करना चाहते थे? कुत्ते कही के! मने उन्हे तुम्हारी ओर झपटते हुए देखा था।'

"उस लड़की का क्या हुआ?" मैंने पूछा।—"क्या तुम उसे उनके चंगुल से छुड़ा सके?"

"लड़की?" भद्दे से शब्दों में उसने लड़की को घोला और फिर चोट खाए स्वर में बोला:

"यहाँ सभी सूअर हैं! देहात में भी बदतर। क्या तुम कभी देहात में भी रहे हो?"

"नहीं।'

"सड़ाँध और गंदगी से लबालब! जाड़ों में तो खास तौर से।"

उसने अपनी सिगरेट का टुकड़ा पानी में फेंक दिया और कुछ रुक कर बोला:

"तुम भी कहाँ इन सूअरों के बीच आ फँसे! मेरे नन्हे सूअर, तुम्हें देख कर दुःख होता है। दुख तो मुझे सभी पर होता है। और कभी-कभी तो मन बुरी तरह छटपटाने लगता है। न मुझे भले का ज्ञान रहता है, न बुरे का। मन करता है कि घुटनों के बल गिर कर मैं उनसे कहूँ—यह तुम क्या कर रहे हो, हरामी के पिल्लो! क्या तुम्हारी आँखें फूट गई हैं जो कुछ सुझाई नहीं देता? ऊँट कहीं के!"

जहाज़ ने देर तक सीटी की आवाज़ की, तार का रस्सा पानी में गिर कर छपछपाया, अँधेरे को चीर कर लालटेन की रोशनी झूल उठी जो इस बात की सूचक थी कि बन्दरगाह यहाँ है, और अन्य कितनी ही छोटी-मोटी रोशनियाँ धुंधलके में झिलमिलाने लगीं।

"यही है वह 'नशे में झूमता जंगल'।" बावर्ची बड़बड़ाया। "यहाँ नशे में झूमती एक नदी बहती है—'मदमाती नदी'। किसी ज़माने में यहाँ एक अफसर रहता था। उसका नाम था 'शराबोव'। और एक क्लर्क जिसे सब 'नंगा-उतार' कहते थे... अच्छा, मैं किनारे पर जाऊँगा।"

कामा प्रदेश की हट्टी-कट्टी स्त्रियाँ लम्बी हथगाडिया पर लकडी लाद कर ला रही थी। फुर्ती से छोटे-छोटे डग भरती, बोझ से भुकी, दो दो के जोडो में जहाज के ईंधन-घर तक आती और उसके काले मुँह में चार-चार फुट के लकडी के कुन्दो को झोक देती। उनकी हि-हि की आवाज चारो ओर गूज उठती।

जब वे लकडी लेकर आती तो जहाजी उनकी टागे खीचते, उनकी छातिया को पकड कर मसकते और स्त्रिया चीखती हुई उनके मुँह पर थूकती। लकडियाँ उतार कर जब वे लौटती तो जहाजियो की हाथापाई और चिकोटिया से बचने के लिए वे पलट कर अपनी हथगाडियो को उन पर चढा देती। अनेक बार, हर फेरे में, म यह देख चुका था। जहाँ कही भी जहाज ईंधन लेता, इसी तरह के दृश्य दिखाई देते।

मुझे ऐसा मालूम होता मानो म कोई बडा बूढा आदमी हूँ जो अपनी उम्र का काफी बडा हिस्सा इस जहाज पर बिता चुका है, जिसके लिए कुछ भी नया नही है और जो पहले से ही बता सकता है कि अगले सप्ताह या अगले शरद में क्या होगा।

अब उजाला हो चला था। घाट से परे रेत के टीले पर देवदार के एक बडे जगल की शक्ल दिखाई देने लगी। जगल से लकडियाँ लाने के लिए स्त्रियाँ टीले पर चढ रही थी। आपस मे हँसती, गीत गाती और किलकारियाँ भरती। अपनी लम्बी हथ-गाडिया से लैस वे सैनिका के दल की भाति दिखाई देती।

मेरा रोने को जी चाहता। आँसू हृदय में उमडते घुमडते और जैसे गले में आकर अटक जाते। इससे मेरा हृदय और भी कराह उठता।

लेकिन स्त्रियो की भाति रोते मुझे शर्म मालूम हुई। सो म उठा और डेक साफ करने में जहाजी शूरिन का हाथ बटाने लगा।

शूरिन उन जहाजियो में से था जिनकी ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। पीला और बेरंग, जहाज के कोने-कोने में बैठा बस अपनी छोटी आखें मिचमिचाता रहता।

एक दिन मुझसे बोला:

"सच कहता हूँ मेरा यह छोटा-सा शूरिन नाम असल धोखे की टट्टी है,—शूरिन नही, मेरा नाम होना चाहिए सूरिन। जिस माँ ने मुझे जन्म दिया, वह पूरी सूरी थी, न जाने कहाँ-कहाँ मैले मे मुँह मारती फिरती थी। और मेरी बहन—वह भी अपनी माँ से कम नही थी। ऐसा मालूम होता है कि विधाता ने इन दोनो के भाग्य मे यही लिख दिया था। भाग्य, मेरे भाई, उस पत्थर की भांति हे जो गले मे बधा रहता है। तुम उबरने के लिए हाथ-पाव मारते हो, और वह तुम्हे ले डूबता है।"

और अब, डैक को साफ़ करते समय, शान्त स्वर मे कहने लगा:

"देखा तुमने, वे लड़कियो को किस तरह मसकते और कचोटियाँ काटते है? कौन नहीं जानता कि अगर पीछे पड़े रहो तो सीली लकडी भी गरमा जाती है! मुझसे यह नहीं देखा जाता। नही भाई, मै यह सब सहन नहीं कर सकता। अगर मै लड़की होता तो भगवान का नाम लेकर किसी अंधे कुवे में डूब मरता। जो बोझ सिर पर पहले से लदा है, उसे उतारना ही जब मुसीबत मालूम होता है तो हृदय के तारों को इस तरह झनझना कर एक नयी मुसीबत क्यो खड़ी की जाए? स्कोप्तसियो को लोग मूर्ख कहते है। लेकिन मै उन्हे मूर्ख नही मानता। कभी सुना है स्कोप्तसियो के बारे में? उनके लोग बहुत ही समझदार—भले जीवन का रास्ता खोजने में उन्हे देर न लगी। बस, मन को भटकाने वाली इन नन्ही चीज़ो को जड-मूल से काट कर फेंक दो और, शुद्ध-शरीर हो, भगवान की सेवा करो।"

कप्तान की पत्नी हमारे पास से गुजरी। डेक पर पानी फैला था। अपने घाघरे को भीगने से बचाने के लिए वह उसे ऊँचा उठाए थी। वह हमेशा जल्दी उठ जाती थी। लम्बी और शानदार, चेहरा कुछ इतना निष्कपट और भोलेपन का कुछ ऐसा भाव लिए कि मेरा मन ललक उठता, जी करता कि भाग कर उसके पीछे जाऊँ और अपना समूचा हृदय उँडेलते हुए उससे कहूँ

"मुझसे बातें करो—कुछ तो अपने मुँह से कहो!"

जहाज धीरे-धीरे बन्दरगाह से दूर होने लगा।

"अगली मंजिल की ओर!" शूरिन ने कहा, और अपने हाथ से क्रॉस का चिह्न बनाया।

६

सारापूल पहुँचने पर मक्सिम ने जहाज की नौकरी छोड़ दी। चलते समय उसने किसी से विदा तक न ली। बस, एकदम चुपचाप, शान्त और गम्भीर, वह जहाज से चल दिया। रंगीन स्वभाव की वह स्त्री भी हँसती और खिलखिलाती, उसके पीछे-पीछे चल पड़ी। साथ में उसकी लड़की भी थी—आँखें सूजी हुईं, मसली और मुरझाई सी। सेर्गेई कप्तान के केबिन के दरवाजे के सामने देर तक बैठा रहा, दोनों घुटने टेके हुए। दरवाजे की चौखट को वह चूमता था, और रह-रह कर उससे अपना सिर टकराता था।

"मुझे माफ़ करो," सीखता हुआ वह कहता।—"मैंने कुछ नहीं किया। वह सब मक्सिम का कसूर था।"

जहाजियों, शराबखाने के लोगों, यहाँ तक कि कुछ यात्रियों को भी मालूम था कि वह झूठ बोल रहा है। फिर भी वे उसे उकसा और बढ़ावा दे रहे थे

"ठीक है, दरवाजे पर डटे रहो। वह निश्चय ही तुम्हें माफ कर देगा!"

और कप्तान ने सचमुच उसे माफ कर दिया। यह बात दूसरी है कि माफ के साथ-साथ उसने एक ऐसी लात भी उसके जमाई कि वह लुढकियाँ खाने लगा। लेकिन उससे क्या, अगले ही क्षण वह कपडे झाड़ कर खड़ा हो गया और हाथों में नाश्ते की ट्रे लिए, डैक पर इधर से उधर लपकता और मार खाए पिल्ले की भांति लोगो के सामने दुम हिलाता नजर आने लगा।

मक्सिम की जगह जिस आदमी को उन्होंने रखा, वह व्यात्का का रहने वाला था और पहले फौज में काम कर चुका था। वह मुस्तसिर सा आदमी था। छोटा-सा उसका सिर था और लाल-भूरी आँखें। आते ही सहायक बावर्ची ने उसे कुछ चूजे काटने भेज दिया। दो तो उसने काट डाले, और बाकी डैक पर छुट्टा निकल भागे। यात्रियो ने उन्हे पकडने की कोशिश की, और तीन चूजे फुदक कर जहाज से पानी मे जा गिरे। रसोईघर के पास लकड़ियो का एक ढेर पडा था। निराशा से सिर झुकाए सैनिक इसी ढेर पर बैठ गया, और फूट-फूट कर रोने लगा।

"रोते क्यो हो, बेवकूफ!" स्मूरी ने अचरज मे भर कर पूछा। "छि., तुम भी कैसे सैनिक हो?"

सैनिक ने धीमे स्वर मे कहा.

"मै तो गैर लडाकू सैनिक था।"

यह कहना था कि उसका तो ढेर हो गया। आध घंटा बीतते न बीतते जिसे देखिए वही जहाज मे उस पर हँस रहा है। एक-एक करके वे आते, सैनिक की ओर ताक कर देखते, और पूछते:

"क्या यही है?"

इसके बाद बहुत ही भोडे और भद्दे ढग से खिलखिलाकर वे उसकी हँसी उडाते, और हँसते हँसते दोहरे हो जाते।

शुरू में सनिक का ध्यान न तो उनकी ओर गया, और न ही उनके खिलखिलाने और हँसने की ओर। वह केवल उसी जगह बठा हुआ अपनी फटी पुरानी सूती कमीज की आस्तीन से अपने आँसुओ को इस तरह पोछता रहा मानो उन्हे अपनी आस्तीन में छिपाने का प्रयत्न कर रहा हो। लेकिन यह हालत देर तक न रही। शीघ्र ही उसकी लाल-भूरी आँखें गुस्मे से दमकने लगी, और व्यात्का निवासियो के चुहचुहाते लहजे में उसकी जुबान कतरनी-सी चल पडी

"इस तरह दीदे फाड कर मुझे क्यो घूर रहे हो? शैतान के घर में भी क्या तुम्हारे लिए कोई जगह नही है?"

उसकी इस बात ने लोगो को और भी गुदगुदा दिया। वे आते और उसकी पसलियो में अपनी उँगलियाँ गडाते उसकी कमीज और उसका एप्रन पकड कर खीचते। इस तरह पूरी बेरहमी से, वे उसे भोजन का समय होने तक चिढाते रहे। भोजन के बाद किसी ने लकडी के चमचे के सिर में नीबू गडा कर उसे उसके एप्रन की डोरियो से कमर के पीछे बाध दिया। सैनिक जब इधर-उधर हरकत करता तो चमचा भी उसके साथ-साथ झकोले खाता और लोग उसे देख-देख कर हँसी के मारे दोहरे हो जाते। पिंजरे में बद चूहे की भाति वह छटपटाता और भुनभुनाता—उसकी समझ में न आता कि आखिर ये लोग इतना हँस क्या रहे है।

बिना कुछ बोले, बडी गम्भीरता से, स्मूरी ने उसे देखा और उसका चेहरा किसी स्त्री के चेहरे की भाति कोमल हो उठा।

मुझे भी सैनिक पर तरस आना शुरू हुआ। मैने स्मूरी से पूछा "कहो तो चमचे के बारे में उसे बता दूँ?"

स्मूरी ने सिर हिला कर अनुमति दे दी।

जब मैंने सैनिक को यह बताया कि वह क्या चीज़ है जिसपर सब लोग हँस रहे हैं तो उसका हाथ झपट कर चमचे के पास पहुँचा, उसकी डोरी को उसने तोड़ डाला, फिर चमचे को फ़र्श पर पटक उसे पाँव तले रौंदा और अपने दोनों हाथों से मेरे बाल पकड कर मुझे खींचना शुरू कर दिया। फिर क्या था, हम दोनो गुत्थमगुत्था हो गये और अन्य सब लोग तुरत घेरा-सा बना कर हमारा तमाशा देखने लगे।

स्मूरी ने सब को इधर-उधर कर हमें एक-दूसरे से छुड़ा दिया। पहले उसने मेरे कान गरम किए, फिर सैनिक को कान से पकड़ कर उठाया। अपना कान छुडाने के लिए जब टुइयाँ से उसके बदन ने ऐंठना और बल खाना शुरु किया तो लोग उसे देखकर उछल पडे और उनकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा। तालियो और सीटियो की आवाज से उन्होंने आसमान सिर पर उठा लिया, और हँसी के मारे दोहरे हो गए।

"वाहरे मेरे शेर! देखता क्या है, बावर्ची की तोंद फाड़ डाल!"

मानव-समूह के इस जगलीपन को देख कर मेरे मन मे हुआ कि एक लट्ठा उठा कर इन सब के सिर चकनाचूर कर दूँ!

स्मूरी ने सैनिक को तो छोड़ दिया और जगली भालू की भाति उसने अब लोगो की ओर रुख किया। उसके हाथ उसकी कमर के पीछे थे, उसके दाँत चमक रहे थे, और मूँछो के बाल फरफरा रहे थे।

"जिसका जहाँ दरबा है वही,—बस, फौरन नौ-दो ग्यारह हो जाओ! आदमखोर कही के।"

सैनिक एक बार फिर मेरी तरफ झपटा, लेकिन स्मूरी ने उसे एक हाथ से उठा लिया और इसी प्रकार उठाए-उठाए उसे

पानी के नल्के तक ले गया। फिर पानी का नल्का खोल कर उसने सैनिक का सिर उसके नीचे कर दिया और उसके टुइयाँ मे बदन को पानी की धार के नीचे इस तरह उलट पलट कर घुमाने लगा मानो वह चियडो की गुडिया हो।

कुछ जहाजी, उनका मुखिया और प्रथम सहायक, लपक कर बाहर निकल आए और एक बार फिर भीड जमा हो गई। भीड में मैनेजर का सिर अन्य सब मे ऊँचा दिखाई दे रहा था, सदा की भाति चुप्पा, मानो बोलना जानता ही न हो।

सैनिक लकडी के ढेर पर बैठ गया और कापते हाथो से अपने जूते उतारने लगा। उसने उन चियडो को निचोडा जो उसके पावा में लिपटे थे। लेकिन वे सूखे थे। बेतर्तीबी से बिखरे हुए उसके बालो से पानी टपटप गिर रहा था। यह देख लोगो ने फिर हँसना शुरू कर दिया।

"हमते क्यो हो?" सैनिक ने जोर लगा कर पतली आवाज में कहा—"उस लडके को म जीना न छोड़ूँगा।"

स्मूरी मेरा कधा थामे था। उसने प्रथम सहायक से कुछ कहा। जहाजिया ने लोगो को तितर-बितर कर दिया। जब सब चले गए तो स्मूरी ने सैनिक से पूछा

"बोलो, तुम्हारा अब क्या किया जाए?"

सैनिक कुछ नही बोला। जगली आँखो से बस मेरी ओर देखता-भर रहा। उसका समूचा शरीर अजीब ढग से बल खा रहा था।

"अटेंशन, यू बातो के शेर!" स्मूरी ने कहा।

"दिमाग़ तो सही है न? आये यहाँ कमान चलाने!" सैनिक ने जवाब दिया।

बावर्ची अचकचा गया। उसे ऐसा जवाब पाने की उम्मीद न

थी। उसके फूले हुए गाल पिचक गए, मुंह में उसने थूका और मुझे अपने साथ घसीटता हुआ ले चला। मुझे भी जैसे काठ मार गया। वार-वार मुड़कर मैं सैनिक की ओर देखता। लेकिन स्मूरी बुदबुदाया:

"बड़ा ढीठ है। ऐसे आदमी के मुंह कौन लगे?"

तभी सेर्गेई लपक कर हमारे पास आया और फुनफुसाकर वोला:

"वह तो अपना गला काटने पर उतारू है!"

"क्या?" स्मूरी के मुंह से निकला और तेजी से उल्टे पाँव मुड़ चला।

हाथ मे वडा सा चाकू लिए जो चूजो की गरदन हलाल करने तथा ईंधन के लिए छिपटियाँ चीरने के काम आता था, सैनिक उस केविन के दरवाजे पर खडा था जिसमें वेटर रहते थे। चाकू खुट्टल था, काटने का काम रेती की भांति करता था। केविन के सामने लोग फिर जमा हो गए थे, और वालो से पानी चूते इस टुइयाँ-से आदमी को देख रहे थे जो उनके लिए एक अच्छा-खासा तमाशा वन गया था। पिचकी नाक वाला उसका चेहरा जैली की भांति काँप रहा था, उसका मुंह जैसे खुला-का खुला रह गया था, उसके होठों मे वल पड रहे थे और वह वार-वार वुदवुदा रहा था:

"शैतान... ह-त्या-रे..."

मै उछल कर किसी चीज़ पर खड़ा हो गया और उचक कर लोगो के चेहरो पर मैने नजर डाली। खिल खिला कर वे हंस रहे थे, और एक-दूसरे कोहनियाते हुए कह रहे थे.

"अरे देखो, उसे देखो..."

अपने दुबले-पतले बच्चो एसे हाथ से जब उसने पतलून के भीतर अपनी कमीज़ खोसनी शुरू की तो मेरे पास ही खडे एक खूबसूरत आदमी ने उसाँस भरते हुए कहा

"ठीक है। गरदन चाहे साफ हो जाए पर पतलून नही खिसकनी चाहिए!"

लोग और भी जोरो से हँसने लगे। सभी समझते थे कि यह मरदूद जान नही दे सकता। मेरा भी ऐसा ही खयाल था। लेकिन स्मूरी ने, उछलती-सी नजर से देखने के बाद, लोगो को अपने पेट से धकियाते और इधर-उधर करते हुए उन्हें डाटना शुरू किया

"हट जा यहाँ से, बेवकूफ कही का!"

समूह को एक व्यक्ति की भाति "बेवकूफ कही का" कहने की उसे आदत थी। चाह कितने ही लोग क्यो न जमा हो, वह उनके पास जाता और उन सबको एकवचन में कहता

"दफा हो जा, बेवकूफ कही का!"

उसे ऐसा करते देख हँसी छटती, लेकिन यह भी सच था कि आज, सुबह से ही, मानो सभी लोगो ने एक बहुत बडे "बेवकूफ" का रूप धारण कर लिया था।

लोगो को तितर-बितर करने के बाद वह सैनिक के पास गया और अपना हाथ फलाते हुए बोला

"यह चाकू मेरे हवाले कर दो ।"

"अच्छी बात है, तुम्हीं ले लो," सैनिक ने कहा और चाकू स्मूरी को दे दिया। स्मूरी ने चाकू मुझे थमा दिया और सैनिक को केबिन में धकेलते हुए बोला

"यहाँ आराम करो, और आँखें बद करके सो जाओ! आखिर तुम्हे यह क्या सूझा?'

सैनिक सोने के तख्ते पर बैठ गया। मुंह से कुछ नहीं बोला।

"यह तुम्हारे लिए कुछ खाना और थोड़ी-सी वोडका ले आएगा। वोडका पीते हो?"

"यों ही कभी-कभी चख लेता हूं।"

"और देखो उसको हाथ न लगाना। क्या तुम समझते हो कि यह तुम्हारी हँसी उड़ा रहा था? नहीं, तुम्हारी हंसी उड़ानेवालों में यह नहीं था। मै कहता हूं यह नही था...।"

सैनिक ने धीमे स्वर में पूछा:

"मैने इन लोगो का ऐसा क्या बिगाड़ा है? ये क्यों मेरी जान के पीछे पड़े है?"

कुछ क्षण तक स्मूरी चुप रहा। अन्त मे बोला:

"मै खुद नही जानता।"

इसके बाद वह और मै रसोईघर की ओर चल दिए।

"ऊँह, मरे को मारे शाह मदार!" उसने रास्ते मे बुदबुदा कर कहा।—"देखा तुमने? भाई मेरे, लोगों का वश चले तो तुम्हारी जान ही निकाल लें, सच कहता हूँ, तुम्हे किसी करम का न छोड़ें। बस, खटमल की भाति चिपक जाते है, और जब तक सारा खून न चूस लें पीछा नहीं छोड़ते। क्या कहा मैने... खटमल की भांति नहीं, एक साथ हज़ार खटमल मिलकर भी उनका मुकाबिला नही कर सकते!"

सैनिक के लिए जब मै कुछ रोटी, माँस और वोडका लेकर उसके पास पहुँचा तो वह तख्ते पर बैठा स्त्रियों की भांति सिसक-सिसक कर रो रहा था, और उसका बदन आगे-पीछे की ओर हिल रहा था। रकाबी मेज पर रखते हुए मैने कहा:

"यह लो, अब खाना खा लो।"

"दरवाज़ा बद कर दो।"

"अंधेरा हो जाएगा।"

"बंद कर दो, कहीं वे फिर न आ जाएं?"

मैं बाहर निकल आया। सैनिक मुझे अच्छा नहीं लगा। उसके प्रति मेरे हृदय में सहानुभूति या दया का कोई भाव पैदा नहीं हुआ। यह मुझे और भी अटपटा मालूम हुआ और मैं बेचैन हो उठा। नानी ने सदा मुझे सीख दी थी

"लोगों पर तरस खाना चाहिए, भाग्य के मारे न जाने किस तरह एड़िया रगड़-रगड़-कर अपने दिन बिताते हैं।"

"खाना दे आए?" वापिस लौटने पर बावर्ची ने पूछा।—"अब उसका क्या हाल है?"

"रो रहा है।"

"नहीं तो! न सैनिक, न सैनिक की दुम!"

"मुझे तो उस पर ज़रा भी तरस नहीं आया।"

"यह क्या कहा तुमने?"

"यही कि लोगों के साथ दया का बरताव करना चाहिए ।"

स्मूरी ने मेरा हाथ पकड़ कर मुझे अपने निकट खींच लिया।

"किसी पर ज़बर्दस्ती दया कैसे दिखाओगे, और मगरमच्छ की भांति दया के आंसू बहाना तो और भी बुरा है। समझे?" उसने रोबीले स्वर में कहा।—"इस तरह मोम बनने से काम नहीं चलेगा, तुम्हें कुछ अपने दिमाग़ से भी काम करना चाहिए।"

उसने मुझे अपने से दूर धकेल दिया। फिर उदास स्वर में बोला

"तुम यहां बेकार आ फंसे। तुम्हें कहीं और होना चाहिए। यह लो, सिगरेट पियो।"

यात्रियों के बरताव ने मेरे हृदय में गहरी उथल-पुथल मचा दी। जिस बुरे ढंग से उन्होंने सैनिक को चिढ़ाया और स्मूरी के उसका कान पकड़ कर उठाने पर जिस घृणित ढंग से खिलखिला

कर वे हँसे, उसमे मुझे हद दर्जे का अमानवीय घिनौनापन मालूम हुआ। क्या वह भी कोई हँसने की बात थी? उसमें उन्हे ऐसा क्या दिखाई दिया जो वे हँसी की अपनी उस बाढ को रोक नही सके?"

पहले की भाति वे अब फिर डैक पर सायबान के नीचे बैठे या लेटे हुए थे। उनके जबडे चल रहे थे, वे पी और पिला रहे थे, ताश खेल रहे थे, शान्त और सुघड़ ढंग मे बाते कर रहे थे, और नदी का नजारा देख रहे थे। उन्हे देख कर कोई सोच भी नही सकता था कि यही वे लोग थे जो एकदम बेलगाम होकर जंगलियो की भाति उछल-उछल कर सीटियाँ बजा रहे थे, हाथ-पाँव फेंक रहे थे। सदा की भांति वे अब फिर निश्चल और काहिल हो गए थे। चीटियो या सूरज की रोशनी में चक्कर लगाते धूल के कणो की भाति सुबह से सांझ तक वे जहाज मे टल्लानवीसी करते, इधर-से उधर गोल-गर्दिश में घूमते। जहाज़ जब कही रुकता तो वे भेड़ो के झुड की भाति सारा रास्ता घेर लेते और नीचे उतरने से पहले क्रास का चिन्ह बनाते। वे नीचे उतरते और ठीक उन्ही की भाति अन्य बीसियों लोग, उन्ही जैसे कपड़े पहने और उन्हीं की भांति पोटले-पोटलियो के बोझ से झुके, जहाज पर सवार होने के लिए ऊपर चढ आते।

लोगो की इस निरन्तर आवा-जाही से जहाज के जीवन मे कोई अन्तर न पड़ता। नए यात्री भी उन्ही चीजों के बारे मे बातें करते जिनके बारे मे दूसरे कर चुके थे: ज़मीन और काम के बारे में, खुदा और स्त्रियो के बारे मे। यहाँ तक कि उनके शब्दों के प्रयोग में भी कोई भिन्नता न होती:

"भगवान को अगर हमारी सहन-शक्ति की परीक्षा लेना मंजूर है तो यही सही। हम उसमें क्या दखल दे सकते है। आखिर होगा वही जो विधाता ने भाग्य मे लिख दिया है।"

उन्हें इस तरह की बातें करते देख बडी ऊब मालूम होती, मन झुंझलाने लगता। गन्दगी से मेरा वैर था। न ही मैं यह सहन कर सकता था कि मेरे साथ कोई बेरहमी और गैर इन्साफी का बरताव करे। मुझे पक्का विश्वास था कि मैंने ऐसा कोई काम नही किया है जो मेरे साथ इस तरह का बरताव किया जाए। न ही सैनिक ने ऐसा कोई काम किया था। निश्चय ही वह यह नही चाहता था कि उसका इस तरह तमाशा बनाया जाए।

मक्सिम जैसे गम्भीर और भले आदमी को तो उन्होने जहाज से निकाल दिया जब कि कुत्सित सेर्गेई की नौकरी पर कोई आच नहीं आई। और ये लोग जो किसी को भी सहज ही इस हद तक सता सकते है कि वह पागल हो जाए, जहाजियों के भोंडे से भोंडे आदेशों का इस तरह दुम दबा कर मानते है मानो उनकी नानी मर गई हो! जहाजियों की गदी से गदी गालियों और डाट-डपट को गले के नीचे उतारते समय उनके चेहरों पर जरा भी बल क्यो नही दिखाई देता?

"ऐ, बाडे पर जमघट न लगाओ!" शैतानी-भरी अपनी सुदर आँखो को सिकोडते हुए जहाजियो के मुखिया ने कहा।—"क्या तुम नही देखते कि जहाज मोड ले रहा है? हट जाओ यहा से, शैतान के बच्चो!"

शैतान के बच्चे भाग कर डैक के दूसरे बाजू पहुच गए, और वहाँ से फिर उन्हे भेडो के रेवड की भाति खदेडा जाने लगा

"ऊह, अब यहाँ जमा हुए है। निकलो यहाँ से!"

गर्मी की रातो में टीन के सायबान में टिकना दूभर हो जाता। दिन में सायबान खूब तप जाता और रात को भभकारे छोडता। यात्री तिलचट्टो की भाति रगते हुए बाहर डैक पर निकल आते और जहाँ भी जी करता, पडे रहते। हर पडाव पर जहाजी ठोकर और घूसे मार कर उन्हे जगाते।

"ऐ, रास्ता छोड़ो! अपनी-अपनी जगहों पर जाकर सोओ!"

वे चौंक कर उठ बैठते और उनींदी आँखों से चाहे जिस दिशा में चल देते।

जहाजियों और यात्रियों में केवल इतना ही अन्तर था कि दोनों की वेशभूषा भिन्न थी। फिर भी वे उन्हें पुलिसवालों की भाँति डाटते-फटकारते और इधर-से-उधर खदेड़ते।

लोगों के बारे में सब से मुख्य बात यह है कि वे संकोची, दब्बू और सिर पर जो आ पड़े उसे उदास भाव से सहन करने वाले होते हैं, और वे बहुत ही अजीब तथा भयानक मालूम होते हैं उस समय जब उदास सहनशीलता का उनका बांध एकाएक टूट जाता है और बर्बर खुशी की एक ऐसी बाढ़ में वे डूबने-उतराने लगते हैं जिससे जरा भी ध्यान नहीं हट पाता। मुझे ऐसा मालूम होता मानो इन लोगों को यह भी पता नहीं है कि उन्हें कहाँ ले जाया जा रहा है, और इस बात का भी उनके लिए कोई विशेष महत्व नहीं है कि जहाज उन्हें कहाँ उतारता है, उन के लिए मानो सभी जगहें एक सी हैं। जहाँ कहीं भी जहाज उन्हें उतारेगा, तट पर वे थोड़ी देर ही रहेंगे, जब तक कि वे इस या किसी दूसरे जहाज पर सवार नहीं हो जाते और वह उन्हें अन्य किसी जगह नहीं ले जाता। वे सब के सब घर-द्वारविहीन घुमक्कड़ यात्री थे, सभी देश पराए थे, और सभी लोग छटे हुए बुजदिल!

एक दिन, आधी रात बीते कुछ ही देर हुई होगी कि किसी मशीन के टूटने का बड़े जोर से धमाका हुआ। ऐसा मालूम होता था जैसे किसी ने तोप दागी हो। देखते-देखते समूचा डैक सफेद भाप से घिर गया जो इंजन-घर से निकल रही थी और घने बादलों के रूप में उमड़ती-घुमड़ती और बल खाती दरारों में प्रवेश कर रही थी। कोई कानफोड़ आवाज़ में जोर से चिल्लाया:

"गाव्रीलो! कुछ लाल सीसा और ऊनी कपडे का एक टुकडा तो लाओ!"

मैं इजन-घर की वगल म उसी मेज पर सोता था जहाँ मैं तश्तरियाँ साफ करता था। मशीन के फटने और धमाके की आवाज से जब मेरी आँख खुली तब डैक पर सन्नाटा छाया था, मशीन भाप से सनसना रही थी और हथौडिया तेजी से खटा-खट कर रही थीं। इसके बाद, अगले क्षण ही, डक यात्रियो की भयानक चीख-पुकार ने आसमान सिर पर उठा लिया।

धुध की सफेद चादर को बध कर, जो अब तेजी से झीनी पडती जा रही थी, बिखरे हुए बालो वाली स्त्रियाँ और मछलिया-ऐसी आँखें वाले पुरुष घबराहट में इधर-उधर भाग रहे थे, एक दूसरे को धक्का देकर गिरा रहे थे। सब के सब अपने पोटने-पोटलियो, थैलो और सूटकेसो से जूझ रहे थे, ठोकर खा रहे थे और भगवान तथा सन्त निकोलाई से फरियाद कर रहे थे। दृश्य भयानक था, और साथ ही दिलचस्प भी। लोगो की हरकतो को देखने और यह जानने के लिए कि वे अब क्या करगे, म भी उनके साथ-साथ चकरघिन्नी बना हुआ था।

रात में सबग्रासी हलचल, घबराहट और शोर-शराबे का यह मेरा पहला अनुभव था, और न जाने क्यो मुझे कुछ ऐसा लगा कि यह सारा तूफान बेकार और गलत था। जहाज उसी तरह चल रहा था। दाहिने तट पर, बहुत ही नजदीक, घसियारो के अलाव जल रहे थे। उजली रात थी। पूनो का ऊँचा भरा-पूरा चाँद चाँदी बरसा रहा था।

लेकिन डैक पर एक कुहराम मचा हुआ था। लोगो की घबराहट बढती जा रही थी, वे पागलो की भाति लपक-झपक रहे थे। केबिन के यात्री भी निकल आए। न जाने कौन, छलाँग मार

कर पानी में कूद गया। कुछ लोगों ने भी उसका साथ दिया। दो दहकान और एक पुरोहित ने साहस कर रस्सी से कुर्सी उठाई और उनसे डैक पर पेचों से कसी बेंचों में से एक उखाड़ डाली। एक बड़े-से दरबे में मुर्गे बन्द थे। उसे भी उठाकर पानी में फेंक दिया। डैक के बीचोंबीच, उस जगह जहाँ कप्तान के पास की सीढ़ियाँ थीं, एक दहकान घुटनों के बल बैठा था। जो भी उसके पास से गुजरता, वह झुक कर उसे सलाम करता और भौंकने की आवाज में चिल्ला उठता:

"ओ खुदा के सच्चे बन्दो, पापों ने हमें डुबोने पर किया है!"

एक मोटा थलथल भलामानस जो नंगे बदन, सिर्फ पतलून पहने ही बाहर निकल आया था, छाती कूट-कूट कर चिल्ला रहा था:

"डोंगी, शैतान के बच्चो, डोंगी!"

जहाजी भीड़ में झपट कर कभी एक की गर्दन नापते, कभी किसी दूसरे के सिर पर घूंसा लगाते और ठोकरें मार कर उन्हें एक ओर पटक देते। स्मूरी भी रात के कपड़ों पर कोट डाले भारी धमक के साथ यहाँ से वहाँ जाता और गरजती हुई आवाज में हरेक को डाट पिलाता:

"कुछ तो शर्म करो! अपने दिमाग का इतना दिवाला न निकालो! देखते नहीं, जहाज मजे मे चल रहा है, वह डूब नहीं रहा है। दो हाथ पर ही नदी का किनारा है। और वह देखो, उधर दो डोंगियाँ दिखाई दे रही है, आदमियो से लदीं। जानते हो, ये कौन है? ये वही बेवकूफ है जो पानी में कूद पडे थे। घसियारों ने एक को भी नहीं डूबने दिया, सभी को बाहर निकाल लाए!"

इसके बाद तीसरे दर्जे के यात्रियो की खोपड़ियो पर उसने घूसो की कुछ ऐसी बौछार शुरू की कि वे समूचे डैक पर बोरो की भाति बिछते नजर आने लगे।

हंगामा अभी शान्त होने भी न पाया था कि लकदक कपडे पहने एक स्त्री आई, एक वडा-सा चम्मच हिलाते हुए झपट कर वह स्मूरी के पास पहुची और चिल्ला कर बोली

"यह क्या वदतमीजी है?"

पसीना-चूते एक भले आदमी ने उसे रोका और अपनी मूछो को चूसते हुए झुझला कर कहा

"रहने दो, वह खरदिमाग है ।"

स्मूरी ने अपने कधे विचकाए और हैरानी से आँखें मिचमिचाते हुए मेरी ओर घूम गया।

"यह क्या तमाशा है?" उसने कहा—"जान न पहचान, वस एकदम आसमान से टपक पडी? आखिर यह चाहती क्या है?"

एक किसान जो नाक से बहते हुए खून को सुडकने का प्रयत्न कर रहा था, चिल्लाया

"लोग क्या ह, पूरे डाकू हैं—डाकू।"

गर्मी वीतते न वीतते इस तरह की घवराहट और हलचल ने दो वार सिर उभारा और दोनो ही वार सचमुच के किसी खतरे ने नही, वल्कि खतरे के डर ने उन्हे बौखला दिया था। तीसरी वार यात्रियो ने दो चोरो को पकडा। उनमें से एक तीर्थयात्री के भेष में था। जहाजियो के कानो में उन्होंने इसकी भनक तक न पडने दी और अलग ले जा कर पूरे एक घटे तक उनकी खून मरम्मत की। अन्त में जहाजियो को जब इसका पता चला और उनके चगुल से चोरो को उन्होंने छुडाया तो लोग उन पर भी झपटे। चिल्लाकर बोले

"चोर चार मौसेरे भाई, तुम सब एक ही थैली के चट्टे-वट्टे हो!"

"तुम खुद चोर हो, और इसीलिए तुम उन्हे बचाना चाहते हो!"

चोरो को इस हद तक पीटा गया था कि वे वेहोश हो गए थे। और उस समय भी जव अगले पड़ाव पर उन्हें पुलिस के हवाले किया गया, उनमे इतनी सकत नही थी कि अपने पाँव पर खड़े हो सके।

एक के वाद एक इस तरह की अनेक घटनाएँ घटी, इस हद तक हृदय को कोचने वाली कि दिमाग़ भन्ना जाता और समझ में न आता कि ये लोग सचमुच में भले है या वुरे, दव्वू है या जान-मार? आखिर क्या चीज है वह जो उन्हे इतना वेरहम, कौवे की भाति इतना कुत्सित और इसी के साथ-साथ शर्मनाक हद तक दव्वू तथा दीन-हीन वनाती है?

स्मूरी से जव कभी मै इस वारे मे पूछता तो वह सिगरेट से इतना धुआँ छोड़ता कि उसका सारा मुँह ढक जाता और झुंझला कर जवाव देता:

"आखिर तुम से मतलव? लोग जैसे होते है, वैसे होते हैं। कोई चतुर होता है, और कोई एकदम वुद्धू। उनकी चिन्ता छोडो, और पुस्तको मे मन लगाओ। उनमे तुम्हे सभी सवालों के जवाव मिल जाएँगे, अगर वे ठीक ढंग की हुई...।"

धार्मिक पुस्तके और सन्तो की जीवनियाँ उसके लिए वेकार थी। उनका जिक्र आने पर कहता:

"वे तो पुजारियो के लिए है, या फिर पुजारियो के लड़को के लिए।"

उसे खुश करने के लिए मैने एक पुस्तक भेंट करने का निश्चय किया। कजान वन्दरगाह पहुँचने पर मैने पाँच कोपेक मे एक पुस्तक खरीदी: "प्योत्र महान की किस प्रकार एक सैनिक ने जान वचाई"। लेकिन उस समय वह नशे मे चूर था, और किसी को अपने पास नही फटकने देता था। सो उससे भेट करने से पहले

पुस्तक को खुद पढने का मैंने इरादा किया। मुझे वह बेहद पसन्द आई। हर बात थोडे में, बहुत ही साफ-सुथरे, सीधे-सादे और इतने दिलचस्प ढग से कही गई थी कि मै मुग्ध हो गया। मुझे पक्का विश्वास था कि वह भी उसे खूब पसन्द करेगा।

लेकिन हुआ यह कि उसने, चुपचाप, पुस्तक को तोड-मरोड कर उसकी गेंद सी बनाई और उसे पानी में फेंक दिया।

"यह भी कोई पुस्तको में पुस्तक है, बेवकूफ!" उसने भल्लाकर कहा।—"शिकारी कुत्ते को साधने और ट्रेन करने में एक तो दिन-रात करो, इसके बाद जब उसे शिकार पर ले कर जाओ तो वह केवल उडती चिडिया को ताकता रह। तुम भी ठीक वैसे ही हो!"

फर्श पर उसने अपना पाँव पटका और मुझपर चिल्लाया

"किस कैडे की पुस्तक है यह? मै उसे पूरी पढ गया—शुरू से आखिर तक। एकदम बकवास ही बकवास! तुम्ही बताओ, उसमें जो कुछ लिखा है, क्या वह सच है?"

"मुझे नही मालूम।"

"लेकिन मै जानता हूँ। अगर वे उस पहले आदमी का सिर काट देते तो वह सीढी से नीचे लुढक आता और दूसरे लोग पूलो के अम्बार पर कभी न चढ पाते। फिर, सनिक इतने बेवकूफ नही होते! वे पूलो के अम्बार में आग लगा देते जिससे सारा झझट ही मिट जाता! सुन रहे हो न?"

"हाँ।"

"तभी तो कहता हू कि सब कुछ बकवास है। और तुम्हारा वह प्योत्र ज़ार—मै जानता हू कि उसके साथ कभी उस तरह की कोई घटना नही घटी। बस, अब दफा हो जाओ यहाँ से!"

मुझे लगा कि स्मूरी जो कुछ कह रहा है, वह गलत नही है। लेकिन पुस्तक के साथ मेरा मन फिर भी उलझा रहा। मैंने

से दुवारा खरीदा और एक वार फिर पढा, और इस वार यह जानकर खुद मुझे भी अचरज हुआ कि पुस्तक सचमुच में दो कौड़ी की थी। मुझे अपने ऊपर वड़ी शर्म आई, और स्मूरी को मै और भी ज्यादा आदर तथा भरोसे की नजर से देखने लगा और वह खुद, कारण चाहे जो भी हो, वहुधा मुझसे झुंझलाहट के साथ कहता·

"अह, तुम भी कहाँ आ फंसे? तुम्हे तो लिखना-पढना चाहिए"

मै भी कुछ ऐसा ही अनुभव करता कि यह जगह मेरे लिए नही है। सेर्गेई मेरे साथ वेहद वुरा वरताव करता। मेरी मेज पर से वह चाय की चीजे उडा लेता और मैनेजर की आँख वचा कर उन्हे यात्रियो के हाथ वेच देता। वह कई वार ऐसा कर चुका था। मै जानता था कि इस तरह चीजें उड़ाना चोरी कहलाता है। स्मूरी भी एक से अधिक वार मुझे चेता चुका था:

"जरा चौकस रहना। ऐसा न हो कि वेटर तुम्हारी मेज से छुरी-कॉटो का सफाया कर दे!"

इसी तरह की और भी कितनी ही वाते थी जो काली छाया की भाति मेरे सिर पर मडरा रही थी और जिनका नतीजा मेरे लिए वुरा हो सकता था। अक्सर मन मे होता कि अगले पडाव पर जहाज छोड़ कर जंगलो की राह लूँगा। लेकिन स्मूरी की वजह से ऐसा न कर पाता। उसकी घनिष्टता काफी वढ गई थी और वरावर वढती जा रही थी। इसके अलावा खुद जहाज़ और उसकी निरन्तर गति का भी कुछ कम आकर्षण नही था। घाटो या पडावो पर जव भी जहाज रुकता, मुझे वडा वुरा मालूम होता और किसी ऐसी घटना या चमत्कार की मै प्रतीक्षा करता जिसकी वदौलत, पलक झपकते, कामा नदी से वेलाया और उससे भी खूव आगे व्यात्का या वोल्गा नदी की मै सैर करूँ, और नये तटो, नये नगरो तथा नये लोगो को देखने का मुझे अवसर मिले।

लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। मेरे जहाज़ी जीवन का एकाएक और शर्मनाक ढग से अत हो गया। एक साझ, उस समय जब कि हम कजान से निजनी की ओर यात्रा कर रहे थे, मैनेजर ने मुझे बुलाया। जब मैं उसके सामने हाज़िर हुआ तो उसने दरवाज़ा बन्द कर दिया और कालीन-चढे एक स्टूल पर उदास मुद्रा में बैठे स्मूरी से उसने कहा

"लो, यह भी अब सामने मौजूद है।"

"क्या तुम सेर्गेई को चम्मच और दूसरी चीज़े देते हो?" उसने रूखी आवाज में पूछा।

"मेरी आँख बचा कर इन चीजो को वह खुद अपने-आप उठा लेता है।"

"तुम उसे चीजें उठाते नही देखते, लेकिन यह जानते हो कि वह ऐसा करता है?" मनेजर ने निश्चल भाव से कहा।

स्मूरी का मुट्ठी-बधा हाथ धम से घुटने पर गिरा और फिर वह उसे सहलाने लगा।

"ज़रा ठहरो। ऐसी कोई जल्दी नही है," उसने कहा और रुक कर किसी सोच में पड गया।

मैने मैनेजर की ओर देखा और उसने मेरी ओर। मुझे ऐसा लगा मानो उसके चश्मे के पीछे आँखें है ही नही।

वह निःशब्द जीवन बिताता था, चलते समय ज़रा भी आवाज़ नही करता था, और धीमे स्वरो में बोलता था। कभी-कभी उसकी रग-उडी दाढी और कोटरनुमा आँखें किसी कोने में झलकाई देती और फिर तुरत विलीन हो जाती। सोने से पहले एक लम्बे अर्से तक घुटनो के बल वह देव-प्रतिमा के सामने बैठा रहता जिसके सामने, दिन हो चाहे रात, चौबीसो घटे, एक दीया जलता था। दरवाजे की पहलू-कटी खिडकी से मैं घटो उसे देखता, लेकिन

उसके होंठ प्रार्थना मे कभी फड़कते न दिखाई देते — प्रार्थना का एक भी शब्द वह अपने मुँह से न निकालता। घुटनों के बल बैठा हुआ वह केवल देव-प्रतिमा और दीये की ओर एकटक देखता, उसाँस लेता और अपनी दाढ़ी सहलाता।

थोडी देर रुक कर स्मूरी ने फिर पूछा:

"क्या सेर्गेई ने तुम्हे कभी कोई धन दिया?"

"नही।"

"कभी भी नही?"

"नही, कभी भी नही।"

"यह झूठ नही बोलेगा," स्मूरी ने मैनेजर से कहा।

"इससे कोई फर्क नही पड़ता," मैनेजर ने धीमे स्वर में जवाब दिया, — "मै सब समझता हूँ।"

"चलो अब!" मेरी मेज के पास आते और गरदन पर हलके से चपत जडते हुए स्मूरी ने चिल्लाकर कहा:

"मै नही जानता था कि तुम इतने बडे चुगद हो! और चुगद तो मै भी हूँ जो तुम्हारे बारे में चौकस नहीं रहा।"

निजनी मे मैनेजर ने मेरा हिसाब चुकता कर दिया। मुझे करीब आठ रूबल मिले। यह पहला मौका था जब इतनी बड़ी रकम एक मुश्त मेरे हाथ मे आई थी।

विदा के समय स्मूरी का गला भर गया। उदास स्वर मे बोला:

"आगे अपनी आँखे खुली रखना, समझे? यह नही कि मुँह बाये मक्खियाँ पकड़ रहे है...।"

सीसे जडा तम्बाकू रखने का एक चमकदार बटुवा उसने मेरे हाथ में थमा दिया।

"यह लो, इसे अपने पास रखना। कितनी बढ़िया चीज है।

मेरी एक मुंह-बोली बेटी थी। उसी ने यह मेरे लिए बनाया था ।
अच्छा तो अब जाओ। पुस्तकें पढते रहना, उनसे बडा साथी तुम्हें
और कोई नहीं मिलेगा!"

उसने मुझे बांहों के नीचे से पकडा, हवा में अधर उठा कर
मेरा मुंह चूमा और फिर कमाल कर मजबूती से मुझे घाट पर
खडा कर दिया। मेरा जी भारी हो गया। मुझे अपने पर भी दुख
हुआ, और उस पर भी। और जब वह, एकदम एकाएकी, अपने
भारी-भरकम, हिंडोने-से झूलते शरीर को लिए घाट-मजदूरों को
धकियाता हुआ जहाज की ओर लौट चला तो मुझसे न रहा गया,
और मेरी आंखों में बरबस आंसू उमड आए।

उस जैसे न जाने कितने लोग,—इतने ही भले, उतने ही
अकेले और जीवन से उतने ही छिटके हुए,—आगे भी मेरे जीवन
में आए, और अपनी छाप छोड कर विलीन हो गए ।

७

नानी और नाना अब फिर नगर में आ बसे थे। इस बार जब
मैं उनके पास पहुंचा तो मेरा मन गुस्से से उमड-घुमड रहा था,
और हर किसी से लडने को जी चाहता था। ऐसा मालूम होता था
मानो मेरा हृदय भारी बोझ से दबा जा रहा हो। आखिर क्या और
किस बिर्ते पर उन्होंने मुझे चोर ठहराया?

नानी ने मुझे बडे प्यार से अपनाया, और तुरत समोवर गरम
करने चली गई। नाना अपनी आदत के अनुसार चिंगारियां छोडने
से न चूके

"क्यों, कितना सोना बटोर लाए?"

खिडकी के पास बैठते हुए मैने कहा:

"चाहे जो भी मैने बटोरा हो, तुम्हे तो मिलने मे रहा। वह मेरी मिल्कियत है।"

गर्व के साथ मैने जेब मे हाथ डाला, और सिगरेट का पैकेट निकाल कर धुआँ उड़ाने लगा।

"ओहो," मेरी प्रत्येक हरकत का मुआयना करते हुए नाना ने कहा,—"दूध के दाँत तो टूटे नही, और दुनिया-भर के हुनर सीख लिए,—क्यों, कुछ तो इन्तजार किया होता?"

"मेरे पास एक और चीज है—तम्बाकू का बटुवा!" मैने शेखी बघारी।

"तम्बाकू का बटुवा!" नाना चीख उठे।—"आखिर तुम्हारा इरादा क्या है,—क्या तुम मुझे चिढाने पर तुले हो?"

(वह मेरी ओर झपटा। उसके पतले, मजबूत हाथ फैले थे और उसकी हरी आँखे चिंगारियाँ छोड रही थीं। मैने उछल कर जोरों से उसके पेट में सिर से टक्कर मारी। बूढा वहीं फर्श पर ढेर हो गया और सन्नाटे से पूर्ण उन क्षणों में, अधेरी खोह की भांति हक्का-बक्का-सा अपना मुंह बाये, आँखे मिचमिचा कर मेरी ओर देखता रह गया। आख़िर उसके मुँह से आवाज़ निकली। भरभराए स्वर में बोला

"तुम...तुमने मुझपर, अपने नाना पर, हाथ उठाया... मुझे...अपनी सगी माँ के बाप को?"

"मेरी चमडी उधेडने मे तुम्ही कौन कसर छोड़ते थे," मैं बुदबुदाया, लेकिन यह सोचकर तुरत मेरा मुँह बद हो गया कि सचमुच मुझसे एक घिनौनी हरकत हो गई है।

नाना कपडे झाड़ कर फुर्ती से उठ खडे हुए और मेरी बगल में आकर बैठ गए। मेरे हाथ से उन्होने सिगरेट छीन ली और उसे खिड़की से बाहर फेक भय से काँपती आवाज मे बोले:

"तू भी निरा काठ का उल्लू है! इस तरह की हरकत के लिए खुदा तुझे ताज़िन्दगी माफ नहीं करेगा!"

फिर वह नानी की ओर मुड़े

"देखो न मातविन, और किसीने भी नहीं इसने मुझे मारा हाँ, इसीने मुझे मारा! यकीन न हो तो खुद पूछ देखो!"

पूछना-ताछना तो दूर, नानी सीधी मेरे पास आई और बाल पकड़ कर मुझे झझोड़ने लगी।

"इसकी यही सज़ा है," नानी ने कहा और बालों को झटका-सा देते हुए दोहराया "यही सज़ा है ।"

नानी की इस सज़ा ने, और खास तौर से नाना की घृणापूर्ण हंसी ने, मेरे शरीर को तो चोट नहीं पहुँचाई, लेकिन मेरे हृदय को बुरी तरह घायल कर दिया। वह कुर्सी पर बैठा था और घुटनों पर हाथ मारते हुए उचक-उचक कर मेंढक की भांति टर्रा रहा था

"ठीक, बहुत ठीक ।'

नानी के चंगुल से अपने-आप को छुड़ा कर मैं दहलीज़ में भागा गया, और वहीं एक कोने में मुंह छिपाकर पड़ा रहा। दुख और निराशा ने मुझे दबोच लिया था, और कानों में समोवर में पानी के सनसनाने की आवाज़ आ रही थी।

सहसा नानी आई और मेरे ऊपर झुकते हुए इतने धीमे स्वर में फुसफुसा कर बोली कि उसके शब्द बड़ी मुश्किल से सुनाई देते थे

"बुरा न मानना, मैं तुम्हें नामुन की सज़ा थोड़े ही दे रही थी। तुम्हीं बताओ, क्या चोट पहुँची? वह तो बकर दिखावा भर था। इसके सिवा मैं और करती भी क्या? आखिर तुम्हारा नाना बड़ा-बड़ा आदमी है, और उसका तुम्हें मान रखना चाहिए। उसने क्या कम मार खाई है? उसके शरीर की सारी हड्डियां टूटी हुई हैं, और उसका हृदय दुखों से लबालब भरा है। उसे और

खिड़की के पास बैठते हुए मैने कहा:

"चाहे जो भी मैने बटोरा हो, तुम्हे तो मिलने से रहा। यह मेरी मिल्कियत है।"

गर्व के साथ मैने जेब में हाथ डाला, और सिगरेट का पैकेट निकाल कर धुआँ उडाने लगा।

"ओहो," मेरी प्रत्येक हरकत का मुआयना करते हुए नाना ने कहा,—"दूध के दाँत तो टूटे नही, और दुनिया-भर के हुनर सीख लिए,—क्यो, कुछ तो इन्तजार किया होता?"

"मेरे पास एक और चीज है—तम्बाकू का बटुवा!" मैने शेखी बघारी।

"तम्बाकू का बटुवा!" नाना चीख उठे।—"आखिर तुम्हारा इरादा क्या है,—क्या तुम मुझे चिढाने पर तुले हो?"

(वह मेरी ओर झपटा। उसके पतले, मजबूत हाथ फैले थे और उसकी हरी आँखे चिगारियाँ छोड रही थीं। मैने उछल कर जोरों से उसके पेट में सिर से टक्कर मारी। बूढा वही फ़र्श पर ढेर हो गया और सन्नाटे से पूर्ण उन क्षणों में, अंधेरी खोह की भाति हक्का-बक्का-सा अपना मुँह बाये, आँखे मिचमिचा कर मेरी ओर देखता रह गया। आखिर उसके मुँह से आवाज निकली। भरभराए स्वर मे बोला:

"तुम...तुमने मुझपर, अपने नाना पर, हाथ उठाया... मुझे.. अपनी सगी माँ के बाप को?"

"मेरी चमड़ी उधेड़ने में तुम्ही कौन कसर छोडते थे," मैं बुदबुदाया, लेकिन यह सोचकर तुरत मेरा मुँह बद हो गया कि सचमुच मुझसे एक घिनौनी हरकत हो गई है।

नाना कपड़े झाड कर फुर्ती से उठ खडे हुए और मेरी बगल मे आकर बैठ गए। मेरे हाथ से उन्होने सिगरेट छीन ली और उसे खिडकी से बाहर फेक भय से काँपती आवाज़ मे बोले:

"तू भी निरा काठ का उल्लू है! इस तरह की हरकत के लिए खुदा तुझे ताजिन्दगी माफ नहीं करेगा!"

फिर वह नानी की ओर मुड़े

"देखो न मालकिन, और किसीने भी नहीं इसने मुझे मारा हा, इसीने मुझे मारा! यकीन न हो तो खुद पूछ देखो!"

पूछना-ताछना तो दूर, नानी सीधी मेरे पास आई और बाल पकड कर मुझे झझाडने लगी।

"इसकी यही सजा है," नानी ने कहा और बालो का झटका-सा देते हुए दोहराया "यही सजा है ।"

नानी की इस सजा ने, और खास तौर मे नाना की घृणापूर्ण हसी ने, मेरे शरीर को तो चोट नही पहुँचाई, लेकिन मेरे हृदय को बुरी तरह घायल कर दिया। वह कुर्सी पर बैठा था और घुटनो पर हाथ मारते हुए उचक-उचक कर मेंढक की भाति टर्रा रहा था

"ठीक, बहुत ठीक ।"

नानी के चगुल से अपने-आप को छुडा कर मै दहलीज़ में भागा गया, और वहाँ एक कोने में मुह छिपाकर पटा रहा। दुख और निराशा ने मुझे दबोच लिया था, और कानो में समोवर म पानी के खलबलाने की आवाज आ रही थी।

सहसा नानी आई और मेरे ऊपर झुकते हुए इतने धीमे स्वर में फुसफुसा कर बोली कि उसके शब्द बडी मुश्किल से सुनाई देते थे

"बुरा न मानना, म तुम्हे सचमुच की सज़ा थोडे ही दे रही थी। तुम्ही बताओ, क्या चोट पहुँची? वह तो केवल एक दिखावा भर था। इसके सिवा मै और करती भी क्या? आखिर तुम्हारा नाना बडा-बूढा आदमी है, और उसका तुम्हे मान रखना चाहिए। उसने क्या कम मार खाई है? उसके शरीर की सारी हड्डियाँ टूटी हुई है, और उसका हृदय दुखो से लबालब भरा है। उसे और

चोट पहुँचाना क्या अच्छी बात है? तुम अब नन्हे-मुन्हे तो हो नहीं, खुद सारी बाते समझ सकते हो। और तुम्हे समझना चाहिए, आल्योशा, कि बुढापे में आदमी बच्चों ऐसी हरकते करने लगता है। तुम्हारे नाना का भी वही हाल है। बस, इतनी सी बात है, और कुछ नही...।"

नानी के शब्दों ने मरहम का काम किया। ऐसा मालूम हुआ मानो सुहानी बयार का झोंका हृदय को सहलाता हुआ निकल गया हो। नानी के शब्दो की प्यार भरी सरसराहट से मेरा हृदय हल्का हो गया। सारी दुखन जाती रही, लाज का मैने अनुभव किया, और नानी से मै कसकर लिपट गया। नानी ने मुझे, और मैंने नानी को चूम लिया।

"जाओ, नाना के पास जाओ। डरो नही, सब ठीक हो जाएगा। केवल इतना करना कि नाना के सामने एकाएक सिगरेट निकाल कर अब फिर न पीने लगना। अभी वह तुम्हे सिगरेट पीता देखने के आदी नही है। इसके लिए कुछ तो समय चाहिए न?"

जब मैंने कमरे मे पॉव रखा और नाना पर नज़र डाली तो मेरे लिए हँसी रोकना मुश्किल हो गया। इस समय वह, सचमुच, बच्चो की भाति प्रसन्न थे। चेहरा खिला हुआ था, पॉव पटक रहे थे और ललौहे बालोवाले अपने पजो से मेज पर धमाधम तबला सा बजा रहे थे।

"कहो मरखने बकरे की औलाद, तुम फिर आ गए, — टक्कर मारने का शौक क्या अभी भी पूरा नही हुआ? डाकू कही का! आखिर है तो अपने बाप का ही बेटा! मुंह उठाया और सीधे घर में चले आए, न क्रास का चिन्ह बनाया, न किसी से दुआ-सलाम की, और एक टुकड़ची सिगरेट मुंह में दबा कर धुआँ उडाना शुरू कर दिया! पूह, टकियल नेपोलियन!"

मैंने कोई जवाब नही दिया। उसके शब्द चुक गए और वह चुप हो गया। उसकी यह चुप्पी और भी बोझिल मालूम हुई। लेकिन चाय के समय उसने फिर मुझे लेक्चर पिलाना शुरू किया

"बिना लगाम के घोडा और बिना खुदा के डर का आदमी, दोनो एक से है। खुदा के सिवा और कौन हमारा मीत हो सकता है? इन्सान का सब से बडा दुश्मन है इन्सान!"

नाना के केवल इन शब्दो की सचाई ने तो मेरे हृदय को छुआ कि इन्सान ही इन्सान का दुश्मन है। इसके अलावा नाना ने जो कुछ कहा, उसका मेरे हृदय पर कोई असर नही हुआ।

"देखो, अभी तुम अपनी मौसी मात्रियोना के यहा लौट जाओ, और वही काम करो। इसके बाद चाहो तो बसन्त में फिर किसी जहाज में नौकरी कर लेना। लेकिन जाडो-भर तुम उन्ही के यहाँ रहना, और उन्हे यह न बताना कि बसन्त में तुम गायब हो जाओगे!"

"लेकिन यह तो धोखा देना होगा," नानी ने कहा जो अभी कुछ देर पहले सजा के नाम पर मुझे झूठमूठ हिला झकोड कर खुद नाना को धोखा दे चुकी थी।

"यह सारा जीवन ही धोखाधडी है," नाना ने और भी जोर से कहा,—"बिना धोखा दिए कोई जीवित नही रह सकता,—नही, कोई भी नही!"

उसी साझ जब नाना धर्मग्रथ का पाठ करने बैठे तो मैं और नानी फाटक से बाहर निकल आए और खेतो की ओर चल दिए। छोटा-सा दो खिडकियो वाला यह घर जिसमें नाना अब रहते थे, नगर के एकदम छोर पर, कनातनाया स्ट्रीट के अन्त में था, जहाँ किसी जमाने में उनका निजी मकान था।

"देखो न, घूम फिर कर हम भी अब कहाँ लगे है!" नानी

ने हँसते हुए कहा।—"तुम्हारे नाना को कहीं शान्ति नहीं मिलती, सो वह बराबर घर बदलता रहता है। मुझे तो यह घर अच्छा लगता है, लेकिन नाना को यहाँ भी चैन नहीं है!"

घर के सामने दो-ढाई मील खाइयो मे कटा-फटा और जहाँ-तहाँ खूंटो से भरा मैदान फैला था। उसके अन्त मे कजान जाने वाली सड़क थी जिसके किनारे बर्च के वृक्ष खड़े थे। खाइयो की मेड़ो पर झाड़ियाँ उगी थी जिनकी नगी-बूची टहनियाँ, सांझ के सूरज की ठंडी पड़ती हुई लाली मे खून का दाग लगे हण्टरो की भांति मालूम होती थी। हल्की हवा के झोके झाड़ियो को सरसरा रहे थे। सब से पास वाली खाई के उस पर युवक-युवतियो के जोड़े टहल रहे थे और उनकी छाया-आकृतियाँ भी, झाडियो की भांति, हवा मे सरसरा रही थीं। दाहिने छोर पर कट्टर पुरानपथियो के कब्रिस्तान की लाल दीवार थी। यह कब्रिस्तान 'बुग्रोवस्की मठ' कहलाता था। बाई ओर खाई के ऊपर जहाँ वृक्षों का एक काला-सा झुरमुट दिखाई देता था, यहूदियो का कब्रिस्तान था। हर चीज पर एक नहूसत सी छाई थी, हर चीज़ मानो क्षत-विक्षत धरती मे चुपचाप समा जाना चाहती थी। शहर के छोर पर खड़े छोटे-छोटे घरो की खिड़कियाँ मानो सहमी हुई नज़रो से धूल अटी सडक की ओर ताकती रहती जिसपर भूख की मारी दुबली-पतली और मरियल सी मुर्गियाँ गश्त लगाती थी। 'डेविची मठ' के पास से रभाती हुई गायो का एक रेवड़ गुज़र रहा था, और पास की छावनी से फौजी सगीत की आवाज आ रही थी—बिगुल और हथसिगे बज रहे थे।

कोई शराबी, पूरी बेरहमी से हरमोनियम बजाते हुए, लडखड़ाते डगो से टहल रहा था और लड़खडाते स्वरो में ही बुदबुदा रहा था:

"तुझे खोज ही लूँगा कही न कही..."

नानी से नही रहा गया। सूरज की लाल रोशनी में आखें मिचमिचाते हुए बोली

"किसे खोज लेगा, बेवकूफ! तुझे कुछ अपनी भी खबर है? यहां कहीं लडखडा कर गिर पडेगा, दीन-दुनिया का कुछ होश नही रहेगा, कोई आएगा और ऐसा सफाया करेगा कि तन पर कुछ बाकी नही बचेगा, तेरा यह हरमोनियम तक गायब हो जाएगा जिसे तू अपने हृदय से सटाए है "

मैं चारो ओर देखता जाता था और नानी को अपने जहाजी जीवन के बारे में बताता भी जाता था। उस जीवन में जो कुछ म देख चुका था उसके बाद मुझे अपना मौजूदा वातावरण बहुत ही बोझिल मालूम देता और म उदास हो जाता। नानी मेरी बाता को गहरे चाव और ध्यान से सुन रही थी, वैसे ही जैसे कि मैं नानी की बात सुनता था और जब मने स्मूरी का जिक्र किया तो नानी ने अभिभूत होकर क्राम का चिह्न बनाया और बोली

"बिल्कुल ठीक, आल्योशा! भले आदमी ऐसे ही होते है। माँ मरियम उसका भला करे। और सुना, उसे कभी न भूलना! अपने दिमाग के कोठे में अच्छी चीजा को कस कर बन्द रखना, और बुरी चीजो को,—बस, आँखें मूद कर ठुकरा देना!"

जहाज से निकाले जाने की बात मेरे गले मे अटक कर रह गई, और उसे नानी के सामने खोल कर रखना मुझे बेहद कठिन मालूम हुआ। लेकिन मैंने दाँत भीच कर अपना जी कडा किया और जसे भी बना, नानी का सब बता दिया। नानी के हृदय पर उसका जरा भी असर नहीं हुआ। सारी घटना सुनने के बाद उपेक्षा से इतना ही कहा

"तुम अभी छोटे हो। जीवन के उतार-चढावो से तुम्हारा वास्ता नहीं पडा—अभी तुमने जीवन नहीं देखा।"

"सब एक-दूसरे से यही कहते है कि तुमने जीवन नही देखा," मैने कहा,—"दहकानो को मैने ऐसा कहते सुना है, जम्-ज़ी लोग भी ऐसा ही कहते थे, और मार्गी गावियोना भी अपने बेटे के सामने यही राग अलापती थी। आखिर जीवन मे ऐसी देखने-समझने की चीज है भी क्या?"

नानी ने अपने होंठ भींच लिए और सिर हिलाते हुए जवाब दिया :

"यह तो मै नही जानती।"

"नही जानती तो फिर उस बात को बार-बार दोहराती क्यों हो?"

"दोहराऊँ क्यो नही?" नानी ने अविचलित स्वर में जवाब दिया।—"लेकिन तुम्हे बुरा नही मानना चाहिए। तुम अभी छोटे हो, इतनी कम-उम्र में भला जीवन के रंग-ढंग तुम कैसे जान सकते हो? सच तो यह है कि जीवन को जानने का दावा कोई भी नहीं कर सकता, केवल चोरो को छोडकर। अपने नाना ही को देखो—पढा-लिखा और काफी चतुर है, लेकिन सब एकदम बेकार, कोई चीज अब साथ नही देती!"

"और तुम—तुम्हारा अपना जीवन कैसा रहा?"

"मेरा? अच्छा ही जीवन बिताया मैने। और बुरा भी। कभी अच्छा, और कभी बुरा। ऐसे ही अदला-बदली चलती रही।"

लोग हमारे आस-पास घूम-फिर रहे थे, उनकी लम्बी परछा-इयाँ उनके पीछे-पीछे घिसट रही थी और पाँवो से उड़ी धूल धुएँ की भाति उठ कर उन परछाइयो पर छा जाती थी। सांझ की उदासी और भी घनी हो चली थी, और खिड़की मे से नाना के भुनभुनाने की आवाज आ रही थी :

"ओ भगवान, अपने गुस्से का सारा पहाड अकेले मेरे ही सीने पर न तोड। मुझे इतनी ही सजा दे जितनी कि मै बरदाश्त कर सकूँ।"

नानी मुसकराई।

"भगवान भी इसका रोना-झीकना सुनते सुनते तग आ गया होगा," नानी ने कहा।—"हर साझ यह इसी तरह भुनभुनाता है। आखिर किस लिए? बूढा हो गया है, जीवन में कोई भी साथ बाकी नही रही, फिर भी मिमियाना और रोना-झीकना नही छूटता! हर साझ इसकी आवाज़ सुनकर भगवान के पेट में भी हँसते-हँसते बल पड जाते होगे कि यह लो, कसीली काशीरिन फिर भुनभुना रहा है । लेकिन चलो अब, सोने का वक्त हो आया।"

मने निश्चय किया कि अब गानेवाली चिडियो को पकडने का धधा शुरू किया जाए। मुझे लगा कि इससे गुजर लायक अच्छे पैसे मिल जाएगे। मै चिडिया को पकड कर लाऊगा और नानी उन्हे बाजार में बेच आया करेगी। सो मैने एक जाल, एक फन्दा, लासे का कुछ सामान खरीद लिया और कुछ पिंजरे बना लिए। सवेरा होते ही मै तो किसी खाई की झाडियो में छिप कर बैठ जाता और नानी, एक बोरा और टोकरी लिए, आस-पास के जगलो में जाकर, कुकुरमुत्तो, बेरो और जगली बादामो की खोज करती।

सितम्बर महीने का थका हुआ-सा सूरज अभी-अभी निकला था। उसकी पीली किरनें कभी तो बादलो में ही खो जाती और कभी रुपहले पख की भाति फैलकर उस जगह भी पहुच जाती जहाँ मै छिपा हुआ था। खाई की तलहटी में अभी भी परछाइयाँ तैर रही थी और एक सफेद कुहरा-सा उठ रहा था। खाई का एक

मटियाला किनारा एकदम गहरा, नंगा-बूचा और अंधेरे में डूबा था, दूसरा किनारा ढलवाँ होता चला गया था। इस किनारे पर घास और घनी झाड़ियाँ उगी थी जिनकी लाल, पीली और कत्थई पत्तियाँ खूब चमचमा रही थीं और हवा के झोंको के साथ उड़-उड़ कर समूची खाई में छितर गई थी।

तलहटी की कंटीली झाड़ियो में गोल्डफिंच पक्षी चहचहा रहे थे और झिनझिनी पत्तियों के बीच उनके छोटे-छोटे बाँके सिरों पर गुलावी मुकुट झिलमिला रहे थे। मेरे अगल-वगल और आगे-पीछे कुटूहली टिटमाइस वड़ी व्यग्रता से निरन्तर टिटिया रहे थे, अपने सफेद गालो को फुलाए फुंकार छोड़ रहे थे और मेले-ठेले के दिन कुनाविनो की युवतियो की भाति दुनिया-भर का शोर मचा रहे थे। चपल-चतुर और रसीले—हर चीज की ओर वे लपकते, उसे छूने-कुरेदने के लिए ललक उठते, और इस प्रकार एक के वाद एक फंदे में फसते जाते। इसके वाद वे वुरी तरह छटपटाते और फदे से निकल भागने का इस हद तक प्रयत्न करते कि उन्हें देखकर हृदय मसोस उठता। जी कड़ा कर के और हृदय की कोमल भावनाओ को कुचल कर मैं उन्हे पकड़ता और पास के पिंजरे मे वन्द कर देता, फिर उनके ऊपर एक वोरी डाल देता जिससे वे शान्त हो जाएँ।

नागफनी की एक झाड़ी को सूरज की किरनो ने रंग दिया था। सिसकिन पक्षियों का एक झुड उसपर आकर वैठा। सूरज की सुहानी किरनो मे पक्षियों की खुशी का वारपार नही रहता और स्कूली वच्चो के दल की भांति फुदक-फुदक कर वे और भी अधिक प्रसन्नता से चहचहाते तथा चहकते है। लालची, चौकस और अपनी गांठ का पक्का श्राइक पक्षी—जिसके अन्य साथी पहले ही दक्षिणी प्रदेशो की ओर प्रयाण कर चुके है—रसीले वन-गुलाव की झूमती हुई टहनी पर वैठा हुआ चोच से अपने परो को संवार रहा है और मटर के दाने ऐसी काली अपनी आँखों से शिकार की खोज में

इधर-उधर देख रहा है। सहसा लार्क पक्षी की भांति उड़कर वह एक बम्बलबी पर झपटता है और उसे अपनी चोंच में लेता है। इसके बाद उसे एक कांटे में बींध कर और चोर की भांति चौकन्नी अपनी गर्दन उचका कर, इधर-उधर मुड़-तुड़ कर, अगल-बगल नजर डालता और अपने शिकार की निगरानी करता है। एक पाइन-फिंच पक्षी — सन्न से उड़ता हुआ मेरे पास से निकल जाता है और मेरा मन उसे पकड़ने के लिए ललक उठता है। लाल रंग का बुलफिंच पक्षी, सेनापति की भांति गर्वीला, अपने झुंड से अलग हो कर सुस्ताने के लिए एक ऐल्डर झाड़ी पर आ बैठता है और अपनी कानी चोंच को ऊपर-नीचे करते हुए इस तरह चिचियाता है मानो खीजकर तान तोड़ रहा हो।

जैसे-जैसे सूरज आकाश में ऊंचा उठता, वैसे-वैसे पक्षियों की संख्या भी बढ़ती जाती, वे और भी खुशी से चहचहाने लगते। समूची घाटी उनके संगीत से भर जाती और हवा के झोंकों में झाड़ियों की निरन्तर सरसराहट इस संगीत का साथ देती। पक्षियों की आवाजों का उभार इस मृदु, मधुर और उदास सरसराहट को दबा न पाता। मुझे उसमें ग्रीष्म विदा-गीत की ध्वनि का आभास मिलता, हृदय को मथ देनेवाले उन शब्दों की फुसफुसाहट सुनाई देती जो मेरी कल्पना में साकार होकर गीत का रूप धारण कर लेते और बीते हुए जीवन के दृश्य, बरबस, मेरे स्मृति-पट पर मूर्त हो उठते।

सहसा वहीं ऊंचे से नानी की आवाज सुनाई दी

"तुम कहां हो?"

वह घाटी के कगारे पर बैठी थी। पास ही जमीन पर उसका रूमाल बिछा था और रोटी, खीरे, शलजम और कुछ सेब रूमाल पर सजे थे। इन सब वस्तुओं के बीच कट-ग्लास का एक बहुत ही सुन्दर सागर रखा था जिसका बिल्लौरी डाट नेपोलियन की

आकृति का था। सागर में वोडका छलछला रही थी जिसमें, उसे और भी सुगंधित बनाने के लिए, सन्तजोन नामक पौधे की जड मिली हुई थी।

नानी ने गदगद हृदय से सन्तोष की साँस छोड़ी:

"कितना अच्छा — कितना सुनहला है यह सब, मेरे भगवान!"

"मैंने एक गीत बनाया है!"

"क्या सचमुच? जरा सुनाओ तो।"

और मैंने कुछ इस तरह की पंक्तियाँ सुनानी शुरू की:

गरमी का सूरज लेता विदा,
सुहानी छटा हो गई हवा,
जाड़े का मौसम फिर आ गया,
फूलो पर पाला छा गया!

मेरी इन पक्तियो को अनसुना करते हुए नानी वोलीं:

"ऐसा एक गीत तो मुझे पहले से ही याद है, और तुम्हारे इस गीत से अच्छा है।"

और नानी ने गुनगुनाते हुए गीत सुनाया:

हृदय की कली खिल न पाई अभी कि किरनो का रहा न कुछ वाक़ी निशां, गर्मी का सूरज दे गया दग़ा और पहाड़ों की ओटक में वह छिप गया। पाले ने लिया फिर अपना कब्जा जमा, कलियो ने खिलना वन्द कर दिया। मेरे हिए का दिया वुझ गया!

याद आता मुझे, तुम्हारा वह रूप नीले आकाश में ज्यों सूरज की धूप वागो में, गलियो मे वह घूमना, सूरज की किरनो का मुँह चूमना। एक सपना-सा था जो उड़ गया,

भय पाने का दिल पै अब छा गया। मेरे हिए का दिया बुझ गया।

कहती उनसे जो दुख की मारी हुई, अपने साजन से है जो बिछुड़ी हुई। चले, जब बर्फीली आँधियाँ बरफ के लगें जब अम्बार यहाँ तो बनाना समाधि तुम, प्रेम से लेकर मेरा हृदय जो जला, शोक से उड़ा, कर उसे एक हिम का कफन, हिम की समाधि में ही कर देना दफ्न।

गीत रचने की अपनी क्षमता पर मुझे जो गर्व था, उसे जरा भी चोट नहीं पहुँची। नानी का यह गीत मुझे बेहद अच्छा लगा और गीत की 'कुवारी लड़की' के लिए मेरा हृदय भी वेदना से भर गया।

"देखो, कितनी कसक है इस गीत में," नानी ने कहा। —"किसी कुवारी लड़की के हृदय की वेदना इस गीत में फूट निकली है। ग्रीष्म में उसका साजन उसके साथ था। अपने प्रेमी के साथ वह घूमती थी। उसे क्या पता था कि जाड़ा आते ही वह विदा हो जाएगा, उसे अकेला छोड़ कर किसी दूसरे घोसले में मुँह छिपाने के लिए चल देगा। उसके हृदय की वेदना आँसू बनकर वह निकली और इन आँसुओं से इस गीत का जन्म हुआ। जिसके हृदय में कभी टीस नहीं उठी, उसके गीतों में तड़प भी कहाँ से आएगी? देखो न, कितना अच्छा गीत बनाया है उस लड़की ने!"

पक्षियों के बेचने पर पहली बार जब चालीस कापक हाथ में आए तो नानी चकित रह गईं, और उन्हें भारी अचरज हुआ।

"कमाल हो गया। मैं तो सोचती थी कि इससे कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा। सोचा कि छोटे लड़के की जिद है, सो उसे भी अपने

कभी-कभी मैं साझ के समय रवाना होता और रात-भर कज़ान वाली सड़क पर चलता रहता। शरद् के दिनो में मैं बहुधा वर्षा में भीग जाता, रास्ते में खूब कीचड़ हो जाती और मैं लथपथ आगे बढ़ता रहता। मेरी कमर पर एक मोमियाँ थैला लदा होता जिसमें फंदे, पिंजरे और दानो का सामान भरा रहता और हाथ में रहती एक मोटी लाठी। शरद् की अंधेरी राते खूब ठडी और डरावनी मालूम होती—बहुत ही डरावनी! सड़क के किनारे बिजली-मारे पुराने बर्च वृक्ष खड़े रहते और वर्षा में भीगी उनकी टहनिया मेरे सिर का स्पर्श करती। बाईं ओर पहाड़ी की तलहटी में जिधर वोल्गा बहती थी देर से आने वाले जहाजो और बजरो के मस्तूल जब-तब रोशनियो में चमक उठते और तैरते हुए निकल जाते, ऐसा मालूम होता मानो वे किसी अतल गहराई म—पाताल लोक के अथाह अधकार में—समाते जा रहे हो। उनके भोंपुओ के बजने और चप्पुओ के पानी में छप छप करने की आवाज़ें सुनाई देती।

सड़क के किनारे, लोहे-सी कड़ी भूमि पर, आस पास के गावो के घर दिखाई देते, कटखने भूखे कुत्ते मेरी टाँगो की ओर झपटते और रात के चौकीदार अपने खटखटे बजाते हुए भय से चीख उठते

"कौन है तू? कोई आदमी या खास शैतान का भेजा हुआ कोई दूत—भीग गयी रात में जिसका नाम तक लेना बुरा है!"

मुझे डर लगता कि कही मेरे फंदे आदि न छीन लिए जाए और इस लिए, चौकीदारो का मुह बन्द करने के लिए, पाँच कोपक का सिक्का मैं सदा अपनी जेब में रखता। फोकिनो गाँव के चौकीदार से तो मेरी दोस्ती भी हो गई। मैंने जब उसे अपने कार्यों के किस्से सुनाए तो उसके अचरज का ठिकाना न रहा।

"तुम फिर आ गए!" वह कहता।—"तुम पूरे रात के पछी हो, एकदम निडर, और एक घडी चैन से न बैठने वाले!"

उसका नाम था निफोन्त। कद का छोटा, सफ़ेद बालों वाला। देखने में ऐसा मालूम होता मानो वह कोई सन्त हो। अक्सर वह अपनी जेब मे हाथ डालता और शलजम, या सेब, या मुट्ठी भर मटर के दाने निकाल कर मुझे देते हुए कहता:

"यह लो, मेरे मित्र। अपनी इस नन्ही भेंट को मैंने तुम्हारे लिए ही रख छोडा था। उम्मीद है, तुम इसे पसन्द करोगे।"

और वह गाँव के छोर तक मेरे साथ चलता।

"अच्छा तो अब विदा। भगवान तुम्हारा भला करे।"

जब मै जगल में पहुँचा तो अधेरा छट चला था। मैंने अपने जाल फैला दिए, लासे लटका दिए और जंगल के एक किनारे लेट कर दिन निकलने की बाट जोहने लगा। चारों ओर सन्नाटा छाया था। हर चीज शरद् की गहरी नीद मे डूबी थी। धुध लिपटी पहाड़ियो की तलहटी में दूर-दूर तक फैली चरागाहो की हल्की सी झलक दिखाई दे रही थी जिन्हें दो हिस्सो में काटती हुई वोल्गा नदी बहती थी। चरागाहो के इर्द-गिर्द, जगल के उस पार, पेडो की ओट मे से सूरज अलस भाव से निकल रहा था और पेड़ो की काली फुनगियो को लाल रंग में रग रहा था,—ऐसा मालूम होता था मानो वे आग से दमक रही हो! देखते-देखते एक अद्भुत और रोम-रोम मे व्याप्त हो जानेवाली हरकत शुरू हो गई। धुध की चादर, अधिकाधिक तेज गति से, ऊँची उठती गई। सूरज की किरनो ने उसे रुपहला रग दिया। झाडियो, पेडो और घास के झुरमुटो ने मानो धुंध की यह चादर उतार कर अगडाई ली और धीरे-धीरे धरती से सिर उठाने लगे। लगता था जैसे कि सूरज की गर्मी पाकर चरागाहे पिघलने और सभी दिशाओ में अपनी सुनहरी-

पीत आभा बिखेरने लगी है। नदी-तट पर पहुचे सूरज ने जब उसके निश्चल पानी का स्पर्श किया और ऐसा मालूम हुआ, मानो समूची नदी उसी एक स्थल की ओर उमड चली हो जिसका कि सूरज ने अपनी सुनहरी उँगलियो से स्पर्श किया था। सोने का थाल ऊँचा उठता गया, और चारो ओर खुशी के लाल गुलाल की वर्षा होने लगी। शीत से सिकुडी-सिमटी और कापती धरती में जान पडी, वह कसममाई और अपनी कृतज्ञतापूर्ण उसाँसा से शरद् की सोधी सुगध फैलाने लगी। हवा इतनी साफ और पारदर्शी थी कि धरती का विस्तार, उसका आकार-प्रकार, अपनी अन्तहीन महानता और गौरव-गरिमा के साथ मूर्त हो उठा। हर चीज़ मानो दूर धरती के नीले छोरो को छूने के लिए ललक रही थी और अन्य सब को भी अपने इसी रग में रगने के लिए अपना माया-जाल फैला रही थी। सूरज निकलने का यह दृश्य, इसी जगह से, बीसियो बार मने देखा, और हर बार एक नयी दुनिया मेरी आखो के सामने उभर कर आई,—एक ऐसी दुनिया जिसका सौन्दय बेजोड, निराला और अद्भुत था।

सूरज से, न जाने क्यो, मुझे बेहद प्रेम है। उसकी कल्पना मात्र से मेरा हृदय कसमसाने लगता, उसके नाम की मधुर ध्वनि से मेर हृदय के सभी तार झनझना उठते। आँखें बन्द कर म सूरज की ओर मुँह कर लेता और उसकी सुहानी किरनो का स्पर्श मुझे बहुत अच्छा मालूम होता। किसी दरार, बाडे या किसी पेड की टहनिया में से छन कर जब उसकी किरनें बर्छी की अनी की भाति मेरी ओर लपकती तो मैं उन्हे हथेली में पकडने की कोशिश करता। नाना शाहजादे मिखाइल चेर्नीगोवस्की और बोयारिन फेओदोर की बडी इज्जत करते थे। कारण कि उन्होने सूरज के आगे सिर झुकाने से इन्कार कर दिया था। लेकिन मुझे वे बडे कुत्सित मालूम

होते, जिप्सियों की भाति काले और मनहूस, मोरदोविया के गरीब किसानों की भांति चपड-चुधी आँखों वाले। लेकिन मैं...चरागाहो के पीछे से जव भी मैं सूरज को निकलते हुए देखता, मेरा चेहरा अदवदाकर खिल जाता और मेरे होठों पर हँसी नाचने लगती।

चीढ के पेड़ ऊपर सरसरा रहे थे और उनकी टहनियाँ हिल-हिल कर ओस की वूदों की वर्पा कर रही थी। और नीचे, पेडों की छाया मे, फर्न झाडियो की पत्तियों पर ओस की वूंदे पाले से जम गई थीं, ऐसा मालूम होता था मानो किसीने रुपहले वेल-वूटे काढ दिए हो। कत्थई घास, वारिश से आहत हो कर, धरती पर निश्चल पडी थी। लेकिन सूरज की किरनो का स्पर्श पाकर उसमे भी हल्की-सी कुनमुनाहट दौड़ जाती, मानो जीवित रहने के लिए आखिरी प्रयास कर रही हो।

पंछियो के घोसलो मे भी हलचल दिखाई देती। टिटमाइस पक्षी भूरे रग की गुलगुली गेदो की भाति, डाल-डाल पर फुदकना शुरू करते। अगिया क्रास विल देवदार की सव से ऊपर वाली फुन्गियो पर अपनी चोचे मारते। एक टहनी के छोर से लटका सफेद नटहैच पक्षी झूल रहा था। वह अपनी चोंच से परो को छाटता, रह-रह कर गरदन उठाता, और मेरे जाल की ओर सन्देह-भरी नजर से देखता। अनायास ही, एका-एक मुझे ऐसा लगा मानो समूचा जंगल जो एक क्षण पहले तक किसी गहरी उदासी मे डूवा था, अव सैकड़ो पछियो की सुस्पष्ट आवाजों से गूँज उठा है, उनकी सरसराहट और चहलपहल ने उसमे जान डाल दी है। जानदार जीवो मे सव से पवित्र ये पंछी ही तो है जिनसे अनुप्राणित होकर मानव ने, जो इस दुनिया मे सौन्दर्य का जनक है, अपनी प्रसन्नता के लिए दैवी सगीत, फ़रिश्तो और अप्सराओ की रचना की है।

पछियों को पकड़ना दुष्कर था, और उन्हें पिंजरा में बन्द करना शर्मनाक। मैं उन्हें देखता रहता और केवल इतने में ही मुझे असीम आनन्द प्राप्त होता। लेकिन शिकारी की लगन और पैसा कमाने की इच्छा का पलड़ा भारी पड़ता और मेरी संवेदनशीलता को झुका देता।

पक्षियों की चतुराई देखने में मुझे बड़ा आनन्द आता। नीला टिटमाइस ध्यान जमा कर जाल की ओर देखता,—मानो उसका गहरा अध्ययन कर रहा हो। फिर, जाल में छिपे खतरे का मन ही मन अनुभव कर, कनी काटता हुआ सावधानी से आगे बढ़ना और छड़ों के बीच फंसे बीज को बड़ी सफाई से निकाल लेता। टिटमाइस पक्षी बड़ी चतुराई दिखाता, लेकिन उसका मन चंचल होता और हर चीज़ में चोंच मारने की उसकी आदत उसे ले बैठती। गम्भीर और भारी-भरकम बुलफिंच पूरे बुद्धूपन का परिचय देता। गिरजे की ओर जा रहे बस्ती के मोटे-ताज़े लोगों की भांति वे मेरे जाल में झुंड आ फंसते। जब मैं उन्हें बन्द करता तब वे चौंक उठते, भारी अचरज के साथ अपनी आंखों को टेरते और अपनी मोटी चोंच से मेरी उंगलियों को नोचते। ग्रासबिल बड़ी शान्ति और शान से आता, और जाल में फंस जाता। निराला फिंच अपने निरालेपन का परिचय देता,—जाल के सामने आकर वह रुक जाता, चौड़ी दुम के टेक लगाकर अपने बदन को पीछे की ओर तान लेता, और अपनी लम्बी चोंच को अलस भाव से इधर-उधर घुमाता। इसी मुद्रा में बैठा काफी देर तक वह अपनी चोंच को हिलाता रहता। टिटमाइस का पीछा करना उसकी आदत है। इसके लिए वुडकपटर्ड की भांति, वह वृक्षों के तनों के ओर-छोर नापता। भूरे रंग का यह छोटा-सा पक्षी, न जाने क्यों, मुझे बड़ा मनहूस मालूम होता, —एकदम अकेला, जिसके पास कोई नहीं फटकता, न ही वह

किसी को फटकने देता। मैगपाई की भांति वह भी छोटी-छोटी चमकीली चीजे चुराता, और उन्हें अपने कोटर में छिपा कर रखता।

दोपहर तक मै अपना काम समाप्त कर लेता और जंगलों तथा खेतों में से होकर घर लौटता। मै सड़क का रास्ता नहीं पकड़ता जो गाँवों और वस्तियो के वीच से गुजरती थी। मुझे डर था कि गाँव के लड़के मुझपर टूट पड़ेंगे, मेरे पिंजरों को छीन लेंगे और मेरे जाल को तोड़ डालेंगे। एक वार ऐसा हो भी चुका था और कटु अनुभव के वाद मैंने यह सावधानी वरतना सीखा था।

घर पहुँचते-पहुँचते सांझ हो जाती। वदन थक कर चूर-चूर हो जाता और पेट मे चूहे कूदने लगते। लेकिन मै उदास नाम को भी न होता। यह चेतना मेरे मन को भरा-पूरा रखती कि मै कुछ पाकर लौटा हूँ, नयी शक्ति और नयी जानकारी मैंने प्राप्त की है। इस नयी शक्ति के सहारे मै नाना के ताने-तिशनो को इस तरह सुनता मानो कुछ हुआ ही न हो। वह मेरी हँसी उड़ाना चाहते, लेकिन सफल न हो पाते। अन्त मे, गम्भीर स्वर में कहना शुरू करते:

"वस वहुत हो चुका! मेरी वात मानो और अपनी यह खुरा-फात अव वन्द करो! चिड़िया पकड़ कर दुनिया मे आज तक कोई आगे नही वढ़ा। अपने लिए कोई ठिकाना खोजो और दिमाग की समूची शक्ति से एक जगह जम कर काम करो। आदमी का जीवन इसलिए नही है कि उसे ओछी वातो मे नष्ट किया जाए। वह खुदा का वीज है और अच्छी फसल पैदा करना उसका काम है। आदमी सिक्के की भांति है। अगर उसे ठीक ढग से काम मे लाया जाए तो वह अपने साथ अन्य सिक्को को भी खीच लाता है। क्या तुम जीवन को आसान समझते हो? नही, वह एक कठोर चीज है—वहुत ही कठोर। दुनिया अंधेरी रात के समान है जिस मे हर

व्यक्ति को खुद मशाल बन कर अपने लिए उजाला करना होता है। खुदा ने हम सभी को समान रूप से दस उगलियां दी है, लेकिन हर आदमी दूर-दूर तक अपने पजो को फलाना और सभी कुछ दबोच लेना चाहता है। तुम्हे मजबूत बनना होगा, अगर मजबूत नही बन सकते तो चालाक बनो। कमजोर और नाजू-नाजू लोगो के लिए इस दुनिया में कोई जगह नही है, वे कभी सफल नहीं हो सकते। लोगो के साथ मेल-जोल रखना, लेकिन यह कभी न भूलना कि तुम अकेले हो। बात सबकी सुनना, लेकिन विश्वास किसी पर न करना। केवल अपनी आखो पर भरोसा रखना। लेकिन हर चीज की ताक झाक करते रहना भी मूर्खता की निशानी है। अपना मुंह बन्द रखना। यह जो नगर, गाँव और बस्तियां देखते हो, इनका निर्माण जुबान मे नही, रुपये-पैसो और हथौडे से हुआ है। तुम्हें न तो वख्तीरिया के निवासियो की भाति बनना है, न कालिमको की भाति जिनकी एकमात्र पूजी है उनके सिरो में पडी जुवे और भेड-बकरियो के रेवड।"

रात घिर आती और उनकी बातो का यह सिलसिला फिर भी खत्म न होता। उनके शब्द मुझे जुबानी याद थे। जब वह बोलते तो उनके शब्दो की ध्वनि तो मुझे अच्छी लगती, लेकिन उनके अर्थ के बारे में सदिग्ध रहता। वह जो कुछ कहते, उसे सुनकर एक ही बात समझ मे आती। वह यह कि दो ताकते है जो जीवन को कठिन बना रही है खुदा और लोग।

खिडकी के पास बैठ कर, अपनी चपल उँगलियो से तकली को फिर्की की भाति नचाते हुए, नानी बेल बूटा के लिए सूत कातती। नाना के शब्दो को कुछ देर वह चुपचाप सुनती, फिर एकाएक कह उठती

"खुदा की माँ मरियम चाहेगी तो सब हो जाएगा, नहीं तो कुछ नहीं होगा।"

"यह क्या?" नाना चिल्लाने।—"खुदा की बात तुम करती हो? जैसे मैं खुदा को पहचानता ही नहीं? खुदा मेरे लिए बेगानी चीज नही है। मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ। क्या तुम समझती हो कि इस दुनिया में जो इतने बेवकूफ दिखाई देते है, उन्हे भी खुदा ने ही बनाया है? सिर के बाल पक गए, पर तुम्हे अभी अकल नही आई!"

...सैनिको और कजाको को जब मैं देखता तो मुझे ऐसा मालूम होता मानो दुनिया मे इनसे ज्यादा खुश और सुखी और कोई नहीं है। उनके जीवन मे कोई पेच नही था, और खुशी जैसे बिखरी पडी थी। सुबह की सुहानी फजा में वे आते, हमारे घर के सामने खाई के उस पार वाले मैदान में इधर-उधर बिखर जाते और उनका मजेदार खेल शुरू हो जाता जिसका सिर-पाव कुछ भी मेरी समझ मे न आता। शरीर के वे मजबूत थे, फुर्ती उनमें कूट-कूट कर भरी थी। सफेद कमीजें पहने, हाथो में राइफलें ताने, शोर मचाते वे मैदान मे दौड़ते, खाई मे छिप जाते, बिगुल की आवाज सुनते ही फिर दौड कर बाहर निकल आते और 'हुर्रा' की आवाजो तथा फौजी ढोल की कपा देने वाली धमाधम के साथ, सीधे हमारी गली की ओर रुख किए, तेजी से बढने लगते। उन की सगीने चमचमाती, मानो अगले ही क्षण वे हमारे घर पर टूट पड़ेगी, और सब कुछ उलट-पुलट कर उसे मल्बे का एक ढेर बना देंगी।

मैं भी जोरो से 'हुर्रा' की आवाज करता और उनके पीछे-पीछे दौड़ता। फ़ौजी ढोलों की जानसोख आवाज सुन मैं भन्ना उठता, और तोड़-फोड़ करने की भावना हृदय मे इतने जोरो से

सिर उठाती कि उस पर काबू पाना मुश्किल हो जाता, — किसी बाड़े को खींच कर गिराने या किसी को पकड़ कर पीटने के लिए मन उतावला हो उठता।

अवकाश के क्षणों में वे मुझे मार्गोर्का तम्बाकू पिलाते, और अपनी भारी राइफलों से खेलने देते। कभी-कभी उनमें से कोई मेरे पेट में अपनी संगीन की नोक गड़ा देता और गुस्से में भौंहों को चढ़ा कर बनावटी आवाज में चिल्लाता

"अभी बींध दूंगा तिलचट्टे को!"

संगीन धूप में चमचमा उठती और उसमें जिन्दा सांप की भांति बल पड़ने लगते, ऐसा मालूम होता कि बस, अब काम तमाम हुआ चाहता है। मेरा हृदय कांप उठता। भय और उल्लास, दोनों का ही मैं अनुभव करता।

मोरदोविया निवासी एक लड़के ने जो ढोलची था, मुझे ढोल बजाने की मुगरियां पकड़ना सिखाया। पहले उसने मेरे हाथों को अपने हाथों में लेकर इतने जोरों से भींचा कि मैं कराह उठा। फिर ढीली पड़ी मेरी उंगलियों में उसने मुगरी थमा दी।

"हां, अब बजाओ — एक बार, और फिर एक बार, और एक बार फिर! टा-टा टा-आ आ-आ-आ-आ! दाहिनी मुगरी इस हाथ से, और बाईं जोरों से — टा-टा-टा-आ-आ-आ-आ!' चिड़िया ऐसी गोल आंखों से वह मुझे घूरता और कड़े हुए गले से गरजता।

कवायद समाप्त होने तक मैं भी सैनिकों के साथ-साथ दौड़ता, फिर उनके साथ उनके नगर में मार्च करता हुआ उनकी बैरकों तक आता, उनके जोरदार गाने सुनता और उनके दयालु चेहरों को एकटक देखता रहता था। मुझे, सब के सब अभी-अभी टकसाल से निकले सिक्कों की भांति एकदम नये और उजले मालूम होते।

आदमियों का यह समूह एक रंग और एक चाल से जब बाजार में उमड़ता हुआ गुजरता तो हृदय खुशी से छलछलाने लगता और मन इनके साथ बहने के लिए उतावला हो उठता—जैसे कोई नदी के साथ बहे, उसमें समा जाने को जी ललकता—जैसे कोई जंगल में समा जाए। डर इन लोगों को छू तक नहीं गया था। साहस के साथ हर चीज का ये सामना करते थे, कुछ भी ऐसा नहीं था जो इनके लिए अजेय हो, जिसे वे चाहें और प्राप्त न कर सकें, और सबसे बढ़ कर यह कि वे नेक दिल और सीधे-सच्चे थे।

लेकिन एक दिन, अवकाश के क्षणों में, एक नान-कमीशन्ड युवक अफसर ने मुझे एक मोटी-ताजी सिगरेट भेंट की।

"यह लो, सिगरेट पियो। यह एक बहुत ही बढ़िया किस्म की सिगरेट है। तुम्हारे सिवा अगर और कोई होता तो उसे कभी न देता। तुम इतने अच्छे हो, इसीलिए मैं तुम्हें यह सिगरेट दे रहा हूँ।"

मैंने सिगरेट सुलगाई। वह पीछे हट गया। एकाएक सिगरेट से लाल लपट निकली और मैं चौंधिया गया—मेरी उँगलियाँ, नाक और भौंहें झुलस गयीं। भूरे तेजाबी धुएं ने नाक में वह दम किया कि छींकते-खांसते हुलिया तंग हो गया। आँखों के चौंधिया जाने और घबराहट के मारे मैं उसी एक जगह खड़ा हाथ-पाँव नचा रहा था। सैनिक मेरे चारों ओर घेरा बनाए खड़े थे, और खूब खिलखिला कर हँस रहे थे। मैं घर की ओर चल दिया। पीछे से उनके हँसने, सीटियाँ बजाने और गडरियों ऐसा हंटर फटकारने की आवाज आ रही थी। मेरी उँगलियों में जलन थी, चेहरे में काँटे से चुभ रहे थे, और आँखों से आँसू बह रहे थे। लेकिन इस पीड़ा से भी अधिक जानलेवा, अधिक परेशान करने वाली, चीज

एक-एक तार तना हुआ। शान्त दोन या नीली दान्यूव के बारे में वह कोई कोमल और उदास गीत गाता। प्रातः पक्षी की भांति वह अपनी आँखे बद कर लेता जो उस समय तक गाता रहता है जब तक कि वह निष्प्राण हो कर धरती पर नहीं गिर पड़ता। उसके सलूके का गला खुला रहता जिसमे से उसकी हसुली की हड्डी तपे हुए ताम्बे या ब्रोंज की छड़ की भाति दिखाई देती। सच तो यह है कि उसका समूचा शरीर ब्रोंज की ढली हुई प्रतिमा मालूम होता। आँखे उसकी मुँदी थीं। उसके हाथ लहरा रहे थे, पतली टाँगो पर टिका उसका शरीर इस तरह डौल रहा था मानो उसके पाँव के नीचे की धरती गहरी उसाँसे ले रही हो। उसे देखकर ऐसा लगता मानो उसका मानवीय शरीर विलय होकर किसी गड़रिये की बाँसुरी, किसी बिगुल वादक का हौर्न, बन गया हो। मेरी कल्पना में प्रातः पक्षी का चित्र मूर्त हो उठता और मुझे ऐसा मालूम होता कि वह अभी पीठ के बल धरती पर गिर पड़ेगा और प्रातः पक्षी की भाति ही निष्प्राण हो जाएगा। सच तो यह कि अपने-आप में उसका कुछ शेष रहा भी नहीं था। उसका समूचा हृदय, उसकी आत्मा, उसकी शक्ति का एक-एक अणु, गीत के स्वरो के साथ मिलकर एकाकार हो गया था।

उसके साथी उसके इर्द-गिर्द खड़े थे, हाथों को अपनी जेबो मे डाले या कमर के पीछे किए। उनकी आँखे, बिना पलक झपकाए, उसके ब्रौंज चेहरे और लहराते हुए हाथों पर टिकी थीं, और गिरजे के कोरस-दल की भाँति वे खुद भी शान्त और पुर-असर ढंग से गा रहे थे। ऐसे क्षणो मे वे सब — जिनके दाढी थे वे और जो दाढी विहीन थे वे भी — समान रूप से देव-प्रतिमाओं की भाति मालूम होते,—उतने ही अलग, उतने ही भयोत्पादक। और गीत के स्वर, किसी राजपथ की भाति, दूर-दूर तक फैल जाए, प्रशस्त

और युगो-युगो का अनुभव अपने हृदय में समेटे हुए। गीत के स्वर रोम-रोम में समा जाते। न दिन का ज्ञान रहता, न रात का। न बुढापे की सुध रहती, न बचपन की। सभी कुछ भूल जाता। गायका की आवाजें निस्तब्धता मे डूब जाती तो घोडों की गहरी उसाँस सुनाई देती मानो उन्हे उन दिनो की याद सता रही हो जब कि वे दूर-दूर तक फैले स्तेपी मैदानो में आजादी से घूमते थे। और शरद् रात्रि के आगमन की अनवरत गतिशीलता गुम हो जाती, खेत-खलिहानो में उसकी पदचाप सुनाई देती। भीतर से एक उबाल-सा उठता और भावनाओ का यह भरा-पूरा और असाधारण उभार, देश की धरती और उसपर बसने वाले लोगो के प्रति मौन अनुराग की यह व्यापक भावना, मेरे हृदय म उमडती घुमडती और बाहर निकलने के लिए छटपटाने लगती।

मुझे ऐसा मालूम होता कि तपे ताम्बे-सा नाटे कद का यह बजाक निरा मानव नही है, वरन् वह मानव से बडा और उससे कही अधिक महत्वपूर्ण है — वह मानव जीवधारियो से अलग और उनसे ऊपर, लोककथाओ का जीव है। मै उससे बोलना चाहता, पर मेरी आवाज साथ न देती। वह मुझे कुछ पूछता तो मेरा चेहरा खिल उठता, लेकिन मेरे मुह से एक शब्द न निकलता, उसके सामने मुह खोलने का साहस न होता। मै उसे केवल देखता, देखता रहता, और उसका गाना सुनना चाहता। और इसके लिए, एक वफादार कुत्ते की भाति, मै उसके साथ दुनिया-भर में घूमने का तैयार था।

एक दिन मने उसे अस्तबल के सामने में खडा देखा। वह अपनी उंगली में चादी की एक सादी अगूठी पहने था, और बडे ध्यान से उसे देख रहा था। उसके होठ हिल रहे थे, और उसकी

छोटी-छोटी लाल मूछें बल खा रही थीं। उसके चेहरे पर उदास और चोट खाया हुआ-सा भाव मटरा रहा था।

इसके बाद, एक दिन अंधेरी सांझ के समय स्ताराया मेन्नाया स्क्वायर के शराबखाने में मैंने उसे देखा। शराबखाने का मालिक गानेवाली चिड़ियों का बेहद शौकीन था, और मुझसे अक्सर चिड़ियाँ खरीदा करता था। इस समय भी कुछ चिड़ियाँ लेकर मैं उसके पास गया था।

कज़ाक बार के निकट, तन्दूर और दीवार के बीच, बैठा था। उसके साथ एक मोटी थलथल स्त्री भी थी जो आकार-प्रकार में क़रीब-करीब उससे दूनी थी। उसका गोल-मटोल चेहरा सिन्दूर की भांति चमक रहा था और वह बड़े चाव और लगन से उसकी ओर देख रही थी, जैसे माँ अपने बच्चे की ओर देखती है। वह नशे में धुत्त था और उसके पाँव मेज के नीचे बराबर कुलबुला रहे थे। उसने जरूर ही स्त्री को ठोकर मारी होगी क्योंकि सहसा वह चौंक उठी। भौंहे सिकोड़ी और धीमे स्वर में कहा:

"यह क्या हरकत है?"

कज़ाक ने बड़ी मुश्किल से अपनी भौंहें उठाई, फिर तुरत ही उन्हे गिरा लिया। गर्मी के मारे बुरा हाल था। उसने अपने कोट और कमीज के बटन खोल डाले और उसकी गरदन नंगी हो गई। स्त्री ने रुमाल सिर से खिसका कर अपने कधों पर डाल लिया, फिर अपनी हृष्ट-पुष्ट सफेद बाँहो को मेज पर रखा और दोनों हाथों को मिलाकर इतने जोर से भींचा कि उंगलियों के पोरवे लाल पड़ गए। जितना ही अधिक मै उन्हे देखता, उतना ही अधिक वह कज़ाक मुझे एक ऐसे लड़के की भांति मालूम होता जिसे उसकी नेक माँ के प्यार ने बिगाड दिया है। वह उसे प्यार से झिड़कती, लेकिन वह घुन्ने की भांति चुप रहता। उसकी सही और जायज झिडकियो के जवाब मे उससे कुछ नही बनता।

सहसा वह खड़ा हो गया, मानो किसी बिच्छू ने उसे काट लिया हो। अपनी टोपी को उसने माथे पर खींचा और थपथपाकर उसे खूब जमा लिया। इसके बाद, कोट के बटन बन्द किए बिना ही, वह दरवाज़े की ओर बढ़ा। स्त्री भी उठ खड़ी हुई।

"हम अभी लौट आएंगे, कुज़मिच," स्त्री ने शराबखाने के मालिक से कहा।

जब वे जाने लगे तो 'शराबखाने के जीवों' ने उन्हें लक्ष्य कर हंसना और फब्तियाँ कसना शुरू किया। उनमें से एक गंभीरतापूर्वक बोला

"माफ़ी जब लौटेगा तो देखना किस तरह इसका भुर्ता बनाता है।"

मैं भी उनके पीछे-पीछे चल दिया। वे अंधेरे में मुझसे कोई बीस एक कदम आगे चल रहे थे। कीचड़-भरे स्क्वायर को पार कर वे सीधे वोल्गा के ऊंचे तट की ओर चल दिए। मैंने देखा कि कज़ाक अपने लड़खड़ाते पाँवों से चल नहीं पा रहा है, और उसे संभालने के प्रयत्न में खुद स्त्री भी डगमगा जाती है। उनके पाँवों के नीचे कीचड़ के पिचरने की आवाज़ तक सुनाई दे रही थी। स्त्री, दबे स्वर में, उससे बार-बार पूछ रही थी

"आखिर तुम जा कहाँ रहे हो? बोलो न, तुम कहाँ जा रहे हो?"

मैं भी उनके पीछे-पीछे कीचड़ में चलने लगा, हालाँकि मेरा रास्ता दूसरा था। जब वे बांध के छोर पर पहुंचे तो कज़ाक रुक गया, एक कदम पीछे हटा और फिर, एकाएक उस स्त्री के मुँह पर भरपूर हाथ से तमाचा मारा। स्त्री भय और अचरज से चीख उठी

"ओह, यह तुम्हें क्या सूझी?"

मै भी चौंक उठा, और लपक कर उसके पास पहुँचा। लेकिन कजाक ने झपट कर स्त्री को कमर से उठा लिया, और रेलिंग के उस पार फेंक दिया। इसके बाद वह खुद भी उसके पीछे-पीछे कूद गया और दोनो, काली गठरियों की भांति गुंथे हुए, घास-उगे ढलुवाँ बाँध पर से नीचे लुढकते चले गए। मुझे जैसे काठ मार गया, और बुत की तरह वहीं खड़ा हुआ तड़प-झड़प की, कपड़ो के फटने और कजाक के हाफने और भरभराने की, आवाज़ सुनता रहा। स्त्री, दबे स्वर में, रह-रह कर बुदबुदा रही थी:

"मै चिल्ला पड़ूंगी! मै चिल्ला पड़ूगी!"

इसके बाद, तिलमिला कर, वह ज़ोरो से चीखी और सब तरफ एक सन्नाटा-सा छा गया। मैने एक पत्थर उठाया और उसे बाँध पर से फेका। सरकडो की सरसराहट के सिवा और कुछ सुनाई न दिया। तभी शराबखाने का काँच का दरवाज़ा झनझना उठा, कराहने-कांखने की आवाज आई जैसे कोई गिर पड़ा हो, और उसके बाद फिर सन्नाटा छा गया, जिसके गर्भ में आतक और डर छिपा हुआ था।

बाँध के अध-बीच ढलवान पर बडे आकार की कोई सफेद-सी चीज़ दिखाई दी। लड़खडाती-सी, सुबकती और भुनभुनाती, वह धीरे-धीरे ऊपर चढ़ रही थी। वह स्त्री थी। भेड़ की भाति, दोनों हाथो और पाँवो के सहारे, वह चढ रही थी। मैने देखा कि उसका बदन कमर तक नगा है। उसकी बड़ी-बडी गोल छातियाँ सफेद दमक रही थी, और ऐसा मालूम होता था मानो उसके तीन चेहरे हो। आखिर वह बाडे से आ लगी, और मेरे निकट बैठ गई। वह गरमाए हुए घोड़े की भाति हाँफ रही थी, और अपने उलझे-बिखरे बालो को सुलझाने का प्रयत्न कर रही थी। उसके सफेद बदन पर धूल-कीचड़ के काले निशान साफ दिखाई देते थे। वह रो रही थी,

जब अपने आँसुओ को पोछती थी तो ऐसा मालूम होता था मानो कोई बिल्ली पजे से अपना मुह साफ कर रही हो।

"हाय राम, तुम कौन हो?" मुझपर नजर पडते ही वह धीमे से चिल्लाई।—"बडे बेशर्म लडके हो! जाओ, भाग जाओ, यहाँ से?"

लेकिन मैं भागा नही। गहरे दुख और अचरज से मेरे पाँव जाम हो गए थे। मुझे नानी की बहन अपनी मौसी के शब्द याद हो आए

"स्त्री की शक्ति के सामने कोई नही टिक सकता। कौन नही जानता कि हौवा के सामने खुदा को भी हार माननी पडी।"

स्त्री उठकर खडी हो गई। कपडो के नाम पर जो कुछ बच रहा था, उससे उसने अपनी छातियो को ढका, और ऐसा करने के प्रयत्न में अब उसकी टागें उघरी रह गई। लेकिन वह रुकी नही, तेज डगो से चल दी। तभी बाध के ढलवान पर कज़ाक चढता दिखाई दिया। उसके हाथ म कुछ सफेद कपडे थ जिन्ह वह हवा में हिला रहा था। धीमे से उसने सीटी बजाई, कान लगा कर सुना, फिर प्रसन्न आवाज़ में बोला

"दारिया! क्या मने तुम्ह पहले ही नही बता दिया था कि कज़ाक जो चाहता है उसे पूरा करके ही छोडता है? तुमने समझा कि मुझे नशा चढा है, और मुझे सभालने के लिए मेरे साथ हो ली। क्या, ठीक है न? लेकिन नही, दारिया! नशे का वह सब नाटक तो केवल तुम्ह चकमा देने के लिए था!"

उसके पाव जमीन पर मज़बती से जमे थे। उसकी आवाज़ में नशे का नही, व्यग का पुट था। नीचे झुक कर स्त्री के कपडो से उसने अपने जूतो की कीचड पोछी, और इसके बाद बोला

"यह लो, अपना लबादा ले जाओ! नहीं जाओगे? शायद, बहुत मान न दिखाओ।"

और फिर जोर से एक गंदा नाम लेकर उसे पुकारा।

मैं वहीं, पत्थरों के एक ढेर पर बैठा, उसकी आवाज सुनता रहा—रात की निस्तब्धता में इतनी ओछी और सूनी, और इतनी दबंग कि हृदय को कुचल कर रख दे।

मेरी आंखों के सामने स्क्वायर की लालटेनों की रोशनियाँ नाच रही थीं। दाहिनी ओर काले पेड़ों के एक झुरमुट के बीच कुलीनवर्ग की लड़कियों के स्कूल की सफेद इमारत दिखाई दे रही थी। अलस भाव से गंदे शब्दों को अपने मुंह से उगलता और सफेद कपड़ों को हिलाता कजाक स्क्वायर की ओर बढ़ा और एक दुःस्वप्न की भांति ओझल हो गया।

नीचे पानी की टंकी के पास पाइप में से भाप निकलने की सनसनाती आवाज आ रही थी। ढलावान पर से खड़खड़ करती एक बग्घी नदी की ओर जा रही थी। चारों ओर सन्नाटा था। व्याकुलता से भरा मैं बाँध के किनारे किनारे चलने लगा। हाथ में एक ठंडा पत्थर था जिसे मैंने कजाक पर फेंकने के लिए उठाया था। सन्त जार्ज विजेता के गिरजे के पास एक चौकीदार ने मुझे टोका। कमर परमें अपना थैला डाले था। उसे देख कर उसका सन्देह बढ़ा और लाल-पीला होकर बोला:

"इसमें क्या भर रखा है और तू है कौन?"

मैंने उसे कजाक का किस्सा बताया। हंसते-हंसते वह दोहरा हो गया।

"तुमने भी क्या किस्सा सुनाया है!" उसने चिल्ला कर कहा।—"भाई मेरे, कजाक ऐसे होते ही है। आव देखा न ताव,

बस सीधे टट पड़े। उनकी तो दुनिया ही अलग है। और वह स्त्री,—सच, उसे भी पूरा छिनाल ही समझो।"

इसके बाद वह फिर हंसते-हंसते दोहरा हो गया और मैं आगे बढ़ चला। मेरी समझ में न आया कि वह इतना हंसा क्या, हँसी की ऐसी क्या बात उसने देखी?

रह-रह कर मैं सोचता, और मेरा हृदय काँप उठता

"अगर वह स्त्री मेरी माँ, या मेरी नानी होती तो ?"

८

बर्फ़ गिरना शुरू होते ही नाना ने पहला काम यह किया कि मुझे फिर नानी की बहिन के यहाँ ले गए। बोले

"घबराते क्यों हो, वहाँ तुम मर न जाओगे।"

लेकिन अपने मालिकों के यहाँ पहुंच कर मुझे वहाँ का जीवन और भी उबा देने वाला मालूम हुआ, खास तौर से इसलिए कि गर्मियों में मैं बहुत ही बहुरंगी और विविधतापूर्ण जीवन बिता चुका था, अनुभवों का भारी भण्डार मेरे पास जमा हो गया था और मैं अपने-आप को अधिक बड़ा और अधिक समझदार अनुभव करता था। लेकिन यहाँ का जीवन अभी भी उसी पुराने ढर्रे पर चल रहा था—पहले की भांति अब भी वे इतना खाते कि उबकाई आने लगती, अपनी छोटी-मोटी मुसीबतों का इतना रोना अलापते कि सुनते सुनते कान पक जाते। बड़ी मालकिन भी हृदय में कड़ुआहट और बदला लेने की भयानक भावना भरे अपने खुदा के दरबार में उसी तरह फरियाद करती। छोटी मालकिन एक और बच्चा जनने के बाद अब कुछ दुबली हो गई थी, लेकिन पेट के पिचक जाने और पहले से अधिक हल्की हो जाने के बाद भी उतनी ही धमाके

और रोब से लपक-झपक करती, समूचे घर में चक्कर लगाती। जब वह बच्चो के लिए कपडे सीने बैठती तो धीमे और लगे-बधे स्वर मे सदा एक ही गीत की कडियाँ गुनगुनाती:

वान्या, वान्या, वानिचका
नन्हा वान्या, प्यारा वान्या
अपनी अम्माँ की गाडी खींचेगा
अपनी अम्माँ का कहना मानेगा!

अगर कोई कमरे में आ जाता तो वह तुरंत अपना गान बंद कर देती और झुझला कर कहती:

"यहाँ क्या करने आए हो?"

मुझे यकीन था कि इसके सिवा वह अन्य कोई गीत नहीं जानती।

साझ होते ही दोनों मालकिने मुझे भोजन करने के कमरे में तलब करती और कहतीं:

"हाँ तो जहाज पर तुम्हारे साथ और क्या-क्या बीती?"

पाखाने के दरवाजे के पास एक कुर्सी पर मै बैठ जाता और उन्हे सारी बाते बताता। इस अनचाहे और अनचेते जीवन के बीच उस जीवन की याद करना मुझे अच्छा लगता। उसका वर्णन करने में मै इतना डूब जाता कि मुझे अपनी मालकिनो की उपस्थिति तक का ध्यान न रहता। लेकिन यह हालत अधिक देर तक नहीं टिकती। उनके लिए जहाज और उसका जीवन एक नयी चीज थी। वे सवाल करती:

"और तुम्हे डर नहीं लगा?"

मेरी समझ में नही आया कि डर से उनका क्या मतलब

"अगर यहीं गहरे में जहाज डावाडोल होकर पानी में गमा जाता तो ?"

मानिक गिलगिनामर हसते और मैं, यह जानने हुए भी कि जहाज़ गहरे पानी में न तो उलटते हैं और न ही डूबते हैं, स्त्रियों के हृदय में यह बात नहीं बैठा पाता। बूढ़ी मालकिन का पक्का यकीन था कि जहाज पानी में तैरता नहीं, बल्कि उसके चप्पू सड़क पर चलने वाली गाड़ी के पहियों की भांति नदी की तलहटी में चलते हैं।

"अगर जहाज लोहे का बना है तो वह तैर कैसे सकता है? कुल्हाड़ी को जब पानी में डालते हैं तो वह तैरती नहीं, एकदम डूब जाती है ।"

"हाँ, कुल्हाड़ी डूब जाती है। लेकिन डोल नहीं डूबता।"

"डोल की तुलना गूब दी। एक तो वह छोटा होता है, और दूसरे खोखला।

स्मूरी का और उसकी पुस्तकों का जब मैंने उनसे जिक्र किया तो उन्होंने सन्देह की नजर से मुझे देखा। बूढ़ी मालकिन को पुस्तकों से चिढ़ थी। दावे से कहती

"धर्मभ्रष्ट और बेवकूफ लोगों के सिवा और कौन पुस्तकें लिखता है?"

"धर्म पुस्तक साल्टर किसने लिखी? और डेविड राजा कौन था?"

"साल्टर बात छोड़ो। यो डेविड राजा ने भी अपने साल्टर के लिए खुदा से माफी माँगी थी!"

"यह कहा लिखा है?"

"यहा मेरे हाथ पर जिसका तमाचा पड़ते ही तुम्हें सब पता चल जाएगा!"

वह जैसे हर वात जानती थी और बड़े विश्वास के साथ हर वात की नुक्ताचीनी करती थी जो कि हमेशा वेहूदा होती थी।

"पेचोरका स्ट्रीट में जो तातार रहता था, वह जब मरा तो मुँह के रास्ते उसकी जान इस तरह निकली जैसे किसीने कोलतार का पीपा उँडेल दिया हो—एकदम काली!"

"जान नहीं, आत्मा," मैं वोला, लेकिन वह व्यंगपूर्वक चिल्लाई :

"तातार के आत्मा नही होती, वेवकूफ!"

छोटी मालकिन भी पुस्तको को हौवा समझती।

"पुस्तके पढ़ना वुरा है, खास तौर से कच्ची उमर में", वह कहती।—"हमारे मोहल्ले मे—ग्रेवेशोक स्ट्रीट की मैं वात कर रही हूँ—एक लड़की रहती थी। काफ़ी अच्छे घर मे उसने जन्म लिया था, लेकिन उसने पुस्तके पढना शुरू किया और पुस्तको का उसे कुछ ऐसा चस्का लगा कि वरावर पढ़ती रहती। अन्त मे, पुस्तके पढते-पढ़ते वह एक पादरी से प्रेम करने लगी। पादरी की पत्नी भला उसे क्यो छोड़ देती? पजे पैने कर वह उसपर टूट पड़ी और खुले आम, ठीक मोहल्ले के वीचोवीच उसकी खूव मिट्टी पलीद की। देख कर मेरी तो रूह कॉप उठी!"

कभी-कभी मैं उन शब्दों और वाक्यो को दोहराता जो मैंने स्मूरी की पुस्तकों मे पढे थे। इन पुस्तको मे से एक मे मैंने पढा था: 'असल वात यह है कि वारूद का किसी एक व्यक्ति ने आविष्कार नही किया, वह उन छोटे-छोटे प्रयोगो और खोज-कार्यो का नतीजा था जिनका लम्वा सिलसिला वहुत पहले ही शुरू हो चुका था।'

न जाने क्यो, ये शब्द मेरी स्मृति मे जम कर वैठ गए। खास तौर से शुरू का टुकड़ा 'असल वात यह है कि' मुझे वहुत

नतीजा इसका यह कि बच्चों की देख-भाल भी ज्यादातर मेरे ही सिर पड़ती। रोज मैं उनके पोतडे धोता और सात दिन में एक बार जन्दार्मी झरने पर जाकर कपड़े पछाडता। अन्य स्त्रियाँ भी वहाँ कपड़े धोने आतीं। वे मेरी हँसी उडाती:

"यह स्त्रियो का काम तुम क्यो कर रहे हो?"

कभी-कभी, चिढ कर, गीले कपडों के कोड़ो से मैं उनकी खबर लेता। कोडे का जवाब वे भी कोड़े से देती। बडा मजा आता और उनके साथ रहकर खूब जी लगता।

जन्दार्मी झरना एक गहरी घाटी में बहता था। यह घाटी ओका नदी में जाकर मिलती थी। घाटी के एक ओर नगर आबाद था और दूसरी ओर एक मैदान था। यह यारीलो मैदान कहलाता था। यारीलो स्लाव जाति का एक पुराना देवता था। ईस्टर के बाद सातवे सप्ताह में बृहस्पति के दिन नगर निवासी इस मैदान मे जमा होते और सेमिक उत्सव मनाते थे। नानी ने बताया कि उनकी युवावस्था तक लोग यारीलो देवता को मानते थे और उसकी पूजा किया करते थे। वे एक पहिए पर कोलतार चढाते और आग लगा कर उसे पहाडी पर से लुढका देते थे। वे खूब शोर मचाते और गीत गाते। अगर पहिया ओका नदी तक पहुँच जाता तो समझते कि यारीलो ने उनका पूजन स्वीकार कर लिया है, ग्रीष्म ऋतु इस बार बहुत बढिया होगी, और घर-घर वसन्त छा जाएगा।

कपडा धोने का काम करने वाली अधिकाँश स्त्रियाँ यारीलो मैदान मे रहती थी। फुर्ती उन सब मे कूट-कूट कर भरी थी, और कतरनी की भाति उनकी जुबान चलती थी। नगर के जीवन की एक-एक बात उन्हे मालूम थी और दुकानदारो, क्लर्कों और अफसरो का, जिनके यहाँ वे कपड़े धोती थी, बहुत ही सजीव ढग से वर्णन करती थी। जाड़ो के दिनों मे जब झरने का पानी बर्फ की

भाँति ठंडा हो जाता तो कपड़े पछाड़ना बड़ा अमानुषिक काम मालूम होता। स्त्रियों के हाथ सुन्न हो जाते और खाल तड़कने लगती। लकड़ी की नांद पर, जिसमें पानी बह कर आता था, झुके-झुके कमर अकड़ जाती। सिर पर लकड़ी की एक गिरी-पड़ी-सी छत थी जो न तो हवा से उनकी रक्षा कर पाती थी, न हिम कणों की बौछारों से। उनके चेहरे लाल और पाला-मारे हो जाते, दुखती हुई उंगलियां काम करने से इन्कार कर देतीं, आँखों में आँसू उमड़ आते, लेकिन उनका चहकना फिर भी एक क्षण के लिए बंद न होता, वे बराबर बतियातीं, ताज़ी-से-ताज़ी घटनाओं के बारे में एक-दूसरे से चर्चा करतीं, और लोगों तथा दुनिया-भर की चीज़ों का निबटारा करने में असाधारण साहस का परिचय देतीं।

बातें करने में नतालिया कोज़्लोवस्काया उनमें सब से तेज़ थी। आयु तीस से कुछ ऊपर, ताज़ी और हृष्ट-पुष्ट, ज़ुबान खास तौर से तेज़ और चटकीली, और खिल्ली उड़ाती सी आँखें। जब वह बोलती तो सबके कान उसकी ओर लग जाते, जब कोई बात सिर पर आ पड़ती तो सब उससे सलाह लेतीं और काम में दक्ष होने के कारण सब उसकी इज़्ज़त करतीं। उसके अलावा उसकी इज़्ज़त करने के कारणों में यह भी था कि वह बहुत ही साफ़-सुथरे और सुघड़ ढंग से कपड़े पहनती थी, और यह कि वह अपनी लड़की को पढ़ने के लिए स्कूल में भेजती थी। दो झोवा भर गीले कपड़ों के बोझ से झुकी, पथ की रपटन से बचती, जब वह आती तो सबके चेहरे खिल जाते और वे पूछतीं।

"तुम्हारी लड़की तो मज़े में है न?"

"हाँ, अच्छी तरह है। पढ़ रही है। भला कर भगवान!"

"मेरी बात गांठ बांध लो, कुछ दिन के बाद बड़े घर की स्वामिनी भी उसके सामने पानी भरती दिखाई देगी!'

"इसीलिए तो मैंने उसे स्कूल मे भर्ती कराया है। वड़े घर की लडकियाँ कोई आसमान से वड़ी वन कर थोडे ही टपकती है? हमारे-तुम्हारे जैसे छोटे लोग ही उन्हे वडा वनाते हैं, हमारा-तुम्हारा खून ही उनके गालो पर लाली वन कर चमकता है। जितना ही तुम पढोगी, उतना ही अच्छी वनोगी। भगवान हमें दुनिया में भेजता है—एकदम कोरे और कच्चे, विल्कुल मूर्ख; लेकिन यह उसकी इच्छा है कि वड़े और समझदार वन कर हम इस दुनिया से विदा लें। अव यह हमारा काम है कि हम कितना पढते-लिखते, और क्या कुछ सीखते-जानते है।"

सहज विश्वास के साथ, विना किसी दुविधा के, उसके मुँह से शव्दो की धारा निकलती और सव, एकदम चुप होकर, उसकी वाते सुनती। मुँह पर वे उसकी तारीफ करती, और उसकी पीठ के पीछे भी। उसकी शक्ति, लगन और चतुराई देखकर वे चकित रह जाती। लेकिन उस जैसा वनने की वात किसीको न सूझती। कोहनी तक अपनी बाँहो की हिफाजत करने और अपनी आस्तीनो को भीगने से वचाने के लिए उसने फुलवूट के ऊपरी चमड़े को काट-छाट कर दो खोल वना लिए थे जिन्हे वह अपने हाथों में पहने रहती थी। इन खोलो को देख सभी ने उसकी सूझ-वूझ की सराहना की, लेकिन अन्य किसीने अपने लिए ऐसे खोल नही वनाए, और एक दिन जव मै ऐसे ही खोल अपने हाथो मे डाल कर पहुंचा तो सवने मेरा मजाक उडाया।

"हो-हो-हो, महरिया की नकल करता है!" उन्होंने छीटा कसा।

और वे उसकी लड़की के वारे में कहती:

"माना कि पढ-लिख कर खूव शटर-पटर करेगी! लेकिन इससे क्या, यही न कि पढी-लिखी शाहजादियो की संख्या में एक

की बढती और हो जाएगी। और कौन जाने, वह अपनी पढाई पूरी न कर सके, भगवान इससे पहले ही उसे उठा ले। जीवन का क्या भरोसा, आज है और कल नहीं!"

"पढे-लिखों का जीवन भी कौन सुखमय होता है? वासीलोव की लडकी को ही लो,—सालों तक पढती रही। लेकिन नतीजा क्या निकला? एक स्कूल में मास्टरनी बन गई। अब तुम्ही सोचो, स्कूल में मास्टरनी बनने का मतलब है जवानी में बुढापा!"

"ऐसी पढाई-लिखाई किस काम की जो जवानी को ही चाट ले। फिर लडकियों को पढने की जरूरत भी क्या है। अगर तुमम कुछ रस हो तो बिना पढे-लिखे ही चाहे जिसकी नाक पकड कर नचा सकती हो। अगर तुममें कुछ नहीं है तो कोई मुह पर थूकने भी नहीं आएगा!"

"स्त्री की अक्ल उसकी खोपडी में नहीं, कहीं और अड्डा जमाती है!"

अपने ही बारे में जब वे इतनी निर्लज्जता से बात करतीं तो बडा अजीब और अटपटा मालूम होता, और मैं काफी बेचैनी का अनुभव करता। सैनिकों, जहाजियों और खाई-खोदने वालों को स्त्रियों के बारे में दुनिया भर की उल्टी-सीधी बात करते मैं सुन चुका था, और पुरुषों को आपस में डींग मारते और इस बात से अपने पुरुषत्व की माप करते भी मैं देख चुका था कि कितनी स्त्रियों को उन्होंने उल्लू बनाया। उनकी बातों और व्यवहार में 'घाघरा-वर्ग' के प्रति दुश्मनी का भाव साफ झलकता, लेकिन जब कभी भी मैं किसी पुरुष के मुह से उसकी 'विजयों' का वर्णन सुनता तो मुझे लगता कि वह डींग मार रहा है, उसकी बातों में सचाई कम है और दर्प का खुमार अधिक।

कपड़ा धोनेवाली स्त्रियाँ एक-दूसरे से उनके प्रेम के किस्सों का बखान नहीं करती थीं, लेकिन पुरुषों का जब वे ज़िक्र करतीं तो उसमें हँसी उड़ाने और बदला लेने का भाव झलकता जो इस कथन की पुष्टि करता कि स्त्रियाँ एक ऐसी शक्ति है जिसे मात देना आसान नहीं है।

"चाहे तुम कितना ही बच कर भागना चाहो," नतालिया ने एक दिन कहा,—"लेकिन घूम-फिर कर तुम्हें स्त्रियों के तलुवे चाटने पड़ेंगे।"

"तलुवे नहीं चाटेंगे तो और क्या करेंगे!" एक बूढ़ी खूसट ने फटे-बाँस ऐसी आवाज में कहा।—"बड़े-बड़े साधु-सन्यासी तक पूजा-पाठ छोड़ हमारे पीछे भागे चले आते हैं!"

पानी में झागों और बुलबुलों के सुबकने और कपड़ों के पछाड़ने की आवाजों के साथ बातों का यह सिलसिला चलता रहता और घाटी के तल में छिपे इस सड़ांध-भरे स्थल में जहाँ सारी गदगी को साफ कर देनेवाली वर्फ भी अधिक देर तक न टिक पाती, निहायत नगे और कुत्सापूर्ण ढग से जन-सृष्टि के उस महान रहस्य का परदा उघाड़ा जाता जिसके फलस्वरुप सभी जातियाँ और सभी कवीलो का इस दुनिया में आना सम्भव हुआ है। उनकी इन बातो को सुन कर मेरा हृदय काँप उठता, एक ऐसी घवराहट और घृणा मेरे विचारो और भावनाओ मे समा जाती कि प्रेम सम्बन्धी उन सभी बातों और घटनाओ मे मैं वचना और दूर भागना चाहता जो कि इस वुरी तरह मेरे चारो ओर फैली थी और कदम-कदम पर आँखो के सामने आती। प्रेम के वारे मे जव भी मै सोचता, गदे और घिनौने दृश्य आँखो के सामने उभर आते। प्रेम का यह रूप, गदे और घिनौने दृश्यो के साथ उसका यह अटूट गठवन्धन, मेरे हृदय और मस्तिष्क पर छा गया, और काफ़ी दिनो तक छाया रहा।

यह सब होने पर भी घाटी में कपड़ा धोनेवाली इन स्त्रियां के साथ, या बावर्ची घरों में अफसरों के अरदलियों अथवा खोहनुमा घरों में मजदूरों के साथ, जीवन बिताना मुझे कहीं अच्छा लगता। इसके मुकाबिले में घर का बेजान जीवन, बोलने-चालने और सोचने का वही एक घिसा-पिटा और जग-खाया ढर्रा, रोना और झींकना, एक ऐसी बोझिल उदासी का सचार करता कि दम घुटने लगता। मालिकों का जीवन क्या था, खाने-पीने, सोने और बीमार पड़ने का एक कुत्सित चक्र था। आँखें खुलते ही उनकी चराई शुरू हो जाती, दिन-भर चरते और जुगाली करते रहते, रात का फिर सो जाते। गुनाह और मौत उनकी बातों के ओर-छोर थे। मौत से वे बहुत डरते। दिन रात इन्हीं की चक्की पीसते, गुनाहों के बोझ के नीचे कुचले जाने के भय से कांपते और कपाते रहते।

काम से छुट्टी मिलने पर मैं बाहर सायबान में चला जाता और लकड़ियाँ चीरने लगता। इस तरह मैं अकेले रहने का प्रयत्न करता, लेकिन बहुत कम सफल हो पाता। अफसरों के अरदली, अदबदा कर, आ धमकते और अहाते में रहने वाले लोगों के बारे में बातें शुरू कर देते।

इन अरदलियों में से दो, येरमोखिन और सिदोरोव, अक्सर मेरे पास आते। येरमोखिन कलूगा का रहने वाला था। लम्बा कद और कधे झुके हुए, छोटा सिर, आखें धुधली और उसका समूचा शरीर, ऊपर से नीचे, केवल मोटे और मजबूत स्नायुओं का ताना-बाना मालूम होता था। वह काहिल और इतना बेवकूफ था कि उससे तबीयत भन्ना जाती थी। चाल ढाल में वह बेंढगा और सुस्त था। जब किसी स्त्री को देख लेता तो मिमियाने लगता और ऐसा मालूम होता कि अभी उसके पांवों पर गिर कर ढेर हो जाएगा। बावर्चिनों, दाइयों और नौकरानियों पर वह इस तरह आनन-फानन

डोरे डालता कि सभी चकित रह जाते। सभी उससे ईर्ष्या करते, और भालू ऐसी उसकी शक्ति से भय खाते। सिदोरोव तूला का रहने वाला था। दुबला-पतला और कड़ियल। वह हमेशा उदास-सा रहता, दबे हुए स्वर में बातें करता, और सहमा हुआ सा खासता खखारता। उसकी आँखों में जैसे डर झलक मारता और वे हमेशा अंधेरे कोनों की खोज करतीं। चाहे वह फुसफुसा कर बातें करता हो, या एकदम चुप बैठा हो, उसकी आँखें हमेशा सबसे अंधेरा कोना खोजतीं और वहीं चिपकी रहतीं।

"उधर क्या देख रहे हो?"

"हो सकता है, कोई चूहा उधर से निकल आए। मुझे चूहे पसंद हैं—देखने मे छोटे पर कितने चपल और कितने शान्त।"

अरदली मुझसे चिट्ठियाँ लिखवाते, कभी अपनी प्रेमिकाओं के नाम, कभी अपने घरवालों के नाम जो देहातों में रहते थे। मुझे चिट्ठियाँ लिखना अच्छा लगता, खास तौर से सिदोरोव की चिट्ठियाँ लिखने में मेरा खूब जी लगता। हर शनिवार के दिन वह अपनी बहन के नाम चिट्ठी लिखाता जो तूला में रहती थी।

वह मुझे अपने बावर्चीघर में ले जाता और एक मेज पर मेरी बगल में बैठ जाता। अपने सफाचट सिर को तेजी से खुजलाता और मेरे कानों में फुसफुसाता:

"हाँ तो अब शुरू करो। सबसे पहले तो सिरी नाँमा लिखो: 'मेरी अत्यन्त पूजनीय बहन, भगवान तुम्हें सदा खुश रखे',—अरे तुम तो सब जानते हो कि कैसे-क्या लिखा जाता है। लिख लिया? अच्छा तो अब आगे लिखो: 'तुमने जो रूबल भेजा था सो मुझे मिल गया, लेकिन यह तुमने ठीक नहीं किया, और आगे तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए, और इसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। यहाँ किसी चीज की जरूरत नहीं है, मैं बहुत अच्छी तरह से हूँ'—समझ गए न चिट्ठी

में ऐसे ही लिखा जाता है। यो सच पूछो तो कुत्ते भी हम से अच्छा जीवन विताते हैं, लेकिन उसे यह सब बताने से क्या फायदा। हा, तो लिखो 'मैं बहुत अच्छी तरह से हूँ।' अभी उसकी उमर ही क्या है? मुश्किल से चौदह साल की होगी। सारी बात लिख कर उसकी जान साँसत में क्या डालू? हाँ ता लिखो,—लेकिन तुम तो सब जानते हो जैसे लिखा जाता है, वैसे ही लिखकर इसे पूरा कर डालो!"

और वह मेरे कंधे पर झुक गया। उसके मुँह से निकली गर्म साम और बदबू मेरे मुँह पर आ रही थी और वह बराबर फुसफुसा रहा था

"और यह भी लिखो कि वह लडका को अपने पास न फटकने दे, छातिया या बदन के किसी अन्य हिस्से पर उनकी हवा तक न लगने दे। और लिखो कि कभी किसी की मीठी बाता के बहकावे में न आए। अगर कोई मीठी बाते करे तो समझे कि वह उसे उल्लू बना रहा है, और उसका नाश करने का जाल रच रहा है।"

सहसा उनके गले में एक फंदा-सा पड गया, और खाँसी रोकने के भारी प्रयास मे उसका भूरा चेहरा लाल हो उठा, उसके गाल कुप्पा-से हो गए, आँखा में आँसू आए, और कुर्सी पर अपने बदन को दोहरा किए, मेरी बाँह मे टकराता हुआ, वह काँपने लगा।

"लिखूँ कैसे? तुम तो मेरा हाथ हिला रह हो!"

"कोई बात नही," उसने कहा।—"हाँ तो अब आगे लिखो 'बाबू लोगो से खास तौर से बचकर रहना। ये सफेदपोश पहली बार में ही मिट्टी खराब कर देते हैं। व कुछ इस ढग से चिकनी-चुपडी बातें करते हैं कि एक बार अपने जाल में फसाने के बाद तुम्हें वे कगाल बना कर ही छोडेंगे। अगर तुम एकाध रुबल बचा सको तो उसे पादरी के पास जमा करा देना, लेकिन यह देख लेना

कि पादरी ईमानदार हो। अच्छा तो यह होगा कि उसे कहीं जमीन में गाड़ कर छिपा दो। लेकिन यह काम इस तरह करना कि किसी की नजर न पड़े, और जिस जगह गाड़ो वह ऐसी जगह हो कि तुम उसे भूल न जाओ।”

सिर के ऊपर ही एक छोटी-सी खिड़की थी जो बराबर चरमराती और खडखड करती थी। खिड़की की इस आवाज में डूबी उसकी फुसफुसाहट हृदय को बुरी तरह कुरेदने लगती। सिर उठा कर मैं कालिखलगे तन्दूर और बरतन रखने की अलमारी की ओर देखता जिसे मक्खियो के दाग-धब्बो ने रंग रखा था। बावर्चीखाना क्या था, गदगी का घर था। खटमलो की भरमार थी और धुएं, मिट्टी के तेल और जली हुई चर्बी की गध से भरा था। तन्दूर के ऊपर और जलावन के भीतर तिलचट्टे सरसरा रहे थे। मेरा हृदय बोझिल और उदास था, और इस गरीब सिपाही तथा उसकी बहन के दुःख से आँखों मे आसू उमड़ आए थे। मेरी समझ में नही आ रहा था कि इस तरह की परिस्थितियो मे कोई कैसे जीवित रह सकता है?

सिदोरोव की फुसफुसाहट से बेखबर मैं लिखता ही गया। मैंने लिखा कि जीवन कितना बोझिल, कितने दर्द और दु:खों से भरा है। अन्त मे उसने एक ठंडी साँस ली और बोला:

“धन्यवाद। आज तो तुमने ढेर सारा लिख दिया। अब उसे मालूम हो जायगा कि किन-किन चीजो से उसे बच कर रहना चाहिए।”

“बच कर क्यो रहे? नही, तुम्हे किसी भी चीज से डरना नही चाहिए!” मैने झुंझलाकर कहा, हालाकि मै खुद भी कितनी ही चीज़ो से डरता था।

वह हँसा और फिर गले को साफ करते हुए बोला

"तुम निरे चुगद हो! डर से तुम भले ही पीछा छुड़ाना चाहो, लेकिन वह तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेगा। भले लोगों का डर, खुदा का डर, और अन्य बहुत-सी चीजों का डर,—बोलो, कहाँ तक भागोगे?"

जब उसे अपनी बहन का खत मिलता तो वह लपका हुआ मेरे पास आता। कहता

"यह लो, जरा जल्दी से पढ़ सुनाओ।"

और निराशाजनक हद तक छोटे तथा बेकार उस खत को जिसकी लिखावट समझना अच्छा खासा बवाल जान होता, वह मुझसे तीन बार पढ़वा कर सुनता।

वह भला और अच्छे हृदय का आदमी था। लेकिन स्त्रियों के प्रति उसका रवैया भी वैसा ही था जैसा कि दूसरे लोगों का— अनगढ़ और आदिम। मेरी आँखों के सामने नित्य ही द्रुत गति से एक न एक गुल खिलता और चाहे या अनचाहे रूप में मुझे यह सब देखना पड़ता। सिदोरोव स्त्रियों के सामने अपने कठोर सैनिक जीवन का रोना रोता और उनके हृदय में सहानुभूति जगाने का प्रयत्न करता, और ऐसा दिखाता मानो उनके प्रेम में उसकी जान निकली जा रही है। इस तरह उसका जादू चल जाता। बाद में येर्मोखिन से अपनी विजय का जिक्र करते समय मुँह बनाकर वह इस तरह जमीन पर थूकता मानो उसने कोई कड़ुवी गोली खा ली हो। यह देख मुझे ऐसा लगा जैसे किसीने मेरे पर रमय छिड़क दिया हो। मैंने सैनिक से पूछा कि इस झूठ और फरेब के बिना क्या उनका काम नहीं चल सकता, स्त्रियों के साथ इस तरह खिलवाड़ करना, उन्हें एक के बाद दूसरे के हाथों में उछालना, यहाँ तक कि उन्हें मारना-पीटना, कहाँ का न्याय है?

वह धीरे से हँसा और वोला:

"तुम्हारे लिए इन सव वातो की ताक-झाक करना ठीक नही। सभी जानते है कि ये वाते वुरी है, सोलहो आना पाप है। लेकिन तुम अभी वहुत छोटे हो। वड़े होने पर अपने-आप सव समझ जाओगे।"

लेकिन मैने एक दिन उसे ऐसा पकड़ा कि इधर-उधर की वातो मे न टाल कर उसे सीधा और साफ जवाव देना पड़ा। और उसका यह जवाव ऐसा था कि मै उम्र भर न भूला।

"तुम्हारी समझ में स्त्री यह नही जानती कि उसे उल्लू वनाया जा रहा है," आँख मार कर खखारते हुए उसने कहा।—"लेकिन मै कहता हूँ कि वह इसे खूव अच्छी तरह जानती है। वह खुद चाहती है कि उसे उल्लू वनाया जाए। लेकिन यह वात मुँह से कोई नही कहता। सव झूठ की चादर तानते है। उन्हे शर्म मालूम होती है न? असलियत यह है कि कोई .किसीसे प्रेम नही करता, केवल मजे के लिए यह सव करते है। और यह एक वहुत ही शर्मनाक वात है कुछ दिन की कसर और है, वड़े होने पर खुद तुम भी यह सव सीख जाओगे। रात का अधेरा इसके लिए जरूरी है, और अगर दिन हो तव भी किसी अधेरे कोने की जरूरत पडती है—जैसे लकड़ियो के पीछे या ऐसी ही कोई और जगह। आदम और हौवा ने यही तो किया था जिसपर नाराज हो कर खुदा ने उन्हे स्वर्ग से निकाल दिया, और इसीकी वजह से दुनिया मे इतना दु.ख-दर्द फैला है।"

यह सव उसने कुछ इतना खुलकर, सच्चे और उदास हृदय से कहा कि इससे एक हद तक, उसके अपने पापो का भुगतान हो गया। उसके साथ मै जितना घुलमिल गया, उतना येरमोखिन के साथ नही। उससे तो मै घृणा करता था। उसकी नाक मे दम करने और उसका मजाक उडाने से कभी नही चूकता था। मेरा तीर निशाने पर वैठता और येरमोखिन, मेरी जान का दुश्मन वना हुआ,

वहुधा अहाते में मेरे पीछे झपटता, लेकिन उसका वेढगापन साथ न देता और मैं साफ निकल भागता।

"वर्जित फल का चखना ही सारी मुसीवतो की जड है," अन्त में सिदोरोव कहता।

फल वर्जित है, यह तो मैं भी जानता था, लेकिन मानव की सारी मुसीवतो और दुख-दर्द की जड भी वही है, यह वात मेरे गले के नीचे नही उतरती थी। कारण कि सब कुछ होते हुए भी उस असाधारण चमक से मैं परिचित था जो प्रेम में पडे स्त्री पुरुषो की आँखो मे दिखाई देती थी। इस चमक को अनेक वार म देख चुका था। प्रेमी प्रमिकाओ की अद्भुत हार्दिकता, उनकी अद्भुत निश्छलता, मुझसे छिपी न थी। दिनो को मिलते, एक-दूसरे के निकट आते और प्रेम से उत्पन्न उनके उल्लास को जव भी मैं देखता था, मेरा हृदय नाच उठता था।

और यह उन दिनो की वात है जब जीवन और भी अधिक बोझिल, और भी अधिक क्रूर होता जा रहा था, और गाठ-गठीले नाते रिश्तो तथा आपा धापी की उस दलदल से छुटकारा पाने का कोई रास्ता नही दिखाई देता था जो मेरे चारो ओर फैली थी। जो कुछ ह, उसे वदला या और अच्छा वनाया जा सकता है, यह मुझे सपने में भी नही सूझता था। लगता था कि इसमें कोई परिवतन नही होगा, सदा ऐसे ही चलता रहेगा।

इन्ही दिनो सैनिक के मुह से मैंने एक ऐसी घटना सुनी जिससे मेरा हृदय बुरी तरह झनझना उठा। अहाते के घरो में से एक में एक कटर रहता था। वह नगर के सवसे अच्छे दर्जी की दुकान पर काम करता था। वह शान्त स्वभाव का वहुत ही भला आदमी था। वह रूसी नही था। उसकी पत्नी एक छोटी-सी औरत थी—फस्तदम, न कोई वच्चा, न कच्चा। दिन-भर कितावें पढा

करती। अहाते में चाहे कितना ही शोर-गुल मचे, शराबियों के मारे चाहे कितना ही नाक मे दम क्यो न हो, लेकिन वे दोनों बाहर निकल कर कभी झाकते तक नही। न ही उनकी कभी शक्ल दिखाई देती। वे कभी किसीको अपने घर नहीं बुलाते, न ही खुद कहीं जाते, एक रविवार को छोडकर जब थिएटर देखने के लिए वे बाहर निकलते।

पति तडके ही काम पर चला जाता, और गई रात लौटता। उसकी पत्नी जो देखने मे चौदह-पन्द्रह साल की लड़की मालूम होती थी, सप्ताह मे दो बार दोपहर के समय पुस्तकालय जाती। छोटे-छोटे डग भरती जब वह गली मे से गुजरती तो मै उसे देखा करता। ऐसा मालूम होता मानो उसकी टाग मे बाँकपन हो, वह कुछ लगडा कर चलती। अपने छोटे-छोटे हाथो में, बड़ी सुघराई से, वह दस्ताने पहने रहती और उसके हाथ मे स्कूली लडकियो की भाति किताबो का थैला झूलता रहता। चिडिया ऐसा उसका चेहरा था, और छोटी-छोटी चपल आँखे। वह इतनी सुघर और सुन्दर थी कि लगता जैसे चीनी की गुड़िया ताक पर रखी हो। सैनिकों का कहना था कि उसके दाहिने बाजू की एक पसली गायब है, इसी लिए लगड़ा कर चलती है। लेकिन मुझे उसकी टाँगो का यह बाँकपन अच्छा लगता, और साफ मालूम होता कि वह हमारे अहाते मे रहने वाली अफसरो की बीवियो से सर्वथा भिन्न कोटि की जीव है। बावजूद इसके कि वे दिन-भर चहकती थी, लकदक कपड़े पहनती थी और छातियाँ उभार कर चलती थी, वे बूढी और जगखाई सी मालूम होती, उस फालतू सामान की भाति जिसकी कभी जरूरत नही पड़ती और जिसे किसी उपेक्षित कोने मे डाल दिया जाता है।

कटर की छोटी पत्नी को पड़ोसी इस तरह देखते मानो वह कोई अजूबा हो, उसके दिमाग का पेच ढीला पड़ गया हो या अपनी

जगह से खिसक कर दूसरी जगह पहुँच गया हो। वे कहते कि किताबो ने उसे निकम्मा बना दिया है, और वह इस लायक नही रही कि घर का कोई काम कर सके। सारा काम उसका पति ही करता था बाजार से सौदा सुलफ वही लाता था, बावर्चिन को आदेश भी वही देता था। यह बावर्चिन भी किसी गैर देश की रहने वाली थी—भारी-भरकम और नकचढी। उसकी एक आँख सूजी हुई थी जो बराबर बहती रहती थी, और दूसरी आँख की जगह एक गुलाबी से निशान के सिवा और कुछ नही दिखाई देता था। घर की मालकिन का यह हाल था कि वह—पडोसियो के शब्दो में—सूअर मास और गोमांस तक में तमीज नही कर सकती थी। एक दिन वह बाजार गई और गाजर के बजाय मूली खरीद कर खूब बेवकूफ बनी। और कोई होता तो चुल्लू-भर पानी में डूब मरती।

अहाते के जीवन मे उनका—पति, पत्नी और बावर्चिन का—कोई मेल नही था। ऐसा मालूम होता था जैसे वे यो ही, सयोगवश, यहाँ आ टपके हो, आकाश में उडने वाले उन पक्षियो की भाति जो बर्फीली हवा के थपेडो से बचने के लिए खिडकी या रोशनदान के रास्ते मानव-बस्ती के किसी गद और दमघोट घर में घुस कर शरण लेते है।

और इसके बाद ही अरदलियो के मुँह से सुना कि कटर की इस छोटी सी पत्नी के साथ उनके अफसर एक बहुत ही कमीना और बेहूदा खेल खेल रहे है। बिला नागा, करीब करीब हर रोज, वे उसके पास परवाना भेजते, अपने प्रेम और हृदय की सुदर-पुदर का राग अलापते, उसकी खूबसूरती की तारीफ के पुल बाधते। जवाब में वह लिखती कि मुझे बख्शो। इस बात पर वह दु ख प्रकट करती कि उसे लेकर उनके हृदय की यह हालत हुई, और कामना करती कि भगवान उन्हे शीघ्र ही इस रोग से छुटकारा दिलाए। उसका

यह पत्र पाते ही सब अफसर जमा होकर एक साथ उसे पढते, जी भर कर हँसते, और फिर सब मिलकर नया पत्र लिखते जिसपर उनमे से कोई एक दस्तखत कर देता।

यह सब बताते समय अरदली भी हंसने और स्त्री की टाँग खीचने मे पीछे न रहते।

"यह लगडी भी एकदम उल्लू है!" येरमोखिन ने अपनी गहरी गूजती हुई आवाज मे कहा।

"यह उल्लूपन ही तो स्त्रियों की खूबी है," सिदोरोव ने स्वर मे स्वर मिलाया,—"असल मे वे समझती सब है, और चाहती यह है कि उन्हे कोई जबर्दस्ती उल्लू बनाए!"

मुझे यकीन नही हुआ कि कटर की पत्नी अफसरो की इस शरारत से परिचित है, वह जानती है कि वे उसे उल्लू बना रहे है। और मैने उसे खबर देने का निश्चय कर लिया। एक दिन, यह देख कर कि बावर्चिन नीचे तहखाने में गई हुई है, पीछे के जीने से लपक कर मै उसके घर में चढ़ गया। रसोईघर मे मैने प्रवेश किया, वह खाली था। फिर भोजन करने के कमरे मे मै गया। वहाँ कटर की पत्नी दिखाई पड़ी। एक हाथ में वजनदार सुनहरी प्याला और दूसरे मे एक पुस्तक लिए वह मेज पर बैठी थी। डर के मारे उसने पुस्तक अपनी छाती से सटा ली, और धीमे स्वर मे चीख उठी:

"कौन हो तुम? देखो तो, आगस्ता! यहाँ कौन घुस आया है?"

अटपटे से कुछ शब्द मेरे मुँह से निकले और मुझे लगा कि प्याला या किताब दोनो मे से कोई एक चीज अभी मेरे सिर से आकर टकराएगी। अखरोट की लकड़ी की बड़ी-सी कुर्सी पर वह बैठी थी, आसमानी रंग का लबादा उसने पहन रखा था जिसमे नीचे झालर और गले तथा कलाइयों पर बेल लगी थी, और सुनहरी रग के घुघराले बाल उसके कंधो पर लहरा रहे थे। ऐसा

मालूम होता था जैसे गिरजे के राजद्वार की मेहराब के फरिश्ते में से एक यहाँ उतर आया है। पीछे की ओर झुकते हुए उसने कुर्सी की पीठ का सहारा लिया, और अपनी गोल-मटोल आँखों से नजर गड़ा कर मेरी ओर देखने लगी। पहले तो उसकी आँखों में गुस्से की लपक थी, लेकिन शीघ्र ही उसके चेहरे का भाव मुलायम पड़ा, और अचरज-भरी मुसकराहट से खिल उठा।

उसे सब कुछ बताने के बाद मैं वापिस लौटने के लिए मुड़ा।

"जरा ठहरो!" वह चिल्लाई।

प्याला उसने ट्रे में रख दिया, किताब को मेज पर पटक कर उसने अपने दोनों हाथों को मोड़ लिया और बड़े आदमी की भांति भरपूर आवाज में बोली

"तुम भी कितने अजीब लड़के हो! जरा इधर आओ।"

सहमा-सा मैं उसकी ओर बढ़ा। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया, और छोटी ठंडी उंगलियों से उसे थपथपाया।

"क्या, मुझे यह सब बताने के लिए किसी और ने तो तुम्हें नहीं भेजा?' उसने पूछा।—'अच्छा-अच्छा, तुम्हारी बात का मैं यकीन करती हूँ कि तुम खुद अपने मन से ही यहाँ आए हो।"

उसने मेरा हाथ छोड़ कर अपनी आँखों को ढक लिया और फिर धीमे, चोट खाए से स्वर में बोली

"तो वे मुझसे [illegible] के बारे में इस तरह की वाही-तबाही बकते हैं?'

"तुम यह जगह छोड़ क्यों नहीं देती, यहाँ से कहीं और चली जाओ,' बड़ों की भांति मैंने सलाह दी।

"क्यों?"

"वे तुम्हें यहाँ की मार डालेंगे।

यह यहीं ही [illegible] ढंग से [illegible]।

"क्या तुम पढना-लिखना जानते हो?" उसने पूछा।—"क्या तुम्हे पुस्तके पढने का चाव है?"

"मुझे वैसे ही फुरसत नही मिलती।"

"पढने का चाव हो तो फ़ुरसत भी निकाल ही लोगे। अच्छा तो अव जाओ। तुम मुझे खवर देने आए, इसके लिए वहुत-वहुत धन्यवाद!"

उसने अपना हाथ आगे वढा दिया। अंगूठे और उंगली के वीच मे चादी का एक सिक्का चमचमा रहा था। उसके वहुत-वहुत धन्यवाद का यह ठंडा रूप देख कर मैं शर्म से कट गया, लेकिन मुझसे इन्कार करते नही वना। जव मैं नीचे उतरने लगा तो उस सिक्के को जीने के खम्वे पर छोड़ कर चला आया।

गहरी और सर्वथा नयी छाप लेकर मै उसके यहाँ से लौटा। ऐसा मालूम होता था जैसे मेरे जीवन मे एक नयी सुवह का उदय हुआ हो। कई दिन तक मुझपर एक नशा-सा सवार रहा और उस खुलासा कमरे तथा फरिश्ते की भाति आसमानी लवादा पहने कटर की नन्ही पत्नी की याद मे मै झूमता रहा। वहाँ की हर चीज मे एक अनदेखा सौन्दर्य था। उसके पाँव के नीचे फर्श पर एक गुदगुदा सुनहरी कालीन विछा था और जाड़ो का ठिठुरा हुआ दिन, मानो उसके स्पर्श से अपने को गरमाने के लिए, रुपहली खिड़की मे से भीतर झाक रहा था।

मेरा मन उसे एक वार और देखने के लिए ललक रहा था। किताव माँगने के वहाने अगर मै उसके पास जाऊँ तो वुरा न होगा।

मै गया, और उसे ठीक उसी जगह पर वैठे देखा। इस वार भी वह अपने हाथो मे एक किताव लिए थी। लेकिन इस वार उसके चेहरे पर किशमिशी रंग का रूमाल वधा था, और उसकी एक आँख सूजी हुई थी। उसने मुझे काली जिल्द वाली एक किताव उठा

कर दे दी और बुदबुदा कर कुछ कहा जो मैं समझ नही सका। भारी हृदय से मैंने पुस्तक ले ली। पुस्तक में से ग्रेयोसोट और अनीसीड पौधो की सुगध आ रही थी। घर लौटने पर मैंने पुस्तक का एक कागज और साफ ब्लाउज में लपेटा और ऊपर जाकर तिदरी में छिपा दिया। मुझे डर था कि अगर पुस्तक मालिको के हाथ पड गई तो वे उसे नष्ट कर डालेगे।

मेरे मालिक "नीवा" नाम का एक मासिक पत्र मगाते थे यह इसलिए कि पत्र के ग्राहको को पोशाको के नमूने और अन्य चित्रमय उपहार मुफ्त में ही मिलते थे। पत्र को वे पढते कभी नही थे, केवल चित्रो को देखते और इसके बाद, सोने के कमरे में, कपडे रखने की अलमारी के ऊपर उसे डाल देते। साल पूरा होने पर वे उसकी जिल्द बंधवा लेते और "चित्रमय जगत" की तीन जिल्दो के साथ पलग के नीचे छिपा कर रख देते। जब कभी मै सोने के कमरे का फर्श धोता तो ये जिल्दें गदे पानी में सराबोर हो जाती। इनके अलावा मेरा मालिक एक समाचारपत्र भी मगाता था। उसका नाम था "रूसी कोरियर।"

"इन अखबार वालो की बाते भी शैतान ही समझ सकता है," साझ को जब वह समाचार-पत्र पढता तो कहता,—"एकदम दून की हांकते हैं।"

शनिवार के दिन कपडे सुखाने के लिए जब मैं ऊपर गया तो मुझे किताब का ध्यान हो आया। मैंने उसे बाहर निकाला, उसका कागज खोला और शुरू की पक्ति पर नजर डाली

"घर भी इन्सानो की भाति होते हैं, इस मानी में कि हर मकान की अपनी गध रूप रग, अपना एक आकार-प्रकार होता है।" इस एक पक्ति की सचाई ने मुझे स्तब्ध कर दिया। मेरे आगे

पढने में मै इस हद तक पूर्णतया डूब गया कि जब दरवाजे की घंटी बजी तो एकाएक मैं समझ नहीं सका कि उसे कौन बजा रहा है, और किस लिए बजा रहा है।

मोमबत्ती करीब-करीब सारी जल चुकी थी और मोमबत्तीदान में जिसे मैंने आज सुबह ही चमकाया था, पिघले हुए मोम की परत जमी थी। देव-प्रतिमा का दीया जिसे सदा चेतन रखना मेरा काम था, दीवट से खिसक कर बुझ गया था। अपने अपराध के चिन्हों को छिपाने के लिए मैंने रसोईघर में लपक-झपक शुरू की, किताब को मैंने तन्दूर के नीचे खिसका दिया, और देव प्रतिमा के दीये को ठीक करने लगा।

"बहरे हो क्या? घंटी की आवाज सुनाई नही देती?" सोने के कमरे में से भाग कर आते हुए आया चिल्लाई।

मैं सदर फाटक की ओर लपका।

"क्या सो रहा था?" मालिक ने कडे स्वर में कहा। उसकी पत्नी भी चिचियाई कि मेरी वजह से बाहर खडे-खडे उसे ठंड ने जकड लिया। उसकी माँ ने भी लगे हाथ डाटना-डपटना शुरू कर दिया। रसोईघर में पाव रखते ही जली हुई मोमबत्ती पर उसकी नजर पडी और उसने सवाल किया कि मैं क्या कर रहा था।

मेरी सिट्टी पिट्टी गुम हो गई। मुझसे बोला नहीं गया और भय के मारे मेरी जान सूख गई कि कहीं उसके हाथों में किताब न पड जाए। बुढिया ने चिल्ला कर सारा घर सिर पर उठा लिया कि अगर मेरा दिमाग ठीक न किया गया तो मैं एक दिन सारा घर जला कर राख कर दूगा, और जब मेरा मालिक और उसकी पत्नी खाना खाने के लिए बैठे तो वह बोली

"देखा न, इसने सारी मोमबत्ती जला डाली। इस तरह तो एक दिन यह आग कर जला डालेगा।"

खाना खाते समय मुँह के साथ-साथ उनकी जुबान भी चलत
रही और मुझे भला-बुरा कहने में उन्होंने कोई कसर नही छोड़
जाने अनजाने मेरे सभी गुनाहों का उन्होंने जिक्र किया और मु
चेताया कि मेरा अजाम बुरा होगा। लेकिन मै जानता था
उनकी सारी डाट-फटकार के पीछे न तो कोई बुरी भावना है
न भली, बल्कि इस तरह वे केवल अपने जीवन का बोझा कु
हल्का करते है। और यह देखकर मुझे बड़ा अजीब लगा कि पुस्त
के पात्रो के मुकाबले में वे कितने तुच्छ और कितने बेहूदा माल
होते है!

जब वे खाना खा चुके और उनके पेट गले तक भोजन
अट गए तो अलसाए हुए से उठे और सोने के लिए चल दि
बूढी मालकिन, अपनी कुत्सित शिकायतो से कुछ देर तक भगव
की नाक मे दम करने के बाद, तन्दूर पर चढ कर चित्त हो ग
उसके सन्नाटा साधते ही मैंने तन्दूर के नीचे से अपनी कित
निकाली और खिडकी के पास जा बैठा। उजली रात थी, आक
में पूरा चांद चमक रहा था, लेकिन पुस्तक के अक्षर इतने छो
थे कि उन्हे पढना मुश्किल था। हृदय में पढने की ललक इत
जोरदार थी कि उसे दबा न सका। बरतनो के खाने में से मैंने ए
ताम्बे की तश्तरी निकाली, और चाद की किरनों का उस
जो अक्स पडा, उससे पुस्तक के पन्नों को चमकाने की कोशि
की। लेकिन यह कोशिश और भी बेकार रही, चमकने के बज
पन्ने और भी धुधले दिखाई देने लगे। इसके बाद मै कोने मे
बेंच पर खड़ा हो गया और देव-प्रतिमा के दीये की रोशनी
पढने लगा। जब थकान के मारे टाँगे जवाब देने लगी तो मै ब
बेंच पर पड कर सो गया। अन्त मे बूढी मालकिन की चिल्ला
और घूसों ने मुझे जगा दिया। केवल रात का लबादा पहने,

पाँव, वह वहाँ खडी गुस्से में सिर झटक रही थी। उसका चेहरा गुस्से म तमतमा रहा था, मेरी पुस्तक वह अपने हाथ में लिए थी और उसी मे मेरी गरदन और कधा पर प्रहार कर रही थी।

"बस भी करो माँ, क्यो चिल्लाए जा रही हो?" वीक्तर ने अपने तख्ते पर लेटे-लेटे कहा।—"तुम्हारी वजह से इस घर में रहना मुश्किल है।"

और मुझे अपनी पुस्तक की फिक्र थी। म सोच रहा था कि अब उसकी खैर नही, बिना फाडे बुढिया दम न लेगी।

अगले दिन, नाश्ते के समय, मेरी पेशी हुई।

"यह पुस्तक तुम कहाँ से लाए?" मालिक ने कडे स्वर में सवाल किया।

स्त्रियाँ भी मुझपर चिल्लाने में पीछे नही रही। वीक्तर ने पुस्तक को उठा कर सूघा और चमक कर बोला

"वाह, इसमें से तो इत्र की गध आती है।'

जब मैंने उन्हे बताया कि यह पुस्तक मैंने पादरी से ली है तो उनकी आँखें फटी-की फटी रह गई, पुस्तक को उलट-पुलट कर उन्होंने देखा और उपन्यास पढने वाले पादरी पर झुझलाहट उतारी।

इससे उनका गुस्सा कुछ हल्का पडा, हालाकि मालिक मुझे फिर भी चेतावनी देना न भूला कि पुस्तकें पढ़ना नुकसानदह और खतरनाक है। बाला

"और वे लाग भी तो पुस्तकें ही पढ़ते थे जिन्होंने रेल की पटरियाँ उटा कर "

"तुम पागल तो नही हो गए।" भय स काँप कर पत्नी ने टोका।—"लडके के दिमाग में भला ऐसी बात क्या डालते हो?"

मोंतपिन की पुस्तक लेकर म सैनिक के पास पहुचा और जो कुछ बीता था, सब उसे कह सुनाया। बिना कुछ कहे सिदारोव

ने पुस्तक को अपने हाथ में ले लिया, छोटा-सा वक्स खोल कर उसने एक साफ़ तौलिया निकाला, पुस्तक को उसमें लपेटा और फिर उसे वक्स में छिपा दिया।

"उनकी पर्वाह न करो। यहाँ आकर पढ़ लिया करो। मैं किसी से नहीं कहूँगा," उसने कहा,—"और अगर तुम आओ और मैं उस समय नहीं मिलूँ तो कुंजी देव-प्रतिमा के पीछे रहती है। वहाँ से कुंजी लेकर वक्स खोल लेना, और जब तक जी चाहे पढ़ते रहना।"

पुस्तक के प्रति मालिकों के इस रवैये की वदौलत मैं उसे इस तरह अपने हृदय में सजो कर रखने लगा मानो वह कोई वहुत ही महत्वपूर्ण और भयोत्पादक रहस्य हो। यह तथ्य कि "पुस्तकें पढ़ने वाले" कुछ लोगों ने किसी की हत्या करने के लिए रेल की पटरियाँ उड़ा दी थीं, मुझे विशेष दिलचस्प नहीं मालूम हुआ, हालांकि पाप-स्वीकारोक्ति के दौरान में किया गया पादरी का सवाल मुझे अभी तक याद था। न ही मैं उस छात्र को भूला था जिसे मैंने निचले तल्ले के मकान में दो स्त्रियों के सामने पुस्तक पढ़ते देखा था, स्मूरी की याद भी मेरे दिमाग मे ताजी थी जो 'सही ढंग' की पुस्तकों का जिक्र किया करता था। साथ ही गुप्त संगठन वना कर जादू की काली पुस्तकें पढ़ने वाले उन फ्रीमैंसनों की भी मुझे याद थी जिनका जिक्र करते हुए नाना ने मुझे वताया था:

"और उन दिनों जव ज़ार अलेक्सान्दर पावलोविच ईश्वर प्रदत्त शासन की वागडोर अपने हाथों में संभाले थे, ऊँचे कुलीनों ने काली पुस्तक दल के लोगों और फ्रीमैसनों के साथ मिलकर साज़िश का ऐसा जाल विछाया कि रूस की समूची जनता रोम के पोप के चंगुल मे फंस जाती। लेकिन भला हो जेनरल आरकचेयेव का, ऐन वक्त पर आकर उसने सव को गिरफ़्तार कर लिया, और

चक्की पीसने के लिए साइबेरिया भेज दिया। उसने न किसी के ओहदे का ध्यान किया, न किसी की हैसियत का। बस, सब का पुलिन्दा बांध कर साइबेरिया के लिए रवाना कर दिया। साधारण कैदियों की भांति वहां उन्हें भी अपने हाड तोडने पडे, और अन्त में गल-सड कर वे भी उसी तरह खत्म हो गए जैसे कि हर सड़ी गली चीज खत्म हो जाती है।"

'तारों से छिदा अम्बराकुलम' भी मुझे याद था, न ही मैं 'गेरवास्सी' और उन गम्भीर शब्दों को भूला था जिनमें मोरी का कीड़ा कह कर निम्न स्तर के लोगों का मजाक उड़ाया गया था

"ओ मोरी के कीड़ो। न खिलखिलाओ इतना, करो न दम्भ इतना।"

मुझे ऐसा मालूम होता मानो किसी महान रहस्य का भेद मेरी आंखों के सामने खुलने वाला है। इस भाव ने मुझे पूरी तरह ग्रस लिया और मैं इस तरह घूमता मानो मेरे सिर पर कोई भूत सवार हो। पुस्तक के सिवा मुझे और किसी चीज का ध्यान न रहता, और मैं उसे जल्दी से जल्दी खत्म करना चाहता। साथ ही एक भय भी मेरे हृदय को कचोटता रहता। जिस महान रहस्य के खुलने की प्रतीक्षा में मैं इस हद तक उतावला हो उठा था, मुझे डर था कि अरदली के इस बावर्चीघर में कहीं वह नष्ट या खण्डित न हो जाए। रसोइए की पत्नी का यह सब मैं भला किस तरह समझा सकता था?

बड़ी मालकिन गिद्ध ऐसी तेज आंखों से मेरा पीछा करती और इस बात की ताक-झांक में रहती कि कहीं मैं सैनिक के पास न खिसक जाऊं। उसकी जुबान चुप होने का नाम न लेती और वह बराबर चिड़चिड़ाती रहती

"किताबचाट्! जिसे बदमाशी सीखना हो वह बस किताबें पढ़ना शुरू कर दे। उस चुचमुंही को देखो न जो हर घड़ी किताबों में ही डूबी रहती है, किताबों के पीछे जो अब घर के लिए सौदा-सुलफ लेने तक नहीं जा सकती। बस, अफसरों से चोंचे लड़ाया करती है। क्या मैं नहीं जानती कि दिन-दहाड़े वे किस तरह उसके चारों ओर मंडराते हैं, और वह मजे से उन्हें ताका करती है।"

मैं उतावला हो उठा कि चिल्लाकर बुढ़िया का मुँह बंद कर दूँ:

"यह सफेद झूठ है! वह अफ़सरों से कतई चोंचे नहीं लड़ाती।"

लेकिन कटर की पत्नी की हिमायत में मैं जुबान खोलने का साहस नहीं कर सका। मुझे डर था कि कहीं बूढ़ी खूसट यह न भाँप ले कि पुस्तक मैं वहीं से लाया हूँ।

कई दिन तक मैं बेहद परेशान रहा। मैं खोया-खोया-सा रहता और मुझे कुछ सुझाई न देता। रात को नींद न आती और हर घड़ी यही चिन्ता सताती कि द-मोन्तेपिन की अब खैर नहीं है। एक दिन कटर की पत्नी की बावर्चिन ने मुझे अहाते में रोका और बोली:

"वह किताब लौटा दो।"

भोजन के बाद, उस समय जब कि मेरे मालिक झपकी ले रहे थे, मैं कटर की पत्नी के पास पहुँचा, परेशान और बुझा हुआ-सा दिल लिए।

इस समय भी वह वैसे ही बैठी थी जैसे कि मैंने उसे पहली बार देखा था, सिवा इसके कि कपड़े दूसरे पहने थी। सलेटी रंग का घाघरा, काले रंग की मखमली चोली, और गले में नीलम का क्रास। एकदम बुलफिंच पक्षी की याद दिलाती थी।

जब मैंने उसे बताया कि मुझे पुस्तक खतम करने का अवसर नही मिला और यह कि मेरे पढने पर रोक लगा दी गई तो इस बात की चोट और उसे एक बार फिर देखने की खुशी से मेरी आखें उमड आईं।

"कितने गवार लोग है।" अपनी कमान-सी भौहो को चढाते हुए उसने कहा।—"शक्ल से तो तुम्हारा मालिक मुझे बुरा नही लगता। लेकिन इतना परेशान होने की क्या जरूरत है? कोई न कोई रास्ता निकल ही आएगा। और कुछ नही तो मै उसे एक पत्र ही लिख दूगी।"

इससे मेरे होश और भी फाख्ता हो गए। मैंने उसे बताया कि मालिको को असल बात मालूम नही है। मैने उनसे झूठमूठ कह दिया है कि पुस्तक पादरी से लाया हू।

"नहीं, उन्हे पत्र नहीं लिखना,' मैने विनती के स्वर में कहा,—"वे केवल तुम्हारी हसी उडाएगे, और तुम्हे और भी उलटी-सीधी सुनाएगे। हमारे घर में सभी तुमसे चिढते है, तुम्हारा मजाक उडाते है, और कहते है कि तुम बेवकूफ हो और तुम्हारी एक पसली गायब है।"

एक ही सपाटे में मै यह सब कह गया और कहने के तुरत बाद सकपका कर मैंने अनुभव किया कि मेरे शब्दो से उसके हृदय को चोट पहुची होगी। उसने अपना ऊपर का होठ दांतो मे भींचा और हाथ अपने कूल्हे मे इस तरह टकराया मानो वह घोडे की पीठ पर सवार हो रही हो। मैने अपना सिर लटका लिया। अगर धरती फट जाती तो मै उसमें समा कर चैन पाता। लेकिन अगले ही क्षण वह संभल गई और कुर्सी पर अपने बदन को ढीला छोडते हुए खूब खिलखिला कर हसन लगी।

"ओह कितने गवार है ये लोग, परले सिरे के गवार!

लेकिन इसमे मै क्या कर सकती हूँ?" मेरी ओर देखते हुए उसने मानो अपने-आप से ही कहा। फिर एक लम्बी साँस छोडते हुए बोली·—"तुम भी अजीव लडके हो, वहुत ही अजीव!"

उसके पास ही, वरावर में, एक आईना लगा था। आईने मे मेरा अक्स पड़ रहा था: ऊँचे कल्ले, चौड़ी नाक से लैस चौखटा, माथे पर चोट का वड़ा-सा निशान और वेतर्तीवी से हर तरफ विखरे हुए घास की भाति विना कटे वाल। लेकिन 'वहुत ही अजीव लड़के' का चेहरा क्या ऐसा होता है? कहाँ यह 'अजीव लड़का', और कहाँ नन्ही-मुन्नी चीनी की यह सुन्दर गुड़िया...।

"पिछली वार मैने तुम्हे धन दिया था। उसे तुम यही छोड गए, क्यो?"

"मुझे उसकी ज़रूरत नही थी।"

उसने एक साँस भरी।

"तव तो और कुछ भी नही किया जा सकता। अच्छी वात है, अगर वे तुम्हे पढने की इजाजत दे तो आना, मै तुम्हे कितावे दूँगी।"

ताक पर तीन पुस्तके रखी थी। मैने जो अभी लौटाई थी, वह सव से मोटी थी। उदास आँखों से मैने उसे देखा। कटर की पत्नी ने अपना छोटा-सा गुलावी हाथ वढाया और वोली:

"अच्छा तो अव जाओ।"

मैने वहुत सम्हल कर उसके हाथ का स्पर्श किया और तेज़ी से लौट आया।

उसके वारे मे उनकी राय, कौन जाने, ठीक ही हो। शायद वह फूहड़ ही है। अभी-अभी तो उसने वीस कोपेक के एक छोटे से सिक्के को धन कहा था—विलकुल छोटे वच्चे की तरह।

लेकिन उसका यह अल्हडपन मुझे अच्छा लगा।

पुस्तके पढने की अपनी इस अचानक धुन के कारण क्या कुछ मुझे नहीं सहना पडा अपमान के कडुवे घूट मैने पिये, हृदय में लगी चोटो से मैं कराह उठा। इन सबकी जब मैं याद करता हू तो दुख भी होता है, और हसी भी आती है।

जाने कैसे, मेरे मन में यह बात बैठ गई कि कटर की पत्नी की पुस्तके बेहद कीमती है, और अगर बूढी मालकिन ने उन्हे जला डाला तो आफत ही आ जाएगी। यह भय यहाँ तक बढा कि मैने उससे पुस्तके लेने का ख्याल तक अपने दिमाग से निकाल दिया, और उस दुकान से जहा नाश्ते के लिए मैं रोटी खरीदने जाता था, चटख रग की छोटी-छोटी पुस्तके लाना शुरू कर दिया।

दुकानदार बहुत बदनुमा आदमी था—मोटे मोटे होठ, जब देखो तब पसीने में लथपथ, फोडे-फुसिया के दागो और नश्तरो से कटा-फटा थलथल और बेही-सा चेहरा, पीलिया आँखें, और बादी-फूले हाथ जिनके अन्त में ठुकी पिटी-सी उगलियाँ दिखाई देती थी। साझ होते ही हमारे मोहल्ले के आवारा लडको और लडकियो का उस दुकान पर जमघट लगता। मेरे मालिक का भाई भी बीयर पीने और ताश खेलने के लिए हर साझ बिला नागा वहाँ पहुचता। साझ के खाने का समय होने पर मुझे अक्सर दौडाया जाता कि जाकर उसे दुकान से बुला लाओ। जब मैं वहाँ पहुचता तो मुझे अजीब झाँकियाँ दिखाई देती। एक से अधिक बार मैने देखा कि दुकान के पीछे एक छोटे से कमरे में दुकानदार की उनीदी-सी और गोबर दिमाग बीवी बीतर या अन्य किसी युवक छोकरे के घुटनो पर बैठी मटक रही है। दुकानदार की आँखो के सामने ही

यह सब होता, और लगता जैसे वह बुरा नहीं मानता। न ही उसे उस समय बुरा मालूम होता जब उसकी बहन, जो ग्राहकों को निबटाने मे उसका हाथ बटाती थी, सैनिकों और गायकों और अन्य सभी के साथ जो जरा भी इशारा करते, चूमा-चाटी पर उतर आती। दुकान में बहुत ही कम बिक्री का सामान दिखाई देता। पूछने पर मालिक बताता कि अभी नया-नया ही काम शुरू किया है, और दुकान का ढर्रा बैठाने के लिए उसे अभी तक समय नही मिला, हालाकि दुकान का कारबार उसने पतझड के दिनों मे शुरू किया था। वह अपने ग्राहकों को नगी तस्वीरे दिखाता और हर किसी को, जो भी इसकी इच्छा प्रकट करता, गदी तुकबन्दियों की नकल करने देता।

प्रति पुस्तक एक कोपेक किराए के हिसाब से मैने मीशा येवस्तिगनेयेव की पुस्तके पढ डाली जिनमें कोई जान नहीं थी। एक तो यह महगा सौदा था। फिर इन पुस्तको के पढने में कतई मजा नहीं आता था। "गुआक अथवा मौत भी जिसे न झुका सकी", "वेनिस का बाका फ्रान्सिल"; "कबार्डीनियो के साथ रूसियों का युद्ध, या तुर्क सुन्दरी जो अपने पति के साथ दफन हो गई"—इस तरह की किताबे मुझे जरा भी अच्छी न लगतीं और उन्हे पढकर मै अक्सर झुझला उठता। ऐसा मालूम होता, मानो ये पुस्तके मुझे बेवकूफ बनाने की कोशिश कर रही हो। निहायत भोंडी भाषा और एकदम बे सिर-पैर की असम्भव बातें उनमें भरी थी!

"स्त्रेलत्सी", "यूरी मिलोस्लावस्की", "रहस्यमय सन्त", और "तातार घुड़सवार यापांचा"—ऐसी पुस्तके मै अधिक पसद करता, कम से कम मेरे हृदय पर वे कुछ तो छाप छोडती। लेकिन सब से ज्यादा खुशी मुझे होती सन्तो की जीवनियाँ पढ कर। इनमें

गम्भीरता होती, उनकी बातो पर यकीन करने को जी चाहता, और कभी-कभी तो वे हृदय में गहरी उथल पुथल मचा देती। जाने क्या, अपने जीवन की बलि देने वाले पुरुष शहीदो के बारे में जब मै पढता तो मुझे "वह भाई यूव" का ध्यान हो आता, स्त्री शहीदो के बारे में पढता तो नानी का चित्र आँखो के सामने घूमने लगता और ऊचे पादरियो के बारे में पढ कर मुझे उन क्षणो की याद हो आती जिनमें कि नाना अपने श्रेष्ठतम रूप में दिखाई देते थे।

पुस्तके पढने के लिए मै ऊपर तिदरी की शरण लेता या फिर सायबान में उस समय पढता जब मै वहाँ लकडियाँ चीरने जाता। दोनो ही जगह समान रूप से ठडी और तकलीफदेह थी। अगर पुस्तक खास तौर से दिलचस्प होती या किसी वजह से मै खुद उसे जल्दी से खत्म करना चाहता तो मै रात को उठ बैठता और मोमबत्ती की रोशनी में पढता। लेकिन बूढी मालकिन की नजरो से यह छिपा न रहा कि रात में मोमबत्तियाँ छोटी हो जाती है। नतीजा यह कि उसने अब मोमबत्तियो की नाप-जोख शुरू कर दी। लकडी की खपच्ची से वह मोमबत्ती को नापती और खपच्ची को कही छिपा कर रख देती। इस खपच्ची को मै अक्सर खोज निकालता और तोड कर उसे भी जली हुई मोमबत्ती की लम्बाई का बना देता। जब कभी मै ऐसा करने में चूक जाता और सुबह उठने पर वह देखती कि खपच्ची और मोमबत्ती की लम्बाई में अन्तर है, तो रसोईघर में खडे होकर इस बुरी तरह शोर मचाती कि सारे घर को सिर पर उठा लेती। उसकी आवाज सुनकर वीक्तर झुझला उठता और तख्ते पर से चिल्ला कर कहता

"यह टाँय टाँय बन्द करो माँ, तुम इस घर में किसी को न टिकने दोगी। कौन नही जानता कि वह मोमबत्तियाँ जलाता

है, न जलाए तो दुकान से लाई हुई पुस्तकें कैसे पढ़े। मैंने अपनी आंखों से देखा है। तिदरी पर जाकर खोजो, सारा भेद अपने आप खुल जाएगा!"

बुढ़िया तिदरी की ओर लपकी। एक छोटी-सी पुस्तक उसके हाथ लगी जिसे उसने भीर-भीर कर दिया।

कहने की जरूरत नहीं कि यह एक आघात था, लेकिन इसने पुस्तके पढने की मेरी लगन को और भी तेज़ कर दिया। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं था कि चाहे कोई सन्त ही क्यों न इस घर में चला आए, मेरे मालिक लोग उसे भी सबक पढाना और उसे अपने मनचीते साचे मे ढालना शुरु कर देंगे। और यह वे केवल इसलिए करेंगे कि करने के लिए इससे अच्छा काम उनके पास और कोई नहीं है। अगर उन्हे कभी चीख़ना-चिल्लाना, दूसरे लोगो पर फतवे कसना और उनका मजाक उड़ाना छोड़ देना पडे तो वे गूगे हो जाए, बोलने के लिए उनके पास कुछ न रहे और उन्हें अपने आपे की भी सुध न रहे। अपने आपे की सुध रखने के लिए जरूरी है कि आदमी दूसरो के साथ अपने सम्बन्धों के बारे मे कुछ सचेत रहे। मेरे मालिक लोग अपने-आपको केवल एक ही रूप मे देखते थे—गुरू और काजी के रूप मे। इसी रूप में वे सब से अपना नाता कायम करते थे। अगर कोई अपने आपको खुद उनके साचे मे ढालने की कोशिश करता तो वे इसके लि[illegible] भी उसे आडे हाथों लेने से न चूकते। यह उनकी घुट्टी में मि[illegible] हुआ था।

पढ़ने के लिए मुझे नित्य नये मोर्चों की खोज करनी पडती, नित्य नये पैतरे बदलने पड़ते। बूढी मालकिन इतनी बार मेरी पुस्तके फाड़ चुकी थी कि मैं दुकानदार का कर्जदार हो गया—एक-दो नहीं, पूरे सैंतालीस कोपेक की भारी रकम का बोझ मेरे

सिर पर लदा था। दुकानदार तुरत अदायगी के लिए तकाज़ा करता और धमकी देता कि रोटी खरीदने के लिए जब मैं मालिकों का धन लेकर आऊंगा तो वह उसमें से काट लेगा।

"तब बच्चू को आटे-दाल का भाव मालूम होगा!" वह मुझे कोंचता।

उससे मुझे इतनी घिन मालूम होती कि मैं बरदाश्त न कर पाता। उसने भी यह भांप लिया और दुनिया-भर की धमकियां देकर मुझे सताने में वह खास मज़ा लेता। मेरे दुकान में पांव रखते ही उसके नोचे-खोचे से चेहरे पर मुसकराहट का लेप चढ़ जाता।

"क्या, मेरा कर्ज़ अदा करने के लिए धन लाए?" वह धीमे स्वर में कहता।

"नहीं।"

कुछ बल-सा खाकर वह अपनी भौंह चढ़ा लेता।

"नहीं? कानो, तुम्हारा क्या अब मैं अचार डालूं? या तुम्हारे पीछे कचहरी के कुत्ते छोड़ूं? जानते हो इसका क्या नतीजा होगा? उठाकर वे तुम्हें किसी पिटाईघर में बन्द कर देंगे।"

पैसा पाने के सभी रास्ते बन्द थे। जो पगार मुझे मिलती थी, वह नाना के हवाले कर दी जाती थी। मेरी समझ में नहीं आता था कि कैसे क्या किया जाए। जब मैं दुकानदार से कुछ दिन की और मोहलत मांगता तो वह डबल रोटी की भांति मोटा और चीकट अपना हाथ आगे की ओर बढ़ा कर कहता

"यह लो, मेरा हाथ चूम कर दिखाओ। मोहलत मिल जाएगी!"

काउण्टर पर बटखरा पड़ा था। झपट कर मैंने उसे उठाया और उसके सिर का निशाना साधा। लूकी-सी लगा कर वह चिल्लाया

मुक्त इतना शान्त और चैन का जीवन विताते है और दुनिया की काय-काय हम तक नही फटक पाती!"

वे हर चीज़ को खलत-मलत कर देते, प्रसिद्ध लुटेरे चुर्किन के कारनामो को वे गाडीवान फोमा कूचीना के सिर मढ़ देते; नामों के वारे में वे अदवदा कर गड़वड करते और मै जब उनकी भूलो और उलझावों को सीधा करके उनके सामने रखता तो वे अचरज में भर कर कहते:

"इस लडके का दिमाग भी क्या है, जादू का पिटारा है!"

वहुत करके "मास्को पत्रिका" में लेओनिद ग्रावे की कविताएँ भी छपतीं। मुझे वे वेहद पसद आती और मै उन्हे अपनी कापी मे उतार लेता। लेकिन मेरी मालकिने कवि के वारे मे टिप्पणी कसती:

"देखो न, वुढापे मे इसे कविता का शौक चर्राया है।"

"उस जैसे शरावी-कवावी और कमजोर दिमाग आदमी से और आशा भी क्या की जा सकती है!"

स्त्रुजकिन और काउट मेमेन्टो-मोरी की कविताएँ भी मुझे वहुत अच्छी लगती, लेकिन वूढी और जवान दोनों मालकिनें कविता का नाम सुनते ही नाक-भौह चढा लेती और अपनी इस राय पर अड जाती कि कविता निरी वकवास है:

"भाड और नाटकवालो के सिवा कविता से और कोई भला आदमी वास्ता नही रखता।"

जाड़ो की साझें, छोटा-सा कमरा, जिसमे साँस लेते द घुटता, और मालिको की नजरे जो मुझ पर जमी रहती, मेरा जी वुरी तरह उकता जाता। खिड़की से वाहर, मौत की भाति सन्नाटा खीचे रात फैली होती, जवतव वर्फ के चटखने की आवाज़ आती और लोग, वर्फ़ से सुन्न मछलियो की भाति, मेज के इधर-उधर गुमसुम वैठे रहते। या फिर तेज हवा अपने पजों से दीवारों तथा खिडकियो

को नोचती-भकभोरती और चीखती-सनसनाती चिमनी में घुसती और नमदानो को खडखडाती। जो कसर रह जाती उसे बच्चा के कमर से उनका रोना-टर्राना पूरा कर देता। मेरा मन भीतर ही भीतर उबलता-उफनता और जी चाहता कि यहाँ से चुपचाप खिसक जाऊ, और किसी अधेरे कोने में पहुँच कर भेडिये की भाति गला फाड कर चिल्लाना शुरू कर दू।

मेज के एक छोर पर सिलाई या बुनाई का ताम-भाम लिए स्त्रिया बठी होती, दूसरे छोर पर बीक्नर अनमने भाव से उस नक्शे पर भुका रहता जिसकी कि वह नकल उतारता होता। बीच-बीच मे वह चीखता भी जाता

"मेज न हिलाओ, शैतान की दुमो! घर न हुआ बढईखाना हो गया, जब देखो तब कोई न कोई खटर-पटर। क्यो, इस घर में रहने भी दोगी या नही?"

कुछ हट कर एक राजू मेरा मालिक बैठा था। उसके सामने एक लम्बा-चौडा चौखटा रखा था। चौखटे में एक मेजपोश कसा हुआ था और वह सुई-धागे से उस पर कसीदे का काम काढ रहा था। उसकी चपल उँगलियो के स्पर्श से लाल केकडे, नीली मछली, वासन्ती तितलियाँ और पतझड के पीले पत्ते आकार ग्रहण कर रहे थे। ये डिजाइन खुद उसके बनाए हुए थे और उन्हे पूरा करते उसे तीन जाडे बीत चुके थे। इस मेजपोश मे अब वह पूरी तरह से ऊब चुका था और अक्सर, अगर दिन में मैं खाली हाथ होता तो मुझे बुला कर कहता

"पेश्कोव, यह मेजपोश तुम्हारा इन्तजार कर रहा है। कुछ देर इसमें भी हाथ लगा दिया करो।"

मैं कसीदा काढने की मोटी सुई उठाता और मेजपोश पर अपना हाथ आजमाने लगता। अपने मालिक पर मुझे तरस आता और उसे

भी बनता, मैं उसका हाथ बंटाने की कोशिश करता। मुझे ऐसा लगता कि यह नक्शे बनाना, कसीदे काढ़ना, और ताश खेलना एक दिन वह छोड़ देगा और कोई दूसरा काम शुरू कर देगा,— कोई ऐसा काम जो कुछ दिलचस्प हो, जो उसके उन सपनों से मेल खाता हो जिन्हें कि वह कभी-कभी देखा करता। काम करते-करते वह एकाएक रुक जाता, और अचरज के भाव से इस तरह उसकी ओर निहारता मानो वह कोई एकदम अनजानी चीज हो जिसे देखने का उसे अब, पहली बार, अवसर मिला है। आँखों में अचरज का भाव भरे वह वहाँ खड़ा रहता, उसके बाल उसकी भौंहों से हाथ मिलाते और उनके गालों का स्पर्श करते। ऐसा मालूम होता मानो वह कोई नया सन्यासी हो जो अभी-अभी मठ में भर्ती होकर आया हो।

"क्या सोच रहे हो?" उसकी पत्नी पूछती।

"कुछ नहीं," वह जवाब देता और फिर अपने काम में जुट जाता।

मैं मन ही मन सोचता और अचरज करता कि भला यह भी कोई पूछने की बात है कि कोई क्या सोच रहा है? फिर इस तरह के सवाल का कोई जवाब भी क्या दे सकता है? एक साथ, एक ही वक्त में, बहुत-सी चीजों के बारे में आदमी सोचता है— उन चीजों के बारे मे जिन्हे कि उसकी आँखें इस समय देख रही हैं या उन चीजों के बारे मे जिन्हें उसने कल या पिछले साल देखा था। और इस तरह जितने भी चित्र आँखों के सामने उभरते सभी धुंधले और उलझे हुए, बराबर चलायमान और हर घड़ी बदलते हुए।

"मास्को पत्रिका" के लेखों से एक साझ का भी गुजारा नहीं होता, वे जल्दी ही चुक जाते। इसलिए मैंने सुझाव दिया कि पलंग के नीचे पड़े पत्रों को पढ़ना शुरू किया जाए।

"वे भी कोई पढ़ने की चीज़ है?" मेरी युवती मालकिन ने अविश्वास के साथ कहा। — "चित्रों के सिवा उन में और होता क्या है?"

लेकिन पलंग के नीचे अकेला "चित्रमय जगत" ही नहीं था, अन्य पत्र भी थे। "ज़ोला" नामक पत्र निकालकर हमने सालियास कृत उपन्यास "काउंट त्यातिन-बाल्तिइस्की" पढ़ना शुरू किया। मेरे मालिक को इस उपन्यास का मूर्ख हीरो बहुत पसंद आया जो अपने बौड़मपन की वजह से अनेक मुसीबतों में फंसता है। मेरा मालिक इस बौड़म युवक की हरकतों पर इतना हंसता कि उसकी आंखों से आंसू निकल आते और गालों पर से ढुलकने लगते।

"आह, कितना मज़ेदार है!" उसके मुंह से निकलता।

"सब मनघड़न्त है," उसकी पत्नी कहती और यह दिखाने का प्रयत्न करती कि वह भी अपना दिमाग रखती है।

पलंग के नीचे पड़े पत्रों की जिल्दों ने मेरा एक बड़ा काम किया। इन पत्रों को रसोईघर में ले जाने और उन्हें रात को पढ़ने का मुझे अधिकार मिल गया।

इन्हीं दिनों मेरे सौभाग्य से एक बात और हुई। आया को लगातार शराब पीने की ऐसी धुन सवार हुई कि बीमार पड़ गई। उसके बाद से नानी मोरीवाले कमरे में ही अपना बिस्तरा लगाती। अफ़सर को मेरे पढ़ने-न-पढ़ने की कोई चिन्ता नहीं थी। जब सब सो जाते तो वह चुपचाप कपड़े पहनता और सजधज कर सुबह तक के लिए बाहर निकल जाता। मेरी मालकिन सामवार को भी हमेशा अपने साथ दूसरे कमरे में ले जाती और मैं बिना रोशनी के रह जाता। दूसरी मोमबत्ती खरीद सकने के लिए मेरे पास पैसा नहीं था। मोमबत्तियों से पिघले हुए मोम को मैं अब चुपचाप बटोरता और उसे सार्डीन के एक खाली टीन में जमा कर देता। साथ में उसमें देव-प्रतिमा के लैम्प में से भी कुछ तेल डाल देता। फिर धागे का

बट कर एक बत्ती बनाता और इस तरह तैयार किए अपने लैम्प को जो रोशनी से अधिक धुआँ देता था, तन्दूर के ऊपर जमा देता

पत्रों की भारी-भरकम जिल्दों को जब मै खोलता और उनके पन्ने पलटता तो लैम्प की नन्ही लाल लौ कांपने और दम तोड़ने लगती। बत्ती बार-बार खिसक कर मोम में डूबने लगती, और धुएँ से मेरी आँखे कड़ुवा उठती। लेकिन इन सब झंझटो-बाधाओं के बावजूद मैं तस्वीरो को देखने और उनके नीचे छपे परिचयो को पढ़ने मे डूब जाता और मेरी खुशी का पारावार न रहता।

मेरी दुनिया अब हर घड़ी फैलती और बढती जा रही थी अद्भुत नगरो, आकाश चूमने वाले पहाड़ो और सुन्दर समुद्र तटों के नित्य नये दृश्य मै देखता। जीवन का हर फैलाव मुझे अचरज मे डाल देता। भांति-भांति के नगरो, लोगो और काम-धधो की बहुलता धरती को और भी सुन्दर बना देती, वह मुझे और भी रंगबिरंगी मालूम होती। वोल्गा के उस पार के विस्तारो को अब मै देखता तो मालूम होता कि उनमे निरा सूनापन ही नही है, कुछ और भी है। पहले दीन-दुनिया से दूर इन विस्तारो को जब मै देखता था तो अदबदाकर उदास हो उठता था: अन्तहीन सपाट चरागाहे, काले धब्बो-सी इक्की-दुक्की झाडियाँ, चरागाहो से परे जंगल की कटी-फटी-सी कोर, ठंड से ठिठुरा-बदली, छाया आसमान, सूनी और उदास धरती। मेरा हृदय भी सूना हो जाता, एक कोमल उदासी उसे मथती, सभी अरमान मुरझा जाते, सोचने के लिए कुछ बाकी न रहता, बस आँखें मूद लेने को जी चाहता। घना और गहरा सन्नाटा, वीरानी का यह आलम, हृदय की हर आकाँक्षा को सोख लेता, आशा उसके स्पर्श से बेजान हो जाती।

मै चित्रो को देखता। उनके नीचे लिखे मजमूनों को पढ़ता। सीधी-सादी भाषा में दूसरे देशो और दूसरे लोगों से मेरा परिचय

होता। अतीत और वर्तमान की बहुत-सी घटनाओ के बारे में लिखा होता जिनमें से कई मेरी समझ में न आती, और इससे मेरा हृदय कचोट उठता। कभी-कभी, तीर की भाति, कुछ विचित्र शब्द मेरे दिमाग से आकर टकराते "आधिभौतिकवाद", "चिलियज्म", "चार्टिस्ट" आदि। ये शब्द मेरे जी का जजाल बन जाते और मेरे दिमाग में घुस कर इतना फैलते-बढते कि उनके सिवा और कुछ सुझाई न देता, और मुझे ऐसा लगता कि इन शब्दो के अर्थ का पता लगाए बिना मेरी समझ में कभी कुछ नही आएगा, मानो ये शब्द प्रहरियो की भाति सभी रहस्यो के द्वार पर खडे हो और मेरा रास्ता छेक रहे हो। बहुधा, समूचे-के-समूचे वाक्य मेरे दिमाग में अटक कर रह जाते, माँस में घुसी फास की भाति खटकते और मेरे लिए अन्य किसी ओर ध्यान लगाना असम्भव कर देते।

कुछ अजीब पक्तियाँ तो मुझे अभी तक याद है जो मैने उन दिनो पढी थी

> पहने हुए इस्पाती जामा
> काला और मौत की भाति गम्भीर
> हूनो का सरगना अतीला
> रौंद रहा रेगिस्तानो का।

उसके पीछे घोडो पर सवार उसके योद्धा, काली घटा की भाति, उमड-उमड कर गरज रहे थे

> कहाँ गया वह राम
> रोम जो था शक्ति में अपने का भला।

यह तो मै जानता था कि रोम एक नगर है, लेकिन ये हून कौन थे? मुझे अब इस रहस्य का उद्घाटन करना था।

अनुकूल अवसर देख मैने अपने मालिक से पूछा।

"हून?" उसने कुछ अचरज से कहा। —"शैतान ही जानता है कि वे कौन थे? होगे ऐसे ही कोई भिखारी-विखारी?"

फिर उसने नागजी के भाव से सिर हिलाया:

"पेश्कोव, दुनिया-भर का कबाड़ तुमने अपने दिमाग में जमा कर लिया है, और यह बहुत बुरा है!"

बुरा हो चाहे भला, मुझे तो इसका पता लगाना ही था।

मैने अन्दाज लगाया कि हो न हो, फौज के पादरी सोलोव्योव को जरूर मालूम होगा कि हून कौन थे। अहाते मे मुठभेड़ होने पर मैने उसके सामने अपना मसला पेश कर दिया।

वह एक मरियल-सा आदमी था: पीले रग का, रोगी और सदा चिडचिडा। उसकी आँखे लाल थीं, भौंहे नदारद और छोटी-सी पीली दाढी।

"तुम्हे हूनो से क्या लेना?" अपनी काली लाठी को धूल में धसाते हुए उसने उल्टे मुझे ही कुरेदा।

इसके बाद लेफटीनेन्ट नेस्तेरोव के सामने मैने अपना सवाल रखा। सुन कर वह जोरो से चिल्लाया:

"क्या-आ-आ-आ?" बस यही उसका जवाब था।

अब मैने दवाफ़रोश की दुकान पर जाने का निश्चय किया। वह काफी मिलनसार मालूम होता था। समझदार चेहरा, भारी-भर नाक जिस पर सुनहरा चश्मा चढा हुआ था।

"हून," दवाफरोश पावेल गोल्डबर्ग ने कहा,—"वे किरगिजों की भांति खानाबदोश जाति के लोग थे। अब वे नही है,—सब के सब मर-खप गए।"

मुझे बडी निराशा हुई और झुंझलाहट ने मुझे घेर लिया, इसलिए नही कि हून मर-खप कर लोप हो गए थे, बल्कि इसलिए

कि जिस शब्द ने मुझे इतना सताया कि जान ही निकाल ली, उसका अर्थ इतना साधारण और मेरे लिए इतना बेकार होगा।

फिर भी हूनो का मैं बेहद कृतज्ञ था। उन्हें लेकर इतनी परेशानियों में से गुजरने के बाद मैं पक्का हो गया और शब्दों ने मुझे सताना छोड़ दिया। और भला हो अत्तोला का, उसकी वजह से दवाफरोश से मेरी जान-पहचान हो गई।

भारी-भरकम और पण्डिताऊ शब्द और उनके इतने मामूली अर्थ,—वह इन सभी शब्दों से परिचित था, और हर रहस्य की कुंजी उसके पास थी। हाथ की दो उंगलियों से वह अपने चश्मे को ठीक करता और मोटे शीशों के भीतर से घूर कर मेरी आंखों में देखता और इस तरह बोलना शुरू करता मानो अपने शब्दों को, कीलों की भांति, वह मेरे दिमाग में ठोक रहा हो

"शब्द, मेरे नन्हे मित्र, उसी तरह होते हैं जैसे पेड़ में पत्ते, और यह जानने के लिए कि पत्ता का रूप-रंग ऐसा ही क्यों है, किसी दूसरे प्रकार का क्यों नहीं, यह जानना जरूरी है कि पेड़ किस प्रकार बढ़ता-पनपता है। तुम्हें अध्ययन करना चाहिए। पुस्तकें, मेरे नन्हे मित्र, एक सुन्दर बाग के समान हैं, जिसमें तुम्हें हर वह चीज मिलेगी जो सुहावनी और भली है।"

बड़े-बूढ़ों के वास्ते सोडा और मगनीशिया लेने जिन्हें हमेशा पेट और छाती में जलन की शिकायत रहती थी, और छोटों के वास्ते केस्टर तेल तथा अन्य छोटी-मोटी दवाइयाँ लेने मुझे अक्सर दवाफरोश की दुकान के चक्कर लगाने पड़ते। दवाफरोश की नपी-तुली सीख की बदौलत पुस्तकों के साथ मेरा लगाव और भी गहरा हो गया, और अनजाने में वे मेरे लिये उतनी ही अनिवार्य हो उठीं जितनी कि एक शराबी के लिये वोदका।

पुस्तके मुझे एक दूसरी दुनिया की सैर करातीं, एक ऐसा जीवन मेरी आँखों के सामने पेश करतीं जिसमें आशा-आकांक्षाओं का सागर हिलोरे लेता, उसके भंवर में पड़ कर लोग भले से भले और बुरे से बुरे काम करते। लेकिन जिस तरह के लोगों को मैं अपने चारों ओर देखता था, उनमे न भले काम करने की सकत थी, न बुरे। किताबो मे जो कुछ लिखा था, उसमे सर्वथा भिन्न — एकदम अलग — जीवन वे बिताते थे, और उनके इस जीवन में खोजने पर भी कोई दिलचस्प चीज नजर नही आती थी। जो हो, एक चीज मेरे दिमाग में साफ थी — वह यह कि मै वैसा जीवन नही बिताना चाहता था, जैसा कि वे बिताते थे।

चित्रो के नीचे मजमूनो से मुझे पता चला कि प्राग, लन्दन और पेरिस मे, नगर के बीचोंबीच, न तो कूडा-करकट के पहाड दिखाई देते है, न गंद भरे नाले नजर आते है। वहाँ की सड़के चौडी और सीधी होती है, और इमारते तथा गिरजे सर्वथा भिन्न। और वहाँ के लोग लम्बे जाडों के मारे पूरे छै महीनो तक घरो मे बन्द नहीं रहते, न ही वहाँ व्रत-उपवास के पेंतालीस दिन होते है जिन मे नमक-गोभी, कुकुरमुत्तो, जौ के आटे, और अलसी के घिनौने तेल मे तैरते आलुओं के सिवा और कुछ नहीं खाया जा सकता। व्रत-उपवास के दिनो मे जिनमें पढना गुनाह होता, "चित्रमय जगत" को उठाकर रख दिया जाता, और मुझे भी इस सूने उपवासी जी[illegible] का अंग बनने के लिए मजबूर किया जाता। लेकिन अब, किताबो के जीवन से इस जीवन की तुलना करने के बाद, मुझे यह और भी बेरंग, और भी बदनुमा मालूम होता। पुस्तके पढने के बाद मुझे लगता कि मेरी शक्ति बढ गई है, और मै भारी लगन तथा आपा भूल कर काम में जुट जाता, क्योकि मेरे सामने अब एक लक्ष्य होता: वह यह कि जितनी जल्दी

काम खत्म होगा, उतना ही अधिक समय मुझे पढने के लिए मिलेगा। किताबों के न रहने पर मैं सुस्त और काहिल हो जाता, खोया खोया-सा घूमता, और एक ऐसी विकृत बेखबरी मुझे जकड लेती जिसका मुझे पहले कभी अनुभव नहीं हुआ था।

मुझे याद है कि बेखबरी और उदासी के इन्हीं दिनों में एक रहस्यमय घटना घटी। साझ का समय था। सब लोग सोने चले गए थे। तभी गिरजे की घंटी एकाएक बजना शुरू हुई। सकपका कर सभी लोग जाग उठे, और अधूरे कपडों में ही खिडकियों पर जा खडे हुए।

"यह खतरे की घंटी है? क्या कहीं आग लगी है?" आपस में उन्होंने कहा।

अन्य घरों के लोग भी जाग गए थे। उनके इधर-उधर डोलने और दरवाज़ा को बन्द करने की आवाज़ आ रही थी। एक आदमी, घोडे की लगाम थामे, लपका हुआ अहाते को पार कर रहा था। मेरी बडी मालकिन चिल्ला रही थी कि गिरजे पर डाकुओं का धावा हुआ है। लेकिन मेरे मालिक ने उसका मुह बन्द करते हुए कहा

"चुप भी रहो, मालकिन, कौन नहीं जानता कि यह खतरे की घंटी नहीं है।"

"तब फिर क्या है, कहीं पादरी तो नहीं मर गए!"

वीक्तर अपने तख्ते से नीचे उतर आया।

"मैं जानता हू कि क्या हुआ है, मुझे सब मालूम है," कपडे बदन पर डालते हुए उसने कहा।

यह देखने के लिए कि कहीं आकाश में आग की दमक तो नजर नहीं आती, मेरे मालिक ने मुझे तिदरी पर दौडा दिया। लपक कर मैं ऊपर चढ गया और रोशनदान की खिडकी में से बाहर छत पर निकल आया। आकाश में कहीं कोई लाली नहीं दिखाई दे रही

थी। गिरजे का बड़ा घंटा अभी भी उसी गति से फिर और पालन
वायुमण्डल को गुंजा रहा था। नजर की पहुँच से बाहर लोग
रहे थे और उनके पांवों के नीचे बर्फ के कचरने की आवाज
रही थी। बर्फ पर गाड़ियों के दौड़ने की आवाज भी सुनाई पड़
थी। गिरजे का बड़ा घंटा रुकने का नाम नहीं लेता था और उस
आवाज हृदय को अधिकाधिक कंपा रही थी। मैं नीचे उतर आ
मैंने कहा:

"नहीं, आग तो नहीं लगी है।"

मालिक ने मेरी बात को सुना-अनसुना करते हुए "टट-ट
की आवाज की। वह कोट और टोपी पहने था। उसने अपना का
ऊपर खींच लिया और जूतों में पांव डालने लगा।

"कहाँ जाते हो? मेरी मानो, बाहर न जाओ!" उसकी प
ने रोकना चाहा।

"बको नहीं!"

वीक्तर भी कोट और टोपी पहने था और यह कहकर सभी
चिढ़ा रहा था:

"मुझे मालूम है कि क्या हुआ है, मैं सब जानता हूँ।"

जब दोनों भाई चले गए तो स्त्रियों ने मुझे समोवर ग
करने में जोत दिया और खुद खिड़कियों पर जम कर बैठ गईं। उ
समय मेरे मालिक ने दरवाजे की घंटी बजाई, तेज़ डगों से चुप
ऊपर आए, बड़े कमरे का दरवाज़ा खोला और भरभराई सी आव
में घोषित किया:

"ज़ार की हत्या कर दी गई।"

"क्या कहा, ज़ार की हत्या कर दी गई?" बुढ़िया ने च
कर पूछा।

"हाँ, हत्या कर दी गई। एक अफसर ने मुझे बताया। अब क्या होगा?"

इसी बीच वीक्तर ने दरवाजे की घंटी बजाई और अपना लबादा उतारते हुए झुंझलाहट में बोला

"और मैं तो इसे युद्ध समझ बैठा था।"

इसके बाद सब चाय पीने बैठ गए और चौकन्ने से होकर दबे स्वरों में बातें करने लगे। बाहर अब सन्नाटा छाया था। घंटी का बजना बंद हो गया था। दो दिनों तक लोग लगातार फुसफुसाते रहे, एक के यहाँ जाते और दूसरों को अपने यहाँ बुलाते, और बारीकी के साथ हर बात का वर्णन करते। मैंने बहुतेरा सिर मारा, लेकिन मैं समझ नहीं सका कि आखिर हुआ क्या है। मेरे मालिकों ने समाचार-पत्रों को मुझसे छिपा दिया था, और जब सिदारोव से मैंने यह सवाल किया कि ज़ार को उन्होंने क्यों मार डाला, तो वह धीमे स्वर में बोला

"इस बारे में बातें करना मना है।"

समूची घटना जल्दी ही आई-गई हो गई, आए दिन के जीवन की घिस घिस ने उसे पीछे डाल दिया, और इसके कुछ बाद ही एक ऐसी घटना घटी जिससे मैं बेहद परेशान हो उठा।

रविवार का दिन था। परिवार के लोग सुबह की प्रार्थना में शामिल होने गिरजा गए थे। और मैं, समोवर की अंगीठी दहकाने के बाद, घर की सफ़ाई करने में जुटा था। इसी बीच छोटा बच्चा रसोईघर में घुस गया, समोवर की टोंटी के ढक्कन को खींच कर उसे बाहर निकाल लिया और मेज़ के नीचे रेंग कर उससे खेलने लगा। समोवर के बीच के नलके में कोयले दहक रहे थे, जब सारा पानी निकल गया तो समोवर बुरी तरह गरमा गया और उसके जोड़ खुलने लगे। दूसरे कमरे में मैंने समोवर को गुस्से में

भरकर अजीब आवाजें करने लगा। जब तक मैं रसोईघर में पहुँचा। वह देख कर मैं कांप उठा कि वह एकदम नीला पड़ गया है, और इस तरह हाथ-पांव पटक रहा है मानो उसे मिर्गी का दौरा पड़ा हो। जोड़ लगा नलका जिसमें टोंटी लगी थी, निराशा से गरदन लटकाए था, ढक्कन अलग अपनी दुर्गति पर आंसू बहा रहा था, हत्थों के नीचे धातु पिघल गई थी और बूंद-बूंद टपक रही थी, और नीला-काला पड़ा समोवर ऐसा मालूम होता था मानो वह नशे में धुत्त हो। जब मैंने उस पर ठंडा पानी उंडेला तो वह सनसनाया और उदास भाव से फ़र्श पर ढह गया।

इसी समय दरवाजे की घंटी बजी। दरवाजा खोलते ही बूढ़ी ने पहला सवाल समोवर के बारे में किया:

"समोवर तो गरम है न?"

"हां, है," संक्षेप में जवाब देकर मैं चुप हो गया।

भय और शर्म से कट कर ही मैंने यह संक्षिप्त-सा उत्तर दिया था। लेकिन यह भी मेरी गुस्ताखी में शुमार हो गया और उसी हिसाब से मेरी सजा भी डबल कर दी गई। मेरी पिटाई की गई। बूढ़ी मालकिन ने देवदार की सटियों का इस्तेमाल किया। मार से मेरी जान तो कुछ ज्यादा नही निकली, लेकिन मेरे बदन मे अनगिनती खपच्चियाँ और फाँसे खूब गहरी घुस गईं। सांझ तक मेरी कमर सूज कर तकिए की भांति हो गई, और अगले दिन दोपहर तक मेरे मालिक को मुझे लेकर अस्पताल जाना पड़ा।

डाक्टर इतना लम्बा और इतना पतला था कि देखकर हँसी छूटती थी। उसने मेरा बदन देखा-भाला, उसकी जांच की, और फिर गहरी थिर आवाज में बोला:

"इस जुल्म की मै सरकारी हैसियत से रिपोर्ट करूंगा।"

मेरे मालिक का चेहरा लाल हो उठा, कभी वह इस पाँव पर उचका और कभी उसपर, फिर बुदबुदाकर उसने डाक्टर से कुछ

कहा, लेकिन डाक्टर ने अपनी नज़र से उसका सिर लाघ कर कहो दूर देखते हुए दो टूक शब्दो मे कहा

"नही, यह नही हो सकता। मुझे अधिकार नही है।"

फिर मेरी ओर मुडा। पूछा

"क्या तुम शिकायत दर्ज कराना चाहते हो?"

मेरी कमर बेहद दुख रही थी। मैने कहा

"नही। लेकिन जल्दी मे कुछ ऐसा कीजिए कि मुझे चैन पडे।"

वे मुझे एक दूसरे कमरे में ले गए, मेज पर मुझे लिटा दिया, और डाक्टर ने किसी चिमटी से खपच्चियो को निकालना शुरू किया। चिमटी का ठडा स्पर्श गुदगुदाता-सा मालूम होता था। डाक्टर अपना काम भी करता जाता था, और बोलता भी जाता था

"सुन रहे हो लडके! तुम्हारी चमडी के साथ अच्छा-खासा तमाशा किया है इन लोगो ने। इसके बाद तुम वाटर-प्रूफ हो जाओगे।"

डाक्टर इतनी देर तक अपनी चिमटी से कुरेदता गुदगुदाता रहा कि मेरे लिए असह्य हो उठा। जब अपना काम खत्म कर चुका तो बोला

"समझे लडके, एकदम बयालीस खपच्चियाँ निकाली है मैने। अपने साथियो के सामने तुम गर्व के साथ इसका उल्लेख कर सकते हो। कल इसी समय आकर अपनी पट्टी बदलवा जाना। क्या वे तुम्हारी अक्सर मरम्मत करते है?"

"पहले अक्सर किया करते थे," मैने एक क्षण सोच कर कहा।

डाक्टर अपनी गहरी आवाज में हसा।

"कोई बात नही, लडके! हर चीज में भलाई छिपी है,—समझे, हर चीज म!"

जब वह मुझे मालिक के पास वापिस ले गया तो उससे कहा :

"सभालो इसे। अब यह ठीक है, बिल्कुल नये के माफिक। कल इसे फिर भेज देना। एक बार और बाव-बृध देंगे। यह तो कहो कि लडके ने हंस कर सब टाल दिया, नही तो लेने के देने पड जाते।"

गाडी मे बैठ कर जब हम घर लौट रहे थे तो मालिक ने कहा

"पेश्कोव, मै भी बचपन में खूब पिटता था। बोलो भाई, इस बारे मे तुम क्या कहोगे? और कितनी बुरी तरह वे मुझे मारते थे। तुम्हारे साथ कम-से-कम इतना तो है कि मै थोड़ी-बहुत सहानुभूति दिखा सकता हूं, लेकिन मेरे साथ तो कभी कोई सहानुभूति नही दिखाता था। लोगो की यों कमी नहीं थी, चारो ओर ढेर के ढेर मौजूद थे, लेकिन सब के सब हरामी, सहानुभूति के दो शब्द कहने के लिए कोई पास तक न फटकता। सब, मुर्गे-मुर्गियो की भांति कुड़कते और चोचे लड़ाते रहते!"

रास्ते-भर वह यही सब कहता और बताता रहा। मुझे उसपर तरस आया, और कृतज्ञता का भी मैने अनुभव किया कि उसने मेरे साथ इतनी सहानुभूति से बातें की।

जब हम घर पहुंचे तो सबने इस तरह मेरा स्वागत किया, मानो मै कोई बहुत बडी बाजी जीत कर लौटा हूँ। स्त्रियों ने बैठा कर सारा हाल सुना कि डाक्टर ने किस तरह खपच्चियो को निकाला और क्या-क्या कहा। मैने उन्हें सुनाना शुरू किया। वे सुनती और बीच-बीच में 'आह' 'ओह' की ध्वनि करती जाती, अपने होठों पर जीभ फेर कर चटकारा लेती और इस या उस बात पर भौहें चढ़ा ली। बीमारी-ईकारी में, दुःख और दर्द में, हर उस चीज में जो

आदमी को परेशान कर सकती है, उनकी विकृत दिलचस्पी ने मुझे चकित कर दिया।

वे इस बात से खुश थे कि मैंने उनके खिलाफ शिकायत दर्ज कराने से इन्कार कर दिया। इससे उत्साहित होकर मैंने उनसे कहा कि अगर इजाजत हो तो कटर की पत्नी से पुस्तकें माँग लाया करूं। उनसे अब इन्कार करते नही बना, लेकिन बूढी मालकिन ने चकित होकर कहा

"बडे शैतान हो तुम!"

अगले ही दिन मैं कटर की पत्नी के सामने खडा था, और वह मुझसे कह रही थी

"मैंने तो सुना था कि तुम बीमार पड गए हो और तुम्हे अस्पताल पहुचा दिया गया है। देखो न, लोग भी कैसी-कैसी अफवाह उडाते हैं?"

मैंने उसकी बात को काटा नही। उसे सच बात बताते मुझे शर्म मालूम हुई—ऐसी औघड और जी भारी करने वाली बाते वह कर आखिर उसे क्यो परेशान किया जाए? मेरे लिए यही क्या कम खुशी की बात थी कि वह अन्य लोगो की तरह नहीं थी।

मैंने अब बडे ड्यूमा, पौनसौन-द तैरेल, मौन्तेपिन, जाकोन्ने, गाबोरिओ, एमर और बुआगोबे की मोटी-मोटी जिल्दो को पढना शुरू किया। मैं इन पुस्तको को, एक के बाद एक, तेजी से पढ गया, और इन्हें पढकर मेरा हृदय खुशी से नाच उठा। मुझे लगा कि जैसे मैं उनके असाधारण जीवन का एक हिस्सा बन गया हूं। मधुर भावो का मुझ में सचार हुआ और नयी शक्ति का मैंने अनुभव किया। एक बार फिर हाथ का बना मेरा लैम्प चेतन होकर धुआं छोडने लगा, क्योकि मैं रात भर पढ़ता और पौ फटे तक पढ़ता ही रहता। मेरी आँखो के पपोटे सूज गए और मेरी बूढ़ी मालकिन

को अपना जी हल्का करने का अवसर मिला। मुझे कोंचते हुए बोली:

"अभी तो शुरुआत ही है, किताबचाटू! मजा तो तब आएगा जब तेरे दीदे बाहर निकल पड़ेंगे, और तू अंधा हो जाएगा!"

शीघ्र ही मैंने देखा कि ये तमाम दिलचस्प पुस्तकें, कथानकों में विविधता और मौके-महल में भिन्नता के बावजूद, एकसी बात कहती हैं। वह यह कि जो भले लोग हैं, वे हमेशा दुःख उठाते हैं और बुरे लोगों के हाथों उन्हें अनेक मुसीबतों का शिकार होना पड़ता है। बुरे लोग, भलों के मुकाबिले में ज्यादा मजे में रहते हैं और उनसे ज्यादा चतुर होते हैं। और अन्त में, एकाएक, किसी चमत्कार के सहारे बुराई की सदा हार होती है और भलाई की सदा जीत, मानो यह हार-जीत वे अपने भाग्य की पाटी पर लिखा कर लाए हों। और, 'प्रेम', प्रेम का राग अलापने का तो जैसे इन्हें रोग था। उनके इस राग को सुनते-सुनते मैं तंग आ जाता। पुस्तकों के सभी पुरुष और सभी स्त्रियाँ, सदा एकसी भाषा में, 'प्रेम' की बातें करते, उनके शब्दों में जरा भी अन्तर न होता। इससे मन तो ऊबता ही, साथ ही उनके इस प्रेम-व्यापार में बनावट की भी गंध आती, अनेक धुंधले सन्देहों को वह जन्म देता।

कभी-कभी, कुछ पन्ने पढ़ने के बाद ही मैं यह अन्दाज लगाना शुरू कर देता कि अन्त में किसकी जीत होगी, और किसकी हार। और कथानक की गुत्थी का एकाध सिरा हाथ में आते ही मैं खुद उसे खोलना शुरू कर देता। पुस्तक को मैं अलग रख देता, गणित के सवाल की भांति मैं उसपर दिमाग लड़ाने लगता, और मेरे हल अधिकाधिक सही निकलते,—यह कि किस पात्र को स्वर्ग नसीब होगा, और किसको जहन्नुम रसीद किया जाएगा।

इस सब के अलावा एक और चीज थी जिसके बारे में मुझे इन पुस्तकों से पता चला, और यह एक ऐसी चीज थी जिसका मेरे लिए भारी महत्व था। वह यह कि मुझे उनमें भिन्न प्रकार के जीवन और भिन्न प्रकार के सम्बन्धों की झलक दिखाई देती थी। म अब साफ साफ देखता कि पेरिस के गाडीवानो, मेहनत-मजदूरी करने वालो, सैनिको और अन्य उन सब लोगो में जिन्हे समाज की तलछट कहा जाता है, और निजनी-नोवगारोद, कजान और पेर्म की तलछट में अन्तर है, दोनो में कोई समानता नही है। बडे और भद्र लोगो के सामने उनकी बोलती बद नही होती, उनके सहज भाव और स्वतन्त्र चेतना को पाला नही मारता, खुल कर और साहस से वे बाते करते है। इस एक सैनिक को ही लीजिए जो उन सभी सैनिको से भिन्न था जिनसे कि मेरा वास्ता पड चुका था—न वह सिदोरोव से मिलता था, न उस सैनिक से जिसे मने जहाज पर देखा था, न येरमोखिन से। उसमें कही ज्यादा आदमियत थी। स्मूरी से वह कुछ-कुछ मिलता था लेकिन उसमें स्मूरी जितना भोडापन और पाशविकता नही थी। या फिर इस दुकानदार को लीजिए। वह भी उन सभी दुकानदारो से भिन्न था जिन्हे कि म जानता था। यही बात पादरियो के बारे में थी। वे भी मेरे जाने-पहचाने पादरियो से भिन्न थे। लोगो के साथ वे अधिक प्रेम और सहानुभूति का बरताव करते थे। कुल मिला कर यह कि पुस्तको के पन्नो में चित्रित बाहर के दूसरे देशो का जीवन उस जीवन से ज्यादा अच्छा, ज्यादा सहज और ज्यादा दिलचस्प मालूम होता था जिसे कि मै अपने चारो ओर देखता था। दूसरे देशो में लोग इतना अधिक और इतनी बर्बरता से नही लडते थे, आदमी के साथ उस तरह की कुत्सित खिलवाड नही करते थे जैसी कि जहाज के यात्रियो ने उस सैनिक के साथ की थी, और भगवान से प्रार्थना करते

समय उस तरह की कुढन और जलन का परिचय नही देते थे जै
मेरी बूढ़ी मालकिन मे दिखाई देती थी।

पुस्तको मे खल-पात्रो की, कमीने और कफन खसोटनेवाले
लोगो की, कमी नही थी। और इस बात की ओर खास तौर
मेरा ध्यान गया कि पुस्तकों के इन खल-पात्रो में भी समझ मे
आनेवाली वह क्रूरता, और दूसरों को धूल मे रगेतने की वह धु
नही दिखाई देती जिससे कि मैं इतना परिचित था। पुस्तकों
खल-पात्र क्रूरता का परिचय देते थे, लेकिन तभी जब उन्हे को
मतलब साधना होता था। उनकी क्रूरता, बहुत कर ऐसी नही होत
थी कि समझ मे न आए। लेकिन मै जिस क्रूरता से परिचित था
उसमे कोई तुक नही दिखाई देती थी, बिल्कुल बेमानी और बेमतलब
एक ऐसी क्रूरता जिसने खिलवाड़ का रूप धारण कर लिया था
मनबहलाव के सिवा जिसका और कोई लक्ष्य नही था।

हर नयी पुस्तक, रूस और दूसरे देशों के जीवन के बीच इ
अन्तर और उनके भेद को उभारकर रखती, असन्तोष का ए
बगूला-सा मेरे हृदय मे उमडता, अंगूठो और उंगलियो के निशा
पडे पुस्तकों के पीले पन्नो पर झुंझलाहट आती और मेरा यह सन्दे
जोर पकड़ने लगता कि इन पन्नो मे जो कुछ लिखा है, वह एकद
सच नही है।

इन्ही दिनो गौनकोर्ट का उपन्यास "जेमगान्नो बन्धु" मे
हाथो मे पड़ा। एक ही रात में मै उसे पढ गया। दु:खी मे डू
इसकी सीधी-सादी कहानी मे कुछ ऐसी नवीनता थी कि मुझ
रहा नही गया, और मै इसे दोबारा पढ गया। इसमे न तो क
पेचीदा कथानक था, न ही फालतू बनाव-सिगार की चकाचौंध थ
यहाँ तक कि शुरू मे यह कुछ रूखा और सन्तो की जीवनियो
भांति गम्भीर मालूम हुआ। इसकी भाषा इतनी नपी-तुली अ

सिगार मे इतनी कोरी थी कि पहले-पहल बडी निराशा हुई, लेकिन कुछ देर बाद ही उसके सक्षिप्त से शब्दो और सबल वाक्यो ने तीर की भाति सीधे मेरे हृदय में प्रवेश करना शुरू किया और इन नट-बन्धुओ के जीवन-सघर्ष का इतना सजीव और सच्चा चित्र मेरी आँखो के सामने खडा कर दिया कि मेरा रोम-रोम खुशी से थरथरा उठा, मेरी आँखों में आसू उमड-घुमड आए और इस समय जब मुसीबतो का मारा नट अपनी टूटी टाग लिए बडी मुश्किल से ऊपर चढकर अपने भाई के पास पहुँचा जो तिदरी में छिप कर जान से भी प्यारी अपनी नट-कला का अभ्यास कर रहा था, तो म बुरी तरह चीख उठा, मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो मेरा हृदय फट कर टुकडे-टुकडे हो जाएगा।

इस अद्भुत पुस्तक को लौटाने के लिए जब मैं कटर की पत्नी के पास गया तो मने उससे कहा

"ठीक इस जैसी कोई और पुस्तक हो तो मुझे दो।"

"भला यह भी कोई बात हुई,—ठीक इस जैसी वैसी? इतना कहने से तो कुछ समझ में नही आता।" उसने हँसते हुए कहा।

उसकी हँसी से मै अचकचा गया। न ही मै उसे यह समझा सका कि 'ठीक इस जैसी' से मेरा क्या मतलब है। वह बोली

"यह भी कोई पुस्तक है—पढते पढते मन ऊब जाता है। जरा ठहरो, मै तुम्हे एक बढिया पुस्तक निकाल कर दूगी, बहुत ही दिलचस्प।"

कुछ ही दिन बाद उसने मुझे ग्रीनवुड कृत "एक आवारा लडके की सच्ची कहानी" दी। पुस्तक का नाम देखते ही मैने मुह बिचकाया, लेकिन पहला पन्ना पढ़त न पढत मेरा चेहरा खिल गया और जब तक उसे खतम न कर लिया, पुस्तक हाथ से न छोडी,

और कितने ही अगो को तो दो-दो और तीन-तीन वार तक पढ गया।

सो दूसरे देशो में भी छोटे लडकों को कुछ कम मुसीवतें नही उठानी पड़ती! सच तो यह है कि उसके मुकाविले मे मुझे अपना जीवन कही गनीमत मालूम हुआ, और मुझे लगा कि अपने को गया-बीता समझ कर मै वेमतलव ही इतना परेशान होता हूं।

ग्रीनवुड ने मुझे वड़ा सहारा दिया, और इसके शीघ्र वाद ही एक ऐसी पुस्तक हाथ लगी जो सचमुच में "सही ढग" की थी — 'यूजेनी ग्राण्डे'।

बूढे ग्राण्डे की कहानी पढ कर मेरी आँखो के सामने अपने नाना का सजीव चित्र खड़ा हो गया। पुस्तक इतनी छोटी थी कि जल्दी से ख़त्म हो गई, और यह मुझे वड़ा वुरा मालूम हुआ। लेकिन यह छोटी-सी पुस्तक इतनी सचाई से भरी थी कि मै चकित रह गया। इसकी सचाई मेरे लिए अनजानी नही थी, खुद अपने जीवन मे मै उससे परिचित हो चुका था। लेकिन पुस्तक ने मुझे एक नयी रोशनी प्रदान की, एक ऐसी रोशनी जो चीज़ो को शान्त, तटस्थ और असलग्न नजर से देखती थी। गौनकोर्ट को छोड़ कर अन्य जितने भी लेखक मैने पढे थे, मेरे मालिक की भाति वे सव भी उतने ही निर्मम और चिडचिड़े ढंग से लोगो को जहन्नुम रसीद करते और उन्हे मुसीवतो का शिकार वनाते थे, जिसका असर यह होता कि पाठक वहुधा खल-नायक से सहानुभूति करने लगता, और भले पात्रो की 'भलमनसाहत' से तंग आ जाता। यह देख कर मै हमेशा परेशान हो उठता कि लाख सिर खपाने और हाथ-पॉव मारने के वाद भी आदमी अपना रास्ता नही खोज पाता, वह आगे नही वढ पाता, और सव से दु:ख की वात तो यह थी कि वही चीज उसे ले डूवती जिसे हम भलमनसाहत कहते है। शुरू से लेकर

आखिर के पन्ने तक, कदम-कदम पर, यह भलमनसाहत ही उसके मार्ग में आड़े आती। पत्थर की दीवार की तरह वह उसके प्रयत्नों को विफल करती। माना कि खल-नायक की सारी चालें और सारे इरादे इस दीवार से टकरा कर चकना-चूर हो जाते, लेकिन दीवार कोई ऐसी चीज नहीं होती कि उसके लिए हृदय में प्यार जगे, हृदय उसके साथ कुछ लगाव अनुभव करे। पत्थर की दीवार अपने आप में चाहे जितनी सुन्दर और मजबूत क्यों न हो, लेकिन उस आदमी को जिसके हृदय में दीवार के दूसरी ओर उगे मेवा को पाने की ललक है, न तो दीवार की सुन्दरता भली लगेगी, न उसके पत्थरों की मजबूती। और मुझे हमेशा ऐसा अनुभव होता कि हर उस चीज के आगे जो वास्तव में अत्यन्त सच्ची और अत्यन्त महत्वपूर्ण है, भलमनसाहत की यही दीवार खड़ी है।

गोनकोर्ट, ग्रीनवुड और बालज़ाक के उपन्यासों में न तो खल-नायक थे, और न भले नायक। केवल सीधे-सादे लोग थे, इतने सजीव कि देख कर अचरज होता। वे जो कुछ भी कहते और करते, क्या मजाल जो उसपर कोई उंगली उठा सके! ऐसा मालूम होता जैसे सचमुच वे जीवन में भी उन्होंने उसे ठीक उसी रूप में कहा या किया होगा, और ठीक इसी रूप में उसे कहा या किया जा सकता है, अन्य किसी रूप में नहीं।

अब मेरे लिए वह सुख कोई बेगानी चीज नहीं रहा जो किसी अच्छी पुस्तक, 'सही ढंग' की पुस्तक को पढ़ने से प्राप्त होता है। लेकिन ऐसी पुस्तकें पाना भी एक समस्या थी। कटर की पत्नी इसमें मेरी कोई मदद नहीं कर सकी।

"लो, ये कुछ अच्छी पुस्तकें हैं," उसने कहा और मुझे आर्सेन होस्साये कृत "गुलाब, स्वर्ण और रक्त से रंजित हाथ', और बलेंयु, पाल-द-काक तथा पाल फेवाल के उपन्यास थमा दिए।

"यही प्रेम-व्रेम की बातें।"

उसकी भौंहें तन जाती और वह एक बनावटी-सी हँसी हँसती।

"तुम भी गजब करते हो! यह नही तो फिर पुस्तकों में होता क्या है,—सिवा प्रेम के?"

बड़ी-सी आरामकुर्सी पर बैठे हुए कभी वह अपने छोटे-छोटे पाँवों को झुलाती जिनमें वह रोएदार स्लीपर पहने थी, कभी जमुहाई लेती और आसमानी लबादे को खींच कर अपने वक्ष से जरा और सटा लेती, कभी गोद में पड़ी पुस्तक को अपनी गुलाबी उँगलियों के छोरों से ठकठकाती।

मेरा जी चाहता कि उससे कहूँ

"तुम यहाँ से किसी दूसरी जगह क्यों नहीं चली जाती? अफसर अभी भी तुम्हारे पास खरीतें भेजते हैं और तुम्हारा मजाक उड़ाते हैं।"

लेकिन मेरी आवाज साथ न देती। साहस के अभाव में मेरी बोलती बंद हो जाती और मैं, हाथ में 'प्रेम सम्बन्धी कोई दूसरी पुस्तक और हृदय में निराशा लिए, वहाँ से चला आता।

अहाते में अब उसका और भी कुत्सित तथा बेहूदा मजाक उड़ाया जाता, दुनिया-भर की उल्टी-सीधी बातें उसके बारे में की जाती। इन गंदी और सिर से पाँव तक झूठी बातों को सुनकर मेरा हृदय कचोट उठता। जब मैं उसके सामने न होता तो मुझे उसपर तरस आता, और उसे लेकर अनेक आशंकाएँ मेरे हृदय को कुरेदने लगतीं। लेकिन जब मैं उसके सामने होता और उसकी पैनी आँखों, गिरनी की भाँति चपल गुड़िया-जैसे उसके शरीर और 'मिलनसारी' का नकाब ओढ़े उसके चेहरे पर नजर डालता तो मेरी सारी हमदर्दी कोहरे की भाँति गायब हो जाती।

वसन्त मे वह एकाएक कही चली गई, और इसके कुछ ही दिन वाद उसके पति ने भी घर छोड़ दिया।

उनके घर मे अभी कोई नया किरायेदार नहीं आया था, वह खाली पड़ा था। मैने उसका चक्कर लगाया। सूनी दीवारो पर तुडी-मुडी कीलो या उनके छेदों के सिवा और कुछ दिखाई नहीं देता था। दीवार के वे स्थल जहाँ तस्वीरें लटकी थीं, रग-उड़ने के कारण साफ उभरे हुए दिखाई देते थे। रोगनदार फर्श पर कागज़ के टुकडे, चमकती हुई पन्नियाँ और रग-विरगे लेवुल आदि विखरे पड़े थे। एक ओर गोलियों की खाली डिविया, इत्र की शीशियाँ और उनके वीच पीतल की एक वडी पिन दिखाई पड रही थी।

यह सव देख कर मेरा जी उदास हो गया, और कटर की पत्नी को एक वार और देखने तथा उसके सामने अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मेरा मन ललकने लगा।

१०

कटर की पत्नी के चले जाने से भी पहले से हमारे घर के निचले हिस्से मे काली आँखो वाली एक युवती स्त्री रहती थी। साथ में एक छोटी लडकी और स्त्री की माँ भी थी। माँ वुढिया थी। उसके वाल सफेद हो गए थे और अम्वर के होल्डर को मुंह मे दवाए चौवीसो घटे सिगरेट का धुआँ उडाती रहती थी। युवती वेहद खूवसूरत, गर्वीली और सव को अँगूठे के नीचे रखने वाली थी। आवाज़ गहरी और मधुर, लोगो से वोलते समय वह कुछ इस अन्दाज से अपना सिर पीछे की ओर फेकती तथा आँखों को सिकोड लेती मानो वे इतनी दूर हों कि साफ-साफ न दिखाई पड़ते हो। करीव-करीव हर रोज उसका सैनिक नौकर जिसका

नाम तूफायेव था, पतली टाँगो वाले एक घोडे को लेकर उसके घर के सामने पोच में आ खड़ा होता और युवती, इस्पाती भूरे रंग का घुड़सवारी का लम्बा मखमली जामा पहने, हाथों में सफेद दस्ताने डाले और पाँव में खाकी बूट कसे बाहर निकल आती। एक हाथ से अपने जामे का ऊँचा उठाए और नीलम की मूठ वाला हण्टर थामे दूसरे हाथ मे वह घोडे के नथुने थपथपाती। घोडे की बत्तीसी चमक उठती, अपनी आगा का वह घुमाता तथा कडी जमीन को खुरखुराता, आर उसके समूचे बदन में एक सिहरन-सी दौड जाती।

"रोजी! रोजी!" वह धीमे स्वर मे गुनगुनाती और घाडे की बहुत ही सुदर खमदार गरदन को थपथपाती।

फिर तूफायेव के घुटने पर अपना पाँव रखती, हल्के मे उचक कर घोडे पर सवार हो जाती आर घोडा, इशारा पाते ही, इठलाता-नाचता बाध के किनारे-किनारे चलने लगता। घोडे पर वह कुछ इतने सहज भाव से बैठती मानो इसी रूप में, घोडे पर बैठे-बैठे, उसने जन्म लिया हो।

वह उन दुलभ सुदर स्त्रिया म से थी जिनका सौदय सदा नया और निराला प्रतीत होता है, जिन्हे देख कर हृदय पर एक नशा-सा छा जाता है, और रोम-रोम खुशी से नाचने लगता है। जब म उसकी ओर देखता तो ऐसा लगता कि डायना-द-पोयतिये, रानी मारगोट, ला-वैलियेर तथा ऐतिहासिक उपन्यासा की अन्य नायिकाओ का सौन्दर्य भी, बिला शक, इतना ही जादू-भरा रहा होगा।

छावनी के फौजी अफसर उसे बराबर घेरे रहते। साझ होते ही वे उसके घर आ जाते, वायोलीन, प्याना और गिटार बजाते, नाचते और गाते। अपनी ठिगनी टागो पर उसके सामने फुदकने में आलेमोव नाम का एक मेजर अन्य सभी को मात कर देता। माटा-

"भगवान तुम्हारी रक्षा करे," अपने दाँतों और नाक के सुरा में से धुएँ की पतली धार छोड़ते हुए उसकी नानी जवाब देती।

"भगवान तुम्हारी रक्षा करे कल तक," वह दोहराती और बेल लगी अपनी रजाई में कुनमुनाने लगती।

"कल तक नहीं, बल्कि हमेशा रक्षा करे," उसकी नानी उसे ठीक करती।

"कल क्या हमेशा नहीं होती?'

'कल' शब्द में उसका खास लगाव था और जो भी चीज उसके मन को भाती उसे ही वह कल के खाने में डाल देती। फूलों या टहनियों के एक गुच्छे को वह मिट्टी में गाड़ देती और कहती

"कल यह बाग बन जाएगा।"

"कल मैं एक घोड़ा खरीदूँगी और मम्मी की भाँति उस पर सवार होकर घूमने जाया करूँगी।"

वह बहुत ही समझदार थी, लेकिन उत्साह और उछाह उसमें अधिक नहीं था। बहुधा खेलते-खेलते वह कुछ सोचने लगती और एकाएक पूछ बैठती

"पादरी लोग स्त्रियों की भाँति लम्बे बाल क्यों रखते हैं?'

एक दिन कँटीली झाड़ी उसके चुभ गयी। वह खड़ी हो गई और उँगली से उसे धमकाते हुए कहने लगी

"अगर फिर कभी ऐसा किया तो मैं भगवान से कह दूँगी और वह तेरी खूब मरम्मत करेगा। भगवान से कोई नहीं बच सकता — मेरी मम्मी भी नहीं!"

कभी-कभी एक उदास खिन्नता उस पर छा जाती, अपने बदन को वह मुझसे सटा लेती। आशा-भरी नजरों से आकाश की ओर देखती और कहती

डाँटती, बस हँसती रहती है। ममी को सभी प्यार करते है, क्योंकि उसे कभी फुरसत नहीं मिलती, क्योंकि लोग हमेशा उससे मिलने आते है और उसे देखते रहते है, क्योंकि वह इतनी सुन्दर हैं। ममी अद्भुत है। ओलेसोव भी यही कहता है — मेरी अद्भुत ममी!"

बचपन की भाषा में एक अनजाने जीवन के बारे मे जब वह मुझे बताती तो बडा अच्छा लगता। अपनी माँ का जिक्र करते समय उसके उछाह और तत्परता का वारापार न रहता, एक नए जीवन की मुझे झाकी मिलती और रानी मारगोट की कहानी की मुझे याद हो आती। इससे पुस्तको मे मेरा विश्वास और भी बढता, अपने चारो ओर के जीवन में मै और भी दिलचस्पी लेता।

एक दिन की बात है। साझ का समय था। मेरे मालिक घूमने गए थे और मै, लडकी को अपनी गोद में लिए, उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। लडकी की आँखें झपक गई थी। तभी उसकी माँ घोड़े पर सवार बाहर से लौटी, लचक के साथ वह जीन से नीचे उतरी और अपने सिर को पीछे की ओर फेंकते हुए बोली:

"क्या सो गई है?"

"हाँ।"

"क्या सचमुच ."

सैनिक तूफायेव लपक कर आया और घोडे को अपने साथ ले गया। हटर को अपनी पेटी में खोसते हुए युवती ने अपनी बाँहे फैलाई और मुझ से कहा

"इसे मुझे दे दो।"

"मै खुद इसे पहुँचा दूँगा।"

"नहीं, कोई जरूरत नहीं!" पाँव पटक कर वह इस तरह चिल्लाई मानो मैं उसका घोड़ा हूँ। लड़की चौंक उठी, आँखें मिचमिचा कर उसने देखा, माँ पर उसकी नजर पड़ी, और उसने भी अपनी बाँह फैला दी। दोनों भीतर चली गईं।

डाँट-डपट का मैं आदी था। लेकिन इस स्त्री का चिल्लाना मुझे बहुत अटपटा मालूम हुआ। वह अगर हल्का सा इशारा भी करती तो सब उसकी आँखों के आगे बिछ जाते।

कुछ ही क्षण बाद ऐंचो-तानी महरी बाहर आई और उसने मुझे आवाज़ दी। बच्ची ने हठ पकड़ ली थी और बिना मुझसे गुडबाई कहे बिस्तर पर सोने से इन्कार कर दिया था।

कुछ गर्व के साथ मैंने ड्राइंगरूम में पाँव रखा। युवती स्त्री लड़की को गोद में लिए बैठी थी और फुर्ती से उसके कपड़े उतार रही थी।

"लो, यह आ गया तुम्हारा अवधूत!" उसकी माँ ने कहा।

"इसे अवधूत क्यों कहती हो? यह तो मेरा खेल का साथी है!"

"क्या सचमुच? अच्छी बात है। खेल के अपने इस साथी को तुम्हें कोई चीज़ भेंट करनी चाहिए,—क्या, ठीक है न?"

"हाँ-हाँ, जरूर भेंट करो माँ!"

"अच्छा तो तुम अब झटपट अपने बिस्तरे पर चली जाओ। मैं अभी उसे कोई चीज़ देती हूँ।"

"कल तक के लिए, गुडबाई!" हाथ फैलाते हुए लड़की ने कहा।—"भगवान तुम्हारी रक्षा करें, कल तक!"

"अरे, यह तुमने कहाँ सीखा?" उसकी माँ ने अचरज से पूछा।—"क्या नानी ने सिखाया है?"

"हाँ।"

जब लड़की सोने के लिए चली गई तो युवती स्त्री ने मुझे अपने पास बुलाया

"तुम क्या लेना पसन्द करोगे?"

मैने कहा कि मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है, अगर पढने के लिए कोई किताब मिल जाए तो अच्छा हो।

उसने अपनी सुहावनी, महकती हुई उंगलियों से मेरी ठोड़ी को ऊपर उठाया और प्रसन्न भाव से मुसकराते हुए कहा:

"मतलब यह कि तुम्हे किताबे पढने का शौक है, क्या ठीक है न? कौन-कौन सी किताबे पढ चुके हो?"

जब वह मुसकराती तो और भी सुन्दर लगती। मै अचकचा गया और हडबडाहट मे जो दो-चार नाम याद आए, गिना दिए।

"इन पुस्तको मे क्या चीज तुम्हे अच्छी लगी?" उसने मेज को अपनी उंगलियो से बजाते हुए पूछा।

उसके वदन से फूलो की तेज और मीठी महक आ रही थी जिसमे घोडे के पसीने की गंध भी कुछ अजीब ढग से मिली हुई थी। अपनी लम्बी बरौनियो की ओट मे से वह मुझे बड़े ध्यान से परख रही थी। यह पहला अवसर था जब किसीने इस तरह मेरी ओर देखा था।

कमरा इतना छोटा मालूम होता था मानो वह किसी पक्षी का घोसला हो—इस हद तक वह सुन्दर गद्देदार मेज-कुर्सियो से भरा था। खिडकियाँ पौधो की घनी हरियाली मे छिपी थी। साझ की धुधली गुलाबी रोशनी में तन्दूर के बर्फ की भाति सफेद टाइल चमक रहे थे। पास ही मे काला प्यानो रखा था। दीवारो पर गिलट के धुधले चौखटो मे जडी सनदे लटक रही थी। सनदो का कागज मटमैला पड गया था और उन पर स्लाव लिखावट मे कुछ लिखा था। प्रत्येक चौखटे से एक डोरी लटकी थी

जिसके छोर में एक बटी सी मोहर झूल रही थी। ये सभी चीज, मेरी ही भांति, विनत और श्रद्धाभाव से उसकी ओर देख रही थी।

मुझसे जितना बन सका, मैंने बताया कि मुसीबता ने मेरे जीवन को कितना बोझिल और कठिन बना दिया है, और यह कि पुस्तकें पढने से कुछ देर के लिए जी जरा हल्का हो जाता है।

"क्या सचमुच?" उठते हुए उसने अचरज से कहा।—"तुमने बहुत ही अच्छे ढग से अपनी बात कही, और मुझे लगता है कि तुमने जो कहा वह ठीक है किताबें मैं तुम्हें खुशी से दूगी, लेकिन इस वक्त मेरे पास कोई नहीं है हा, याद आया, अगर चाहो तो अभी इसे ले जा सकते हो।"

काउच पर पीली जिल्द की एक पुरानी-सी पुस्तक पडी थी। उसे उठाकर उसने मुझे दे दिया।

"जब इसे पढ चुको तो इसका दूसरा हिस्सा ले जाना—चार हिस्सा में यह खत्म होती है।"

मेश्चेरस्की लिखित "पीतमबर्ग के रहस्य" बगल में दबाए म वहां से लौट आया, और बडे ध्यान से उसे पढने बैठ गया। लेकिन मै शीघ्र ही उसम उकता गया और मैड्रिड, या लदन अथवा पेरिस के 'रहस्यो' के मुकाबिले में पीतर्सबर्ग के 'रहस्य' मुझे बहुत ही बोझिल मालूम हुए। लेकिन कर पुस्तक में मुझे एक ही चीज पसन्द आई। यह चीज थी लाठी और आजादी के बीच सवाद

"म तुमसे बढ कर हू," आजादी बोली,—"क्योंकि मेरे पास बुद्धि है।"

"ओह नहा, मैं तुमसे बढ़ कर हूँ, क्योंकि म सबल हू', लाठी ने तुरन्त जवाब दिया।

कुछ देर तक दोनों बहस करती रहीं और फिर गुस्सा कर लड़ने पर उतर आईं। लाठी ने आजादी की खूब मरम्मत की, और जहाँ तक मुझे याद है घायल हो जाने के कारण उसे अस्पताल ले जाया गया जहां उसने दम तोड़ दिया।

पुस्तक के पात्रों में एक निहिलिस्ट पात्र भी था। मुझे याद है कि पुस्तक के लेखक प्रिन्स मेश्चेरस्की ने इस पात्र को एक ऐसा विषैला हौवा बनाकर पेश किया था जिसकी नजर पड़ने से चूजे वहीं-के-वहीं ढेर हो जाते है। मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो निहिलिस्ट शब्द एक भद्दी गाली हो जिसका इस्तेमाल उस समय किया जाता है जब किसी को नीचे गिराना हो, जब उसे गदा और भद्दा सिद्ध करना हो। इसके अलावा और कुछ मेरे पल्ले नही पड़ा, और इस बात मे मेरा जी भारी हो गया। मुझे लगा कि अच्छी पुस्तको को समझना मेरे बूते से बाहर है। पुस्तक के अच्छी होने मे मुझे रत्ती-भर भी सन्देह नही था। मै यह सोच तक नही सकता था कि इतनी सुन्दर और रोबदार स्त्री का बुरी पुस्तको से कभी कोई लगाव हो सकता है।

"क्यो, पसन्द आई?" जब मै मेश्चेरस्की का उपन्यास लौटाने गया तो उसने पूछा।

मुझसे यह स्वीकार करते नही बना कि पुस्तक अच्छी नहीं लगी। डर था कि कही वह बुरा न मान जाए।

वह केवल हँस दी और पर्दा उठाकर अपने सोने वाले कमरे मे गायब हो गई। कमरे मे से वह लौट कर आई तो उसके हाथ मे मोरक्को की नीली जिल्द बधी एक पुस्तक थी।

"यह तुम्हे अच्छी लगेगी। लेकिन इसे गदा न कर लाना,—समझे!"

इसमे पुश्किन की कविताएँ थी। एक ही बैठक मे मै सारी

कविताएँ पढ गया। किसी अत्यत सुन्दर वातावरण म पहुच जाने पर जैसा मालूम होता है, ठीक वैसा ही मेरे साथ भी हुआ—एक बार में ही सभी कुछ अपने हृदय में समेट कर रखने के लिए मेरा जी ललक उठा। ऐसा मालूम हाता मानो दलदल में से निकलने के बाद कोई हरियाली जगह आँखो के सामने आ गई जहाँ सूरज चाँदी बरसा रहा था, और चारो ओर फूल ही फूल खिले थे। लगा, जैसे किसी ने जादू कर दिया हो। एक क्षण के लिए पाव ठिठके और फिर, पूर्णतया उन्मुक्त होकर, उस सुन्दर स्थल का चप्पा-चप्पा छान डालने के लिए मचल उठें, ऐसी कोई शक्ति नही जो उन्हे रोक सके। पाव रोके नहीं रुकते, नम घास का प्रत्येक स्पर्श हृदय म सिहरन पैदा करता है। खुशी की एक लहर-सी दौड जाती है।

पुश्किन की कविताओ ने, उनकी सादगी और सगीत ने, मुझपर कुछ ऐसा जादू किया कि उनके सामने गद्य फीका और अटपटा मालम हाता, उसके पास तक फटकने का जी न चाहता। "रुसलान और लुदमिला" का कथा-प्रवेश ता मानो नानी की श्रेष्ठतम कहानियो का निचोड था और कुछ पक्तियाँ इतनी सुन्दर और पूर्ण थीं कि मेरे रोम-रोम में बस गईं

पहुच न पाया मानव जहाँ और वहा, उन अछूते पथो में,
दिखाई देते थे पद-चिह्न अनजाने जन्तुओ के

इन अद्भुत पक्तियो को मै बार-बार गुनगुनाता और मेरी आँखो के सामने हर डग पर ओझल हो जाने वाले उन पथो का चित्र सजीव हो उठता जिनसे कि मै खूब परिचित था, वे पगडडियाँ मेरी आँखो के सामने उभर आतीं जिनकी रौंदी हुई घास किसी

के अभी-अभी उधर से गुजरने की कहानी कहती और घास की दबी-कुचली पत्तियो पर ओस के कण पारे की बूंदो की भांति अभी भी चमकते होते। भरी-पूरी ध्वनि से युक्त पंक्तियां सहज ही जबान पर चढ जातीं, उन्हे बार-बार गुनगुनाने को जी चाहता। शब्दो के साथ भाव नगीने की भांति जडे होते, हर बात में एक अजीब निखार दिखाई देता। मेरा रोम-रोम खुशी से भर जाता, जीवन अधिक आसान और सुहावना मालूम होता। कविताएं क्या थीं, असल मे नये जीवन की पेशवा थीं। पढना भी कितने आनन्द की चीज है!

पुश्किन की पद्यमय गाथाएं मेरे हृदय और समझ के लिए सब से निकट थीं। मैने उन्हे इतनी बार पढा कि वे मुझे जबानी याद हो गई। जब मै सोने के लिए जाता तो चुपचाप लेट कर अपनी आँखे बद कर लेता, उन्हें मन-ही-मन दोहराता और मुझे पता भी न चलता कि कब नीद आ गई। कभी-कभी मै अफ़सरो के साईसों-अरदलियो को भी उन्हे सुनाता। उनके चेहरे खिल जाते और वे चकित होकर कसमे खाते,—गालियाँ प्रशंसा के उद्‌गार बन कर उनके मुंह से प्रकट होतो। सिदोरोव मेरा सिर थपथपाता और धीमे स्वर मे कहता.

"ओह कितनी सुन्दर!"

मालिको से यह छिपा न रहा कि आजकल मै किस रग मे डूबा हूँ। बूढी मालकिन मुझे डाँटना-झिडकना शुरू करती:

"इसने किताबे क्या पढना शुरू किया, नाक में दम कर दिया। चार दिन से समोवर गदा पड़ा है, लेकिन नवाबजादे को तो पढने से ही फुरसत नहीं, उसे साफ कौन करे? एक दिन चिमटी से दीदे फोड दूंगी, तभी यह पढना छूटेगा!"

लेकिन पुश्किन की कविताओं के सामने चिमटी की भला क्या बिसात? जवाब मे मैं उसकी पंक्तियाँ गुनगुना उठता

—डायना की नानी
हृदय वाला, आत्मा काली
और खाला शैतान की ।

वह सुन्दर स्त्री मेरी नजरो म और भी ऊँची उठ गयी जो इतनी बढिया पुस्तकें पढती थी। कटर की पत्नी की भांति वह चीनी की गुडिया मात्र नही थी।

पुस्तक लौटाने के लिए मैं उसके पास पहुंचा। उसे लौटाते समय मेरा जी भारी हो गया। उसने पुस्तक मेरे हाथ से ले ली और विश्वास के साथ बोली

"बालो, यह तो पसद आई न? क्या तुमने कभी पुश्किन का नाम सुना है?"

पुश्किन के बारे म एक पत्रिका में मै कुछ पढ चुका था। लेकिन मैंने इसका जिक्र तक नही किया। मै खुद उसके मुह से सुनना चाहता था कि वह क्या कहती है।

पुश्किन के जीवन और मृत्यु का थोडे मे कुछ हाल बताने के बाद ग्रीष्म की उजली धूप की भांति मुसकरा कर उसने पूछा

"देखा तुमने, किसी स्त्री से प्रेम करना कितना खतरनाक होता है?"

अब तक जितनी भी पुस्तकें मै पढ चुका था, उनके हिसाब से तो निश्चय ही खतरनाक था—खतरनाक, लेकिन साथ ही अच्छा भी।

"खतरनाक चाहे जितना हो, फिर भी सब इस बला को अपने हृदय से लगाते है," मैने कहा,—"स्त्रियों को भी इस बला का कुछ कम भुगतान नही करना पड़ता!"

पलके झुका कर उसने मेरी ओर देखा, जैसे कि वह हर चीज़ को देखती थी। फिर गम्भीर स्वर मे बोली:

"क्या सचमुच? तुमने जो कहा, क्या सचमुच वैसा ही अनुभव भी करते हो? अगर हाँ तो मै यही कहूँगी कि इस सत्य को कभी आँखो की ओट न होने देना।"

इसके बाद उसने पूछना शुरु किया कि कौन-कौन सी कविताएँ मुझे खास तौर से अच्छी लगी।

मै इसे बताने लगा। कई कविताएँ मै ज़बानी सुना गया। सुनाते समय उछाह के साथ मै हाथ भी हिलाता जाता। वह चुपचाप, सन्नाटा खीचे, सुनती रही। फिर वह उठी और कमरे में टहलने लगी। गम्भीर स्वर मे बोली:

"मेरे बेशकीमती नन्हे बन्दर, तुम्हे स्कूल में जाना चाहिए। मैं इस बारे मे सोचूँगी। जिनके यहाँ तुम काम करते हो, क्या वे तुम्हारे रिश्तेदार है?"

जब मैने बताया कि हाँ, रिश्तेदार है, तो उसने कुछ इस अन्दाज से 'ओह' कहा मानो यह भी मेरा कोई कसूर हो।

इसके बाद उसने मुझे "बेरान्गेर के गीतों" का एक सग्रह दिया। यह बहुत ही बढ़िया सुनहरी कोर और मोरक्को की लाल जिल्दवाला सस्करण था। गीतो के साथ चित्र भी थे। इन गीतो में तीखी, झुलसा देने वाली कड़ुवाहट भी थी और सभी बाधा-बन्धनो को तोड़ कर बहने वाली खुशी की लहर भी। इन दोनो का हृदय पर छा जाने वाला अद्‌भुत मेल था। मै पढता तो एक नशा-सा छा जाता।

पंक्तियाँ भी मुझे जबानी याद हो गई और जब भी अरदलियों के रसोईघर में जाने का मौका मिलता, बेहद उत्साह के साथ मैं उन्हें सुनाता।

लेकिन, निम्न पंक्तियों की वजह से, मुझे जल्दी ही यह सब छोड़ देना पड़ा:

आयु स्त्री की किसने जानी,
घटी रहती है सदा जवानी।
युवती सत्रह बरस की
मानो हो कली अछूती!

इन पंक्तियों के बाद स्त्रियों को लेकर अत्यन्त घिनौनी चर्चा चल पडी। बुरी तरह से उनकी टाँग खींची गई। अपमान की भावना से मेरा दिमाग भन्ना गया, गुस्से के मारे मैंने कडाही उठाई और उसे सैनिक येरमोखिन के सिर पर दे मारा। फिर क्या था, उसने मुझे दबोच लिया। सिदोरोव और दूसरे अरदलियों ने लपक कर भालू-ऐसे उसके पंजों से मुझे छुडाया। इसके बाद अफसरों के रसोईघर में जाने का मैंने नाम नहीं लिया।

बाहर घूमने-फिरने की मुझे मनाही थी, और सच तो यह है कि मटरगश्ती के लिए समय भी नहीं मिलता था। पहले से कहीं ज्यादा काम मुझे अब करना पडता था। बरतन माँजने, झाड़-बुहारी देने और बाजार से सौदा-सुलफ लाने के अलावा मैं हर रोज एक बड़े से चौखटे पर कीलों से कपडा कसता, फिर मालिक के खींचे हुए डिजाइन उसपर चिपकाता, इमारती तख़मीनों की नकलें उतारता और ठेकेदारों के बिलों की जाँच-पडताल करता। मेरा मालिक भी, मशीन की भांति, सुबह से लेकर रात तक काम में जुटा रहता।

मेले के मैदान में सार्वजनिक इमारतों का निर्माण कार्य उन दिनों सौदागरों के निजी हाथों में था। बाजारों को फिर से बनाने के काम में खूब आपाधापी चल रही थी। मेरे मालिक ने भी पुरानी दुकानों की मरम्मत करने और नयी दुकानें बनाने का ठेका लिया था। सीधी मेहराबों, रोशनदानी खिड़कियों और इसी तरह की अन्य चीजों के नक्शे उसने बनाए थे। इन नक्शों तथा इनके साथ लिफाफे में पच्चीस रूबल का एक नोट लेकर मैं बूढ़े इंजीनियर के पास पहुंचता। वह लिफाफा संभाल कर रख लेता और नक्शों पर लिख देता "नक्शे सही हैं। सारा काम इनके मुताबिक मेरी निजी निगरानी में हुआ है।" अंत में वह अपने दस्तखत बना देता। कहने की आवश्यकता नहीं कि निर्माण-कार्य नक्शों के मुताबिक नहीं हुआ था। जांच और निगरानी करने का तो सवाल ही नहीं उठता। अगर वह चाहता तब भी शायद खुद मौके पर जाकर जांच-पड़ताल नहीं कर सकता था। बीमारी ने उसे बेकार कर दिया था, और स्थायी रूप से वह घर के भीतर ही बंद रहता था।

इस सिलसिले में इंस्पेक्टर तथा अन्य लोगों को भी मैं घूस का पैसा देने जाता और उनसे, अपने मालिक के शब्दों में, 'विभिन्न कानूनों को ताक पर रखने का परमिट' ले आता। मेरे इन सब कामों से खुश होकर मालिकों ने मेरी देख-भाल में छूट दिखाई कर दी। शाम के समय जब सभी के बाहर घूमने जाते तो आराम से बैठ कर मैं उनका इन्तजार कर सकता था। ऐसा कभी ही होता, हफ्ता-अठवारे ही वे घर से बाहर निकलते, लेकिन जब भी जाते तो आधी रात के बाद लौटते। इस तरह मुझे कई घंटे मिल जाते, चाय का उनके सारा दहेज सन्दूकों के ढेर पर मैं अड्डा जमाता और अपनी रातों को पढ़ने की फिकिर। पर यह समाप्त

छलछलाते सगीत, छेड़छाड़ तथा चुहल की उन आवाजो को सुनता तो कि वहाँ से आती रहतीं।

खिडकियाँ खुली होतीं। परदो और अगूर की वेलो की झिरियो से मुझे अफसरो की सुन्दर आकृतियो की झलक दिखाई देती जो कमरे में इधर-से-उधर मंडराते रहते। अद्भुत सादगी और सौन्दर्य से सदा सज्जित मेरी रानी मानो कमरे में तैरती मालूम होती और गोल-मटोल थलथल मेजर उसके दामन से चिपका लुढकता-पुढकता रहता।

अपनी खूबसूरत पड़ोसिन को जब मै देखता, या जब भी मै उसके वारे में सोचता, रानी मारगोट की याद मुझे हो आती,—फ्रेंच उपन्यासो की नायिकाएँ मेरी आँखों के सामने तैरने लगती। खिड़की पर मेरी आँखें जमी होतीं, और अपने-आप से मै कहता:

"सो यह है वह इन्द्रधनुपी जीवन जिससे फ्रासीसी उपन्यासो के पन्ने रगे रहते है!" मेरा जी अदवदा कर भारी हो जाता, और मेरा छोटा-सा हृदय ईर्ष्या से वल खाने लगता जब मै रानी मारगोट के चारो ओर लोगों को इस तरह मडराते भनभनाते देखता जैसे फूल के चारो ओर शहद की मक्खियाँ मडराती है।

कभी-कभी, लम्वे कद और गम्भीर चेहरे वाले एक अफसर पर मेरी नज़र पडती। अन्य लोगो के मुकाविले में वह वहुत कम आता था। उसके माथे पर घाव का निशान था, और उसकी आँखे खूब गहरी धंसी थीं। वह हमेशा अपनी वायोलीन साथ लेकर आता। वायोलीन वजाने में उसे कमाल हासिल था। तारो को जब वह छेडता तो राह चलते लोग ठिठक कर सुनने लगते, मोहल्ले के लोग लकडियो के ढेर पर आकर वैठ जाते, यहाँ तक कि मेरे मालिक भी—अगर वे उस समय घर पर होते—खिड़की खोलकर मुग्ध भाव से सुनते, वायोलीन वजाने वाले की सराहना

लगता है जब सचमुच की राज-रानी की भांति वह सम्पन्न जीवन विताती है। कल्पना मे नये स्कोवॅलेव का रूप धारण कर मै तुर्को के खिलाफ युद्ध करता, भारी रकमें लेकर तुर्क वन्दियो को अपने चगुल से मुक्त करता, नगर के सब से अच्छे हिस्से— ओत्कोस मे—उसके लिए एक घर बनवाता, ताकि उसे हमारे इस घर में न रहना पडे, हमारे इस मोहल्ले से वह दूर चली जाए जहाँ सब कोई एक स्वर से उसके बारे मे गदी बाते करते और उसपर कीचड उछालते है।

हमारे अहाते मे काम करने वाले सभी नौकर-चाकर और उसमे आवाद सभी लोग, खास तौर मे मेरे मालिक, रानी मारगोट के बारे मे भी वैसी ही कुत्सित बातें करते जैसी कि वे दर्जी की पत्नी के बारे मे करते थे, अन्तर इतना ही था कि इसका जिक्र करते समय वे कुछ अधिक चौकन्ने हो जाते थे, धीमे स्वरो और आँख के इशारो से काम लेते थे।

शायद वे उससे डरते थे। कारण कि वह किसी ऊँचे कुल के व्यक्ति की विधवा पत्नी थी। तूफायेव ने एक बार मुझे बताया था,— और वह निरक्षर भट्टाचार्य नही, वल्कि पढना जानता था और सदा बाइवल का पाठ करता रहता था,—कि उसकी दीवार पर लटकी सनदे रूस के विभिन्न जारो ने—गोदुनोव, अलेक्सेई और प्योत्र महान ने—उनके पति के दादा-परदादाओ को अता की थीं। लोग शायद इसलिए भी उससे डरते थे कि कही वह नीलम की मूठ वाले अपने चाबुक से उनकी खबर न लेने लगे। प्रसिद्ध था कि एक बार इस चाबुक से उसने किसी अफसर की खूब मरम्मत की थी।

लेकिन फुसफुसा कर और धीमे स्वरो मे कहे गए शब्द केवल इस लिए अच्छे नही हो जाते कि वे जोरो से नही कहे गए। मेरी रानी के चारो ओर कुत्सा और दुश्मनी के बादल मडराते। वीक्तर

दून की हाँकता कि एक दिन आधी रात के बाद लौटते समय उसने रानी मारगोट के शयनकक्ष की खिडकी में झाँक कर देखा। वह काउच पर अधनगी-सी बैठी थी और मेजर घुटनों के बल झुका हुआ उसके पाँव के नाखून काट रहा था और स्पज से उसके पाँव पखार रहा था।

यह सुनकर बूढ़ी मालकिन ने ज़मीन पर थूका और उसे झिडक दिया। छोटी मालकिन के गाल बुरी तरह लाल हो गए।

"ओह बीस्तर!" वह चीख उठी।—"तुझे जरा भी शर्म लिहाज नहीं है? और इन बड़े लोगों की चाल-ढाल भी निराली है—सौ घाट का पानी पिये बिना उन्हें चैन नहीं आता।'

मालिक केवल मुसकरा कर रह गया, बोला कुछ नहीं। इसके लिए मन-ही-मन मैंने उसका भारी अहसान माना। लेकिन यह डर बराबर बना रहा कि अपनी ज़बान खोल कर इस नक्कारखाने में किसी भी क्षण वह अपना स्वर मिला सकता है। स्त्रियों ने खूब सिसकारियाँ भरीं, आह और ओह का अम्बार लगा दिया और खोद-खोद कर एक-एक बात उन्होंने बीस्तर से पूछी स्त्री ठीक किस तरह बैठी थी, और मेजर ठीक किस प्रकार उसके सामने झुका हुआ था, और बीस्तर चुने हुए निवाले उनके सामने फेंकता रहा

"मेजर का मुह एकदम चुकन्दर की भाँति लाल था और जीभ बाहर निकल आई थी "

मुझे इसमें नंगपन की ऐसी कोई बात नहीं दिखाई दी कि मेजर मेरी रानी के पाँव के नाखून काट रहा था। लेकिन यह बात मेरे मन में नहीं जमी कि उसकी जीभ बाहर निकली हुई थी। मुझे लगा कि यह घिनौना झूठ उसका मनगढ़त है।

"अगर यह सचमुच में नंगपन था तो तुम खिड़की के भीतर

नजर गड़ाए देखते कैसे रहे?" मैंने कहा।—"तुम कोई बच्चे तो हो नही!"

झिड़कियों की उन्होंने मुझपर बौछार की, लेकिन उनकी झिडकियों की मुझे चिंता नही थी। मेरे मन मे एक ही लगन थी—लपक कर जीने से नीचे उतर जाऊँ और मेजर की भांति अपनी रानी के सामने घुटनों के वल झुक कर कहूँ:

"तुम यहाँ से चली जाओ, इस घर को तुम छोड दो, मेरी वात मानो, यह घर तुम्हारे लायक नही है।"

दूसरी तरह के जीवन और दूसरी तरह के लोगों को अपनी आँखों से देखने-जानने के वाद यह अहाता और इस अहाते में वसने वाले मुझे और भी ज्यादा घिनौने मालूम होते, उन्हे देखकर मेरा मन और भी भन्ना उठता। कुत्सा का ऐसा जाल यहाँ फैला था कि उसमे सभी फसे थे,—एक भी माई का लाल ऐसा न था जो उससे वचा हो। फौज का पादरी जो फटे हाल और सदा रोगी-सा आदमी था, उसे भी इन लोगो ने नहीं छोड़ा था—चरित्रहीन पियक्कड के रूप में उसे वदनाम कर रखा था। मेरे मालिकों की जवान जव चलती तो वे सभी अफसरो और उनकी पत्नियों को एक सिरे से पाप के कुण्ड मे डुवा देते। सैनिक जव स्त्रियो के वारे मे वाते करते तो मुझे उवकाई आने लगती, लेकिन मेरे मालिक उन्हे भी मात कर जाते। उनके फतवो की असलियत, जिन्हे वे दूसरो पर करते थे, मै खूव अच्छी तरह पहचानता था। दूसरो की छीछालेदर कसना, उनके नुक्स निकाल कर रखना, एक ऐसा मनोरजन है जिस पर कुछ खर्च नहीं करना पडता, और वे-पैसे का यह मनोरजन ही उनका एक मात्र सहारा था। ऐसा मालूम होता मानो ऐसा करके वे खुद अपने जीवन की ऊव और घिसघिस का वदला चुका रहे हों।

रानी मारगोट के बारे में जब वे एक से एक गंदे किस्मे बघारने लगते तो मेरा हृदय बुरी तरह उमडता-घुमडता और ऐसी-ऐसी बात मुझे झझोड डालती जिनसे कि उस आयु में मेरा कोई वास्ता नही होना चाहिए था। कुत्सा फैलानेवालो के खिलाफ मेरे हृदय में इतने जोरो से घृणा सिर उठाती कि मैं अपने को काबू में न रख पाता, जी करता कि उनका मुँह नोच लूँ, उनके लिए जीना हराम कर दूँ और सदा के लिए उनका दुश्मन बन जाऊं। लेकिन कभी-कभी अपने पर और अन्य सब लोगो पर तरस की भावना मुझे घेर लेती। तरस की यह गुमसुम भावना मुझे घृणा से ज्यादा असह्य मालूम होती।

रानी के बारे मे मैं जितना जानता था, उतना वे नही, और मैं मन-ही-मन डरता कि कही उन्हें भी वह सब न मालूम हो जाए जो मै जानता हूँ।

रविवार के दिन सुबह के समय जब घर के लोग गिरजा चले जाते तो मैं अपनी रानी के पास पहुँच जाता। वह मुझे अपने शयनकक्ष में ही बुला लेती, और मैं सुनहरी गद्दियो से सुसज्जित एक आरामकुर्सी पर बैठ जाता, छोटी लडकी उचक कर मेरी गोदी में सवार हो जाती और मै उसकी माँ से उन किताबो के बारे में बाते करता जिन्हे मैं पढ चुका था। अपनी छोटी-छोटी हथेलियो पर गालो को टिकाए वह एक चौडे पलंग पर लेटी रहती, कमरे की अन्य सभी चीजो की भाति उसके बदन पर भी सुनहरे रंग की रजाई पडी होती, चोटी में गुथे हुए काले बाल कभी उसके गेहुवा कधे पर लटकते और कभी पलग की पट्टी से खिसक कर फर्श तक झूलने लगते।

मेरी बात सुनते समय कोमल नजरो से वह मुझे देखती और हल्की सी मुसकराहट के साथ कहती

"क्या सचमुच?"

मुझे ऐसा मालूम होता मानो सचमुच की रानी की भांति किसी ऊंचे सिहासन से वह अपनी मुसकान का दान कर रही हो। गहरी और कोमल आवाज मे जब वह बोलती तो मुझे ऐसा अनुभव होता मानो वह कह रही हो:

"मै जानती हूँ कि मै अन्य लोगो से ऊंची और उत्कृष्ट हूँ, और यह कि वे मेरे लिए किसी मसरफ के नही है।"

उसकी आवाज से सदा यही एक ध्वनि निकलती।

कभी-कभी मै उसे आईने के सामने एक नीची कुर्सी पर बैठे हुए बाल सवारते देखता। उसके बाल भी उतने ही घने और लबे थे जितने कि नानी के। वे उसके घुटनो और कुर्सी की बाँहो पर छा जाते, उसकी पीठ पर से झूमते हुए फर्श को छूने लगते। आईने में मुझे उसकी गदराई हुई छातियाँ दिखाई देती। मेरी मौजूदगी मे ही वह अपनी चोली कसती और मोजे पहनती, लेकिन उसका नंगा बदन मेरे हृदय में शर्मनाक भावनाएँ नही जगाता, बल्कि उसका सौन्दर्य एक आह्लादपूर्ण गौरव का मुझमे सचार करता। उसके बदन से सदा फूलों की महक निकलती जो वासना में डूबे विचारो और भावनाओ से कवच की भाति उसकी रक्षा करती।

मै मजबूत बदन का और खूब भला-चगा था। स्त्री-पुरुष के सबधों के भेद मुझसे छिपे नही थे। लेकिन इन सबधो के बारे मे लोगो को मै इतने गदे और हृदयहीन ढग तथा इस हद तक कुत्सित रूप मे रस लेते हुए बाते करते सुन चुका था कि इस स्त्री के साथ किसी पुरुष के आलिगन की मै कल्पना तक नही कर सकता था, मेरे मन में यह बात खूब गहरी पैठ गई थी कि उसके शरीर को अपने निर्लज्ज और दुस्साहसी हाथों से छूने का किसी को अधिकार नही है। मुझे पक्का यकीन था कि रसोईघरो और

खोने-खोने वाले प्रेम से रानी मारगोट का कोई वास्ता नहीं हो सकता। वह जरूर ही किसी अन्य, ज्यादा ऊंचे और भले आनन्द का, एक दूसरे ही प्रकार के प्रेम का, भेद जानती होगी।

लेकिन एक दिन काफी दोपहर बीते जब मैंने उसके बैठने के कमरे में पाँव रखा तो उसके खिलखिला कर हँसने और शयनकक्षवाले दरवाजे पर पड़े पर्दे के पीछे किसी पुरुष के बोलने की आवाज सुनकर मैं ठिठक गया।

"अरे जरा ठहरो तो!" वह कह रहा था। "तुम भी गजब करती हो। कोई क्या कहेगा?"

मुझे लगा कि उलटे पाँव लौट जाना चाहिए, लेकिन मेरे पाँवों ने मानो हिलने से इन्कार कर दिया।

"कौन है?" वह चिल्लाई।—"अरे, तुम हो? भीतर चले आओ!"

कमरा फूलों की महक में डूबा था। खिड़कियों पर पर्दे खिंचे हुए थे। कमरे में अंधेरा-सा छाया था। रानी मारगोट ठोड़ी तक अपने बदन पर रजाई खींचे पलंग पर लेटी थी। उसके पास ही, दीवार की ओर मुँह किए, वह वायलीन-वादक अफसर बैठा था। वह केवल एक कमीज पहने था। कमीज का गला खुला था और दाहिने कंधे से लेकर सीने तक घाव का एक निशान था — इस हद तक चटख लाल कि इस अध-उजियाले कमरे में भी साफ नजर आता था। उसके बाल कुछ बहुत ही अटपट ढंग से बिखरे हुए थे। उसके उदास तथा घाव-लगे चेहरे को मैंने पहली बार मुसकराते हुए देखा। वह अजीब ढंग से मुसकरा रहा था और अपनी बड़ी-बड़ी स्वप्न-भरी आँखों से रानी की ओर इस तरह देख रहा था मानो उसके सौन्दर्य को उसने पहली बार ही देखा हो।

"यह मेरा मित्र है", रानी मारगोट ने कहा, और मैं समझ नही पाया कि किसके लिए उसने इन शब्दो का इस्तेमाल किया था: मेरे लिए अथवा उस अफसर के लिए।

"अरे, तुम वही ठिठक कर क्यों खड़े-खड़े रह गए?" उसकी आवाज जैसे कही बहुत दूर से आती मालूम हुई। — "यहां नजदीक आ जाओ न?"

जब मैं निकट पहुँचा तो उसने अपनी उघरी हुई गर्म बाँह मेरे गले मे डाल दी और बोली:

"बड़े होने पर तुम भी जीवन के इस सुख का आनन्द ले सकोगे, समझे! अब जाओ!"

किताब को मैंने ताक पर रख दिया, एक दूसरी पुस्तक उठाई, और वहाँ से चला आया।

मुझे लगा जैसे कोई चीज मेरे हृदय मे कचर गई हो। स्पष्ट ही एक क्षण के लिए भी मैं यह नहीं सोच सकता था कि मेरी रानी भी अन्य साधारण लोगो की भाति प्रेम करती होगी, न ही उस अफसर के बारे में ऐसी कोई बात मेरे दिमाग मे आती थी। मैं उसे मुसकराता देखता रहा। उसकी मुसकराहट मे बच्चो ऐसी खुशी छलछला रही थी, अचानक अचरज का पुट उसमे मिला था और उसके उदास चेहरे की जैसे एकदम कायापलट हो गई थी। उसका हृदय, निश्चय ही, उसके प्रेम से जगमगा रहा था। और यह कोई अनहोनी बात नही थी — ऐसा भला कौन था जो उसे प्रेम करने से अपने-आप को रोक सकता? और एक ऐसे आदमी पर जो इतने सुन्दर ढग से वायोलीन बजाता था और भावो मे खूब गहरे डूब कर कविताएँ सुनाता था, उसका प्रेम न्योछावर करना भी कोई अनहोनी घटना नही था।

अपने मन को समझाने के लिए मैं इस तरह सोच रहा था। यही इस बात का सूचक था कि कहीं कोई फाँस है जो हृदय को कुरेदती है, कि जो कुछ मैंने देखा उसे उतने सहज भाव से नहीं पचा सका जितना कि मैं दिखाता था। और यह कि खुद रानी मारग्रेट के प्रति मेरे लगाव में जरूर कहीं न कहीं कोई खोट है जिसे मैं आँखों की ओट करना चाहता था। मुझे ऐसा लगा जैसे कोई चीज़ खो गई हो। गहरी उदासी ने मुझे घेर लिया। मेरा हृदय दुखता और दिमाग़ पर एक भूत सा सवार रहता।

एक दिन मुझसे नहीं रहा गया। मेरे दिमाग पर जैसे शैतान सवार हो गया और मैंने जम कर उत्पात मचाया। पुस्तक लौटाने जब मैं अपनी रानी के पास पहुँचा तो उसने कड़ी आवाज़ में कहा

"मैं कभी सोच भी नहीं सकती थी कि तुम इतना जंगलीपन करोगे। नादानी की भी एक हद होती है।"

मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सका, मेरा हृदय भर आया और मैंने उसे बताना शुरू किया कि उस समय जब लोग उसके बारे में वाहीवाही बातें करते हैं तो मेरे हृदय पर क्या गुज़रती है, जीवन से कितनी घृणा मैं करने लगता हूँ। वह मेरे सामने खड़ी थी, उसका हाथ मेरे सिर पर रखा था। पहले तो वह सन्नाटा खींच चुपचाप सुनती रही, फिर एकाएक खिलखिला कर हँसी और मुझे अपने हाथ से थपथपाते हुए बोली

"बस-बस, यह कोई नयी बात नहीं है जो तुम बता रहे हो। मैं सब जानती हूँ। समझे, मुझसे कुछ भी छिपा नहीं है, सब-सब बात मुझे मालूम है।"

इसके बाद मेरे दोनों हाथ उसने अपने हाथों में ले लिए और बहुत ही कोमल आवाज़ में बोली

था और जानता था कि मेरे लिए उनका होना कितना जरूरी
उन्हें मैं पढ़ता और एक अडिग आत्मविश्वास से मेरा हृदय
जाता — मुझे लगता कि दुनिया में मैं अकेला नहीं हूँ और, देर
सवेर, मैं अपना रास्ता खोज ही लूँगा!

नानी मुझसे मिलने आती। मैं उसे रानी मारगोट के बारे
बताता। मुग्ध कर देने वाले शब्द मेरे मुंह से निकलते। ना
सुनती, और चुटकी में भरपूर नास लेकर सूंघते हुए कहती:

"जी खुश हो गया सुनकर। भले लोगों की इस दुनिया
कमी नहीं। आँखें उठा कर जरा देखने भर की जरूरत है,
नहीं हो सकता कि वे न मिलें।"

एक बार उसने कहा:

"कहो तो मैं भी उससे मिल जाऊँ। तुम्हारी ओर से उस
शुक्रिया ही अदा कर आऊँगी।"

"नहीं, तुम्हारा जाना ठीक नहीं।"

"अच्छी बात है, मैं नहीं जाऊँगी। यह दुनिया भी कित
सुन्दर है, ऐ मेरे भगवान! मैं तो इससे कभी विदा न लूँ!"

मुझे स्कूल भेजने की अपनी इच्छा को रानी मारगोट पू
होते नहीं देख सकी। ईस्टर के बाद सातवें रविवार को, त्योह
के दिन, एक ऐसी दुःखद घटना घटी कि उसने मेरा बण्टाढार
कर दिया होता।

त्योहार से बहुत पहले ही मेरी पलकें सूज गई थीं अ
मेरी आँखें करीब-करीब पूरी पट हो गई थीं। मेरे मालिक घबर
कि कहीं मेरी आँखें न जाती रहें। खुद मेरे हृदय में भी यही
समाया था। वे मुझे जान-पहचान के एक डाक्टर के पास ले गा
हेइनरिख रोदजेविच उसका नाम था। मेरी पलकों को उलट क
उसने रोहों को फोड़ दिया और आँखों पर पट्टी बांधे निपट अ

बार मे अधा बना कई दिन तक मै दुख से कराहता रहा। त्योहार के दिन पट्टी खुली और बिस्तरे से उठते समय ऐसा मालूम हुआ मानो मै कब्र में से उठ रहा हू जिसमें मुझे जिन्दा ही दफना दिया गया था। अधा होने से बढकर भयानक और कुछ नहीं। यह एक ऐसी मुसीबत है जिसका नाम लेते जुबान कापती है। जिसके सिर यह मुसीबत पडती है, उसके लिए दस में से नौ हिस्से दुनिया चौपट हो जाती है।

त्योहार का दिन था। आँखो की वजह से दोपहर में ही मुझे सब कामा मे छुट्टी मिल गयी और अरदलिया से मिलने के लिए मै एक के बाद एक सभी रसोईघरो के चक्कर लगाने लगा। गम्भीर तूफाएव का छोडकर अन्य सब नशे में धुत्त थे। साझ हो आई थी। एकाएक येरमोखिन ने सिदोरोव के सिर पर लकडी का ऐसा कुन्दा जमाया कि वह दरवाजे पर ही ढेर हो गया। येरमोखिन की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई, जान बचाने के लिए वह भागा और घाटी में कही छिप गया।

सिदोरोव की हत्या के शोर और अफवाहो से सारा अहाता गूज उठा। बराडे की सीढिया के पास एक छोटी सी भीड जमा हो गई जहाँ, रसाई और फाटक के बीच, सिदारोव निश्चल पडा हुआ था। लोग दबे स्वरो में कानाफूसी कर रहे थे कि पुलिस को बुलाना चाहिए, लेकिन न तो काई पुलिस बुलाने गया और न ही किसी ने उसके बदन को हाथ लगाने का साहस किया।

तभी नतालिया कोजलोवस्काया, जा कपडे धोने का काम करती थी, वहाँ आई। वह बगनी रग की नई फ्राक पहने थी और अपने कधो पर एक सफेद रुमाल डाले थी। तमतमा कर लोगा को इधर-उधर करती और भीड को चीरती वह फाटक पर साग मे पास पहुची और झुक कर उसे देखने लगी।

"काठ के उल्लुओ, यह जिन्दा है!" उसने जोरो से चिल्ला कर कहा। — "जल्दी से ठंडा पानी लाओ!"

"अरे, तुम क्यो वीच में टाँग अड़ाती हो?" उन्होंने चेतावनी दी। — "कही ऐसा न हो कि लेने के देने पड जाएँ!"

"वक नहीं, पानी लाओ, पानी!" उसने इस तरह चिल्ला कर कहा मानो उसे आग वुझाने के लिए पानी की जरूरत हो। इसके वाद, वहुत ही व्यावहारिक ढग से, उसने अपनी नयी फ्राक खींच कर घुटनों पर चढा ली, झटक कर अपना पेटीकोट नीचे खिसका लिया और सैनिक का खून से लथपथ सिर अपनी गोद में रख लिया।

डरपोक लोग जो वहाँ खड़े तमाशा देख रहे थे, भुनभुनाते और भला-वुरा कहते धीरे-धीरे छंट गए। फाटक के अध-उजियाले मे कपड़े धोने वाली स्त्री की छलछलाती हुई आँखों पर मेरी नज़र पडी जो उसके गोल-मटोल चिट्टे चेहरे पर चमक रही थी। लपक कर मै एक डोल पानी ले आया। वह मुझसे वोली कि इसे सिदोरोव के सिर और छाती पर उंडेल दो।

"लेकिन मुझे तर न कर देना, मै मिलने जा रही हूं।" चेताते हुए उसने कहा।

सैनिक को होश आ गया, उसने अपनी आँखे खोली और कराह उठा।

"इसे जरा उठाओ तो," नतालिया ने कहा। उसने उसकी वगल मे हाथ डाले और एक हाथ दूर रह कर जिससे उसके कपड़े खराव न हो, उसने उसे थाम लिया। हम दोनो उसे उठा कर रसोईघर मे ले गए और विस्तर पर लेटा दिया। फिर एक गीले कपड़े से उसने उसका मुँह साफ़ किया, और वाहर जाते हुए वोली :

"कपड़ा गीला करके इसके माथे पर रखते रहना। मैं बाहर जाती हूं और उस दूसरे उल्लू को अभी खोज कर लाती हूं। शैतान कहीं के! अभी क्या है, जब जेल में चक्की पीसनी पड़ेगी, तब सारा नशा उड़ जाएगा!"

खून के दाग लगा अपना पेटीकोट सिमटा कर उसने नीचे उतार दिया और ठोकर मार कर उसे एक कोने में कर दिया। फिर सावधानी से थपथपाकर कलफ चढ़ी अपनी नयी फ्राक की सलवटों को ठीक किया। इसके बाद वह बाहर चली गई।

सितारोव ने अपना बदन लम्बा फैला लिया, एक हिचकी सी ली और दर्द से कराह उठा। काले रंग का खून अभी भी उसके सिर से टपक-टपक कर मेरे पांव पर गिर रहा था। मुझे बड़ी घिन आई, लेकिन डर के मारे मुझसे अपना पांव हटाते नहीं बना।

मुझे बड़ी घुटन मालूम हुई। बाहर हर चीज त्योहार के रंग में रंगी थी और खुशी से छलछला रही थी, बरांडे और दरवाजे नवजात बर्च वृक्षों से सजे थे, हर खम्बे पर मेपल और रोवन वृक्ष की पत्तियों का सिंगार था, मोहल्ले में खुशी की एक लहर हिलोर ले रही थी और प्रत्येक चीज नयी तथा यौवन से इठलाती मालूम होती थी। सवेरे तड़के से ऐसा मालूम हो रहा था मानो वसन्त का यह उल्लास जल्दी ही विदा न होगा और जीवन अब अधिक उजला, कूड़े कर्कट से साफ और खुशी से छलछलाता बीतेगा।

सैनिक ने उबकाई लेकर उल्टी कर दी। गर्म वोडका और प्याज के टुकड़े उसके पेट से बाहर निकल आए, और उनकी दमघोट गंध से रसोईघर भर गया। जब-तब धुंधले तथा चपटे चेहरे और पिचकी नाक खिड़की के शीशों से सटी हुई दिखाई देती, और

चेहरे के दोनो ओर फैली हुई उनकी हथेलियाँ भयावने, बेडौल और बेढगे कानो की भांति मालूम होतीं।

दिमाग कुछ हल्का होने पर सैनिक बड़बड़ाया :

"यह क्या? क्या मै गिर पड़ा था? येरमोखिन? ओह, कितना मारू दोस्त मिला मुझे भी।"

वह खासा, खुमारी मे उसने आँसू बहाए और रोने-झींकने लगा :

"मेरी प्यारी बहन, मेरी नन्ही-मुन्नी गरीब बहन!"

पानी मे भीगा, कीच मे सना और गंधाता, वह उठा और अपने पावों पर खड़े होने का उसने प्रयत्न किया, लेकिन चकरा कर फिर बिस्तरे पर ही ढह गया, और भय से आँखो को टेरते हुए बोला :

"कम्बख्त ने मुझे तो मार ही डाला था।"

यह सुनकर मुझे हँसी आ गई।

"इसमें हंसने की क्या बात है, शैतान के पूत?" धुधली आँखो से मेरी ओर देखते हुए उसने कहा।—"तुम हंसते हो—मेरी इस हत्या पर—कम्बख्त ने मेरा तो एकबारगी, कयामत तक के लिए, काम ही तमाम कर दिया था..."

और बड़बडाते हुए वह मुझे अपने दोनो हाथों से धकेलने लगा।

"पहले तोफेत में पैगम्बर इल्या, दूसरे आड़े वक़्त घोड़े पर सवार सन्त जार्ज, और तीसरे हट जा शैतान मेरे रास्ते से!"

"बस-बस, बहुत न बड़बड़ाओ," मैने कहा।

गुस्से से दहाड़ते हुए उसने अपना पांव उठा कर जमीन पर पटका।

"मुझे मार डाला गया, और तुम..."

उसने अपने भारी, गदे और ढीले हाथ से मेरी आँखो पर ज़ोरो से प्रहार किया। मै चिल्ला कर अधे की भाति वाहर अहाते म भागा जहा नतालिया येरमोखिन की बाँह पकडे उसे खीचती हुई ला रही थी और चिल्ला कर कह रही थी

"चलता है कि नही, लद्दू घोडे?"

तभी उसने मुझ देखा। बोली

"यह क्या हुआ?"

"उसके सिर पर तो अब लडने का भूत सवार है।"

"लडने का भूत सवार है!" नतालिया ने अचरज से कहा। फिर येरमोखिन के टहोका मारते हुए बोली

"शुक्राना भेजो भगवान को, उसने तुम्ह इस बार बचा लिया!"

मैने अपनी आँखो पर ठडे पानी के छीटे दिए, फिर रसोईघर के दरवाज़े पर वापिस लौट आया और वाहर से ही भीतर झाक कर देखा दोनो सनिक गले मे लिपटे हुए नशीले मेल-मिलौवल में एक-दूसरे का मुंह चूम-चाट रह थे और उनकी आखो मे आसू वह रहे थे। इसके बाद वे नतालिया को गले मे लगाने के लिए लपके, लेकिन थप्पड मे खबर लेते हुए वह चिल्लाई

"कुत्ते नही तो, खबरदार जो मेरी ओर ज़रा भी अपने पजे फैलाए। मुझे भी क्या तुमने बबुवाइन समझा है, या म कोई तितली हू जिसे तुम अपनी चुटकिया में मसल डालोगे। खर इसी में है कि अपने मालिको के आने मे पहले एकाध झपकी लेकर भले आदमी बन जाओ। समझ में आया कुछ—या मुझे समझाना पडेगा?

छोटे बच्चो की भाति उसने दोनो को लेटा दिया, एक को पलग पर, दूसरे को फर्श पर। जब दोनो खर्राटे भरने लगे तो वह बाहर फाटक पर निकल आई।

"जरा मेरी फ्राक को तो देखो, क्या चुरमुर हो गई है, और मै थी कि लोगो से मिलने-जुलने के लिए घर से निकली थी। क्या उसने तुम्हे मारा? बेवकूफ कहीं का! वोडका जो न कराए थोडा है। तुम कभी न पीना, मेरे बच्चे, इसकी लत कभी न डालना!"

दरवाज़े पर एक बेंच पडी थी। मै भी उसके पास ही उसपर बैठ गया। मैने पूछा:

"तुम्हे शराबियों से डर नहीं लगता?"

"मै किसी से नहीं डरती—न शराबियो से, न शराब के विरोधियों से। दोनो को मै इससे काबू में रखती हूं!" कस कर बंधी अपनी लाल मुट्ठी दिखाते हुए उसने कहा।—"एक आदमी था,—आदमी क्या, मेरा पति था,—एक मुद्दत हुई वह मर-खप गया—वह इतनी पीता था कि हर घड़ी तर रहता था, एकदम घुत्त। मै उसके हाथ और पाव, उसका सारा वदन, रस्सी से जकड देती। जब उसका नशा उतर जाता तो उसकी पतलून खींच कर मोटी-ताजी और मजबूत संटियो से उसकी मरम्मत करती: 'खबर-दार जो फिर कभी मुंह से लगाई, अगर फिर कभी उल्टांग होते देखा तो जीता न छोडूंगी। तूने समझ क्या रखा है? जब घर मे बीबी मौजूद है तो क्यो नही उससे अपना दिल बहलाता?' मतलब यह कि मै उसकी खूब खबर लेती और जब तक मेरे हाथ जबाब न देते, तडातड़ संटियाँ जडती रहती। बस, फिर क्या था। संटियों की मार से वह इतना नर्म हो जाता कि चाहो तो चिथड़े की भाति उंगली पर लपेट लो।"

"तुम सचमुच मे ताकतवर हो," मै कहता, और मुझे हौवा का ध्यान हो आता जिसके सामने खुद खुदा को भी मात खानी पड़ी।

नतालिया ने साँस खींचते हुए कहा

"स्त्री को पुरुष से भी ज्यादा ताकत की जरूरत है,—उसके पास दो पुरुषों के बराबर ताकत होनी चाहिए, लेकिन खुदा ने यहाँ उसे धोखा दिया और पुरुषों को ज्यादा बलवान बना दिया। लेकिन पुरुषों का यह बल भी निरा धोखा है, कोई स्त्री उसपर भरोसा नहीं कर सकती।"

वह बहुत ही इत्मीनान से, बिना किसी जलन या कुढन के, बोल रही थी। उसकी कोहनियाँ मुड़ी हुई थीं और उसके हाथ उसकी भरी-पूरी छातियों पर बंधे हुए थे। उसकी पीठ बाड़े से सटी थी और उसकी आँखें कूड़ा-करकट छितरे बाग पर उदास भाव से जमी थीं। उसकी चुभती हुई बातों में कितना समय निकल गया, कितना नहीं, मुझे कुछ ध्यान न रहा। सहसा, बाग के दूसरे छोर के पास, अपने मालिक पर मेरी नजर पड़ी। पत्नी के साथ, उसे अपनी बाँह का सहारा दिए, वह इधर ही आ रहा था। धीमे डगों से, रौब के साथ, मुर्ग और मुर्गी के जोड़े की भांति तिर्छी गरदन किए वे चले आ रहे थे। वे हमारी ही ओर देख रहे थे, और आपस में कुछ बातें कर रहे थे।

मैंने लपक कर फाटक का दरवाजा खोला। जब हम जीने पर चढ़ रहे थे तो मेरी मालकिन ने तीखी आवाज़ में कहा

"क्यों, उस कपड़ा धोने वाली के साथ बैठ कर क्या घुमर-घुमर कर रहे थे? निचली मंजिल वाली तुम्हारी रानी क्या यही सब तुम्हें सिखाती है?"

बात इतनी गिर पर की थी कि उसने मेरे हृदय को छुआ तक नहीं। लेकिन जब मालिक ने भी हल्की हँसी हँसते हुए फिकरा कसा तो मुझे दुख हुआ। अपनी पत्नी के स्वर में स्वर मिलाते हुए वह बोला

"इसका नही, यह उसकी उम्र का कसूर है,—क्यो, ठीक है न?"

अगले दिन सुबह के समय जब मै लकड़ी लेने सायबान में गया तो वहाँ दरवाजे में सनकी डालने के छेद के पास, मुझे एक खाली बटुवा पडा हुआ मिला। इस बटुवे को सिदोरोव के हाथों मे मै सैकड़ों बार देख चुका था। सो मै उसे लेकर तुरन्त सिदो-रोव के पास पहुंचा।

"इसमे जो धन था, वह कहाँ है?" अपनी उंगलियो से बटुवे के भीतर टटोलते हुए उसने पूछा।—"एक रूबल और तीस कोपेक थे। चुपचाप लौटा दो।"

उसने अपने सिर से एक तौलिया लपेट रखा था। उसका चेहरा पीला और खिचा हुआ सा था। अपनी सूजी हुई आँखो को मिचमिचा कर उसने मेरी ओर देखा और इस बात पर विश्वास करने से इन्कार कर दिया कि मुझे जब बटुवा मिला तो वह खाली था।

तभी येरमोखिन भी आ गया और उसपर अपना रग चढाते हुए यह सिद्ध करने की कोशिश करने लगा कि मै चोर हूं।

"इसी ने बटुवा खाली किया है," मेरी ओर सिर हिलाकर इशारा करते हुए उसने कहा,—"कान पकड कर इसे इसके मालिक के पास ले जाओ। कोई भी सैनिक किसी दूसरे सैनिक भाई की चोरी नही करेगा।"

उसके शब्दो से साफ मालूम होता था कि यह सब उसकी ही करतूत है, पैसा निकाल कर उसने बटुवा हमारे सायबान मे डाल दिया। मैने आव देखा न ताव, उसके मुँह पर ही कहा:

"यह सफेद झूठ है। बटुवा खुद तुमने चुराया।"

मुझे पक्का विश्वास हो गया कि मेरा यह अन्दाज सही है।

मेरी बात सुनते ही डर और झुंझलाहट से उसका चेहरा तिकोनिया बन गया। वह चीखा

"कुछ सबूत भी है तुम्हारे पास, या यों ही बकते हो?"

लेकिन मैं सबूत कहाँ से देता। येरमोखिन ने चीख कर मुझे पकडा और खींचता हुआ बाहर अहाते में ले गया। सिदोरोव भी चीखता हुआ पीछे-पीछे लपका। शोर सुनकर पडोसियों के सिर खिडकिया से बाहर निकल आए। रानी मारगोट की माँ भी दम साधे, निश्चल भाव से देखती थी और मरने के बाद भी मुह से अलग न होने वाली अपनी सिगरेट से धुआँ छोड रही थी। यह सोचकर कि अपनी रानी की नजरो मे मेरी अब कोई साख न रहगी, मेरा सिर एकदम चकरा गया।

मुझे याद है कि सैनिको ने मेरे हाथ जकड रखे थे। खींचते हुए वे मुझे लाए और मालिको के सामने मेरी पेशी हुई। मालिको ने खूब सिर हिला हिला कर मेरा जुर्म सुना। छोटी मालकिन चिहुक उठी

"यह इसी की करतूत है। कल रात, फाटक के पास, यह कपडे धोने वाली स्त्री से लिपट-चिपट रहा था। सुनी-सुनाई नही, मेरी अपनी आँखो देखी बात है। इसकी जेब न खनखनाती होती, तो वह इसे हाथ तक न धरने देती।"

"जरूर यही बात है!" येरमोखिन चिल्लाया।

मेरा सिर सन्ना गया। सारे बदन में आग लग गई। झल्ला कर मैं मालकिन पर झपटा और इसके बाद बुरी तरह मार खाई।

लेकिन चोट से मेरा हृदय इतना घायल नहीं हुआ जितना इस बात से कि रानी मारगोट मेरे बारे में अब क्या सोचेगी।

"जैसा तुम ठीक समझो। तुम कोई बच्चे तो नहीं, अपना भला-बुरा खुद सोच सकते हो।"

वह उठ खड़ा हुआ और जीने से नीचे उतर गया। सदा की भांति मुझे फिर उसपर तरस आया।

चार दिन बाद मैंने वह जगह छोड़ दी। मेरे मन में गहरी इच्छा थी कि एक बार रानी मारगोट के पास जाकर उनसे विदा ले आऊं, लेकिन उसतक पहुंचने का साहस न बटोर सका और, सच बात तो यह है कि, मन-ही-मन मैं यह उम्मीद बांधे था कि वह खुद मुझे बुलाएगी।

छोटी लड़की से विदा लेते समय मैंने कहा:

"अपनी मां से कहना कि मैं उनका कृतज्ञ हूं और उन्हें बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं। कहोगी न?"

"हां," बहुत ही कोमल और प्यारी मुसकान के साथ उसने वचन दिया। फिर बोली: "विदा, कल तक के लिए!"

बीस वर्ष बाद उससे फिर मेरी भेंट हुई। तब वह फौजी पुलिस के एक अफसर की पत्नी थी . ।

११

एक बार फिर मैंने जहाज के बावर्चीघर में बरतन धोने का काम संभाला। इस जहाज का नाम था 'पेर्म', बड़ा और तेज रफ्तार, हंस की भांति एकदम सफेद। इस बार मेरा ओहदा भी बड़ा था—बरतन धोने वालों का नायक, या किचन ब्वाय। मेरा काम बावर्ची का हाथ बंटाना था। वेतन सात रूबल महीना।

जहाज का मैनेजर एक मोटा गावदुम आदमी था। बद-दिमागी से बफरा हुआ, और रबर की गेंद की भांति गंजा। हाथो

को कमर के पीछे बांधे सुबह से सांझ तक वह डेक पर चक्कर लगाता, उस सूअर की भांति जो गर्मी और धूप से बौखला कर किसी ठंडे कोने की खोज में भटक रहा हो। उसकी पत्नी खान पान-घर की शोभा बढ़ाती। उम्र चालीस से ऊपर, किसी जमाने में सुन्दर रही होगी, लेकिन अब घिस-पिट कर चिथड़ा हो गई थी। पाउडर इतना पोतती कि गालों पर से झड़ने लगता और सफेद चिपचिपी धूल की भांति उसके भड़कीले कपड़ों पर जमा होता रहता।

बावर्चीघर की बागडोर खानसामें इवान इवानाविच के हाथों में थी जिसे सब नाटा भालू कहते। नाटा कद, फूले हुए गाल, तोते ऐसी हुकदार नाक और सबको ठेंगे पर रखने वाली आंखें। तबीयत का शौकीन, हमेशा कलफदार कालर लगाता, रोज दाढ़ी छीलता, इस हद तक कि उसके गालों की खाल में अब नीलापन झलकता था। उसकी बलदार काली मूछें ऊपर को मुड़ी रहतीं, जब भी खाली हाथ होता अपनी तपी हुई लाल उंगलियों से उन्हें बराबर ऐंठता और एक छोटे से गोल दस्ती शीशे में देख देख कर गर्व से तन जाता।

कोयला झोंकने वाला याकोव शूमोव जहाज के लोगों में सब से ज्यादा दिलचस्प था। चौकोर काठी, चौड़े कंधे, बस देहाती। चपटी नाक, चेहरा भी वैसा ही फावड़े की भांति चपटा, घनी भौंहों से जंगल में छिपी भालू ऐसी आंखें, दलदल की काई की भांति छल्लेदार दाढ़ी गालों पर घिरे हुए, सिर पर घुंघराले बाल, इतने घने कि अगर वह चाहता तो भी अपनी टेढ़ी मेढ़ी उंगलियां को कभी उनके बीच से न गुजार पाता।

वह पक्का जुआरी था और खाने पर इस बुरी तरह टूटता कि देख कर अचरज होता। भूखे कुत्ते की भांति वह बावर्चीघर के

आस-पास ही लटका रहता। कभी बोटी के लिए हाथ फैलाता, और कभी हड्डियों के लिए। साँझ को वह नाटे भालू के साथ चाय पीता और अपने जीवन के अजीब-गरीब किस्से सुनाता।

बचपन में वह रियाज़ान नगर मे किसी गड़रिये के साथ गुज़र करता था। एक दिन कोई ईसाई साधु उधर से गुजरा और उसके कहने-फुसलाने से वह मठ में भर्ती हो गया। नये साधु के रूप में वह चार साल तक मठ मे रहा।

"आज दिन भी मै साधु ही होता,—ख़ुदा का एक काला सितारा," लनतरानी के अपने अन्दाज़ मे वह कहता,—"लेकिन एक स्त्री ने सब गड़बड़ कर दिया। वह पेंजा की रहने वाली थी। साधु-सन्तो के दर्शन करने के लिए वह हमारे मठ में आई थी। क्या बताऊँ, इस नन्ही-सी स्त्री ने मेरा दिमाग ही पलट दिया। 'ओह कितना अच्छा, ओह कितना मजबूत!'—मुझे देख कर वह चहकी। फिर बोली: 'एक मै हूँ, बेदाग विधवा, एकदम अकेली। चलो न मेरे साथ? घर-बाहर का काम करना। मेरा अपना घर है, मुर्गे-मुर्गियो के परो का धधा करती हूँ। बोलो, क्या कहते हो?' मुझे भला क्या उज्र होता? मै उसके साथ हो लिया। वह मुझे अपना सेवक बनाना चाहती थी, पर मैं उसका प्रेमी बन गया। तीन साल तक उसके साथ मौज की और..."

नाटा भालू अपनी नाक पर निकले मस्से को व्यग्र भाव से देखता हुआ उसकी लनतरानी सुन रहा था। आखिर वह झुंझला उठा।

"सफेद झूठ बोलना कोई तुमसे सीखे!" बीच में ही उसने कहा।—"झूठ बोलने से अगर सोना बरसता तो तुम कारूँ का खजाना बटोर लेते!"

याकोव जुगाली-सी करता मुँह चला रहा था। उसकी छल्लेदार सफेद दाढी जबड़े के साथ ऊपर-नीचे हरकत कर रही थी, और उसके

छाज मे कान फडफडा रहे थे। बावर्ची के चुप हो जाने पर उसकी जुबान फिर सम गति से कैंची की भाति चलने लगी

"उम्र में वह मुझसे बडी थी। जल्दी ही मै उससे उकता गया। सच जानो, मै उससे तग आ गया और उसे छोड उसकी भतीजी पर मैने डोरे डाले। एक दिन उसे इसका पता चल गया। फिर क्या था, उसने मेरी गरदन दबोची और लात मार कर घर से बाहर निकाल दिया।"

"यानी बाकायदा हिसाब चुकता करके उसने तुम्हे विदा कर दिया!" बावर्ची ने भी याकोव की ही भाति सहज भाव से कहा।

कोयला झोकने वाले खलासी याकोव ने चीनी की एक डली अपने मुँह मे डाली और फिर कहना जारी रखा

"इसके बाद सूखे पत्ते की भाति हवा के साथ मै इधर-उधर उडता और भटकता रहा। फिर ब्लादिमीर के एक बूढे व्यापारी के साथ मेरा गठबन्धन हुआ। उसके साथ मैने आधी दुनिया नाप डाली—बालकन पहाडो का नाम सुना है? मै वहाँ गया। सभी तरह के रग-बिरगे लोगो को देखा—तुर्को और रूमानियाइयो, यूनान के निवासियो और आस्ट्रियाको, दुनिया-भर के लोगो से वास्ता पडा। कभी हम उनके हाथ अपना माल बेचते, कभी उनसे माल खरीदते।"

"क्या तुम चोरी भी करते थे?" बावर्ची ने पूरी गम्भीरता से पूछा।

"बूढे व्यापारी ने किसी पर कभी हाथ साफ नही किया,—नही, कभी नही। और वह मुझसे बोला अपने देश में चाहे जो करना, लेकिन पराये देशो में किसी चीज पर हाथ न डालना। उन देशो का रिवाज था कि अगर कोई मामूली से मामूली चीज भी चुराता तो उसका सिर साफ धड से अलग कर दिया जाता। लेकिन यह न समझना कि मैने चोरी करने की कोशिश नही की। कोशिश

तो मैने की, लेकिन कुछ वना नही। एक दिन मै एक व्यापारी के अस्तवल से घोड़ा खोल कर भागा। लेकिन भाग नही सका, उन्होंने मुझे पकड लिया, और यह समझ लो कि खूब मारा। मारने से जब उनका जी भर गया तो मुझे खीचते हुए थाने में ले गए। थाने वालो ने मुझे बंद कर दिया। वहाँ हम दो थे—एक असली और खूब खरा घोड़ा-चोर था, दूसरा मै जिसे घोड़ा चुराने का केवल शौक चर्राया था कि देखो, इसमें क्या मजा आता है। हाँ तो उस व्यापारी ने उन दिनो एक नया हम्माम बनवाया था और मै उसमें चूल्हा बना रहा था। अब हुआ यह कि वह बीमार पड़ गया और बुरे-बुरे सपने देखने लगा। इन सपनो में वह मुझे देखता और उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती। घबरा कर वह बड़े अफसर के पास गया और उससे भिनभिना कर बोला: 'उसे छोड दो। मै खुद कहता हूँ कि उसे छोड दो। सपनो मे भी वह मेरा पीछा नही छोड़ता। अगर मैं उसे माफ नही करूँगा तो कौन जाने, वह मेरी जान ही ले ले। कम्बख्त जादू जानता है, मुझे सपनो मे परेशान करता है।' हा तो अफसर ने उसकी बात मान ली। मानता क्यों नही, वह बहुत बडा व्यापारी जो था। सो मै थाने से बाहर निकल आया।"

"वे चूक गए। तुम्हे हर्गिज नही छोड़ना चाहिए था। तुम इस लायक थे कि गले से पत्थर लटका कर तीन दिन तक तुम्हें नदी में छोड देते। देखते-देखते सारी खुराफात तुम्हारे दिमाग से निकल जाती!" बावर्ची ने कहा।

याकोव को तुरत एक नयी बात सूझी। बोला:

"खुराफात?—खुराफात तो मुझमें कम नही है। सच पूछो तो इतनी खुराफात मुझमे भरी है कि सारा गाव एक तरफ और मै एक तरफ!"

बावर्ची ने अपने कालर में उँगली गडाई और झुझला कर उसे झटका। फिर सिर हिला कर मुँह बिचकाते हुए बोला

"ऊँह, यह भी कोई आदमी है! पुराना पापी, यहाँ वहा मुँह मारने और लम्बी तानने के सिवा यह और क्या जानता है? तुम्ही बताओ, तुम्हारे जीने का मक्सद क्या है?"

याकोव ने अपने होठो पर जीभ फेरी और बोला

"यह तो मै नही जानता। जैसे सब रहते ह, वैसे ही मै भी अपना जीवन बिताता हूँ। कुछ एक जगह लेटे रहते है, कुछ के पाँव मे सनीचर होता है और कुर्सी ही तोडते है। कोई कुछ भी करे, अपना दोजख भरे बिना किसी को चैन नही पडती। क्या कोई ऐसा भी है जो खाने से जी चुराता हो?"

यह सुन बावर्ची और भी झुझला उठा

"तू इतना सूअर है कि कुछ कहते नही बनता। जानता है, सूअर क्या खाते है? तू बस वही है!"

याकोव की आँखें अचरज से फैल गईं। उसकी समझ म नही आया कि इसमें गुस्सा होने की क्या बात है। बोला

"नाराज क्यो होते हो? तुम और मै, गाँव के सभी लोग, एक ही पेड की गुठलिया है। तुम्हारे मुँह लाल करने से मै और कुछ नही बन जाऊँगा। बेकार गुस्सा करते हो।"

यह आदमी मुझे बहुत अच्छा लगा, और शीघ्र ही मेरा उससे गहरा मेल-मिलाप हो गया। चकित भाव से मै उसकी आर देखता और मुँह बाये उसकी बाते सुनता। मेरा जी उसमे कभी न उकताता। ऐसा मालूम होता माना वह जीवन के अनुभवो की एक मजबूत और मुजस्सिम इमारत हो। वह हरेक से, बिना किसी बनावट के खुलकर बाते करता और उतना ही खुल कर अपनी फरफराती हुई भौंहो के नीचे से सब की ओर देखता। उसके लिए कोई नीचा नहीं था—

कप्तान, मैनेजर, और ऊपर फर्स्ट क्लास के बड़े-बड़े मुसाफ़िर भी उसके लिए वैसे ही थे जैसे अन्य जहाजी, भोजनघर के वैरे, तीसरे दर्जे के मुसाफिर और वह खुद।

कभी-कभी वनमानुप ऐसी अपनी लम्बी बांहों को कमर के पीछे किए, कप्तान या चीफ़ इंजीनियर के सामने खड़ा वह उनकी झिड़कियां सुनता। काहिली अथवा ताश के खेल में वेरहमी से किसी की जेब खाली करने पर वे उसे डाटते-डपटते और वह चुपचाप सुनता रहता। साफ मालूम होता कि डांट-डपट का उसपर कोई असर नही पड़ रहा है और अगले पड़ाव पर उसे जहाज से उतार देने की उनकी धमकियां उसके कानों से टकरा कर हवा में छितर रही है।

'वाह भई खूब' की भांति याकोव में भी एक अपना निरालापन था। वह अन्य लोगो से कुछ भिन्न, उनमे कुछ अलग कोटी का, मालूम होता था। और जैसे खुद उसे भी इस वात का विश्वास था कि वह औरों से अलग, उनकी पहुँच और समझ से वाहर है।

इस आदमी को मैंने कभी उदास होते या मुँह फुलाते नहीं देखा। न ही वह मुझे, एक लम्बे अर्से तक, कभी गुमसुम दिखाई दिया। शब्दों की एक अंतहीन धारा, वह चाहे या न चाहे, उसके मुँह से निकलती रहती। जब भी उसपर डांट-डपट पड़ती, या वह कोई दिलचस्प किस्सा सुनता, तो उसके होंठ इस तरह हिलते मानो वह सुनी हुई वात को दोहरा रहा हो। हर रोज अपना काम खत्म करने के वाद जब वह वाहर निकलता तो उसका सारा शरीर पसीने और तेल से लिथड़ा होता। नगे पाँव और विना पेटी का गीला ब्लाउज वह पहने होता जिसका गला खुला रहता और घने घुंघराले वालों से घिरा उसका सीना उसके भीतर से झांकता दिखाई देता।

फिर मुँह से गहरी और एकरस आवाज़ निकलती और वर्षा की बूंदो की भांति डैक पर शब्दो की बौछार होने लगती।

"कहो, बूढी अम्मा, तू कहा जा रही है? क्या कहा, चिस्तोपोल? मै भी वहाँ रह चुका हूँ। एक धनी तातार किसान के यहाँ काम करता था। हा, याद आया, अहसान गुर्नैद्रूलिन उसका नाम था। खुर्राट कही का, तीन-तीन बीवियाँ रखता था। मजबूत काठी, और चुकन्दर सा लाल चेहरा। उसकी सबसे छोटी बीबी बस एक ही थी, जैसे गुडिया हो। जी करता कि गोदी में उठा लो। छोटे कद की इस तातार स्त्री के साथ मैने खूब मज़े किये।"

कोई जगह ऐसी नही थी जहा वह न गया हो, और कोई स्त्री ऐसी नही थी जिसके साथ उसने मज़े न किए हो। बडी शान्ति और थिरता के साथ वह यह सब बात बताता, मानो कडुवाहट और मान-अपमान का उसने अपने जीवन में कभी अनुभव न किया हो। पलक झपकते वह जहाज़ के पिछले हिस्से में पहुँच जाता और वहाँ से उसकी आवाज़ सुनाई देती

"है कोई ताश का खिलाडी? पत्ता-पटक छक्का, पजा,—चले आओ जिसे ताश खेलना हो। ताश से बढिया चीज़ इस दुनिया में कोई नही है। मजे से बैठ कर पत्ते फटकारो, और बडे सौदागर की भांति आराम से धन बटोर लो।"

'भला', 'बुरा', या 'कमीना'—ऐसे शब्द उसके मुँह से शायद ही कभी निकलते थे। उसके लिए हमेशा हर चीज़ 'लुभावनी' या 'आरामदेह' अथवा 'अजीब' होती थी। जब वह किसी सुन्दर स्त्री का जिक्र करता तो उसे "गुड़िया सी सुन्दर" कहता, धूप निखरा रुपहला दिन उसे "आरामदेह दिन" मालूम होता। उसका सब से प्रिय सम्बोधन था

"गोली मारो!"

सब उसे काहिल समझते, लेकिन मुझे लगता कि दमघोट और सडांध-भरे भट्टी-घर मे वह भी उतनी ही लगन से जान तोड मेहनत करता था जितना कि अन्य। यह बात दूसरी थी कि कोयला झोंकने वाले अन्य खलासियो की भाति न तो वह कभी रोता-झींकता था, न ही वह काम के बोझ को लेकर कभी तोबा-तिल्ला मचाता था।

एक दिन मुसाफ़िरों मे से किसी बूढी स्त्री का बटुवा चोरी चला गया। शान्त और साफ साँझ थी। सभी उमग से भरे थे। कप्तान ने बुढिया को पाँच रूबल दिए और मुसाफिरो ने भी उसके लिए चन्दा जमा किया। जब उसे धन दिया गया तो उसने क्रास का चिन्ह बनाया और कमर तक झुकते हुए बोली:

"मेरे बेटो, मुझे तीन रूबल ज्यादा दे दिए। मेरे बटुवे मे तो इतने रूबल थे भी नहीं!"

कोई प्रसन्न भाव से चिल्लाया:

"ले लो, बूढ़ी माँ, भगवान तुम्हारा भला करे। यह अच्छा ही है कि पास में कुछ पड़ा रहे। वक्त पर काम देगा।"

किसी अन्य ने एक बढ़िया फबती कसी:

"धन आदमियो से बढ कर है। उसे कोई नहीं ठुकराता!"

लेकिन याकोव ने बुढिया के सामने एक निराला ही सुझाव रखा:

"फालतू धन मुझे दे दो। मै इससे ताश खेलूँगा!"

सब हँसने लगे। समझे कि वह मजाक कर रहा है। लेकिन वह पूरी गम्भीरता से बुढ़िया के पीछे पड़ा था:

"लाओ, बूढी माँ! एक पॉव तो तुम्हारा क़ब्र में लटका है, तुम धन का क्या करोगी?"

यह देख सब उसपर बमक पडे और उसे बुढिया के पास से दूर खदेड़ दिया। अचरज मे आँखे फाडते हुए उसने मुझसे कहा:

"अजीब लोग है ये भी! भला ये क्यों बीच में टाँग अड़ाते है? वह खुद कहती थी कि उसे फालतू धन नही चाहिए। ओह, तीन रूबल पाकर मेरी तबीयत हरी हो जाती।"

ऐसा मालम होता मानो उसे धन की, सिक्का की, शक्ल-सूरत से प्रेम हो। किसी एक सिक्के को वह अपने हाथ म लेता और उसे अपनी पतलून पर रगड़ता रहता, फिर पकौड़ा-सी अपनी नाक के पास ले जाकर मुग्ध भाव से उसकी चमक देखता। लेकिन वह लालची नहीं था।

एक बार उसने पत्ता पटक खेलने के लिए मुझे बुलाया। लेकिन मै खेलना नही जानता था।

"अरे, यह क्या—तुम किताबें पढ लेते हो," उसने अचरज से कहा,—"लेकिन पत्ता पटक खेल नहीं जानते। अच्छी बात है, मैं तुम्हे सिखाऊँगा। आजा, पहले ऐसे ही खेले, चीनी की डली की बाज़ी लगा कर।'

उसने आधा पौंड चीनी मुझसे जीती। वह जीतता जाता और चीनी की डली मुँह में रखता जाता। जब उसने देखा कि म अब खेलना सीख गया तो बोला

"अब हम सचमुच का खेल खेलेगे, धन की बाजी लगा कर। जेब में कुछ है?'

"पाँच रूबल है।"

"मेरे पास भी ऐसे ही दो-एक रूबल होगे।"

देखते-देखते मै सभी कुछ हार गया। उसे वापिस लौटाने की धुन में पाच रूबल के बदले मैने अपने गर्मकोट की बाज़ी लगा दी, और उसे भी गवा बैठा। फिर अपने नये जूतो को दाव पर रखा और उन्हे भी खो दिया। इसके बाद याकोव ने चिढचिढा कर करीब-करीब गुस्से में, कहा

"तुम खेलते हो या अपने दिमाग का वुखार उतारते हो? तुम्हारा दिमाग वेहद गर्म है, तुम कभी खिलाडी नही वन सकते। यह लो अपना कोट, और यह रहे तुम्हारे जूते! संभालो इन्हे, मुझे कुछ नही चाहिए, और यह लो अपनी पूंजी—चार रूवल—एक मेरी फीस का, अगर तुम्हे वुरा न लगे तो!"

मेरा हृदय कृतज्ञता से भर गया।

"गोली मारो!" मेरी कृतज्ञता के जवाव में उसने कहा।—"खेल खेल है—मतलव, मन वहलाव। लेकिन तुम तो वाक़ायदा मल्लयुद्ध करने लगे, मानो जान की वाजी लगी हो! और तुम्हारी यह गर्म दिमागी तो लड़ाई मे भी काम नही देगी,—खूवी इस वात मे है कि विरोधी को ठडे दिमाग से चित्त करो। जिसका दिमाग गरमा गया, वह तो जैसे खुद उलटा हो गया। फिर, गरम होने की वात भी क्या है? तुम जवान हो, और तुम्हे अपने को कावू में रखना चाहिए। एक वार चूके, समझो कि पाँच वार चूके, सात वार चूके! गोली मारो इस गरम दिमागी को! एक डग पीछे हटो, दिमाग को ठंडा करो, और फिर जूझ पड़ो। समझे, खेल इस तरह खेला जाता है!"

वह मुझे वरावर अच्छा लगता, और साथ ही मुझे उसपर झुझलाहट भी आती। कभी-कभी जव वह वोलता तो मुझे अपनी नानी की याद हो आती। उसमे वहुत कुछ था जो मुझे अपनी ओर खीचता, लेकिन लोगो के प्रति उदासीनता की इतनी मोटी परत उसपर चढी थी कि मै उससे घवरा जाता। जीवन के समूचे दौरान मे जमते-जमते यह परत इतनी मोटी हो गई थी।

दूसरे दर्जे के मुसाफ़िरों में पेर्म का निवासी एक मोटा सौदागर था। एक दिन सूरज छिपे उसने इतनी पी ली कि लड़खडा कर जहाज से नीचे पानी मे जा गिरा। वह वुरी तरह हाथ-पाँव

पटक रहा था और छिपते हुए सूरज की लाली से लाल जहाज़ से कटी पानी की लीक में बहा जा रहा था। जहाज़ के इंजन तुरन्त बन्द कर दिए गए और वह एकदम स्थिर हो गया। पहियेनुमा चप्पुओं ने झागों को अंधाधुंध उछाला जो छिपते सूरज की लाली से ख़ून की भांति लाल हो उठे थे। रक्तिम लाली के इस उमड़ते सागर में एक काला शरीर जो अब काफ़ी पीछे छूट गया था, छटपटा रहा था और पानी में से हृदयभेदी चीखें उठ रही थीं। मुसाफिर भी चिल्लाते और एक-दूसरे को धकियाते हुए जहाज़ के पिछले हिस्से में जमा हो रहे थे। डूबने वाले आदमी का गंजे सिर और ताम्बे जैसे रंग वाला एक साथी जो ख़ुद भी नशे में धुत्त था, भीड़ को चीरता आगे बढ़ने के लिए चिल्ला रहा था

"रास्ता छोड़ दो! मैं पानी में कूद कर उसे पकड़ लाऊंगा!"

दो जहाज़ी पानी में पहुंच चुके थे और तैर कर डूबते हुए आदमी की ओर बढ़ रहे थे। जान बचाने वाली एक नाव नीचे उतारी जा रही थी। जहाज़ियों की चिल्लाहट और स्त्रियों की चिल्लपों को बेध कर याकोव की शान्त और गदराई हुई आवाज़ सुनाई दे रही थी

"वह कोट पहने है, डूबने से भला कैसे बचेगा। अगर बदन पर भारी लबादा हो तो डूबना निश्चित है। स्त्रियों को लो,—पुरुषों के मुकाबिले वे क्या इतनी जल्दी पानी की तह में बैठ जाती हैं? यह उनके घाघरों की करामात है। स्त्री पानी में गिरी नहीं कि ढाई मन के पत्थर की भांति सीधी तलहटी को छूकर ही दम लेती है। देखो, वह डूब भी चुका है। मैंने ठीक कहा था न?"

वह सचमुच डूब चुका था। करीब दो घंटे तक वे उसकी लाश की खोज करते रहे लेकिन बेकार, लाश नहीं मिली। उसका

साथी जो अब होश मे था, जहाज़ के पिछले हिस्से में उदास बैठा बुदबुदा रहा था:

"देखो न, यह क्या हो गया? अब क्या होगा? उसके घर-वालो के सामने क्या मुह लेकर मैं जाऊँगा, उनसे क्या कहूँगा? अच्छा होता अगर उसके घरवाले न होते..."

पीठ के पीछे अपने हाथ बाधे याकोव उसके सामने खड़ा था और ढारस बंधा रहा था:

"और चारा भी क्या था, सौदागर! कोई नही जानता कि मौत से किस भेष में मुठभेड़ होगी? कभी-कभी ऐसा होता है कि एक आदमी अच्छा-विच्छा कुकुरमुत्ता खा रहा है और फट बुलबुला फूट जाता है और वह सीधे कब्र की राह लेता है। हजारों आदमी कुकुरमुत्ता खाकर मोटे-ताजे बन जाते है, लेकिन वह है कि उसे मौत दबोच लेती है। और यह कुकुरमुत्ता भी आखिर है क्या?"

वह सौदागर के सामने खड़ा था—चौड़ा-चकला, चक्की के पत्थर की भाति ठोस, भूसी की भांति अपने शब्दो को बिखेरता हुआ। पहले सौदागर धीमे-धीमे रो रहा था और अपनी चौड़ी हथे-ली से दाढ़ी पर ढुरक आए आँसुओ को पोछता जाता था। लेकिन याकोव के शब्दो के अर्थ ने जब उसके हृदय को छूना शुरू किया तो वह फुक्का मार कर चीख उठा:

"चले जाओ यहाँ से, शैतान के पूत! मेरा हृदय पहले ही दु:ख रहा है, तुमने आकर उसे और कुरेदना शुरू कर दिया। भले लोगो, इसे ले जाओ यहाँ से! नही तो जाने मै क्या कर बैठूँ!"

याकोव खुद ही चुपचाप खिसक गया। बोला:

"लोग सचमुच में अजीब है। चाहे कितनी भली बात कहो, उनकी समझ मे कुछ नही आता।"

कभी कभी ऐसा मालूम होता कि याकोव माले दिमाग का आदमी है, लेकिन बहुधा ऐसा अनुभव होता कि वह केवल बनता है। मेरा जी बुरी तरह ललकता कि उसके मुह से उन जगहो का हाल सुनू जहाँ वह हो आया है, उन चीजो के बारे मे जानू जिन्ह वह देख चुका है। लेकिन वह हमेशा उडती हुई सी बाते करता जिनसे मुझे जरा भी सन्तोष न होता। अपना सिर वह पीछे की ओर तान लेता, भालू ऐसी आँखो को आधा मूद लेता, अपने थल-थल चेहरे का थपथपाता और लनतरानी के स्वर में अपने सस्मरण सुनाना शुरू करता

"आदमी ही आदमी, जहाँ भी जाओ, चीटियो के दल की भाति आदमी ही आदमी दिखाई देते है। यहाँ भी आदमी, वहाँ भी आदमी —ढेर के ढेर। उनमें भी ज्यादातर किसान, पतभड के पत्ता की भाति सारी दुनिया मे बिखरे हुए। बल्गार? सच, बल्गारिया के लोगो को मैने देखा, और यूनानियो को भी, और सर्बिया तथा रूमानिया के लोगो और सभी प्रकार के, जिप्सियो को भी देखने का मुझे अवसर मिला। ये सब कैसे थे? ऊह, कैसे क्या होते? नगरा में शहरी लोग थे, और गाँवो में देहाती। ठीक हमारी ही भाति, एकदम मिलते जुलते। कुछ की तो बोली भी हमारी ही जैसी थी, या ही थोडे से फेर फार के साथ। मिसाल के लिए जसे तातार और मोर-दोविया के निवासी। यूनानी हमारी तरह नही बोल सकते, पता नही वे क्या ऊल जलूल बोलते है। सुनने में तो लगता है कि शब्द उनके मुह से निकल रहे है, लेकिन मतलब समझना चाहो तो कुछ पल्ले नहीं पडता। खाव-पून जा भी दिमाग में आता है उसे ही मुह मे उगलने लगते है। उनसे हाथ के इशारा से बात करनी पड-ती है। और वह बूढा गुर्राट जिसके साथ मैं काम करता था, यह दिखाने के लिए कि वह यूनानिया की बोली समझता है, हर घडी

'कालामारा, कालमारु' बड़बड़ाता रहता। वह सचमुच में गुर्गट था, बड़ा ही चलता पुर्जा। उलटे उस्तरे से उनकी हजामत बनाता। क्या कहा तुमने? यह कि वह कैसे थे? बार-बार यही सवाल तुम दोहराते हो! मेरे बुद्धू, यह भी कोई जानने की बात है? निश्चय ही उनका रंग काला होता है, और ऐसे ही रूमानियाइयों का भी—ये सब एक ही मजहब मानते हैं। बल्गार भी काले होते हैं, लेकिन उनका मजहब हमारे जैसा है। और यूनानी—वे तुर्कों की भांति होते हैं।"

मुझे लगता कि वह सब कुछ नही बता रहा है, कोई चीज है जिसे वह छिपा रहा है।

पत्र-पत्रिकाओ में छपे चित्रों से मैं जानता था कि यूनान की राजधानी एथेन्स है जो एक बहुत ही पुराना और सुन्दर नगर है। लेकिन याकोव ने अविश्वास से सिर हिलाया और एथेन्स के अस्तित्व से इन्कार करते हुए बोला:

"पत्र-पत्रिकाओं में दुनिया-भर का झूठ छपता है, मेरे भाई? एथेन्स नाम की कोई चीज नही है, केवल एथोन है, और वह भी नगर न होकर एक पहाड़ है जिस पर एक मठ बना है। बस, इसके सिवा और सब झूठ है। इसे लोग पवित्र एथोन पर्वत कहते हैं। एक बूढा आदमी इस पर्वत की तस्वीरे भी बेच रहा था। दान्यूब नदी के किनारे बेलगोरोद नामक का एक नगर जरूर है, हमारे यारोस्लावल या निजनी से मिलता-जुलता। उनके नगर किसी काम के नही है, लेकिन उनके गाँव—उनकी तो बात ही दूसरी है। और उनकी स्त्रियाँ भी,—बस, कुछ न पूछो, जी करता कि गोदी में उठा लो! ऐसी ही एक स्त्री के चक्कर मे मैं वहाँ फस गया। भला क्या नाम था उसका?"

उसने अपनी हथेलियों को तेजी से गालो पर रगड़ा और उस-

केवल उन्ही चीजो की याद आती जो अच्छी थी; सब मे अच्छी रानी मारगोट, और सचाई से भरी ये पक्तियाँ जिन्हे कभी नही भूला जा सकता:

केवल गीत को ही जरूरत है सौन्दर्य की—सौन्दर्य के लिए
भला गीत जरूरी क्यो हो?

सोच-विचार की अपनी मुद्रा को मै झटक कर उसी तरह दूर करता जैसे कि नीद या ऊंघ के दौरे को दूर भगाया जाता है, फिर उसपर दबाव डालता कि वह अपने जीवन और जो कुछ उसने देखा-सुना है उसके बारे में बताए। वह कहता:

"तुम भी अजीब जनावर हो! तुम्हे मै क्या-क्या बताऊं? सभी कुछ तो मैने देखा है। मठ?—हाँ, मैने मठ देखा है। और दारूखाना?—हाँ, दारूखाना भी। शहरी लोगो का जीवन भी मैने देखा है और दहकानो का जीवन भी। इतना कुछ मैने देखा और पाया, और इतना कुछ मैने खोया। बोलो, तुम्हे मै क्या बताऊं?"

फिर धीरे-धीरे, मानो वह किसी गहरी नदी के चरर-मरर करते पुल पर से गुजर रहा हो, वह अपने अतीत का जिक्र करता:

"मिसाल के लिए एक इसी घटना को लो, थाने वाली घटना को, घोडा चुराने के बाद जब मै हवालात में बद था। मुझे लगा कि अब जान नही बचेगी, निश्चय ही काली कोसो साइबेरिया के लिए बिस्तर गोल करना पड़ेगा। तभी पुलिस अफसर पर मेरी नजर पड़ी। वह अपने नये घर के चूल्हो को कोस रहा था जो खूब धुआँ देते थे। मैने उससे कहा: 'सरकार, अगर हुक्म हो तो मै उन्हे ठीक कर सकता हूं।' पजे पैने कर वह मुझ पर झपटा। बोला: 'तुम्हारी यह हिमाकत? नगर का सबसे अच्छा चूल्हा बनाने वाला तो उन्हे ठीक नही कर सका, और तुम डीग मारते हो कि ठीक कर दोगे!' लेकिन मै भी डटा रहा। कहा: 'कभी-कभी निरा बुद्धू भी काजी को

पछाड देता है।' काली कोसो माइबेरिया मेरे सिर पर मडरा रहा था। सो मैं जरा भी नही दवा। आखिर उसने कहा 'अच्छी बात है। तुम भी कोशिश कर देखो। लेकिन तुम्हारे हाथ लगाने के बाद अगर उन्होंने ज्यादा धुआँ देना शुरु किया तो ममझ लो, तुम्हारा कचूमर ही निकाल दूगा।'' झटपट दो दिन के भीतर मैंने चूल्हो का ठीक कर दिया। अफसर अचरज में पड गया। उसकी समझ में न आया कि बात क्या है। सा वह फिर मुझ पर झपटा 'अरे काठ के उल्लू! छछून्दर की दुम! तू इतना वडा कारीगर, और घोडे चुराता फिरता है? आखिर क्या?' मैंने कहा 'यही तो मेरा पागलपन है, सरकार!'' वह बोला 'ठीक कहते हो। यह पागलपन है। कितने दुख की बात है। मुझे तुझ पर तरस आता है।' सुना तुमने? एक पुलिस अफसर, जिसके पेशे में तरस और रहम के लिए कोई जगह नही होती, लेकिन वह है कि मुझपर तरस खा रहा है!"

"हाँ तो फिर क्या हुआ?" मैंने पूछा।

"कुछ भी नही। बस, उसका हृदय पिघला, उमने मुझपर तरम खाया। तुम्ह और क्या चाहिए?"

"लेकिन तुम तो चट्टान की भाति मजबूत और हट्टे कट्टे हो। तुम्हे देख कर क्या कोई तरस खा सकता है?"

याकोव बहुत ही भली हँसी हँसा।

"तुम भी अजीव जीव हो। क्या कहा तुमने—एक चट्टान की भाति? लेकिन चट्टान भी मान रखने की चीज है। वह भी अपना काम करती है। चट्टान के पत्थरो से सडके बनती है। हर चीज का एक अपना मान है, उसका एक अपना उपयोग है। रेत को ही लो। रेत आखिर होता क्या है? लेकिन उसमें भी घास उगती है।'

याकोव जब ऐसी बाते करता तो मुझे खास तौर से अनुभव होता कि उसके ज्ञान की पहुँच मेरी समझ से बाहर है।

"वावर्ची के वारे में तुम्हारा क्या ख्याल है?" एक दिन मैंने उससे पूछा।

"कौन—क्या नाटे भालू के वारे में पूछते हो?" याकोव ने उपेक्षा से कहा।—"उसके वारे में भला मेरा क्या ख्याल हो सकता है? ख्याल करने की उसमें कोई वात भी तो हो!"

उसका कहना ठीक था। इवान इवानोविच इतना सपाट और चिकना, और कुछ इतना ठीकोंठीक था कि ख्याल नाम की चीज़ लटकाने लायक खूँटियाँ उसमें नहीं थीं। उसमें केवल एक ही चीज़ थी जो मुझे दिलचस्प मालूम होती थी: वह याकोव से घृणा करता था और जव देखो तव उसे डांटता रहता था, लेकिन चाय फिर भी सदा उसके साथ ही पीता था।

एक दिन उसने याकोव से कहा:

"अगर तू मेरा दास और मैं तेरा स्वामी होता तो सप्ताह में सात दिन तेरी चमडी रगता, लोफरो के सरदार!"

"सप्ताह में सात दिन तो कुछ ज्यादा है," याकोव पूरी गम्भीरता से जवाव देता।

इस निरन्तर डाट-डपट के वावजूद, न जाने क्यों, वावर्ची वरावर उसके पेट का कुआँ भरता रहता। खाने की कोई-न-कोई चीज वह उसे देता और कहता:

"यह ले, पेटू की दुम!"

"इवान इवानोविच, तू न होता तो मैं इतनी ताकत भला कैसे वटोर पाता। यह सव तुम्हारा ही जम्हूड़ा है!" खाने की चीज़ को अलस भाव से चवाते हुए याकोव कहता।

"लेकिन अपनी इस ताकत का करोगे क्या, काहिलों के सिरताज!"

"क्यो, अभी सारा जीवन सामने पड़ा है।"

अचरज होता कि फिर भी वह जहाज पर कैसे बना हुआ है? लात मार कर वे उसे निकाल क्यो नही देते? कोयला झोंकने वाले अन्य खलासी उसके साथ कुछ अधिक नर्मी से पेश आते, हालाकि वे सिर-पैर के उसके बकवास और उसकी पत्तेबाज़ी का वे भी खूब मज़ाक उडाते थे। एक दिन मैने उनसे पूछा:

"क्या याकोव अच्छा आदमी है?"

"याकोव बिल्कुल ठिकाने का आदमी है। कभी नाराज नही होता। कितना ही उसे उलटो-पलटो, चाहे उसकी कमीज़ के भीतर जलते हुए कोयले ही क्यो न छोड़ दो, उसका दिमाग कभी नही गड़बड़ाता।"

कोयला झोकने का थका कर चूर कर देने वाला जानलेवा काम करने और अपने पेट का कुआँ ठसाठस भर लेने के बाद भी याकोव बहुत कम सोता। अपनी पाली का काम खत्म होते ही वह डैक पर आ जाता, गंदा और पसीने में बुरी तरह तर, बहुधा वही काम के काले-चीकट कपडे पहने, और सारी रात बैठा रहता, मुसाफिरो के साथ बतियाता या ताश खेलता।

मेरे लिए वह तालेबन्द सन्दूक के समान था। मुझे लगता कि उसके भीतर अवश्य कोई ऐसी चीज बन्द है जिसके बिना काम नही चल सकता, और इस ताले को खोलने वाली कुजी पाने के लिए मै बेहद बेचैन हो उठता।

भौंहो की ओट मे खूब गहरी छिपी आँखो से वह देखता। फिर कहता:

"तुम्हारे सिर पर तो भूत सवार है, भाई! मेरी समझ मे नही आता कि तुम चाहते क्या हो? तुम दुनिया के बारे मे जानना चाहते हो? यह सच है कि मैने दुनिया छानी है। लेकिन इससे क्या? तुम भी अजीब पछी हो, आसानी से पीछा नही छोड़ोगे। अच्छा तो सुनो, एक दिन की बात मै तुम्हे बताता हूँ।"

और जो किस्सा उसने मुझे सुनाया, वह इस प्रकार है

"बहुत दिन हुए, किसी सूडाई नगर में एक युवक जज रहता था। वह तपेदिक का मरीज था। किसी जर्मन लडकी से उसने शादी की थी हट्टी-कट्टी, न कोई बाल न बच्चा। उसका हृदय एक सौदागर के लिए कुडमुडाने लगा जो तीन बच्चा का बाप था, और जिसकी पत्नी काफी खूबसूरत थी। सौदागर ने जब यह देखा कि जर्मन स्त्री उसपर न्योछावर होने के लिए तैयार है तो उसने उसके साथ एक मजाक करने का निश्चय किया। कहा कि बाग में रात का आकर मुझमें मिलो और अपने दो साथियो का झुरमुटा मे छिपा दिया।

"इसके बाद वह नाटक हुआ कि कुछ न पूछो। जर्मन स्त्री आई, गरमागरम और उबक-चुबक करती, इशारा पाते ही उसके सामने बिछ जाने को तैयार। लेकिन उसने कहा 'नही श्रीमतीजी, म तुम्हें गले से नही लगा सकता। मै शादीशुदा हूँ। लकिन तुम्हारे लिए मेरे दो साथी मौजूद हैं—एक कुवारा है, और दूसरा रडुवा।' इसपर स्त्री ने एक ऐसी चीख भरी और सौदागर के एक ऐसा धौल जमाया कि वह कलाबाजी खाकर बच पर से उलट गया और उसने ठोकरे मार-मार कर उसका तावडा ठीक कर दिया। म जज के यहाँ काम करता था और उस स्त्री का लेकर मे ही पहुँचाने बाग में आया था। झाडे के पीछे झिर्रियो में से मैंने यह सारा तमाशा देखा। उसके दानो साथी उछल कर झुरमुटो में से निकल आए और स्त्री की ओर झपटे, और उसके बाल पकड कर खीचते हुए ले चले। अब क्या था, बाडे को फाद मै उनसे भिड गया। 'यह भी कोई तरीका है,' मने कहा,—'स्त्री ने उसका विश्वास किया और यहाँ चली आई, लकिन वह उसकी मिट्टी पलीद करने पर उतर आया।' स्त्री का उनके चगुल से छुडा कर मै अपने साथ ले

चला। पीछे से उन्होंने मेरी खोपड़ी का निशाना साधा और एक ईंट फेंक कर मारी जो सनसनाती हुई निकल गई। स्त्री का बुरा हाल था। घर लौट कर वह अहाते में बेचैनी से टहलने लगी। अगर उसे सूझ जाता तो वह अपने को नोच डालती। लेकिन उसे कुछ सुझाई नहीं दे रहा था। अन्त में बोली: 'मैं चली जाऊँगी यहाँ से, मैं जर्मनी, अपने लोगों के बीच, चली जाऊँगी, याकोव! मेरा पति दो-दिन का मेहमान है, उसके मरते ही मैं यहाँ से चल दूँगी।' मैं क्या कहता। बोला: 'यह ठीक है। यहाँ रह कर तुम करोगी भी क्या?' और हुआ भी ऐसा ही। जज मर गया और वह चली गई। वह बहुत ही भली थी, और समझदार भी कम न थी। और जज भी बहुत भला था, खुदा उसकी रूह को शान्ति दे।"

उसकी इस कहानी का मतलब मेरी समझ में नहीं आया। मैंने उसे सुना और चुपचाप बैठा रहा। उसमें मुझे कुछ वैसी ही क्रूरता और निरर्थकता दिखाई दी जिससे कि मैं परिचित था। बस इतना ही, और कुछ नहीं।

"क्यों, कहानी पसंद आई?" याकोव ने पूछा।

झुंझलाहट से मैं कुछ बुदबुदाया, लेकिन वह शान्त भाव से मुझे समझाते हुए बोला:

"उस तरह के खाते-पीते और निश्चिन्त जीवन बिताने वाले लोग भी कभी-कभी नंगे नाच से अपना जी बहलाने के लिए उतावले हो उठते हैं, लेकिन पांसा सदा सीधा नहीं पड़ता। नंगा नाच करना कोई मज़ाक थोड़े ही है। वे इस कला को क्या जानें? वे तो बस थले पर जम कर डंडी मारना या कलम घिसना जानते हैं। इसमें दिमाग लगता है, और चौबीसों घंटे दिमागी काम करते-करते जब जी उकता जाता है, तो तबीयत करती है कि कुछ रंग-पानी होना चाहिए।"

जहाज पानी को चीरता और मथता, पानी में बल डालता और झागों के बादल उड़ाता, आगे बढ़ रहा था। पानी के उबलने-उफनने की आवाज आ रही थी और काले नदी-तट धीरे-धीरे दूर होते जा रहे थे। डेक पर से मुसाफिरों के घर्राटों की आवाज आ रही थी। काले कपड़े पहने एक लम्बी और दुबली-पतली स्त्री बेंचों और सोते हुए लोगों के बीच से सपक सुई सी गुजर रही थी। उसका सिर अनढका था और उसके सफेद बाल चमक रहे थे। याकोव ने मुझे कोहनियाया और बोला

"इसे देखो, मालूम होता है, वह दुखी है।"

मुझे लगा कि दूसरों का हृदय खुदबुदाता देखने में उसे आनंद मिलता है।

वह हमेशा कोई न कोई किस्सा सुनाता और मैं बड़े चाव से सुनता। मुझे उसके सभी किस्से याद थे, लेकिन उनमें ऐसा एक भी नहीं था जो खुशी से सराबोर हो। किताबों के मुकाबिले वह कहीं ज्यादा असलग्न और तटस्थ मालूम होता था। किताबें पढ़ते समय बहुधा साफ पता चल जाता था कि लेखक की भावनाएं क्या हैं—न उसकी खुशी छिपी रहती, न उसका गुस्सा। साफ झलक जाता कि यहाँ वह दुख प्रकट कर रहा है, और यहाँ हँसी उड़ा रहा है। लेकिन याकोव न कभी मजाक उड़ाता था, न किसी पर भले या बुरे का लेबुल लगाता था। वह कोई ऐसी बात न प्रकट करता जिससे उसकी नाराजी या खुशी का पता चलता। वह एक तटस्थ गवाह की भांति अदालत में बोलता, उस आदमी की भांति जिसके लिए अपराधी, सरकारी वकील और जज सभी एक समान हों। पत्थर के बुत की भांति उसकी यह तटस्थ असलग्नता मुझे बुरी और बोझिल मालूम होती, उससे मेरा दम घुटता और विरोधी भावनाओं को वह मुझमें संचार करती।

वायलरो की भट्टियो में उठने वाली लपटों की भाति जीवन उसकी आँखो के सामने नाचता रहता और वह, भालू ऐसे अपने पजे में लकड़ी की हथौड़ी दबोचे, भट्टी के पास खड़ा हुआ चुपचाप उस पुर्ज़े को ठकठकाता रहता जिससे ईधन के प्रवाह को घटाया या बढाया जा सकता है।

"क्या तुम्हे किसीने चोट पहुँचाई है?"

"मुझे भला कौन चोट पहुँचा सकता है? मेरा यह शरीर नही देखते, एक ही घूसे मे काम तमाम कर दूँ...।"

"मेरा यह मतलब नही था। मेरा मतलब भीतर की, हृदय और आत्मा की, चोट से था।"

"आत्मा को भला कोई कैसे चोट पहुँचा सकता है," उसने कहा,—"वह अपमन से परे है। उसे कोई चीज नही छू सकती—नही, कोई भी नही।"

डैक के मुसाफिर, जहाज पर काम करने वाले और अन्य सभी लोग, आत्मा के बारे मे भी उसी तरह बाते करते नही अघाते थे जिस तरह कि वे ज़मीन या अपने धंधे, रोटी-पानी अथवा स्त्रियो के बारे मे बातें करते नहीं अघाते। आम लोगो के शब्द-भंडार मे आत्मा शब्द एक चलता हुआ सिक्का था। पाँच कोपेक के सिक्के की भांति उसका व्यापक प्रचार और चलन था। मुझे यह देख कर बडा बुरा मालूम होता कि यह शब्द चिपचिपाती चीजो से इस हद तक चिपक कर रह गया है, और जब कोई किसान गंदे शब्दो की बौछार करते-करते एकाएक, मजाक मे या गंभीर भाव से, आत्मा की दुहाई देने या उसे कोसने लगता तो मुझे ऐसा मालूम होता मानो किसीने मेरे सीने पर सीधा आघात किया हो।

मुझे अच्छी तरह से याद था कि मेरी नानी जब भी आत्मा का, प्रेम और आल्हाद तथा सौन्दर्य की इस रहस्यमय तालिका का,

ज़िक्र करती तो श्रद्धा से उसका माथा झुक जाता, और मुझे पक्का विश्वास था कि जब कोई भला आदमी मरता है तो सफ़ेद बुर्राक फ़रिश्ते उसकी आत्मा को नीले आसमान में नानी के नेकदिल ख़ुदा के पास ले जाते हैं और वह बड़े ही प्यार और दुलार से उसका स्वागत करता है

"आह मेरी प्यारी आत्मा, सुन्दर सलोनी और पवित्र आत्मा, वहां इन्सानों की दुनिया में तुम्हारी ज़िन्दगी बुरी तरह तो नहीं गुज़री, तुम्हें बहुत दुख तो नहीं झेलने पड़े?"

और वह आत्मा को फ़रिश्तों ऐसे छै सफ़ेद पंख अता कर देता है।

याकोव शूमोव भी, नानी की भांति, उतनी ही श्रद्धा से उतनी ही कम मात्रा में और उतने ही अनमने भाव से आत्मा के बारे में बात करता। वह आत्मा को कभी न कोसता, न ही कसम खाते समय इस शब्द का प्रयोग करता, और जब कभी वह दूसरों को ऐसा करता सुनता या देखता तो वह चुप हो जाता, अपना सिर नीचे झुका लेता। लाल भभूका और सांड की भांति मज़बूत उसकी गरदन लटक जाती। जब मैं उससे पूछता कि आत्मा क्या है तो वह जवाब देता

'आत्मा एक हवा है, ईश्वर की सांस।"

मुझे इससे सन्तोष न होता और अन्य सवालों की मैं झड़ी लगा देता। आंख झुका कर वह कहता

"आत्मा का भेद तो पादरी भी नहीं जानते, मेरे भाई। वह एक गुप्त रहस्य है ।"

मैं बराबर उसके ही बारे में सोचता रहता, और उस समझने में अपनी सारी शक्ति लगा देता। लेकिन बेकार। मुझे याकोव से

सिवा और कुछ दिखाई न देता, उसके भारी-भरकम शरीर की ओट में मानों सभी कुछ छिप जाता।

मैनेजर की पत्नी का इधर मेरी ओर कुछ जरूरत से ज्यादा झुकाव हो गया था। हर रोज सुबह वह मुझसे ही नहाने-धोने के लिए पानी भरवाती, हालांकि यह काम कायदे से मेरा नही बल्कि दूसरे दर्जे की साफ-सुथरी, प्रसन्नमुख, टुइयासी परिचारिका लूशा का था। छोटे से सकरे केबिन में कमर तक नंगी इस स्त्री के पास जब मै खड़ा होता तो खट्टे खमीर की भाति लिजबिज उसके पीले शरीर से मुझे बडी घिन मालूम होती और अनजाने ही, रानी मारगोट के पुष्ट और ताम्बे की भाति दमकते बदन से मै उसकी तुलना करने लगता। मैनेजर की पत्नी की जुबान बराबर चलती रहती, कभी वह कोसती और शिकायत-सी करती, और कभी गुस्से में बडबडाने और धज्जियाँ-सी बिखेरने लगती।

उसका यह बमकना और बडबडाना मुझे बडा बेतुका मालूम होता। उसकी बात मेरे पल्ले न पडती, हालाकि मन-ही-मन मै उसका मतलब समझता था जो निकृष्ट और शर्मनाक था। लेकिन मेरा मन जरा भी नही डिगा। मेरे और मैनेजर की पत्नी के बीच, और हर उस चीज के बीच जो जहाज पर घटती या होती थी, एक दूरी थी। एक भीमाकार काई चढी चट्टान मुझे अपने चारो ओर की दुनिया से अलग किए थी। और यह दुनिया स्थिर नही, गतिशील थी — दिन-प्रति-दिन समय के साथ तैरती और हर घडी आगे बढती हुई।

"मैनेजर की पत्नी तुमपर बुरी तरह लट्टू है!" खिल्ली उडाने वाली लूशा की आवाज गूँज उठती और मुझे इस तरह सुनाई देती मानो वह सपने मे बोल रही हो। — "अब क्या है, मजे से गोते लगाओ, घर बैठे गगा बडे भाग्य से आती है!"

मेरी खिल्ली उड़ाने वालो में अकेली वही नही थी। भोजन घर के सभी कर्मचारी इस स्त्री के लगाव मे परिचित थे। बावर्ची मुंह विचका कर आवाज़ कसता

"अन्य सब चीज़ो का जायका तो देवी जी ले चुकी, सो अब फ्रान्स की मिठाई चखने का शौक चर्राया है! औरत क्या है पूरी हर्राफा है। सभल कर पाँव रखना, पेश्कोव, नही तो गडगच्च हो जाओगे।"

याकोव ने भी, पिता के अन्दाज में, सलाह दी

"अगर तुम दो या तीन साल और बड़े होते तो निश्चय ही तब मै दूसरे ही अन्दाज में बात करता। लेकिन इस उम्र में— अच्छा है कि अछूते ही रहो। लेकिन म तुम्हे रोकूगा नही, जो अच्छा लगे सो करो।"

"मारो गोली," मने कहा,—"मुझे तो घिन आती है।"

"ठीक, गोली मारा!"

लेकिन, कुछ क्षण बाद ही, अपने उलझे हुए बालो में वह उगलियाँ फेरता और अपने छोटे-छोटे गोल-मटोल शब्दो को बीज की भाति विखेरना शुरू कर देता

"लेकिन जीवन के इस पहलू पर भी नजर डालनी चाहिए, और यह उसका बेरस, पाला-मारा पहलू है। कुत्ता तक यह चाहता है कि उसे कोई थपथपाए, मानव को तो इसकी और भी जरूरत है। प्यार-दुलार पर ही तो स्त्री जीती है, जैसे कुकुरमुत्ता वर्षा की बूदों पर जीता है। यह जरूर है कि वह कुछ बेशर्म है, लेकिन वह करे भी क्या? सारा छिनाला इस शरीर में ही भरा है, बस और कुछ नही।"

उसकी रहस्यमयी आंखा में आँखें गडा कर मैने देखा। फिर पूछा

"क्या तुम्हे उसपर तरस आता है?"

"मुझे? मेरी क्या वह माँ लगती है? फिर कुछ लोग तो अपनी माँ पर भी तरस नही खाते। सचमुच, तू भी अजीव पछी है।"

वह अपनी कोमल हंसी हंसता, फूटी हुई घटियो की आवाज की भाति।

कभी-कभी जव मै उसकी ओर देखता तो ऐसा मालूम होता मानो मै निस्तव्ध शून्य मे, किसी अंधेरे अतल गढे मे, डूवा चला जा रहा हूँ।

"अन्य सभी विवाह करते है, याकोव! तुम क्यो नहीं करते?"

"किस लिए? औरत के लिए मुझे कभी तड़पना नही पडता,—भला हो भगवान का, आसानी से मिल जाती है। विवाह के वाद आदमी घर से वध जाता है, उसे खेती-वाडी करनी पड़ती है। मेरे पास जमीन है, लेकिन किसी करम की नही, और वहुत ही कम, और इस थोड़ी-वहुत जमीन को मेरे चाचा ने हथिया लिया। मेरा भाई जव फौज से लौटा तो उसने चाचा से झगडा शुरू किया, उसे कानून का डर दिखाया, और उसका सिर फोड़ दिया। खूव खून-खरावा हुआ। इसके लिए वह पकड़ा गया, पूरे एक साल और छै महीने की उसे सजा हुई, और इसके वाद—सजा-काटे आदमी के लिए एक ही रास्ता रह जाता है जो उसे फिर जेल पहुँचा देता है। वह विवाहित था और, गुड़िया-सी वहुत ही सुन्दर उसकी पत्नी थी। लेकिन कोई क्या करे? एक वार शादी करने के वाद यही अच्छा है कि घर वसा कर वैठो और वीवी-वच्चो पर हुक्म चलाओ और उनकी वागडोर अपने कब्जे

में रखो। लेकिन एक सैनिक तो अपनी जिन्दगी का भी मालिक नहीं है।"

"क्या तुम खुदा की प्रार्थना करते हो?"

"क्या सवाल किया है पट्ठी ने। निश्चय ही करता हूँ।"

"किस तरह करते हो?"

"कई तरह से।"

"तुम्हे कौनसी प्रार्थनाए याद ह?"

"मै कोई प्रार्थना-व्रार्थना नही जानता। बस, सीधे कहता हूँ, महाप्रभु ईसा, जीवितो पर तरस खा, मरा को शान्ति दे, बीमारी-चकारी से हमारी रक्षा कर और ऐसी ही कुछ और बाते कहता हू।"

"कुछ और बातो मे क्या मतलब?"

"ओह, मैने कोई उनकी फेहरिस्त थोडे ही बना रखी है! मतलब यह कि जो कुछ भी कहना हो, वह महाप्रभु ईसा के पास पहुच जाता है।"

वह मेरे साथ बडी नर्मी बरतता और एक प्रकार के कौतुक में भर कर मुझे देखता, मानो मैं कोई चतुर पिल्ला हू जो मजेदार करतब दिखा सकता है। साँझ को म उसके पास बठ जाता, उसके बदन से तेल, आग और प्याज की गध आती रहती,—प्याज उसे बहुत पसद थी, और उसे सेब की भाति कच्चा ही खा जाता। बठे-बैठे उसे न जाने क्या सूझती कि एकाएक कहता

"हाँ तो आल्योशा, अब कुछ कविताए ही सुनाओ।"

मुझे ढेर सारी कविताए जुबानी याद थीं। उनके अलावा मेरे पास एक मोटी कापी भी थी जिसमे मैं वे सभी कविताए उतार लेता था जो मुझे अच्छी लगती थी। म उसे पुश्किन की कविता

"रुसलान और लुदमिला" सुनाता और वह निश्चल सुनता रहता—न उसकी आँखे हरकत करती, न जुबान—सास लेने की अपनी घरघराहट तक को वह रोक लेता। अन्त मे धीमे स्वर में कहता·

"कितनी प्यारी कहानी है यह—गुडिया-सी सुन्दर! क्या खुद तूने इसे गढा है? क्या कहा, पुश्किन ने इसकी रचना की थी? एक वडे कुलीन आदमी को तो मै भी जानता हूँ। मुशिन-पुश्किन उसका नाम था।"

"वह नही, यह दूसरा पुश्किन है। वहुत दिन हुए तव उन्होने उसे मार डाला था।"

"किस लिए?"

थोडे मे मैने उसे पुश्किन के जीवन और मौत की कहानी वता दी जो मुझे रानी मारगोट ने सुनाई थी। जव मै सुना चुका तो उसने शान्त स्वर मे कहा:

"स्त्रियो के पीछे न जाने कितने लोग अपनी जान से हाथ धो वैठते है।"

मै वहुधा उसे कितावो मे पढी कहानियाँ सुनाया करता। ये कहानियाँ, सव की सव, मेरे दिमाग मे कुछ इतनी उलट-पुलट और गड्ड-मड्ड हो जाती कि वे आपस मे गुथ-गुंथ कर एक लम्वी-चौड़ी धारा का रूप धारण कर लेती, एक ऐसी धारा का जिसमे गहरी उथल-पुथल होती और सौन्दर्य भी, प्रेम और वासना की लपलपाती लपटें होती और गरदन-तोड साहसिक कृत्य भी, नेक नायक, चकित कर देने वाली सौभाग्य की अद्भुत वर्षा, द्वन्द्व-युद्ध और मौत, वढ़िया-वढिया शब्द और कुटिलता मे सिर से पाँव तक डूवे खल नायक,—सभी इस धारा मे गुंथ जाते। कहानियो के पात्रो

और लोगो को स्याह से सफेद और सफेद से स्याह करने में भी बडा मुझे आनन्द आता। रोकाम्बोल को मै लामोल, हनीबाल और कोलोना का शौर्य अता करता, ग्यारहवे लुई को पिता ग्राडे के गुणो से लैस कर देता, और कोरनेट ओलतेनायेव की मै ऐसी कायापलट करता कि उसे देखकर हैनरी चतुर्थ का धोखा होता। मुझे नयी मे नयी बात सूझती। लोगो के चरित्रो में मै फेर-फार करता और घटनाओ को नये सिरे से सजा देता,—एक ऐसी दुनिया आबाद करता जिसका मै एक मात्र शासक होता, अपने नाना के खुदा की भाति जो लोगो के साथ मनमाने खेल करता था। लेकिन इस दुनिया में मै खो नही जाता, चारो ओर फैली हुई जीवन की वास्तविकता आँखों की ओट नही हो जाती, न ही लोगो के पास जाने और उन्हें समझने की मेरी इच्छा को पाला मारता, बल्कि किताबी दुनिया का यह ऊहापोह पारदर्शी और अभेद्य रक्षा-कवच बन कर जीवन में व्याप्त विषैली गदगी और सडाध मे, हर घडी ताक में रहने वाले अनगिनती घातक कीडो से, मेरी रक्षा करता।

कितनी ही चीजो मे किताबो ने मेरी रक्षा की, मुझे ऐसा बना दिया कि वे कभी मुझपर हावी न हो पाती। यह जान लेने के बाद कि लोग किस तरह प्रेम करते और मुसीबतो को झेलते है, भूलकर भी मै किसी चकले में पाँव नहीं रखता। यह मेरे लिए असम्भव था। छिनाल का यह सस्ता रूप देख मै घिना उठता और मेरा हृदय उन लोगो के प्रति घृणा से भर जाता जो इसमें रस लेते। रोकाम्बोल ने मुझे सिखाया कि परिस्थितियों की ताकत से लोहा लो, उन के सामने कभी न झुको। ड्यूमा के नायकों ने किसी ऊचे और महत्वपूर्ण लक्ष्य के लिए जीवन अर्पित करने की मुझे सीख दी। और सब से अधिक मुग्ध किया मुझे राजा हैनरी

चतुर्थ के मौजी चरित्र ने। मुझे ऐसा लगता मानो उसी को ल
में रख कर वेरान्गेर ने अपनी इन पंक्तियों की रचना की ह

था वह मौजी
जम कर पीता और पिलाता—
जो भी आता छक कर जाता
नही किसी से वह कतराता!
क्यों कहते ऐयाशी इसके
जिस राजा की जनता खुश हो
क्यों न वह मौज उड़ाए
खुशहाली छलके छलकाए!

उपन्यासो में हेनरी चतुर्थ एक नेक और जनता के हृदय
घर कर लेने वाले आदमी के रूप में चित्रित था। सुनहरी धूप की
भांति उजला और मौजी उसका स्वभाव था। इसके बारे में जब
मैने पढ़ा तो यह बात मेरे दिल मे अडिग भाव से जम कर बैठ
गई कि सामन्ती आन-बान के केन्द्र फ़्रान्स से बढ़िया देश इस दुनिया
में और कोई नही है जहाँ किसानों के कपड़े पहने लोग भी उतने
ही नेक और अच्छे है जितने कि वे जो शाही तामझाम में रहते
है। आर्ग पितोय भी उतना ही आन-बान वाला था जितना कि
दआर्तनान। जब हेनरी मारा गया तो मेरा हृदय भारी हो गया,
आँखों से आँसू बहने लगे और गुस्से के मारे रैवेलाक पर मैने
खूब दाँत पीसे। हेनरी करीब-क़रीब उन सभी कहानियों का हीरो
होता जो मै याकोव को सुनाता, और मुझे लगता कि उसके हृदय
मे भी हेनरी और फ़्रान्स ने अपना स्थान बना लिया है।

"मजे का आदमी है, तुम्हारा यह हेनरी बादशाह भी!"
उस ने कहा।—"एकदम यार बाश, चाहो तो उसके साथ मछली
मार सकते हो, या ऐसा ही कोई और प्रोग्राम बना सकते हो।"

कहानी सुनते समय न कभी वह उकटा होता था, न बीच में टोकता या सवालो की झडी लगाता था। वह चुपचाप सुनता रहता,— भौंहें तनी हुईं, चेहरे पर वही एक भाव जो कभी नही बदलता था,—काई-जमी पुरानी चट्टान की भाति। लेकिन अगर किसी वजह से म बीच में रुक जाता तो वह तुरत कहता

"क्या खत्म हो गई?"

"अभी नही।"

"तो रुको नही, कहे जाओ।"

एक दिन फ्रान्स के लोगो के बारे में जब हम बाते कर रहे थे तो उसने लम्बी सास भरी और बोला

"मज़े का जीवन है उनका—बढिया और ठडा!"

"बढिया और ठडा कसा?"

"हा, बढिया और ठडा," उसने कहा,—"एक हम-तुम हैं जो हर वक्त दहकते रहते है, काम की गर्मी एक घडी ठडा नही होने देती। लेकिन वे कम प्याले छनकाते और सर-सपाटा करते है। जीवन का यह ढग भी खूब है!"

"लेकिन काम तो वे भी करते है।'

"करते होंगे, तुम्हारी कहानिया से इसका पता नही चलता," याकोव ने जवाब दिया। बात सही थी और मैने एकाएक अनुभव किया कि ढेर की ढेर किताबें जो म पढ चुका था, इस मामले में वे सभी कोरी थीं। उन्हें पढ कर यह पता नहीं चलता था कि किस तरह लोग श्रम करते या अपने श्रम से किस प्रकार व उन्हें बुला में जमे नायको को हरा-भरा रखते हैं।

"अच्छा तो अब एक नीद ले ली जाए," याकोव कहता और कमर के बल वही पसर जाता। इसके बाद, अगले ही क्षण, वह मज मे करवट लेता दिखाई देता।

पतझड के दिनों में जब कामा नदी के किनारों पर लाल-कत्थई रंग छाया था, पेड़ों के पत्ते पीले पड चुके थे और सूरज की तिर्छी किरनें फीकी हो चली थीं, याकोव एकाएक जहाज से अलग हो गया। इससे एक ही दिन पहले उसने मुझसे कहा था:

"एक दिन बाद, यानी परसों, हम-तुम पेर्म पहुँच जाएंगे, आल्योशा! सब से पहले किसी हम्माम में जाकर हम दोनो खूब वाष्प-स्नान करेंगे, फिर सीधे कहवेखाने की राह लेंगे जहाँ गाना-बजाना भी होता हो। क्यो, क्या तू समझता है कि हथ-बाजे को बजाते-बजाते जब वे दोहरे-तिहरे हो जाते है तो मुझे अच्छा नहीं लगता?"

लेकिन सारापूल में मोटा गावदुम, दाढ़ी सफाचट और स्त्रियों ऐसे फूले हुए चेहरे वाला एक आदमी जहाज पर सवार हुआ। लम्बे कोट और फरवाले कनटोप मे उसे देख कर और भी ज्यादा धोखा होता कि पुरुष न होकर वह स्त्री है। आते ही रसोईघर के पास वह एक मेज पर बैठ गया। यहाँ काफी गरमाई थी और इसी लिए उसने यह कोना चुना था। चाय के लिए उसने आर्डर दिया और अपना कोट या कनटोप उतारे बिना ही गरम चाय की चुस्कियाँ लेने लगा। देखते-देखते उसका सारा बदन पसीने में तर हो गया।

बाहर पतझड़ की महीन बौछारे पड़ रही थी। जब वह अपने चेकदार रूमाल से माथे का पसीना पोंछता तो मानो बौछारें भी साँस लेने के लिए रुक जाती, इसके बाद जब फिर तेजी से पसीना निकलता तो बौछारे भी उतनी ही तेज हो जाती।

कुछ ही देर बाद याकोव भी उसके पास जाकर बैठ गया और दोनो मिलकर जन्तरी में एक नक्शे को बडे ध्यान से देखने लगे। मुसाफिर नक्शे की रेखाओं पर उंगली फेर कर कुछ बता रहा था। आखिर याकोव ने शान्त स्वर में कहा.

"छोडो इसे। मेरे जैसे आदमी के लिए सब बाए हाथ का खेल है। गोली मारो।"

"ठीक," मुसाफिर ने ऊची आवाज में कहा और जन्तरी को उठा कर चमडे के एक खुलेमुंह थैले मे खोस दिया जो उसके पाँव के पास रखा था। इसके बाद वे चाय पीते और चुपचाप बात करते रहे।

याकोव की पाली शुरू होने से ठीक पहले मैंने उससे पूछा कि यह कौन है। हल्की हसी के साथ उसने जवाब दिया

"देखने में तो जनखा मालूम होता है। मतलब यह कि इसने अपने आप को बधिया कर लिया है। दूर साइबेरिया का रहने वाला है। लेकिन है कुछ अजीब पछी — हर चीज का नक्शा बना कर चलता है।"

इसके बाद, काली और खुर की भाति सख्त अपनी नगी एडिया से डेक को झनझनाता, वह मेरे पास से चल दिया। फिर वह एकाएक मुडा और अपनी पसलियो को खुजलाता हुआ बोला

"मने उसकी चाकरी मजूर कर ली है। पेर्म पहुचते ही मैं जहाज की नौकरी को धता बताऊगा और तुमसे विदा लूगा, आल्योशा। बडी दूर है वह जगह जहाँ, उसके साथ म जाऊगा। पहले हम रेलगाडी पर सवार होगे, फिर पानी के जहाज पर, और उसके बाद घोडो पर। वहाँ पहुचने में पूरे पाच सप्ताह लग जाएगे। देखो न, लोगो ने भी कितनी दूर-दूर तक अपने घामले बनाए लिए है।"

'क्या तुम्हारी उससे जान-पहचान है?" याकोव के इस आकस्मिक फैसले से चकित होकर मने पूछा।

"जान-पहचान कैसी? पहले कभी उसकी, और उस जगह की भी जहाँ वह रहता है, शक्ल तक नही देखी।"

अगले दिन, सुबह के समय, याकोव ने जहाज की वर्दी उतार दी और अपने कपड़े पहन लिए — भेड़ की खाल की एक नीकट जाकेट जो उसके बदन पर अट नहीं पाती थी, सिर पर एक खस्ताहाल सींकों का हैट जिसके किनारे दगा दे चुके थे और जो किसी ज़माने में नाटे भालू की सम्पत्ति था, और नंगे पांवों में पेड़ के वक्कल की घिसी-पिटी चप्पलें। लोहे जैसी अपनी उंगलियों में मेरा हाथ दबोचते हुए उसने कहा:

"क्यों, तू भी मेरे साथ चलो न? अगर मैं उससे कहूं तो सच वह तुझे भी रख लेगा। बोलो, क्या कहता है? चलो न, बड़ा मज़ा रहेगा। और अगर तू वह चीज़ कटवाने के लिए तैयार हो गया जिसके बिना भी आदमी ज़िन्दा रह सकता है, तब तो तेरे गहरे हैं। बड़ी धूम-धाम से वे लोगों को खस्सी करते हैं, और इसके लिए अच्छी रकम तक भी देते हैं।"

जनखा कटहरे के पास खड़ा था और बगल में एक सफ़ेद पोटली दबाए चुंधी-सी आँखों से याकोव की ओर देख रहा था। उसका बदन उतना ही भारी और फूला हुआ था जितना कि पानी में डूबे हुए आदमी का। मैंने मन-ही-मन उसे कोसा, वह एक बार फिर मेरा हाथ दबोचते हुए बोला:

"गोली मारो! हर आदमी खुदा को प्रसन्न करने के लिए तरह-तरह के ढंग अपनाता है। ये लोग खस्सी होकर खुदा को प्रसन्न करते हैं। इसमें परेशान होने की क्या बात है? अच्छा तो मैं अब चलता हूं। मज़े से रहना, समझे!"

इसके बाद एक बड़े भालू की भांति झूमता और झकोले खाता याकोव विदा हो गया और परस्परविरोधी भावनाएं मेरे हृदय को झंझोड़ने लगीं: दुःख का भी मैं अनुभव कर रहा था और झुंझलाहट

था भी, और मुझे याद है कि उसे इतनी दूर एक अनजानी जगह जाते देख ईर्ष्या और भय का भाव भी मेरे हृदय को मथ रहा था, मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि उसने वहाँ जाने का क्यो तय किया,—और सौ बातो की एक बात यह कि आखिर वह, यानी याकोव शूमोव, आदमी किस बेंडे का था?

१२

पतझड के दिन बीत चले और पानी में जहाजो का चलना अब बद हो गया। जहाज की नौकरी से अलग हो मैंने फिर एक कारखाने में काम सीखने के लिए नौकरी शुरू की। यहाँ देव-प्रतिमाओ को रगा-चुगा और उन्हे कारखाने की दुकान मे बेचा जाता था। काम सीखना शुरू करने के दूसरे ही दिन मेरी मालकिन ने जो एक छोटे कद की ढीलीढाली बूढी स्त्री थी, और जिसे शराब पीने की आदत थी ऐलान किया

"अब दिन छोटे और साझ बडी होने लगी है, सो तुम हर रोज दिन म तो दुकान पर रहोगे और वहाँ बिक्री आदि में हाथ बटाओगे, और साझ को कारखाने मे काम सीखोगे।"

और उसने मुझे दुकान के मुशी के हवाले कर दिया। वह एक तेज-तर्रार युवक था, देखने में सुदर, लेकिन चिपचिपाहट लिए हुए। दुकान लोअर मार्केट की बारादरी में दूसरी मजिल पर थी। अंधेरे-मुह हम, वह और मैं, उठते और ठड में कलाबत्तू बने नींद में उघाते इलिन्का स्ट्रीट को पार कर दुकान पहुचते। दुकान, जो पहले किसीका स्टोर रूम थी, छोटी और अधेरी थी। लोहे का उसमें दरवाजा लगा था और एक छोटी-सी खिडकी थी जो टीन की छतवाली बारजनी की ओर खुलती थी। हमारी दुकान

देव-प्रतिमाओं से भरी पडी थी। छोटी, वडी और मझोली, सभी आकार-प्रकार और काट-छाट की प्रतिमाएँ थी। साथ ही देव-प्रतिमाओं के चौखटे भी हम वेचते थे, सादे भी और कामदार भी, जो तरह-तरह के वेल-वूटो से सजे हुए थे। चमड़े की पीली जिल्द चढी और प्राचीन स्लाव लिखावट की धार्मिक पुस्तको का स्टाक भी दुकान में मौजूद था। हमारे वगल में ही देव-प्रतिमाओं और धार्मिक पुस्तको की एक और दुकान भी थी। इस दुकान का मालिक एक काली दाढी वाला सौदागर था। वोल्गा के उस पार केर्जीनेत्स नदी के समूचे इलाके में प्रसिद्ध एक कट्टर पुरानपथी परिवार का वह नातेदार था। मेरी ही उम्र का उसका एक लडका था,—काजू-वाजू, वचकाना शरीर और वूढो-ऐसा चेहरा, उल्लू ऐसी गोल आँखे जिन्हे वह हर घडी तरेरता रहता था।

दुकान खोलते ही मेरी दौड़ शुरू हो जाती। सव से पहले मै निकटतम कहवेखाने का रास्ता नापता और चाय के लिए वहाँ से खौलता हुआ पानी लाता। चाय के वाद मै दुकान लगाता और माल की गर्द झाड़ कर उसे साफ-सुथरा करके रखता। दुकान को खूव चौचक वनाने के वाद मै वराडे मे जा खडा होता। मेरा काम था कि ग्राहको को अपने हाथ से न निकलने दू, यह न हो कि वे हमारी दुकान में न आकर वरावर वाली दुकान में चले जाएँ।

"ग्राहक तो काठ के उल्लू है," दुकान का मुंशी कहता,—"दुकान से उन्हे क्या गरज, वे तो वही मुँह मारते है जहाँ सस्ती चीज़ मिलती है। गधा-घोड़ा उनके लिए सव वरावर है।"

उसके हाथ तेजी से चलते रहते। देव-प्रतिमाओं को वह उठाता और सटा-सटा कर रखता। व्यापार-सम्वन्धी अपना ज्ञान वघारने मे जरा भी नही चूकता और मुझे सवक़ पढाना शुरू करता:

"देखो न, यह कितनी वढिया चीज है—और वहुत सस्ती, तीन वाई चार साइज, और दाम कुछ भी नही; और यह देखो,

छै वाई सात माइज, और दाम भी कितने माकूल स ता के बारे में कुछ जानते हो? एकाध का नाम तो लो यह सन्त वोनिफाती है—उन पियक्कडा के लिए जो बार-बार तोबा करते और उसे तोडते है, और यह शहीद बारबारा की प्रतिमा है—दान-दाढ के दर्द और अकाल मृत्यु के लिए, और यह पहुचे हुए सिद्ध वमीली ह—बुखार और सरसाम के दौरो के लिए। और मरियमा के बारे में कुछ जानते हो? देखा, यह प्रतिमा शोक-ताप हरती है। इसीसे खुद भी कितनी उदासी में डूबी है, और यह तीन बाँहो वाली मरियम है, और इसे देखा इसकी आँखो मे सदा आँसू बहत रहते ह, और यह मेरा-शोक-दूर करो मरियम है, इसके अलावा कजान, पोकरोव और सेमिस्त्रेलनाया मरियमा की प्रतिमाएँ ।"

बडी-छोटी और कारीगरी के हिसाब से किस प्रतिमा के कितन दाम है, यह सब मैने बडी जल्दी याद कर लिया, और विभिन्न मरियमा को पहचानने में भी मुझे अब कोई दिक्कत नही होती, लेकिन यह याद रखना मुझे एक अच्छा-खासा जजाल मालम होता कि किस सन्त की प्रतिमा किस तरह से शोक-ताप हरती या किस तरह के वरदान देती ह।

दुकान का मुनी अक्सर मेरा इम्तहान लेता। दुकान के दरवाजे पर खडा मैं न जाने किस खयाली पुलाव में मगन होता कि उसकी आवाज आती

"बालो, बच्चा जनने की पीडा कम करना किसके हाथ में है?"

अगर मेरा जवाब गलत निकलता तो उसकी भौहे चढ जाती
"आखिर तुम्हारी यह खोपडी किस काम आएगी?"

ग्राहको को पटाना और भी ज्यादा मुश्किल मालूम होता। प्रतिमाओ के भौडे चहरे मुझ बुरे मालम होते और मेरी समझ में न आता कि उन्हें किसीके हाथ कैसे बचा जाए। नानी से सुना

नियाँ सुन-सुन कर मेरे मन में यह वात वैठ गई थी कि मरियम कम-उम्र, भली और सुन्दर थी। पत्रिकाओ मे मरियम के जो चित्र मैंने देखे थे, वे भी ऐसे ही थे। लेकिन प्रतिमाओं मे वह वूढी और कुत्सित मालूम होती थी, लम्वी और नोक-नुकीली नाक तथा वेजान हाथ मानो उन्हें काठ मार गया हो।

वुध और शुक्रवार के दिन वाजार लगता और हमारी अच्छी विक्री होती। किसानो और वूढी स्त्रियो का हमारी दुकान मे ताता लगा रहता, और कभी-कभी तो वच्चों के साथ पूरा परिवार-का-परिवार आ धमकता — सव के सव कट्टर पुरानपंथी, भौंहे चढाए और आँखो मे अविश्वास भरे, वोल्गा के जगलो में गुजर करने वाले। मेरी नज़र वालकनी की छान-वीन करती और मै देखता कि हाथ के कते-वुने मोटे कपड़ों और भेड़ की खालो से लदा-फदा एक भारी-भरकम पोट सामने से चला आ रहा है। वह धीरे-धीरे आ रहा था, मानो डरता हो कि कही ढह न जाए। मुझे वड़ा अटपटा मालूम होता। एकाएक उसके पास जाने और उसे अपनी दुकान में घसीट लाने का साहस नही होता। आखिर, भारी उलझन के वाद, मै उसके रास्ते मे जम जाता और उसके खम्वो जैसे भारी-भरकम पावो के पास नाचता हुआ मच्छर की भांति भनभनाने लगता:

"कुछ लेना है, वावा? सभी कुछ हमारे यहाँ है — धर्म की पोथियाँ, प्रार्थना की पुस्तके, टीका-टिप्पणी और अर्थ सहित वाइवल के गीत, येफ़्रेम सिरिन और किरिल की वनाई हुई पुस्तकें। एक वार चल कर जरा देख न लो। और सभी तरह की देव-प्रतिमाएँ — सस्ती से सस्ती और महँगी से महँगी, इतनी वढिया कारीगरी कि कुछ न पूछो, और गहरे रंग जो कभी न छूटें। हम प्रतिमाएँ तैयार भी करते है। जो भी सन्त या मरियम तुम्हे पसन्द हो, हमसे वनवा लो। और देखो न, कुछ लोगो के अपने खास सन्त

हाते ह जो उनकी या उनके परिवार की रक्षा करते ह। तुम्ह तो किसी ऐसे सन्त की प्रतिमा नही बनवानी? हम तुरत बना देंगे। हमारा कारखाना समूचे रूस में बेजोड है। नगर में इससे बढिया दुकान ढूढ नही मिलेगी।"

ग्राहक लोहे की अभेद्य दीवार की भाति खडा रहता और बुत बरोला-सा इस तरह मुझे घूर कर देखता मानो मै कोई कुत्ता हू। इसके बाद, एकाएक भारी हाथ से वह मुझे धकियाता और बराबर वाली दुकान में घुस जाता। दुकान का मुशी यह देखता, ग्राहक को हाथ से निकलते देख अपने छाज से कानो को मलता और गुस्से से भुनभुना उठता

"क्यो, उसे निकल जाने दिया न? अच्छे चौपट दुकानदार हो तुम?"

और पास वाली दुकान से मुलायम तथा शहद में लिपटे शब्दों की वर्षा होने लगती

"भगवान तुम्हारा भला करे, हम भेडो की खाल नही बेचते, न ही हम चमडे के जूतो का धधा करते है। हमारे यहा तो केवल दैवी न्यामते ह, जिनका न चादी से मोल आंका जा सकता है न सोने से, वे अनमोल है, दुनिया की हर चीज उनके सामने हेच है ।"

दुकान का मुशी सुनता और ईर्ष्या तथा प्रशसा से कलावत्तू बन जाता

"देखो न कम्बख्त को, भोले देहाती के काना म क्या मीठा जहर उडेल रहा है। ग्राहको को ऐसे पटाया जाता है, समझे!"

ग्राहको का पटाने की कला सीखने के लिए मै जी जान से प्रयत्न करता। सोचता कि जब काम हाथ में लिया है तो उसे अच्छी तरह करना चाहिए। लेकिन ग्राहको पर डोरे डालने और उनके माथे चीजें मढने की दिशा में मेरी प्रतिभा ने मानो उजागर

होने से इन्कार कर दिया। तोबड़ा-चढे गुम्म-सुम्म देहातियों और चूहों की भाति खुदफुद करती, भय से त्रस्त तथा दीन चेहरे वाली बूढी स्त्रियो को जव भी मैं देखता, मुझे उनपर वड़ा तरस आता, मेरा जी करता कि चुपके से उनके कानो मे इन प्रतिमाओं का असल राज खोल दूँ ताकि गाढी कमाई के जो दस-वीस कोपेक उनकी गाठ में पड़े है, वे उनके पास ही वने रहे। वे सव इतने फटे हाल, इतने गरीव और भूखे मालूम होते कि मै चकरा जाता, और मेरी समझ मे न आता कि वाइबल के गीतो की पुस्तक के लिए, जो सव से ज्यादा विकती थी, उनकी गाठ से साढे तीन रूवल कैसे निकल आते थे।

किताबो के बारे मे उनकी परख और सराहना करने की क्षमता देख कर मै दग रह जाता। एक दिन सफेद वालो वाला एक वूढा आदमी आया। मैने उसपर भी अपना मत्र चलाना शुरू किया। मेरा भनभनाना सुनने के वाद वोला:

"नही, वेटा, तुम जो कहते हो वह सच नही है। यह गलत है कि रूस में सव से अच्छी प्रतिमाएँ तुम्हारे यहाँ वनती है। सव से अच्छी तो मास्को मे रोगोजिन की वर्कशाप है।"

सकपका कर मै एक ओर हट जाता और वह पडौसी की दुकान को भी पार करता हुआ, आगे वढ जाता।

"क्यो, उसे जवाब तक नही दे सके,—एकदम सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई?" दुकान के मुशी ने जल-भुन कर कहा।

"मै क्या करता? तुमने तो रोगोजिन के वारे मे कभी कुछ नही वताया।"

मुशी झुझलाहट उतारने लगा:

"देखने में कितना चुप्पा, और किस तरह गरदन झुकाए चलना था मानो कुछ जानता ही नही। लेकिन ऐसे लोग वड़े

सपोलिये होते हैं, दिन-भर इसी तरह ताक-झांक करते घूमते हैं, दुनिया-भर की बातें सुनते-बटोरते हैं, और फिर चटखारे ले लेकर सब की चिन्दियां उड़ाते हैं। इनसे खुदा ही बचाए!"

दुकान का मुंशी जो बाहर से चिकना-चुपड़ा और भीतर से खाली कारतूस की भांति खोखला तथा बनावट में सिर से पांव तक डूबा था, देहाती किसानों को नीची नजर से देखता और उनसे चिढ़ता। एक दिन कहने लगा

"भगवान ने मुझे बुद्धि दी है, मैं चतुर हूं, साफ-सुथरी चीजें और बढ़िया खुशबू मैं पसंद करता हूं—अगरबत्तियां, गुलाबजल, तेल फुलेल और इसी तरह की अन्य चीजें। अब तुम्हीं सोचो कि मेरी जैसी रुचिवाले आदमी को इन देहकानों के सामने झुकना और उनके तलुवे चाटना पड़ता है, और यह इसलिए कि मालकिन की जेब में दो-चार कोपेक पड़ जाएं! मैं ही जानता हूं कि मेरे दिल पर कभी क्या गुजरती है। आखिर ये देहकान हैं क्या? मरी हुई नामर्दी की खान जिसमें कीड़े पड़ गए हैं, जो बुरी तरह गंधाती है। जूं की भांति रेंगने के लिए भगवान ने इन्हें धरती पर छोड़ दिया है। और मैं ।"

अंत में परेशान हो कर वह खुद ही चुप हो जाता।

मुझे देहकान पसंद थे। उन्हें जब भी मैं देखता, मुझे ऐसा मालूम होता मानो वे अपने भीतर कोई बहुत बड़ा रहस्य छिपाए हों, ठीक वैसे ही जैसे याकोव का देख कर मुझे अनुभव होता था।

भेड़ की खाल के ऊपर भारी लबादा लादे कोई एक देहकान लस्टम पस्टम दुकान में चला आता। पिचकी हुई अपनी बालदार टोपी को वह सिर से उतारता, और देव प्रतिमा के कोने में जल रहे दीये की लौ पर आंखें जमाए अपनी दो उंगलियों से नाक पर

चिन्ह वनाता। फिर बिक्री के लिए रखी देवत्वशून्य प्रतिमाओं से अपनी नजर बचाते हुए वह तेजी से मुड कर कहता:

"मुझे वाइवल के गीतों की पुस्तक चाहिए, टीका-टिप्पणी सहित।"

इसके वाद अपने लवादे की आस्तीनें ऊपर चढा कर, मुखपृष्ट के अक्षरों के साथ वह देर तक सिर खपाता, और उसके फटे हुए मटियाले होंठ विना कोई आवाज निकाले हरकतें करते रहते। अन्त मे वह कहता:

"तुम्हारे पास इससे पुरानी प्रति भी तो होगी?"

"है क्यो नही, लेकिन पुरानी प्रतियां एक हजार रूवल से कम में नही मिलती,—तुम तो जानते ही हो।"

"हाँ, मै जानता हूं।"

फिर थूक से अपनी उंगली को नम कर वह पन्ना पलटता जिससे हाशिये पर मैली-कुचैली उंगलियों का काला धब्वा पड जाता। मुंशी मन-ही-मन उफनता और दहकान की खोपडी की ओर गुस्से से घूरता रहता। फिर कहता:

"धर्म ग्रथों की उम्र में भी क्या कोई भेद-भाव होता है? पुराने हों चाहे नये, सव एक ही उम्र के होते है। खुदा अपने शब्दो को नही वदलता।"

"यह सव हम भी जानते है। खुदा अपने शब्दो को नही वदलता, लेकिन सुधार का दम भरने वाले निकोन* ने तो उन्हें बदल दिया न?"

---

* निकोन जार अलेक्सी के शासन-काल में रूस का सवसे वड़ा पादरी था। उसने धर्मग्रथों तथा देवमाला में सशोधन करने का वीडा उठाया था। कट्टर पुरानपथी उसके विरुद्ध थे जो रासकोलनिकी (सनातनी) कहलाते थे।

और ग्राहक ग्रथ को बन्द करते हुए, चुपचाप, दुकान से बाहर हो जाता।

बस्ती मे दूर जगलो के ये निवासी कभी कभी दुकान के मुशी से बहस करने लगते और मै साफ देखता कि धर्मग्रथो और पुरानी प्रतियो की जितनी ज्यादा जानकारी उन्हे है, उतनी उसे नही।

"दलदल के कीडे, ईंट-पत्थरो को पूजने वाले!" मुशी बडबडाता।

यह जानते और देखते हुए भी कि दूकान आधुनिक ग्रथो को पसद नही करता, मुझे लगता कि उसके हृदय मे उनके प्रति भी श्रद्धा का भाव है, हालाकि उन्हे छूता हुआ वह कुछ सकपकाहट का अनुभव करता, मानो डरता हो कि कही वे उसके हाथ से पक्षी की भाति उड कर भाग न जाएं। यह देख कर मुझे बडा आनन्द आता, कारण कि पुस्तके मेरे लिए अद्भुत चीज थी जिनमें उनके रचयिताओ की आत्माए बद थी। जब मै उन्हें पढता तो पन्नो में बद उनकी आत्माए, मानो उन्मुक्त हो जाती और रहस्यमय ढग से मेरे साथ घुल-मिल जाती।

अक्सर ऐसा होता कि ये बूढे पुरुष और स्त्रियाँ सुधारक निकोन के समय से भी पहले की पुरानी प्रतियाँ हमारे पास बेचने के लिए आते, या इस तरह की प्रतियो की केवल सूची लेकर आते। इरगीज या केर्जीनेत्स के भिक्षुओ के हाथ की लिखावट बहुत ही सुदर मालूम होती। वे सतो की जीवनी के मूल दिमीत्री रोस्तोवस्की द्वारा असशोधित सस्करण की प्रतियाँ, प्राचीन देव-मूर्तियाँ, इनामेल चढे, तटवर्ती देशो के कारीगरो द्वारा बनाए गए पीतल के त्रिपाद और क्राम, मास्को के शाहो द्वारा सराया और कहवाखानो के मालिको को खुश होकर भेंट किए गए चादी के चमचे आदि लेकर आते। इन सब चीजो को वे चोरी के माल की

भांति छिपा कर लाते और अगल-बगल कनखियो से देखते रहते कि कही किसी की नजर तो नही पड रही है।

हमारी दुकान का मुशी और पडौसी दुकानदार दोनों ही इस तरह के माल के लिए जीभ लपलपाते रहते और उन्हे कम दामों मे हथियाने मे एक-दूसरे को मात देने की कोशिश करते। प्राचीन से प्राचीन निधियों के लिए वे कभी दस रूबल से ज्यादा नही देते और धनी पुरानपथियो के हाथ उन्हे बेच कर खुद सैकड़ो रूबल झटकारते।

"देखना, कोई बूढा शैतान या कोई बुढिया भुतनी नजर बचा कर न निकल जाए," वह मुझसे कहता।—"ये कम्बख्त अपने थैलो में नकद हुँडियाँ लिए घूमते है!"

जब भी कोई अच्छा सौदा सामने आता, वह मुझे सिद्धान्त-शास्त्री प्योत्र वसीलीयेविच के पास दौड़ाता कि उसे बुला लाओ। प्राचीन पुस्तको, देव-प्रतिमाओं और इस तरह की अन्य चीजो का वह पक्का जानकार था।

वह एक लम्बे कद का बूढा आदमी था। उसकी आँखो मे समझदारी की चमक थी, चेहरे पर प्रसन्नता झलकती थी और उसकी लम्बी दाढी देखकर सन्त वसीली का धोखा होता था। उसके एक पाव की उँगलियाँ, पूरा पजा, गायब था और हमेशा लकड़ी का सहारा लेकर वह चलता था। गर्मी हो चाहे सर्दी, पादरी के लबादे की भांति वह हमेशा एक हल्का कोट और सिर पर मखमल की तसलेनुमा टोपी पहने रहता था। आम तौर से जब वह चलता तो काफी सीधा-सतर और फुर्तीला मालूम होता, लेकिन दुकान मे पाँव रखते ही वह अपने कधे ढीले छोड़ देता, हल्की सी आह भरता और पुरानपथियो के रिवाज के अनुसार दो उँगलियो से क्रास का चिन्ह बनाता, मुंह से प्रार्थना और धर्म गीतो के शब्द बुदबुदाता।

बुढापे और धार्मिकता की यह नुमाइश दुर्लभ चीजें बेचनेवालो के हृदयो में भय और विश्वास का सचार करती।

"कहो, किस काम के लिए बुलाया था मुझे?" बढा कहता।

"यह आदमी एक प्रतिमा लाया है, और कहता है कि यह स्त्रोगानोव प्रतिमा है।"

"क्या-आ-आ-आ?"

"स्त्रोगानोव प्रतिमा।"

"मुझे कुछ कम सुनाई देता है, और यह अच्छा ही है। भगवान ने मुझे बहरा बना कर उस झूठ और पाखड को सुनने से बचा लिया जिसे निकोन के चेले-चाटी फला रहे है।"

वह अपनी टोपी उतार कर रख देता, और प्रतिमा को दोनो हाथो में आडा उठा कर उसके रग की परतों का मुआयना करता, फिर अगल-बगल से उलट-पलट कर देखता और उसके जोडो पर नजर डालता। साथ ही, आखें सिकोडे, बुदबुदाता भी जाता

"निकोन के ये चेले चाटी न ईश्वर की परवाह करते है, न दीन-ईमान की, लेकिन जब इन्होने देखा कि लोगो पर प्राचीन कारीगरी का असर है, वे उसे पसद करते है, तो शैतान ने उन्ह कुरेदा और उन्होने देव-प्रतिमाओ की झूठी और विकृत नकले उतरवाना शुरू कर दी। और यह काम इतनी अद्भुत होशियारी से आजकल किया जा रहा है कि एक बार अगर खुद ईश्वर भी देखे तो धोखा खा जाए। पहली नजर में यही मालूम होता है मानो यह असली स्त्रोगानोव या उस्तयुग प्रतिमा है। इतना ही नही, बल्कि वे सुज्दाल प्रतिमाओ तक की इतनी सच्ची नकल उतारते है कि असल का धोखा होने लगता है। लेकिन भीतरी नजर से देखने पर तुरत सारा भेद खुल जाता है, साफ मालूम हो जाता है कि यह झूठी और विकृत नकल है।"

जब वह किसी प्रतिमा को 'झूठी और विकृत' कहता तो इसका अर्थ सिवा इसके और कुछ न होता कि वह एक दुर्लभ और कीमती चीज है। इस तरह के शब्दों की एक बाकायदा फेहरिस्त उन्होंने बना रखी थी जिससे मुंशी को पता चल जाता कि किस चीज़ का कितना दाम उसे लगाना चाहिए। मैं जानता था कि 'शोक और निराशा' शब्दों के प्रयोग का अर्थ है कि दस रूबल से ज्यादा नहीं देने चाहिए। इसी प्रकार 'निकोन शेर' का अर्थ था कि पच्चीस रूबल तक दाम दिए जा सकते हैं। बेचने वाले को इस तरह धोखा देना बड़ा शर्मनाक मालूम होता, लेकिन बूढ़ा इतनी चालाकी से यह खेल खेलता कि हृदय में कौतुक का भाव लिए मैं उसे देखता ही रह जाता।

"निकोन के चेले-चाटी, निकोन शेर के ये चपड़ कनाती, शैतान की पाठशाला में पढ़े हुए हैं और इतनी चालाकी से काम लेते हैं कि पकड़ना मुश्किल। मिसाल के लिए इसे ही देखो, कौन कह सकता है कि इस प्रतिमा का आधार सच्चा नहीं है, अथवा यह कि इसके कपड़ों पर उन्हीं हाथों ने रंग नहीं किया है? मगर ज़रा चेहरे को तो देखो—यह दूसरी ही कूची से बनाया गया है। साइमन उशकोव जैसे पुराने उस्ताद,—आस्तिक या ईश्वर द्रोही चाहे कुछ भी वे क्यों न हों,—समूची छवि को खुद ही रंगते थे। उसके कपड़े भी वे अपने ही हाथों से रंगते थे, और उसका चेहरा भी, यहाँ तक कि उसका आधार भी वे खुद ही रंगते-चुनते थे। लेकिन हमारे आज के ये टकियल चेले-चाटी तो टें बोल गए हैं। इनके बस का कुछ नहीं है। एक जमाना था जब प्रतिमाएँ तैयार करना ईश्वर की सेवा करना था। लेकिन आज तो वह पेट भरने का एक धंधा बन गया है।"

अन्त में वह प्रतिमा को काउण्टर पर खडी कर देता, और टोपी को सिर पर रखते हुए कहता

"खुदा इन पापियो को कभी माफ नही करेगा।"

इसका मतलब था आँखें बन्द कर के खरीद लो।

सिद्धान्तशास्त्री के सरपट शब्दो से अभिभूत होकर और उसकी जानकारी के रौब म आकर बेचनेवाला श्रद्धा से पूछता

"तो इस प्रतिमा के बारे में क्या राय है, बाबा?"

"यह निकोन के चेले-चाटियो की कृति है।"

"लेकिन यह हो कैसे सकता है? हमारे दादा-परदादा, बल्कि लकडदादा के वक्तो की यह प्रतिमा है। वे सब इसीकी पूजा-प्रार्थना किया करते थे।"

"इससे क्या हुआ? निकोन तुम्हारे लकडदादा से भी पहले हुआ था।"

इसके बाद बूढा देव-प्रतिमा को फिर अपने हाथो में उठाता और उसे बेचने वाले के मुह के सामने ले जाते हुए प्रभावशाली आवाज़ में कहता

"देखते हो, कितनी तडक-भडक और रगीनी है इसमें? क्या देव-प्रतिमाए भी कभी इतनी रगीन होती ह? यह तो निरी सजावटी चीज है, वासना म डूबी कला, निकोन के चेले चाटियो की लालसाओ का मूर्त रूप। ऐसी कृति म आत्मा जैसी कोई चीज नही होती। क्या तुम समझते हो कि मैं झूठ बोल रहा हू? मेरे बाल पक कर सफेद हो गए है। दीन-ईमान के पीछे न जाने कितनी यत्रणाए मने सही है? दो दिन बाद खुदा के दरबार में मुझे हाजिर होना है। तुम्ही बताओ, ऐसी हालत में अपनी आत्मा को बेचने से मेरे पल्ले क्या पडेगा?"

बुढ़ापे के बोझ से डगमगाता, खासता और कराहता, दुकान

से वह बालकनी में आ जाता, और ऐसा दिखाता मानो उसकी बातों पर अविश्वास प्रकट करके उन्होंने उसके हृदय को घायल कर दिया है। मुंशी कुछ रूबल देकर प्रतिमा खरीद लेता और बेचने वाला दुकान से विदा लेता, प्योत्र वसीलीयेविच की ओर मुड़ते हुए खूब झुक कर अभिवादन करता और अपना रास्ता पकड़ता। इसके बाद मुझे दौड़ाया जाता कि कहवेखाने से खौलता हुआ पानी ले आओ। लौटने पर मैं देखता कि बूढ़े का चेहरा खिला हुआ है, बुढ़ापे का कांखना-कराहना गायब हो गया है, और वह एक बार फिर प्रसन्न तथा फुर्तीला बन गया है। खरीदी हुई प्रतिमा को वह चाव से देखता और मुंशी से कहता:

"देखो न, इसके रंगों में कितनी सफ़ाई और सादगी झलकती है, प्रत्येक रेखा में खुदा का भय और उसके प्रति सम्मान झलकता है — वासना या अन्य किसी दुनिया की भावना का लेश मात्र भी नहीं दिखाई देता...।"

मुंशी की आँखें चमकने और उसका रोम-रोम थिरकने लगता। खुशी से उछलता हुआ पूछता:

"यह किस कारीगर के हाथों का चमत्कार है?"

"तुम अभी बच्चे हो। यह सब जान कर क्या करोगे?"

"अगर कोई कद्र करने वाला हो तो इसके लिए उससे क्या कुछ झपटा जा सकता है?"

"यह बताना मुश्किल है। दो-चार लोगों को दिखाकर मालूम करूँगा...।"

"आह, प्योत्र वासीलीयेविच...।"

"और अगर खरीदार मिल गया तो पचास रूबल तुम्हरे और इससे जो भी अधिक होगा वह मेरा।"

"आह...।"

"क्या, इस में आह करने की क्या बात है?"

वे चाय पीते, पूरी बेशर्मी से सौदेबाजी करते और मक्कारी भरी नजरो से एक-दूसरे का जायजा लेते। साफ मालूम होता कि मुंशी का पलडा बेहद कमजोर है, बूढे के सामने उसकी एक नहीं चल सकती। जब बूढा चला जाता तो मुशी कहता

"देखो, तुम अपनी जबान बद रखना। मालकिन के कानो में इस सौदे की भनक तक नहीं पडनी चाहिए, — समझे!"

प्रतिमा को बेचने के बारे म जब सब कुछ तय हो जाता तो मुशी कहता

"और सुनाओ, प्योत्र वसीलीयेविच, नगर में और क्या-कुछ हो रहा है, कोई नयी खैर-खबर?"

बूढा पीले हाथ से अपनी दाढी सहलाता, तेल-चुपडे-से उसके होठ दिखाई देने लगते और वह धनी सौदागरो की जिन्दगी, व्यापार करने के उनके कारगर हथकण्डो, बीमारी-चवारियो, व्याह-शादियो, रास रग और ऐयाशियो, पति को उल्लू बनाने वाली पत्नियो और पत्नियो को चकमा देने वाले पतियो के किस्से बयान करता। कुशल बावर्चियो की भाति वह इन कहानियो में बघार लगाता और बढिया पक्वान की भाति, अपनी फुसफुसी हसी की चादनी चटा कर, फुर्ती से उन्हे परोसता। मुशी के गोल चेहरे पर रश्क और ईर्ष्या की लाली दौड जाती, और उसकी आखो में सपने तैरने लगते। आह भर कर वह कहता

"कितना रग रग है उनके जीवन में, और एक म हू कि ।'

"जसा जिसका भाग्य," बूढा चमकता, — "एक भाग्य वह है जिसे खुद फरिश्ते चादी की नन्ही-नन्ही हथौडियो से गढते ह, और दूसरा वह जिसे शैतान अपनी कुल्हाडी की कुट्टल नोक से गढता है।"

"सभी दहकान उल्लू नही होते। व्यापारी लोग क्या आसमान से टपकते है? वे भी तो इन्हीं दहकानो के बीच मे आते है।"

"उन दहकानो की बात छोडो जो व्यापारी बन गए है। ठगने के लिए जितने बडे दिमाग की जरूरत है, वह उल्लू दहकानो के पास कहाँ से आ गया? वे तो निरे बुद्धू — बिना दिमाग के सन्त — होते है।"

लनतरानी के अन्दाज में शब्दो की वह इतने निश्चल भाव से कुल्लियाँ करता कि तबीयत बुरी तरह झुंझला उठती। ऐसा मालूम होता मानो वह मिट्टी के एक सूखे ढूह पर खडा हो और उसके चारो ओर दलदल फैली हो। उसे परेशान करना या चिढाना असम्भव था। या तो गुस्सा उसके हृदय को छूता नही था, या गुस्सा छिपाने की कला में उसे कमाल हासिल था।

बहुधा वह खुद चिढाना शुरू करता। अपनी थूथनी को मेरे नजदीक लाकर वह अपनी दाढी के भीतर ही भीतर हसता और कहता

"हाँ तो फ्रास के उस लेखक का जाने क्या भला-सा नाम बताया था तुमने — पास्तीन?"

वह कुछ इस अन्दाज से नामो को तोडता-मरोडता कि मैं झुँझला उठता, लेकिन म अपने को संभाल लेता और कहता

"पोनमान-द-तैरेल।"

"किधर तरा?"

"तुम बच्चे नहीं हो। शब्दो का तोड-मरोड कर उनके साथ खिलवाड न करो।"

"ठीक कहते हो। भला मुझे बच्चा कौन कहेगा? तुम्हारे हाथ में यह कौनसी पुस्तक है?"

'येफ्रेम सिरिन की पुस्तक है।"

"कौन ज्यादा अच्छा लिखता है—वह या यह किस्सा-कहानी गढने वाले?"

मै कोई जवाव न देता। वह फिर पूछता:

"ये कहानी-किस्सा वाले ज्यादातर क्या लिखते है?"

"उन सभी चीजो के वारे में जो दुनिया में मौजूद है।"

"कुत्तों और घोडो के वारे में? ये भी तो इस दुनिया में मौजूद है।"

मुशी के पेट मे वल पड जाते और मै भीतर ही भीतर उफनता। मेरे लिए वहाँ वैठे रहना असम्भव हो जाता, और जैसे ही मै खिसकना शुरू करता मुशी चिल्ला उठता:

"किधर चले? वैठो यही पर!"

वूढा मुझे कुरेदना जारी रखता.

"तुम्हे अपने लम्वे दिमाग पर गर्व है। जरा यह पहेली तो वुझाओ। तुम्हारे सामने एक हजार लोग खड़े है, एकदम मादरजात नगे। पाँच सौ मर्द, और पाँच सौ स्त्रियाँ। और उन्ही के वीच आदम और हौवा छिपे है। वोलो, उन्हे तुम कैसे पहचानोगे?"

कुछ देर मेरा सिर चकराने के वाद अन्त मे वह विजयी अन्दाज से कहता:

"वेवकूफ की दुम, उन्हे खुद खुदा ने अपने हाथो से गढा था, किसी स्त्री के पेट से वे पैदा नहीं हुए थे। इसका मतलव यह कि उनके वदन मे नाफ की घुडी नही हो सकती।"

वूढा इस तरह की अनगिनती पहेलियो की खान था और मुझे परेशान क़रने के लिए उन्हे पेश करता रहता था।

दुकान पर आने के वाद, शुरु-शुरू मे, अपनी पढी हुई पुस्तको के कुछ किस्से मैने मुशी को सुनाए थे। वे किस्से अव मेरे जी का जजाल वन गए। हुआ यह कि अपनी ओर से मनमाना नमक-मिर्च

लगा कर तथा खूब गदा बना कर मुशी उन किस्सो को प्योत्र वसीलीयेविच को सुनाता। बूढा खोद-खोद कर घिनौने सवाल करता और उसे उकसाता। नतीजा इसका यह कि अपनी गदी जुबान से वे मेरे प्रिय पात्रो—युजेनी ग्राडे, लुदमिला और हैनरी चतुर्थ की खूब छीछालेदर करते।

मैं यह जानता था कि किसी कुत्सित इरादे से नहीं, बल्कि दो घडी दिल बहलाने या जीवन की ऊब कम करने के लिए वे ऐसा करते थे, फिर भी मुझे बडा बुरा मालूम होता और उनका ऐसा करना मेरे लिए असह्य हो उठता। वे सूअर की भाति अपनी ही पैदा की हुई कीचड में लोटते और सुन्दर कृतियो को कीचड में लथेड कर खुश होते, इसमें उन्हे आनन्द आता। किसी चीज का सुन्दर और असाधारण होना ही उनके लिए काफी था। ऐसी चीज उन्हे अजीब, समझ में न आनेवाली और इसी लिए हास्यास्पद मालूम होती, और वे उसकी खिल्ली उडाते।

अगल-बगल के सभी दुकानदार और व्यापारी निराले ढग का जीवन बिताते थे। उन्हे बडा मजा आता जब वे किसी को बनाते। उनके मजाक बहुत ही बेहूदा, बचकाना और कुत्सापूर्ण होते। अगर कोई दहकान पहली बार नगर में आता और किसी जगह का रास्ता पूछता तो वे अदबदा कर उसे उलटा रास्ता बताते। लेकिन, यह मजाक इतना घिसपिट गया था कि उसमे अब उन्हे कोई रस नहीं मिलता था। नये मजाको का अब आविष्कार हो रहा था। सौदागर दो चूहो को पकडते, उनकी दुमो को एक-दूसरे से बाध देते, इसके बाद अलग खडे होकर उन्हे दाँत पजे चलाते और विरोधी दिशाओ में एक-दूसरे को खीचते हुए देखते। कभी-कभी वे उनके ऊपर मिट्टी का तेल उँडेल कर दियासलाई भी दिखा देते। या वे कुत्ते की दुम मे टीन बाध देते, कुत्ता घबरा कर जीभ नि-

काले भागता। पीछे से टीन खडखड करता, और लोग हंसी के मारे दोहरे हो जाते।

इस तरह, आए दिन, वे कोई न कोई तमाशा करते रहते। ऐसा मालूम होता कि हर व्यक्ति—और ख़ास तौर से गाँव से आने वाले किसान—मानो बाजारवालों का दिल वहलाव करने के लिए ही पैदा हुए है। सौदागर और उनके कर्मचारी इस बात की ताक मे रहते कि कोई आए और उसका मजाक बनाया जाए या उसे छेडा और नोचा-खरोचा जाए,—जैसे भी हो, उसे परेशान किया जाए और उसे रुला कर खुद हंसा जाए। और सब से अजीब बात तो यह थी कि जो पुस्तके मै पढता था, उनमे इन सब चीजो का कोई जिक्र नही होता था।

बाजार की इन घटनाओ मे से एक मुझे खास तौर से घिनौनी मालूम हुई।

हमारी दुकान के नीचे ऊन और नमदो की दुकान थी। इस दुकान का कर्मचारी इतना अधिक खाता था कि इस छोर से लेकर उस छोर तक समूचे बाज़ार मे प्रसिद्ध था। दुकान का मालिक अपने कर्मचारी की भोजन चट करने की अद्‌भुत क्षमता का उतनी ही शेखी और गर्व के साथ ऐलान करता जितने गर्व के साथ लोग अपने शिकारी कुत्तो की खूख्वारी या अपने घोडो की ताकत का बखान करते है। अक्सर अपने पड़ौसियों से वह शर्त तक बदता:

"बोलो, है कोई दस रूबल लगाने को तैयार? मेरा दावा है कि मीशा पाँच सेर माँस दो घंटे के भीतर चट कर जाएगा।"

सभी जानते थे कि मीशा पाँच सेर माँस चट कर जाएगा। यह इसके लिए मुश्किल नही है। बोले:

"शर्त तो हम नही बदते। लेकिन माँस हम अपनी जेब से खरीद देगे। वह खाना शुरू करे, और हम तमाशा देखेगे।"

"लेकिन पाच सेर मास ही मास होना चाहिए, वहाँ हड्डियाँ न उठा लाना, — समझे!"

कुछ देर बहस होती रही, मसले को उलट-पलट कर देखा गया, अन्त में अधेरे गोदाम में से एक दुबला-पतला आदमी प्रकट हुआ। उसका चेहरा सफाचट था, जबडे की हड्डियाँ उभडी हुई थीं। वह एक लम्बा कोट पहने और कमर में लाल पटका कसे हुए था। आगे और पीछे, बगल और बगल, कोट में ऊन के गुच्छे बुरी तरह लिपटे हुए थे। उसका छोटा-सा सिर था जिस पर वह टोपी पहने थे। सम्मान के साथ उसने अपनी टोपी उतारी और अपने मालिक के गोल, मासल तथा घास की भाति दाढी उगे चेहरे की ओर धुधली-सी आँखो से देखा।

मालिक ने पूछा

'इस माँस को हजम कर सकते हो?"

"कितनी देर में?" पतली और काम-काजी आवाज़ में मीशा ने सवाल किया।

"दो घटे म।"

"मुश्किल है।"

"मुश्किल है — और तुम्हारे लिए?"

"बीयर के बिना नही चलेगा। वह और होनी चाहिए।'

"अच्छी बात है, शुरू करो!" मालिक ने कहा और फिर अपने पडोसियो की ओर मुड कर शेखी बघारते हुए बोला "यह न समझना कि इसका पेट खाली है! अरे नहीं, एक सेर पाव रोटी तो इसने आज सवेरे ही नाश्ते म चट की, इसके बाद सूप छक कर दोपहर का भोजन किया।"

माँस लाकर उसके सामने रख दिया गया, दर्शको की एक भीड इर्द-गिर्द जमा हो गई। ये सब के सब सौदागर और व्यापारी

थे। जाड़ों का भारी लबादा लादे थे और कमर में पटका कसे थे। ऐसा मालूम होता था मानो वे ऊनी कम्बलों में लिपटे हुए भारी पोट हों। उनकी तोंदें निकली हुई थीं, बेहद छोटी-छोटी आंखें, चुंधी सी, गालों की चर्बी में धंसी हुई झांक रही थीं।

हाथों को अपनी आस्तीनों में खोंसे, कसकर घेरा बनाए, वे मीशा के चारों ओर खड़े थे। हाथ में एक चाकू और राई की एक बड़ी सी पाव रोटी लिए मीशा भी तैयार था। तेजी से, जल्दी-जल्दी कई बार क्रास का चिन्ह बनाने के बाद, वह ऊन के एक ढेर पर बैठ गया। मांस के लोथड़े को उसने एक पटरी पर रख लिया और कोरी आंखों से उसे अन्दाजने लगा।

इसके बाद उसने पाव रोटी में से एक पतला-सा टुकड़ा तरा-शा, फिर मांस का मोटा-सा टुकड़ा काट कर बड़ी सफ़ाई से एक को दूसरे के ऊपर रखा और दोनों हाथों से उन्हें पकड़ कर अपने मुंह तक ले गया। कुत्ते की भांति उसकी लम्बी जीभ बाहर निकली, कांपते हुए अपने होंठों को चाट कर उसने साफ किया, उसके छोटे-छोटे तेज दांतों की एक झलक दिखाई दी। फिर, कुत्ते की ही भांति, मांस को उसने अपने जबड़ों में दबोच लिया।

"अरे इसने थूथनी चलाना शुरू कर दिया!"

"घड़ी देख कर समय नोट कर लो!"

सबकी आंखें उसके चेहरे, चप-चप की आवाज करते उसके जबड़ों, कानों के पास उभर आने वाली गुल्लियों, और समगति से उठने और गिरने वाली उसकी नुकीली ठोडी पर जमी थीं। रह-रह कर वे आपस में टिप्पणियां भी करते जाते थे·

"मुंह तो देखो कैसे भालू की भांति चल रहा है!"

"कभी देखा भी है भालू को मुंह चलाते हुए?"

"मैं क्या जंगल में रहता हूँ? यह तो एक कहावत है भालू की भांति मुँह चलाना।"

"नही, कहावत यह नहीं है। कहावत है सूअर की भांति मुह मारना।"

"सूअर क्या सूअर का मांस खाते है?"

सब हसने लगे, इस तरह मानो हंसना जरूरी था,—एकदम उल्लासहीन हंसी। तभी कोई लाल बुझक्कड़ बोला

"सूअर सभी कुछ खा सकता है—चाहे उसके अपने बच्चे-बच्चे या भाई-बहन ही क्यो न हो।"

देखते-देखते मीशा का चेहरा लाल हो गया, कान नीले पड़ गए। उसके दीदे कोटरो से बाहर झाकने लगे, और उसकी साँस बाजा-सी बजाने लगी। लेकिन उसका मुँह था कि लगी-बंधी रफ्तार से चल रहा था, जबड़ा समगति से ऊपर-नीचे उठ-गिर रहा था।

"जल्दी करो मीशा, तुम्हारा समय खत्म हुआ जा रहा है!" वे उसे उकसाते। बाकी माँस को वह बेचैनी से अन्दाजता, बीयर का घूट चढ़ाता और जबड़े चलाना जारी रखता। दर्शकों की उत्तेजना बढ़ती जाती, उचक-उचक कर और लम्बी गरदनें करके वे मीशा के मालिक के हाथ में बंधी घड़ी पर नजर डालते, और एक-दूसरे को चेताते हुए कहते

"इस बात का ध्यान रखना कि कही वह घंटी की सुई को पीछे न कर दे। अच्छा यह हो कि घड़ी इसके हाथ से ले ली जाए!"

"मीशा पर भी नजर रखना। नहीं तो आँख बचा कर वह मास अपनी आस्तीन म छिपा लेगा!"

"देख लेना, समय के भीतर वह कभी इसे खत्म नहीं कर सकता!"

"मै अव भी पच्चीस रूवल की शर्त वदने के लिए तैयार हूं!" मीशा के मालिक ने आवेश मे आकर कहा।—"मीशा, मुझे नीचा न दिखाना!"

उकसावा और वढावा देने के लिए दर्शक चिल्लाए तो वहुत, लेकिन शर्त वदने के लिए कोई तैयार नही हुआ।

मीशा का जवड़ा चलता रहा, एक क्षण के लिए नही रुका, चला सो वरावर चलता ही रहा। उसका चेहरा भी माँस जैसा ही वन गया, उसका चेहरा और माँस दोनों एकाकार हो गए। उसकी नुकीली दर्रेदार नाक ख़तरे की सीटी वजाने लगी। उसे देख कर डर मालूम होता, लगता कि उसके चीख उठने मे अव देर नही है। किसी भी क्षण उसके मुँह से आवाज़ निकल सकती है·

"मुझपर रहम करो!"

या फिर, माँस के गले तक अट जाने के कारण वह दर्शको के सामने ही ढेर हो जाएगा, और उसकी जान निकल जाएगी।

आखिर उसने सारा माँस ख़त्म कर दिया। दीदे टेरते हुए दर्शकों की ओर उसने देखा, और हांफता हुआ सा वोला:

"पीने के लिए कुछ दो!"

उसके मालिक ने घड़ी पर नजर डाली और वड़वड़ा उठा:

"चार मिनट ऊपर हो गए, कुत्ते की दुम।"

"चूक गए, अगर शर्त वद ली होती वडा मज़ा आता," दर्शको ने चिढाना शुरू किया।—"तुम सोलहों आना चित्त हो जाते।"

"लेकिन इससे इन्कार नही किया जा सकता कि है यह पूरा साड!"

"इसे तो किसी सरकस मे भर्ती हो जाना चाहिए।"

"खुदा भी कभी-कभी वड़े अजूवे तैयार करता है!"

निश्चल और स्थिर है, किसी अदृश्य जजीर से वधे कोल्हू के वैल की भाति सव एक ही जगह पर चक्कर लगा रहे हैं। मुझे लगता कि ध्वनियो की निर्धनता ने जीवन को इतना पस्त वना दिया है कि इसे गूगो-वहरो की पाँत में रखा जा सकता है। वर्फ़ की गाडियों के दौड़ने की आवाजें आती, दुकानो के दरवाजे झनझनाते और खटपट करते, पाव रोटी और विस्कुट वेचने वाले चिल्लाते, लेकिन आदमियों की आवाजे इतनी वेरस, जीवन शून्य और एक-जैसी होती कि कान शीघ्र ही उनकी ओर ध्यान देना वद कर देते, उनका होना या न होना वरावर हो जाता।

गिरजे की घटियाँ इस तरह वजतीं मानो मातम मना रही हो। उनकी भयानक आवाज मेरे रोम-रोम में सरसराती और ऐसा मालूम होता कि उससे उम्र-भर पीछा नही छूटेगा। घटियो की आवाज सुबह से लेकर रात तक वाजार के वायुमण्डल में मडराती रहती, दिल व दिमाग मे घुस कर हर विचार और हर भावना से चिपक जाती, और हर चीज पर धातु कणो की एक धूल सी जम जाती।

जानलेवा ठडी उदासी तथा ऊव को गहरा वनाने मे हर चीज हाथ वटाती—गदी वर्फ का कम्वल ओढे धरती, छतो पर जमा भूरे वर्फ के ढेर, इमारतों और दुकानो की माँस-ऐसी लाल ईंटे उदासी को वढाने में सभी एक-दूसरे से होड लेती प्रतीत होती। चिमनियों से निकलने वाला भूरा धुवाँ भी इसी उदासी से कसमसाता और नीचे लटक आए भूरे सूने आकाश मे रेंगने लगता। घोड़ों की पसलियो और लोगो के नथुनो में भी इसी उदासी की धौकनी चलती। एक अजीव गध—पसीने, चर्वी, धुवे, तेल और चिकनाई मे डूवे पकौडो की वेरस और वोझिल गध से यह उदासी सरावोर होती। ऐसा मालूम होता जैसे किसी ने दिमाग़ को ऊनी

पट्टी से कस कर जकड दिया हो। एक एक रेशे में वह प्रवेश करती और दिमाग पर एक तरह का पागलपन-सा सवार हो जाता। जी करता कि आँखे बद कर लो, अपनी पूरी ताकत से दहाडो और सिर को पत्थर की पहली दीवार से टकरा कर चकनाचूर कर दो।

सौदागरा के चेहरो को मै अक्सर बडे ध्यान से देखता — अति तृप्त, बढिया खून की लाली से दमकते, पाला काटे, और इस प्रकार निश्चल मानो नीद में डूबे हुए हो। रह-रह कर वे जमुहाइयाँ लेते और सूखे तट पर पडी हुई मछली की भाति उसके मुह भट्टा से खुल जाते।

जाडो में बाजार ठडा रहता और वह सजग हिसाब-किताबी चमक भी सौदागरो की आँखो से गायब हो जाती जो गर्मिया में उनकी आँखो में दौडती रहती थी और उन्हे पूरी तरह से अपने रंग में रग लेती थी। भारी लबादा अब हाथ पाँव हिलाने में बाधक होता और वे धरती के साथ जाम हो जाते। अलसाहट म वे बाते करते, लेकिन जब झुमला उठते तो एक-दूसरे को खूब लम्बी झाड पिलाने से भी न चूकते। मुझे ऐसा मालूम होता कि वे जान-बूझकर इस तरह गुल गपाडा मचाते ह — एक-दूसरे का जताने के लिए कि वे जिन्दा हैं, उनकी रगो का खून ठडा नही पड गया है।

लेकिन, इन सब बातो के बावजूद, साफ मालूम होता कि सभी कुछ चट कर जाने वाली उदासी उन्हे खोखला बना रही है, भीतर और बाहर से उन्हे खत्म कर रही है। उससे बचने या उसे आँखो की ओट करने के लिए वे हाथ-पाव पटकते, क्रूर और बेमानी हरकता और मन बहलाव का सहारा लेते। मुझे लगता कि उनके ये प्रयत्न उस आदमी के प्रयत्ना की भाति है जो डूबने स

वचने के लिए तिनके का सहारा पकड़ना चाहता है, इसके लिए आखिरी वार हाथ-पाँव पटकता है।

कभी-कभी प्योत्र वसीलीयेविच से मै इसका ज़िक्र करता। यों ताने-तिश्ने कसने और मुझे चिढाने मे उसे मजा आता था, लेकिन किताबे पढने की ओर मेरा झुकाव उसे पसंद था और भूले-भटके, काफी गम्भीरता और सीख-भरे अन्दाज मे, वह वातें करता था। एक दिन मैंने उससे कहा:

"ये सौदागर भी क्या जीवन विताते है? मुझे उनका ढर्रा ज़रा भी अच्छा नही लगता।"

दाढी के छोर को उसने अपनी उंगली मे लपेटा और कहने लगा:

"तुम्हें क्या मालूम कि वे कैसा जीवन विताते हैं? क्या तुम उनके घरो मे कभी गए हो? यह तो वाजार है, मेरे लड़के, और लोग वाजार मे जीवन नही विताते। वाजार मे तो वे व्यापार करते है, या घर पहुँचने की जल्दी मे तेजी से डग उठाते हुए गुजर जाते है। वाज़ार मे लोग कपडो से लदे-फदे रहते है और कुछ पता नही चलता कि भीतर से वे कैसे है। केवल घर ही एक ऐसी जगह है जहाँ, अपनी चार दीवारों के भीतर, आदमी उन्मुक्त जीवन विताता है। अव तुम्ही वताओ, क्या तुमने वह जीवन देखा है? क्या तुम्हारे पास उस जीवन को देखने के साधन मौजूद हैं?"

"लेकिन उनके विचारो और भावनाओ मे तो इससे अन्तर नही पडता? घर हो चाहे वाहर, वे एक से रहते है।"

"यह कोई कैसे वता सकता है कि हमारा पडौसी किस समय क्या सोचता है?" वूढे ने कडी नजर से मुझे घूर कर देखा और वजनदार आवाज मे वोला।—"विचार भी क्या जुंवो की भाति है जो उन्हे सिर मे उंगली डाल कर चुना-गिना जा सके?

जुआ को चुनने-गिनने की कहावत सुनी है न? बड़े बूढ़ों ने इस कहावत को यों ही नहीं गढ़ा। तुम्ही देखो, एक आदमी है। संभव है जब वह घर लौटता हो तो देव-प्रतिमा के सामने घुटनों के बल बैठ कर मिनमिनाता या आँसू बहाते हुए प्रार्थना करता हो 'मुझे माफ करना, महाप्रभु, आज तुम्हारा पवित्र दिन था, लेकिन अपने जीवन को सवारने के लिए मैंने कुछ नहीं किया। आज भी पाप की उसी दलदल में फसा रहा।' या संभव है आदमी के लिए घर ही मठ के समान हो। प्रभु के सिवा अन्य किसी चीज से उसका लगाव नहीं। हर मकड़ी को खुदा ने एक काम दिया है—खूब जाल बुना, लेकिन अपना वजन पहचानते हुए, ऐसा न हो कि वह तुम्हारा बोझ न संभाल सके।"

जब वह गम्भीरता से बातें करता तो उसकी आवाज में एक अजीब गहराई पैदा हो जाती, ऐसा मालूम होता मानो वह किसी महत्वपूर्ण रहस्य का उद्घाटन कर रहा हो।

"देखा न, इतनी छोटी उम्र में ही तुमने बाल की खाल निकालना शुरू कर दिया। दिमाग के सहारे नहीं, इस उम्र में तुम्हें आत्मा के सहारे जीना चाहिए। दूसरे शब्दों में यह कि दिल, और दिमाग में टार कर रखो, और जुबान पर लगाम कसे रहो। दिमाग व्यापार के लिए है, विश्वास और श्रद्धा आत्मा के लिए। किताबें पढ़ना अच्छी बात है, लेकिन हर चीज की एक अपनी सीमा होती है। कुछ लोग इतना पढ़ते हैं कि न उनका अपना कोई दिमाग रहता है, न खुदा रहता है। वे इन दोनों से हाथ धो बैठते हैं।'

मुझे ऐसा मालूम होता कि वह जीवन और मौत के फासले से परे है। मुझे लगता कि वह सदा ऐसा ही रहेगा—न कभी बदलेगा, न कभी और बूढ़ा होगा। घर बड़े चाव से किस्स

सुनाता — सौदागरों के, डाकुओं के, नामी जालसाजो के। अपने नाना से भी मै इस तरह के किस्से सुन चुका था। केवल कहने के ढग मे फर्क था। नाना का ढग उससे कही अच्छा था। बाकी सब बाते — कहानी की मूल भावना — वही थी। वह यह कि खुदा और मानव को रौंदे बिना धन नही बटोरा जा सकता। धन आदमी को पाप की दलदल मे फसाता है। प्योत्र वसीलीयेविच के हृदय मे लोगो के लिए कोई दया नही थी, वह उनपर कभी तरस नही खाता था, लेकिन खुदा का बड़े चाव और लगन से जिक्र करता, उसकी पलके झुक जाती और हृदय से उसाँसे निकलने लगतीं।

"देखो न, लोग किस तरह खुदा को धोखा देते नही अघाते। लेकिन प्रभु ईसा यह सब देखता और उनके लिए आँसू बहाता है. 'आह मेरे बच्चो, नासमझ बच्चो, तुम्हे नही मालूम कि अपने लिए किस नरक की तुम तैयारी कर रहे हो!'"

एक दिन, साहस बटोर, मैने उससे पूछा:

"तुम भी तो दहकानो को धोखा देते हो?"

उसने जरा भी बुरा न माना। बोला:

"ऊँह, उससे उन्हे ज्यादा नुकसान नही पहुँचता। मुश्किल से चार या पाँच ही रूबल तो मै अपने लिए उनसे झटकता हूँ। बस इतना ही, और कुछ नहीं!"

जब वह मुझे कुछ पढते हुए देखता तो पुस्तक मेरे हाथ से ले लेता, उसमें लिखी बातो के बारे मे पूछता-ताछता और सन्देह तथा अचरज मे भरकर मुंशी की ओर मुड़ते हुए कहता.

"देखो न इस उम्र मे ही यह नन्हा बन्दर किताबो मे लिखी बातें समझ लेता है!"

इसके बाद नपे-तुले और कभी न भूलनेवाले अन्दाज मे वह मुझे सीख देता:

"मेरे शब्द ध्यान से सुनना — वक्त पर तुम्हारे काम आएंगे। किरिल नाम के दो आदमी हुए हैं, दोनों ही पादरी, एक अलक्सान्द्रिया का रहने वाला, और दूसरा येरुशलम का। पहले ने ईश्वर-द्रोही नेस्तर को आड़े हाथों लिया जो लोगों में इस तरह की गंदी बातों का प्रचार करता था कि मरियम हमारी-तुम्हारी भांति इसी दुनिया की एक स्त्री थी जिसने खुदा को नहीं बल्कि हमारे-तुम्हारे जैसे ही ईसा नाम के एक आदमी को जन्म दिया था। यह आदमी दुनिया का तारनहार बना। इसका मतलब यह कि मरियम को खुदा की मां न कह कर ईसा की मां कहना चाहिए। समझे, यही वह चीज़ है जिसे लोग धर्म-द्रोह कहते हैं। इसी प्रकार येरुशलम के किरिल ने धर्मद्रोही एरिया की धज्जियां उड़ाईं।"

गिरजे के इतिहास की उसे अद्भुत जानकारी थी। इसका मुझपर गहरा असर पड़ता। हल्के और मुलायम हाथ से वह अपनी दाढ़ी सहलाता और कहना शुरू करता

"इन विषयों का मैं सेनापति हूं और अनेक मोर्चे मैंने सर किए हैं। ईस्टर के दिनों में मैं मास्को गया और निकोन के विनाशकारी चेले चाटियों, पादरियों और दूसरे सपालियों की विष-भरी बातों का मुंह तोड़ जवाब दिया। बड़े से बड़े तीसमार खां के मैंने छक्के छुड़ा दिए। एक धर्मशास्त्री का मैंने अपनी जुबान से ऐसे कोड़े पिलाए कि उसकी नाक से खून तक बहने लगा। देख कर सब दंग रह गए!"

उसके गाल लाली से दमकने लगे और आंखों में चमक दौड़ गई। विरोधी की नकसीर क्या फूटी मानो उसे बहुत बड़ी रियासत मिल गई, उसके गौरव के सुनहरी ताज में मानो किसी ने चमकता हुआ लाल जड़ दिया। बड़े ही उल्लास और विजय के गर्व के साथ उसने कहना शुरू किया

"वहुत ही रोवदार और खूवसूरत आदमी था वह—पूरा देव ही समझो। मच पर वह खडा था और उसकी नाक खून के आँसू रो रही थी—टपाटप टपाटप—खून नीचे टपक रहा था। और मज़ा यह कि उसे पता तक नही था कि उसकी नाक क्या गुल खिला रही है। वापरे, वह शेर की भाति झपटता था और उसकी आवाज ऐसे गूजती थी जैसे कोई वहुत वड़ा घंटा वज रहा हो। लेकिन मै भी मोर्चे पर डटा था और उसकी आत्मा को खजर की भांति अपने शव्दो से छलनी कर रहा था। शान्ति से, खूव निशाना साध कर, ठीक उसकी पसलियो की सीध मे मै अपने शव्दों की मार कर रहा था। ईश्वर-द्रोही कुत्सित वातो की खिचड़ी पकाते-पकाते वह तन्दूर की भांति गरमा गया था...। ओह, क्या दिन थे वे भी!"

हमारी दुकान पर अन्य सिद्धान्तशास्त्री भी आते थे। इनमे एक पाखोमी था जिसे देख कर ऐसा मालूम होता मानो उसमे रुई भरी हो। भारी तोंद और केवल एक आंख। वह वोलता क्या था, मानो घर्राटे लेता था। हमेशा वही एक पुराना चीकट कोट पहने रहता। उसके अलावा वूढा लूकियान भी हमारी दुकान पर आता था। नाटा कद, चूहे की भाति चिकना-चुपड़ा, देखने-सुनने और तौर-तरीको में वहुत ही भला, और उत्साह से छलछलाता। वह जव भी आता, अपने साथ एक और आदमी को लाता जो देखने में कोचवान सा मालूम होता—भारी-भरकम, तोवडा चढ़ा हुआ, काली दाढी, निश्चल आँखे और खोया हुआ-सा सूना चेहरा जो खूवसूरत होते हुए भी अच्छा नही मालूम होता था।

वे खाली हाथ कभी न आते। हमेशा कोई न कोई चीज वेचने के लिए लाते: पुरानी पुस्तके, प्रतिमाएँ, धूपदान, पूजा के वरतन। कभी-कभी, चीजे वेचने के लिए, वोल्गा प्रदेश के किसी अन्य

बूढे पुरुष या बूढी स्त्री को भी अपने साथ ले आते। जब सौदा पट जाता तो सब काउटर पर इस तरह बैठ जाते जैसे मुडेर पर कौवे। चाय पीते और खाने की चीजा पर हाथ साफ करते। बातो का सिलसिला चलता और वे निकोन पथी धर्माधिकारियो के जुल्मो का जिक्र करते। अमुक जगह पुलिस ने खानातलाशी ली और धर्मग्रथो को उठा कर ले गई, अमुक जगह पुलिस ने उनके प्रार्थना-घरो को बद कर दिया, उनकी देख-भाल करनेवालो को पकड कर अदालत में पेश किया, और धारा १०३ का उल्लघन करने के अपराध में उनपर मुकदमा चलाया। धारा १०३ पर वे खूब बाते करते। यह उनका प्रिय विषय था। लेकिन वे इसका उल्लेख निस्सग भाव से करते, मानो यह कोई अनिवार्य और उनके वश से बाहर की चीज हो, ठीक वैसे ही जैसे जाडो में पाला।

पुलिस, खानातलाशी, जेल, अदालत, साइबेरिया जैसे शब्दो का वे बार-बार प्रयोग करते, और ये शब्द दहकते अगारो की भाति मेरे हृदय से आकर टकराते। इन बूढे लोगो के प्रति जो अपने विश्वास की वजह से इतनी मुसीबत झेल रहे थे, मेरे हृदय में सहानुभूति और शुभ कामनाओ की लौ जाग उठती। नैतिक साहस की मै कद्र करता और उन लोगो के आगे मेरा सिर झुक जाता जो अपने लक्ष्य की पूर्ति मे डिगना नही जानते। यह मने पुस्तको से सीखा था।

पुराने धर्म के इन अलमबरदारो की व्यक्तिगत त्रुटियाँ मेरी आँखो से ओझल हो जाती, मुझे केवल उस शात लगन का ध्यान रहता जिसके पीछे—मेरी समझ मे—वह अडिग विश्वास छिपा था जो अपने लक्ष्य के सही और न्यायसगत होने पर पदा होता है और जो उन्हे लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग में आनेवाली तमाम कठिनाइयो और मुसीबतो को खुशी से झेलने का बल प्रदान करता है।

आगे चल कर, बुद्धिजीवियों तथा आम लोगो के बीच इस तरह के अनेक व्यक्तियो से मिलने के बाद, मुझे लगा कि जिसे मैं उनकी लगन और धीरज समझे था, वह वास्तव मे एक तरह की निष्क्रियता थी। यह उन लोगो की निष्क्रियता थी जो एक नुक्ते पर पहुँच कर रुक गए थे, जिन्हे उस नुक्ते से आगे और कुछ नही दिखाई देता था और जिनमें, असदिग्ध रूप मे उससे आगे बढने की कोई इच्छा भी नही थी। वे घिसे-पिटे और जड़ शब्दों तथा जर्जर मान्यताओ के जाल मे उलझ कर रह गए थे। उनकी इच्छाशक्ति इतनी निर्जीव और अक्षम हो गई थी कि भविष्य की ओर आगे बढना उनके लिए सम्भव नहीं रहा था, इस हद तक कि अगर उन्हे एकाएक उन्मुक्त कर दिया जाता तो वे यत्रवत नीचे लुढकना शुरू कर देते, ठीक वैसे ही जैसी पहाड़ी ढलुवान पर से पत्थर लुढ़कता है। पीछे की ओर देखने की जीवनहीन शक्ति और यत्रणा तथा दमन सहने के विकृत प्रेम ने उन्हे मृत विचारों की कब्र मे बद कर दिया था। यंत्रणा सहने का अवसर हाथ से निकलते ही जैसे वे निर्जीव हो जाते, उनमे कोई तत्व बाकी न रहता और वे उसी तरह गायब हो जाते जैसे कि तेज हवा बादलो के टुकड़ो को उड़ा ले जाती है।

जिस विश्वास के लिए इतनी तत्परता और कृत्रिम गर्व के साथ वे अपने को बलिदान करते थे, उसकी दृढता से इन्कार नहीं किया जा सकता, लेकिन इस दृढता मे भी कोई जीवन नही था, वह उन पुराने कपडो की भाति थी जिनपर धूल और गर्द की इतनी मोटी तह जम गई थी कि हवा-पानी का अब० उनपर कोई असर नही होता था। उनके विचार और भावनाएँ अंधविश्वासों और जड़ सूत्रो के चौखटे मे कसे रहने की आदी हो गई थी, भले ही इन चौखटो ने उन्हे विकृत और पगु बना दिया हो। इससे उन्हे ज़रा भी परेशानी नही होती थी।

जिस चीज़ के आदी है उसीपर विश्वास करना — यह हमारे जीवन की एक अत्यन्त कुत्सित और दुखद घटना है। इस विश्वास के दमघोट चौखटे के भीतर, पत्थर की दीवार के नीचे उगे पौधो की भाति, कोई नयी चीज़ नहीं पनप पाती — पनपती भी है तो धीरे-धीरे, विकृत और लुजपुज रूप में, बिना किसी जीवन-तत्व के। इस अधे विश्वास मे प्रेम की किरन बहुत कम चमकती और घृणा की — बदले की भावना, कुत्सा और ईर्ष्या की लपटें उठती। इस विश्वास की दमक असल म उस हवाई दमक के सिवा और कुछ नही थी जो कि हड्डियो के गलने-सडने से उत्पन्न फास्फोरस के कारण छलावे की भाति केवल अधेरे म ही चमकती है और सूरज की रोशनी में गायब हो जाती ह।

लेकिन इस सत्य तक मै याही, आसानी से, नही पहुँच गया। वर्षों तक पापड बेलने और मुसीबते झेलने के बाद मै इस नतीजे पर पहुचा और इसकी गहराई को मैने समझा। अनेक बुतो को जिनको मै पहले पूजा करता था, और अनेक विचारो तथा मान्यताओ को जिन्हे मै पहले बहुत अच्छा समझता था, मुझे तोडना और जडमूल से उखाड कर फेंकना पडा। इसमें कोई शक नही कि बोझिल, बेरस और गैर-जिम्मेदारी से भरे जीवन के बीच जो मेरे चारो ओर फैला था, पुराने धर्म के इन अलमबरदारो और जिन्दा शहीदो को जब पहली बार मैने देखा तो मुझे लगा कि वे अद्भुत नैतिक साहस के धनी, बल्कि कहना चाहिए कि इस धरती की जान है। मुसीबते सहने में सभी एक से एक बढ कर थे। सभी, किसी न किसी समय, अदालत में घसीटे जा चुके थे, जेल की चक्की पीस चुके थे, नगरो से बाहर खदेडे और अन्य अपराधियो के साथ जलावतनी का जानलेवा रास्ता नाप चुके थे। सभी, चौबीसो घटे, सासत में जीवन

विताते, पुलिस पीछे पड़ी रहती थी और वे लुक-छिप कर अपना काम करते थे।

लेकिन, यह सब होने पर भी, मैने देखा कि एक ओर जहाँ वे निकोनपथियों के अत्याचारों और इस वात का रोना रोते कि वे शिकारी कुत्तों की भाति उनकी आत्मा के पीछे पड़े रहते है, वहाँ दूसरी ओर ये खुद वूढे लोग भी वड़ी तत्परता और उछाह के साथ शिकारी कुत्तो की भाति एक-दूसरे पर झपटते रहते थे।

एक आँख वाला पाखोमी, जव कभी वह तरग मे होता, वड़े चाव से अपनी अद्भुत याददाश्त के करतव दिखाता। कुछ धर्म-ग्रथ तो उसकी जवान पर चढे थे और वह उन्हे उसी तरह पढता था जिस तरह यहूदी पुजारी तालमुद पढते है। वह ग्रंथ खोलता, आँख वन्द कर किसी भी शव्द पर अपनी उँगली टिका देता और जो भी शव्द पकड मे आता, उसके वाद से मुलायम और गुनगुनी आवाज मे वह जुवानी सुनाना शुरू कर देता। उसकी नजर हमेशा फ़र्श की ओर झुकी होती और उसकी अकेली आँख वडी तत्परता से अगल-वगल लपकती-झपकती, मानो वह किसी वहुमूल्य चीज की टोह मे हो। अपना करतव दिखाने के लिए वह ज्यादातर राजकुमार मिशेत्स्की की पुस्तक "रूस का अगूर" से काम लेता। "भारी धीरज और साहस से ओतप्रोत वीर और निडर शहीदों की कुरवानियाँ" उसे सव से अच्छी तरह याद थी। प्योत्र वसीलीयेवि उसकी गलतियाँ निकालने के लिए हमेशा पजे पैनाए रहता।

"गलत! यह घटना सन्त डेनिस के साथ घटी थी, सन किप्रियान के साथ नही!"

"डेनिस? यह नाम शायद तुम्हारी घरेलू टकसाल की ईजा है? डेनिस नही, सही नाम है डिओनिसीयस, समझे?"

"नाम को लेकर मेरे साथ चपोड्याजी न करो।"

"तो तुम भी मुझे सबक पढ़ाने की कोशिश न करो।"

लेकिन यह तो शुरूआत ही थी। कुछ क्षण बीतते न बीतते उनके चेहरे गुस्से से तमतमा जाते, वे एक दूसरे को नीचे गिराने-वाली नजरों से ताकते और चुने हुए शब्दों के गोले दागने लगते

"गावदुम, बेशर्म, अपनी इस तोंद को तो देख क्या मटके सी फूलती जा रही है।"

पाखोमी जरा भी गर्म न होता। जमा-बाकी का हिसाब लगाने वाले मुनीम की भांति तटस्थ भाव से जवाब देता

"बकरे की दुम, फिसड्डी और नीच, घाघरे के पिस्सू!"

आस्तीनों के भीतर अपने हाथों को खोंसे मुशी उन्हें देखता, उसके चेहरे पर कुत्सापूर्ण मुसकराहट नाचने लगती और प्राचीन धर्म के इन रक्षकों को वह इस तरह उकसाता मानो वे स्कूली बच्चे हों

"अरे, देखता क्या है, लिपट जा! तू क्या उससे कम है। हाँ, अब ठीक, बिल्कुल ठीक!"

एक दिन बूढ़े सचमुच में लड़ पड़े। प्योत्र वसीलीयेविच ने पाखोमी के मुँह पर ऐसा थप्पड़ रसीद किया कि वह मैदान छोड़ कर भाग निकला। प्योत्र ने फिर भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। थके हुए भाव से उसने अपने माथे का पसीना पोंछा और भागते हुए पाखोमी को लक्ष्य कर चिल्लाया

"जरा ठहर तो, दुम दबा कर भागता क्या है? इस पाप का भुगतान तुझे ही करना पड़ेगा। तूने ही मेरे इस हाथ को आज यह पाप करने के लिए उत्तेजित किया! थूक है तुझपर!"

वह अपने साथियों पर विश्वास की कमी और 'नकारवाद' के चक्कर में फसने का आरोप लगाकर खास तौर से खुश होता

"आखिर तुमने भी उसी ईश्वर-द्रोही कौवे अलेक्सान्दर की बोली बोलना शुरू कर दिया न!"

लेकिन जब उससे पूछा जाता कि जिस 'नकारवाद' से वह इतना चिढता और भय खाता है, वह आखिर है क्या बला, तो उससे कोई साफ जवाब देते न बनता:

"नकारवाद सब से तीखा और घातक ईश्वर-द्रोह है जो खुदा को जहन्नुम रसीद कर उसकी जगह बुद्धि को बैठाता है। बुद्धि के सिवा वह और किसी चीज को नहीं मानता! मिसाल के लिए कजाको को लो। वे केवल बाइबल को मानते है। और यह बाइबल सरातोव मे जर्मनो से—लूथर से—उनके हाथ लगी। यह लूथर नाम भी किसीने खूब छाट कर रखा है। तभी तो लोग कहते है: 'लुटेरा-लूथर, रगीला लूथर, शैतान लूथर!' जर्मनों के कबीले का मतलब है खरहा-दिमागों या फिर शटूनडी। यह सारी अलाय-बलाय पश्चिम से, वहाँ के ईश्वर-द्रोहियों के पास से, आई है।"

अपना लगडा पॉव वह जमीन पर पटकता और ठडी वजनदार आवाज मे कहता:

"असल मे ये लोग है जिनका उन्हे हुलियातग करना चाहिए, बीन-बीन कर जिन्हे पकड़ना और टिकटियो जिन्हे भूनना चाहिए। असल में दमन इनका होना चाहिए, न कि हमारा। हम जो रूसी है—पुश्त दर पुश्त से, जब से दुनिया बनी है तब से हमारा विश्वास और दीन-ईमान एकदम पूर्वीय, सच्चे मानी मे रूसी है। लेकिन वे और उनकी विकृत आजाद ख्याली—वह सब पश्चिम की देन है, एक दम विदेशी। जर्मनी और फ्रास से उधार ली हुई। नुकसान के सिवा उससे और क्या पल्ले पड़ेगा? जरा पीछे मुड कर देखो, १८१२ मे...।"

जोश मे उसे इस बात का भी ध्यान न रहता कि किसी बड़े

आदमी से नहीं, बल्कि बच्ची उम्र के एक लड़के से वह बातें कर रहा है। अपने मजबूत हाथ में मेरी पेटी दबोचे झटका देकर कभी वह मुझे अपनी ओर खींचता, कभी दूर धकेल देता। उसकी आवाज़ एक अजीब, बिल्कुल युवकों जैसे, उत्साह और उछाह से भरी थी। वह कह रहा था

"आदमी का दिमाग शैतान का घर है। खुद ही वह एक हवाई जंगल खड़ा करता है और फिर अंधे की भांति उसमें मंडराता है। आदमी न होकर जैसे वह खूंखार भेड़िया हो। शैतान के हाथों में उसकी नकेल होती है और उसकी आत्मा, खुदा का उच्चतम वरदान, नष्ट हो जाती है। शैतान के इन चेलों के दिमाग में शैतानी के सिवा और हो भी क्या सकता है? नकारवाद के ये कठमुल्ला कहते हैं शैतान भी खुदा का बेटा और प्रभु ईसा का बड़ा भाई है! बोलो, इससे बढ़ कर बदतमीज़ी और क्या होगी? और वे लोगों को पाठ पढ़ाते हैं अधिकारियों का कहना न मानो, काम-धंधे की हड़ताल करो, अपने बीवी-बच्चों को धता बताओ। हर जिम्मेदारी से वे इन्कार करते हैं, कायदे-कानूनों और व्यवस्था के वे खिलाफ हैं। बस, आदमी को सरकारी सांड की भांति छुट्टा छोड़ देना चाहते हैं। चाहे जहां वह मुंह मारे, चाहे जैसे वह रहे। यही तो शैतान चाहता है। मिसाल के लिए नरक के कीड़े उस अनेक्सान्दर को ही लो, कम्बख्त ।"

कभी-कभी, बीच में ही, कोई काम करने के लिए मुंशी मुझे बुला लेता। पांच में वह अब अकेला ही रह जाता, लेकिन उसका बोलना फिर भी बंद न होता, बूढ़े के मुंह से निकल शब्द शून्य में गिरते रहते

"आह, पर-कटी आत्माओ, ओह अंधे पिल्लो, न जाने कब तुम्हें छुटकारा मिलेगा!"

फिर, पीछे की ओर अपने सिर को फेंक और हथेलियों को अपने घुटनों पर टिका कर, जाड़ों के भूरे आकाश पर नजर गड़ाए, वह एकटक देखता रहता।

मेरे साथ उसका वरताव, धीरे-धीरे, अधिक नरम होता गया और मेरा काफी ध्यान वह रखने लगा। जब वह मुझे कोई पुस्तक पढते देखता तो मेरे कधो को थपथपाते हुए कहता:

"यह ठीक है, मेरे लडके, पढो और खूब पढो। वक़्त पर काम आएगा। खुदा ने तुम्हे अच्छा दिमाग दिया है। लेकिन यह बहुत बुरा है कि तुम वडो का कहना नहीं मानते, और हर किसी के सामने अड जाते हो। जानते हो, यह शैतानी तुम्हे कहाँ ले जाएगी? जेल में, मेरे लड़के, जेल में। यह अच्छी वात है कि तुम किताबें पढ़ते हो। पढो, खूब पढो, लेकिन यह न भूलो कि किताब आखिर किताब ही है। ऐसा न हो कि तुम्हारा अपना दिमाग ठप हो जाए। जानते हो, डेनियल नाम का एक पादरी था। उसने अपना अलग ही ख्रिस्ती पंथ चलाया। वह किताबो से नफरत करता था। नयी हो चाहे पुरानी, सभी को वह वुरा कहता और उन्हें वटोर कर नदी में डुवा देता। यह भी गलत है। फिर शैतान का गुर्गा वह अलेक्सान्दर है जो लोगो को उलटा पाठ पढ़ाता है और उनके दिमागो को खराब करता है...।"

अलेक्सान्दर का वह अक्सर जिक्र करता और वात-वात में उसका नाम लेता। ऐसा मालूम होता जैसे उसके दिमाग़ पर उसका भूत सवार हो। एक दिन जब वह दुकान में आया तो उसका चेहरा वेहद परेशान था। तेज़ स्वर में मुंशी से वोला:

"कुछ सुना तुमने, अलेक्सान्दर यहाँ, हमारे नगर में ही मौजूद है—कल ही आया है। सुवह से घूम रहा हूँ, कोई जगह मैंने नही छोडी, लेकिन कुछ पता नहीं चला। जाने कहाँ चोर की

भाति छिपा है। सोचा, कुछ देर तुम्हारी दुकान पर चल कर बैठू। शायद यही टक्रा जाए।"

"रोज ही सैकडा ऐरे-गरे आते रहते है। मेरा उसमे क्या वास्ता!" मुशी ने कुढ कर कहा।

बूढे ने सिर हिलाया। बोला

"ठीक है — तुम केवल खरीदने और बेचने वाला को ही जानते हो। उनके सिवा दुनिया में तुम्हारे लिए अन्य किसी चीज का अस्तित्व नही है। लेकिन जाने दो, तुम एक गिलास चाय तो पिला ही सकते हो?"

खौलते पानी से भरी पीतल की एक बडी सी केतली लेकर जब मै लौटा तो देखा कि दुकान म कुछ और मेहमान भी मौजूद है। इनमें बूटा लूकियान भी था। खुशी के मारे उसकी बत्तीसी खिली थी। दरवाजे के पीछे अधेरे कोने में एक अजनबी बैठा था। वह किरमिच के उचे जूते, हरे पटवे से कसा गरम कोट और सिर पर टोपी पहने था जिसे नीचे खीचकर उसने अपनी आँखो को ढक लिया था। उसका चेहरा मुझे अच्छा नहीं लगा, हालाकि वह काफी शात, और विनम्र जीव मालूम होता था। उसका मुँह बुरी तरह लटका हुआ था, दुकान के उस कर्मचारी की भाति जिसे अभी-अभी नौकरी से निकाल दिया गया हो और इस कारण जैसे उसकी जान ही निकल गई हो।

उसकी ओर नजर तक डालने की चिन्ता न करते हुए प्योत्र वसीलीयेविच कुछ कह रहा था। उसकी आवाज में विरोधी को चित्त कर देने वाली सख्ती, वजन और जोर था। अजनबी का दाहिना हाथ, यन्त्रवत, अपनी टोपी से खेल करने में जुटा था। वह बाह उठाता, इस तरह मानो क्रास का चिन्ह बनाने जा रहा हो, और हल्का-सा झटका दकर टोपी को पीछे की ओर खिसका देता।

एक वार, दो वार, तीन वार , अन्त में टोपी इस हद तक खिसक जाती कि लगता, अव गिरी, अव गिरी। लेकिन वह उसे गिरने न देता। छोर पकड़ कर तुरत उसे खीचता और फिर अपनी आँखो पर जमा लेता। उसकी इन यन्त्रवत और अवश हरकतो को देख कर मुझे "जेव-मे-मौत" वाले पागल ईगोशा की याद हो आई।

"ये गदी मछलियाँ हमारी नदियों और ताल-तलैयों में किलविला रही है और दिन-दिन दूनी गदगी उछाल रही हैं!" प्योत्र वसीलीयेविच ने अन्त मे कहा।

अजनवी ने, जो किसी दुकान का नौकर मालूम होता था, शान्त और निश्चल आवाज मे पूछा:

"यह सव क्या तुम मेरे वारे में कह रहे थे?

"तुम्हारे वारे मे ही सही। तुम कौन दूध के धुले हो?"

अजनवी ने, उतने ही निश्चल अन्दाज और आत्मिकता से फिर पूछा:

"और खुद अपने वारे मे तुम क्या कहते हो, मेरे भाई?"

"अपने वारे मे मै केवल खुदा से ही कहता हूँ — वह मेरा निजी मामला है।"

"ओह नही, मेरे भाई, अकेले तुम्हारा ही नही, वह मेरा मामला भी है," अजनवी ने जोरदार और विजयी आवाज में कहा। — "सचाई से आँखे चुराने और अपने मे ही भरमाए रहने से काम नही चलेगा। खुदा और मानव के सामने हमें अपने भारी पापो का जवाव देना है। इससे नही वचा जा सकता।"

मुझे यह अच्छा लगा कि प्योत्र वसीलीयेविच को उसने 'मेरे भाई' कह कर सम्बोधित किया। उसकी शान्त और शुभ्र आवाज ने भी मुझपर गहरा असर किया। वह उसी तरह वोल रहा था जैसे कि कोई अच्छा पादरी धर्मग्रथ का पाठ करता है: "सवका स्वामी

इस दुनिया का मिग्जनहार "। वह बोलता जाता था और कुर्सी पर आगे की ओर खिसकता जाता था। एक दम किनारे पर वह अब आ गया था। अपने हाथ को मुँह के सामने लाकर हिलाते हुए बोला

"तुम मुझपर फतवा क्यो कसते हो? मैने क्या तुमसे ज्यादा पाप किए है?"

प्योत्र वसीलीयेविच ने चिढ कर कहा

"बडी देर से समोवर खौल रहा है!"

अजनवी ने उसके शब्दो की ओर कोई ध्यान नही दिया, और बोला

"केवल खुदा ही यह बता सकता है कि पवित्र आत्मा के मोतो को कौन गदा कर रहा है। हो सकता है कि यह पाप तुमने ही किया हो,—तुमने या तुम्हारे जसे दूसरे लोगो ने जो किताबो में डूबे रहते ह, जो अपने को पढा लिखा कहते ह। मेरा न तो किताबो से वास्ता है, न मै पढा लिखा हूँ। म तो एक सीधा सादा जीव हू।"

"सीधा-सादा जीव,—अपनी इस सादगी का जादू किसी और पर चलाना, म तुम्हारी एक एक रग पहचानता हूँ।"

"जादू चलाने का काम म नही, तुम करते हो। तुम्हारे जसे किताब-चाटू, दिखावटी चीजो के पीछे मरने और सीधी-सच्ची भावनाओ को विकृत करने वाले जीव ही लोगो के दिमाग को भरमाते और बरगलाते ह। जहाँ तक मेरा सम्बध है,—क्या तुम बता सकते हो कि मैं किस चीज का प्रचार करता हू?"

"ईश्वर-द्रोह का!" प्योत्र वसीलीयेविच ने कहा। अजनवी ने जैसे कुछ नही सुना और अपने हाथ की हथेली को आखो के सामने लाकर इस तरह देखा मानो उसपर लिखी लिखावट पढ रहा हो। फिर व्यग्र भाव से बोला

"तुमने लोगों को एक गदगी से निकाल कर दूसरी गंदगी मे डाल दिया है और सोचते यह हो कि इससे उनका जीवन सुधर गया। लेकिन मै कहता हूँ कि तुम धोखे मे हो! मै तुमसे कहता हूँ, मेरे भाई, अपने को उन्मुक्त करो, अपने बन्धनों को तोड कर आजादी से साँस लो! खुदा के सामने न घर की कुछ हस्ती है, न बीवी-बच्चो और ढोर-डगरो की! मेरे भाई, अपने को मुक्त करो, उन सभी चीजों को छोड़ दो जो हिसा और मार-काट की ओर ले जाती है—सोने-चादी और धन-दौलत के सारे बन्धनो को तोड़ दो जो सडाँध और गंदगी का ही दूसरा नाम है। इस लम्बी-चौडी धरती पर चाहे जितना भटको, कभी मुक्ति नहीं मिलेगी। मुक्ति तो केवल स्वर्ग की घाटियो मे मिलती है। किसी चीज का मोह न करो। हर चीज से इन्कार करो। मै कहता हूँ, उन सभी नातों-बन्धनो से इन्कार करो जो तुम्हे इस दुनिया से बाधे हुए है। कारण कि यह दुनिया रहने की जगह नही है, प्रभु ईसा के दुश्मनो ने उसे ग्रस लिया है। मेरा रास्ता सीधा और संकरा है, लेकिन मेरी आत्मा अजेय और अडिग है, इस अंधी दुनिया को मानने से इन्कार करती है और सदा करती रहेगी...।"

"रोटी, पानी और तन ढंकने के लिए कपडा,—ये सब भी तो इसी दुनिया की चीजे है? क्या तुम इनसे भी इन्कार करते हो?" वृद्ध प्योत्र ने घृणा से पूछा।

अलेक्सान्दर पर इन शब्दों का कोई असर नहीं हुआ। वह और भी लगन से बोलता गया। उसकी आवाज धीमी थी, लेकिन मालूम ऐसा होता था जैसे पीतल की तुरही गूँज रही हो:

"ओह मानव, तेरी असली निधि का स्रोत क्या है? तेरी निधि का स्रोत है खुदा, वही तेरी असली दौलत है। निष्कलक बन कर उसके सामने जा, अपनी आत्मा को इस दुनिया के

बधनों से मुक्त कर और अपने खुदा की ओर देख — तू अकेला है और वह अकेला है। इसी तरह तुझे खुदा के पास जाना है, इसके सिवा उसके पास पहुचने का और कोई रास्ता नहीं ह। कहा है (मुक्ति के लिए पिता और मां को छोड, हर चीज का त्याग कर और उस आंख को निकाल डाल जो हृदय को मोहक चीजो से उलझाती है) (खुदा के लिए इस नश्वर शरीर का नाश और अनश्वर आत्मा का वरण कर, जिसमे तेरी आत्मा में दैवी प्रेम का आलोक जगे जिसकी जोत कभी मद नहीं पडती ।"

प्योत्र वर्मीलीयेविच से नही रहा गया। उठते हुए झुझलाकर बोला

"पूह, कुत्ते की दुम! मै तो समझा था कि पिछले साल के मुकाबिले अब तुम कुछ ज्यादा समझदार हो गए होगे, लेकिन लगता है कि तुम्हारा रोग दिन दिन बढता ही जा रहा है।"

बूढा डगमग करता दुकान से बाहर पोर्च मे निकल गया। यह देख अलेक्सान्दर चौंका। तेजी से और कुछ अचरज में भर कर बोला

"अरे, क्या जा रहे हो? भला यह कैसे हो सकता है?"

नरापन के पुतले लुकियान ने आंख के इशारे मे लेप चढाते हुए कहा

"ठीक तो है। तुम्हारे लिए मदान साफ छोड गया।"

लेकिन अलेक्सान्दर ने उसे भी आडे हाथों लिया

"और तुम अपने को क्या समझते हो? घिसे पिटे कुछ शब्द रट लिए हैं, उन्हे उगलते और लोगो का बेवकूफ बनाते रहते हो। वे समझते हैं कि तुम्हीं मुक्तिदाता हो, तुम्हारे मुह से निकले

घिसे-पिटे शब्दों का जाप कर के ये भी इस दुनिया से तर जाएंगे..!"

लुकियान ने मुसकरा कर उसकी ओर देखा और खुद भी पोर्च में चला गया। अजनबी ने अब दुकान के मुंशी की ओर रुख किया और विश्वास-भरी आवाज में बोला:

"देखा, मेरी आत्मा की शक्ति के सामने न टिक सके। धुआँ उसी समय तक मंडराता है जब तक लपटें नहीं उठतीं।"

दुकान के मुंशी ने पलकों के नीचे से नजर उठा कर देखा, और रूखे स्वर में बोला:

"मेरे लिए सब बराबर है।"

अलेक्सान्दर इन शब्दों को सुनकर चौंका। अपनी टोपी को आँखों पर खींचते हुए बोला:

"यह क्या, बराबर कैसे है? साफ मालूम होता है कि तुम बात को टालना चाहते हो।"

कुछ क्षण तक वह सिर लटकाए चुपचाप बैठा रहा। इसके बाद प्योत्र वसीलीयेविच और लुकियान ने उसे आवाज दी और तीनों चले गए। जाते समय उन्होंने सिर उठा कर देखा तक नहीं।

अंधेरे मे जिस तरह आग जलती है, कभी लपक तेज होती और कभी मंद पड़ जाती है, ठीक वैसे ही यह अजनबी मेरी आँखों के सामने प्रकट हुआ, और मुझे लगा कि इस दुनिया में उसका इन्कार करना एकदम अकारण ही नहीं है, एक हद तक वह सही भी है।

रात को, मौका पा कर, भारी उत्साह के साथ ईवान लारिओनोविच से मैंने उसका जिक्र किया। वह एक बहुत ही शान्त और भला आदमी था और हमारे कारखाने का मुखिया मास्टर था। मेरी बात सुनने के बाद बोला:

"वह हरकारा होगा,—यह भी एक पंथ है जिसे माननें वाले किसी चीज को स्वीकार नहीं करते।"

"वे कैसे रहते हैं?"

"वे बस हरकारो की भांति सदा दौडते रहते हैं,—किसी एक जगह नही टिकते, सदा घूमते रहते हैं। इसीलिए उनका नाम भी हरकारा पड गया। उनका मत है कि यह धरती और इसकी हर चीज रद्द करनी चाहिए। पुलिस उन्हे नुक्सानदेह समझती है, और उनके पीछे पडी रहती है।"

अपने जीवन में काफी कटुता मैंने देखी थी, फिर भी यह बात मेरे हृदय में नही जमी कि कोई उसकी हर चीज़ को ठुकरा कैसे सकता है। सब कुछ होते हुए भी अपने चारा ओर के जीवन में मुझे अच्छी और दिलचम्प चीजें दिखाई देती थी। नतीजा इसका यह कि दिन बीतते न बीतते अनेसमान्दर का चित्र धुधला पड कर मेरी स्मृति से गायब हो गया।

लेकिन, कभी-कभी, बुरे क्षणो में जब मेरा हृदय दुखी और उदास होता, उसकी याद ताजा हो जाती और मुझे लगता जैसे खेतो के बीच से भूरे पथ को पार करता वह जगल की ओर बढा जा रहा हो। श्रम के दाग धब्बा से अछूता उसका सफेद और साफ-सुथरा हाथ यत्रवत हरकत करता और डडे को आगे धकेल देता, और उसके मुह से निकले शब्द शून्य में बिखरते रहते

"मेरा पथ सीधा और सकरा है और हर चीज मे इन्कार करने तथा हर बन्धन को तोडने का म आह्वान करता हू ।"

और उसके साथ साथ पिता का चित्र भी मेरी आंखा के सामने मूर्त हो उठता,—ठीक वैसा ही जैसा कि मेरी नानी को सपना में दिखाई देता था अखरोट की लकडी हाथ में लिए, और एक चित्तीदार कुत्ता, जीभ मुह से बाहर निकाले, उसके कदमा के साथ लपकता झपकता हुआ ।

देव-प्रतिमाओ का कारखाना आधी पत्थर की एक पक्की इमारत के दो कमरों में था। एक कमरे में तीन खिड़कियाँ सहन की तरफ खुलती थी और दो बगीचे की तरफ; दूसरे कमरे में एक खिड़की का रुख बगीचे की ओर था और एक का सड़क की ओर। खिड़कियाँ छोटी और चौकोर थीं; और उनका काँच जमाने के रंग देखते-देखते खुद भी बुरी तरह रंग गया था। जाड़ों की धुंधली और छितरी हुई रोशनी मुश्किल से उसे वेध कर भीतर पहुँच पाती थी।

दोनो कमरो मे मेजें-ही-मेजे भरी थी। हर मेज़ पर, कमर दोहरी किए, एक या दो मुर्तिसाज़ बैठते। पानी से भरी काँच की गेंदें छत से लटकतीं ताकि लैम्पो की रोशनी उनके स्पर्श से और भी अधिक उजली तथा शीतल हो कर देव-प्रतिमाओं के चौरस चौखटो को आलोकित करे।

कारखाने के गर्म वातावरण मे दम घुटता। मूर्तिनिर्माण के लिए प्रसिद्ध पालेख, खोलुई और मुस्तेरा के करीब बीस कारीगर— देव प्रतिमाओ के जनक — सब यहीं भरे रहते। खुले गले की जिघम की कमीजे और टिकन के पायजामे वे पहनते, और जूतों के नाम पर बदनुमा लीतरे होते या एकदम नगे पाँव ही रहते। माखोरका तम्बाकू का कड़ुवा धुवाँ उनके सिरो के चारो ओर मडराता और वार्निश,लाख, तथा सड़े अंडो की गंध से हवा भारी हो जाती। व्लादिमीर जनगीत के स्वर, गर्म तारकोल की भाति तरल और भारी, तैरते रहते:

पाप पंक मे लथपथ दुनिया
रही न लाज कुलाज
लड़के लड़की सब बेकाबू
नाचे नंगा नाच ...

वे अन्य गीत भी गाते, मगर इसी ढंग के, जो हल्का
के बजाय उसे भारी बनाने वाले। लेकिन यह उनका प्रिय गी
गीत के अलग बोल, उनके विचारों या काम में कोई बाधा
बिना, गूजते रहते। गिलहरी के महीन बालों वाले ब्रुश,
किसी भूल-चूक के, सहज गति से चलते, चित्र की रेखाए
उभारते, सन्तों के चोगों की सलवटों में रंग भरते या उन
हुए हड्डियाँ निकले चेहरों में वेदना की रेखाएँ डालते। खिड़की
कारीगर गोगोलेव की हथौड़ी की खटखट सुनाई देती जो
खोद कर बेल बूटे बनाता। पकौड़े-सी नीली उसकी नाक थी
नशे में वह धुत्त रहता था। हथौड़ी की तेज खटखट गीत के
स्वरों के साथ ताल देती और ऐसा मालूम होता मानो कोई
पेड़ की लकड़ी कुतर रहा हो।

देव प्रतिमाओं की साज-सज्जा के इस काम में किसी क
न लगता। जाने किस शैतान दिमाग ने इस काम को अंग-भ
अलग अलग टुकड़ों में बाँट दिया था। नतीजा यह कि अ
काम में न कोई आकर्षण रहा था, न सौंदर्य—सभी कुछ
हो कर बिखर गया था। उससे गहरा लगाव पैदा करना या
प्रति हृदय में कोई दिलचस्पी जगाना असम्भव था। ऐंच
आँखों वाला बढ़ई पनफील सरो और लिण्डेन लकड़ी के छ
तरह-तरह के आकार के टुकड़े लाता, रंदे से उन्हें साफ करत
उनमें गोंद लगाता। वह बहुत ही कमीना आदमी था और
हृदय द्वेष से भरा रहता था। इसके बाद दावीदोव टुकड़ों क
कर प्रतिमा की नींव डालता। वह अभी लड़का ही था और
का मरीज मालूम होता था। सारोकिन रंग रोगन की तयारी
मिरयासिन पेन्सिल से देव प्रतिमा की तस्वीर बनाता जो कि
चित्र की नकल होती, बूढ़ा गोगोलेव रंग-रोगन भरता और

जमीन पर बेल-बूटों के डिजाइन बनाता; 'छोटे चित्रकार' सीन-सीनरी बनाते और सन्तो के कपड़ों में रंग भरते। इनके बाद प्रतिमा को, बल्कि कहना चाहिए कि प्रतिमा के धड़ को क्योंकि उसमें अभी न सिर लगा होता और न हाथ, दीवार के सहारे खड़ा कर दिया जाता। चेहरा बनाने का बाकी काम दूसरे कारीगर करते।

गिरजे की वेदी या दरवाजे की शोभा बढाने वाली इन बड़ी बड़ी प्रतिमाओ को इस तरह बिना चेहरे-मोहरे, हाथ या पाव के — केवल चोगा, कवच या फरिश्तों की छोटी जाकेट पहने — दीवार के सहारे टिका देख कर बहुत ही अटपटा मालूम होता। उनके शोख और भड़कीले रंग मौत की भावना का संचार करते, ऐसा मालूम होता कि वह चीज जो जीवन फूकती, उनमे नहीं है, या कहिए कि वह चीज उनमें कभी मौजूद थी, लेकिन रहस्यमय ढग से विदा हो गई और अब बोझिल लबादे के सिवा उनके पास और कुछ नही बचा है।

जब चेहरा-मोहरा बनाने वाले अपना काम खत्म कर लेते तो एक अन्य कारीगर सुनहरी बोर्डर के डिजाइन मे एनामेल का काम करता। परिचय और स्तुति आदि लिखने का काम किसी दूसरे विशेषज्ञ के सुपुर्द था। इन सब के हाथो से गुजरने के बाद तैयार प्रतिमा पर खुद ईवान लारिओनोविच, कारखाने का शान्त स्वभाव मुखिया, लुकर की वारनिश चढाता।

उसका चेहरा भूरा था और भूरी ही उसकी दाढ़ी थी — महीन और रेशम की भांति मुलायम। उसकी आँखों की अतल गहराई में उदासी छाई रहती। वह बहुत ही भले ढंग से मुसकराता, लेकिन जाने क्यो उसकी मुसकराहट के जवाब मे मुसकराना कुछ अटपटा और गलत-सा मालूम होता। उसे देख कर खम्बेवाले सन्त

सिमियोन की प्रतिमा की याद हो आती — उतना ही दुबला-पतला और क्षीण, और उसी की भांति अपने चारो ओर के वातावरण तथा आसपास के लोगो से बेखबर।

कारखाने में काम शुरू किए अभी मुझे दो चार ही दिन हुए थे कि भड़ियाँ बनानेवाला कारीगर नशे की हालत में काम पर चला आया। वह दोन प्रदेश का कज़ाक था। नाम कापेन्दियूखिन, खूबसूरत और खूब हट्टा-कट्टा। दाँतो को भींच कर और सुन्दर स्त्रियो-ऐसी आँखो को सिकोड़ते हुए, बिना किसी से कुछ कहे या सुने, एक सिरे से वह सभी पर आहनी घूसो की बौछार करने लगा। उसका चपल शरीर जो डील-डोल में ज्यादा बड़ा नही था, कारखाने में सब पर उसी तरह झपट रहा था जैसे चूहो से आबाद तहखाने में बिलाव झपटता है। घबरा कर सब कोना कोनो की ओर लपके, और वही दुबके हुए एक-दूसरे से चिल्लाकर कहने लगे

"पकड लो टाग मरदूद की!"

आखिर चेहरा-मोहरा बनानेवाले कारीगर येवगेनी सितानोव ने बेकाबू हुए इस साड को मग्न करने में सफलता प्राप्त की। स्टूल उठा कर उसने कज़ाक के सिर पर दे मारा, और, वह वही फर्श पर ढह गया। देखते देखते सबने उसे पकडा और चित्त लिटा कर तौलिया से बाध दिया। लेकिन अपने नुकीले पजो और दाँतो से वह तौलियो को नोचता और चीर-चीर करता रहा। यह देख येवगेनी का गुस्सा सीमा पार कर गया। उछल कर वह मेज़ पर चढ गया और कज़ाक की छाती पर कूदने की धुन में दोनो कोहनियों को बाजुओ से सटा कर अपना वज़न तौलने लगा। अपने भारी-भरकम वज़न के साथ अगर वह कापेन्दियूखिन की छाती पर कूद पडता तो उसका कचूमर ही निकल जाता। लेकिन तभी, हट और कोट पहने, लारिओनोविच उसके बराबर में आकर खडा हो

गया। सितानोव को उसने उँगली के इशारे से वस में किया, और शान्त तथा दो टूक स्वर मे अन्य सव से वोला:

"इसे वाहर हवा मे ले जाकर डाल दो। नशा उतरने पर ठीक हो जाएगा।"

कजाक को खीच कर वे कारखाने से वाहर ले गए, फिर मेज-कुर्सियो को ठीक ठिकाने से लगाया और अपने काम मे जुट गए। साथ ही वे टीका-टिप्पणी भी करते जाते—कापेन्दियूखिन के वारे मे उन्होने भविष्यवाणी की कि एक दिन अपनी ताकत के ज़ोम मे वह किसी से लडता हुआ मारा जाएगा।

"उसे मारना हँसी-खेल नहीं है," सितानोव ने, वहुत ही शान्त स्वर मे, गहरे जानकार की भाति, अपनी राय जाहिर की।

मैने लारिओनोविच की ओर देखा और यह पता लगाने की कोशिश करने लगा कि उसमें ऐसी क्या वात है जो सव लोग, अपने जंगलीपन के वावजूद, उसका इतना कहना मानते है।

वह हरेक को, विना किसी भेद-भाव के, काम करने के गुर सिखाता। पुराने-से-पुराने और दक्ष कारीगर भी उससे सलाह लेते। कापेन्दियूखिन को तैयार करने पर वह अन्य सव से ज्यादा समय और शब्द खर्च करता।

"चित्रकार—तुम चित्रकार हो कोपेन्दियूखिन। और अच्छा चित्रकार वही है जिसके चित्रों मे जान हो, इटली के चित्रकारो की भॉति। सुहावने रगो का सामंजस्य तेल-चित्रो की जान है, लेकिन देखो न, तुमने यहाँ निरा सफेदा पोत कर रख दिया है। यही वजह है जो मरियम की आँखे इतनी वेजान और ठिठुरी-सी मालूम होती है। इसके गाल गोल है, उनमे लाली भी खूव है, लेकिन आखो का उनसे कोई मेल नहीं खाता। फिर आँखे यथास्थान भी नहीं है—एक नाक के इतनी नजदीक है और दूसरी कनपटी

की ओर भागी जा रही ह। नतीजा यह कि जिस चेहरे पर दैवी आभा, निश्छलता और पवित्रता झलकनी चाहिए, उससे अब मक्कारी और दुनियादारी टपकती ह। असल वात यह ह कि तुम मन लगा कर काम नही करते, कापेन्दियूखिन।"

कजाक पहले तो मुह सिकोडे सुनता, स्त्रिया ऐसी अपनी सु दर आखो मे बेशर्मी के साथ मुसकराता और फिर अपनी सुहावनी आवाज में जो नशे के कारण कुछ भारी पड गई थी, कहता

"तुम भी क्या वात करते हो, ईवान लारिओनोविच! भला यह भी कोई काम है? भगवान ने मुझे सगीत के लिए पैदा किया था, लेकिन आ फसा हू म यहाँ—देव-प्रतिमाओ के इस जेलखाने में।"

"जी मे लगन और मेहनत करने की सकत हो तो हर चीज़ में दक्ष वना जा सकता है।"

"लानत है मुझ पर—कहा म और कहा यह काम हवा से वात करने वाले घोडे जुती त्रोइका हाकने में जो मज़ा है वाह !"

और भट्ठा-सा मुह फाड कर लम्बे और हडकम्पी स्वर में गाने लगता

त्रोइका मेरी रग-विरगी
सरपट दौडी जाय रे
सजनी मेरी सोलह वरस की
सौ सौ वल खाय रे!

ईवान लारिओनोविच उसकी ओर देख कर मुसकराता, अपनी भूरी नाक पर चश्मे को ठीक से वैठाता और चुपचाप वहा से

खिसक जाता। फिर, एक साथ मिलकर, बीसों आवाजें गीत के बोल उठाती और एक बलशाली धारा का रूप धारण कर समूची वर्कशाप को ऊपर हवा में उठा लेती। गीत के स्वरों के साथ वर्कशाप भी हिंडोले की भांति झूलने लगती:

ओडका मेरी रंग बिरंगी
जोवन की बहार रे...

पाश्का ओदिन्तसोव, जो अभी काम सीख रहा था, अंडों की जर्दी निकालना बंद कर देता, और दोनों हाथों में अंडे के छिलके थामे, बढ़िया तेज आवाज में कोरस की पंक्तियाँ पकड़ता, अन्य सब उसका अनुसरण करते।

गीत की ध्वनि नशा बन कर सब पर छा जाती, अन्य किसी बात की उन्हें सुध नहीं रहती। एक साथ मिल कर सब के हृदय धड़कते, एक ही रागिनी में सब बहते और एकटक उस कजाक की ओर देखते जो गाते समय वर्कशाप का एकछत्र स्वामी और मालिक होता। वह सभी को, एक सिरे से, मंत्र मुग्ध कर लेता और वे एकटक उसकी बाँहों की हर हरकत का अनुसरण करते। उसकी बाँहें इस तरह लहराती मानो वह अभी हवा में तैरने लगेगा। उसका जादू यहाँ तक बढ़ता कि अगर वह, एकाएक अपने गीत को रोक कर, बीच में ही चिल्ला उठता: "आओ साथियो, वर्कशाप की चिन्दियाँ उड़ा दें!" तो सब के सब, मय उन कारीगरों के जो अत्यन्त नफासतपसन्द और भले थे, पाँच मिनट के भीतर निश्चय ही समूची वर्कशाप को मल्वे का एक ढेर बना कर रख देते!

वह विरले ही गाता, लेकिन उसके बनैले गीतों में सदा इतनी अदम्य शक्ति होती कि उनके सामने कोई टिक न पाता,

सभी को वे अपने साथ वहा ले जाते। चाहे हृदय कितना ही बुझा हुआ क्यों न हो, उसके गीत की आवाज़ सुन सभी चेतन हो जाते, एक अजीव जोश और उछाह उनमें लहराने लगता, और उनकी बिखरी हुई ताकतें एक स्वर-लय में गुथ कर किसी वलशाली साज़ का रूप धारण कर लेतीं।

गीतों को सुन कर मुझे गायक पर और लोगों को मत्र-मुग्ध करने की उसकी अद्‌भुत शक्ति पर ईर्ष्या होती। कम्पनशील आतंक का मुझमें सचार होता, इस हद तक म उमडता-घुमडता कि हृदय दुखने लगता, खूब खुलकर रोने और गाते हुए लोगों के सामने अपना हृदय चीर कर रख देने के लिए जी ललक उठता

"ओह, तुम सब मुझे कितने प्यारे लगते हो!"

तपेदिक के मरीज दावीदाव का भी मुंह, जिसका रग पीला पड गया था और जिसके शरीर पर बाल ही बाल नज़र आते थे, अडा फोड कर अभी-अभी बाहर निकले कौवे की भांति खुल जाता।

केवल कज़ाक ही अकेला ऐसा था जिसके गीत इतने आल्हादपूर्ण और इतने तूफानी होते थे। अन्यथा मूर्तिसाज, आम तौर से, उदासी में डूबे और बोझिल गीत गाते थे, जसे—'पत्थर हो गए दिल लोगों के', 'आह, घेर लिया जगल ने, नन्हे जगल ने', अथवा अलेक्सान्दर प्रथम की मृत्यु का वणन करने वाला गीत—'फिर आया वह, हमारा अलेक्सान्दर, और डाली नज़र उसने अपने वीर सनिकों पर'।

कभी-कभी कारखाने के सब से अच्छे चेहरासाज़ जिखरेव के कहने से वे गिरजे के गीत भी गाते, लेकिन उन्हें गाने में वे भूले-भटके ही सफल हो पाते। जिखरेव हमेशा ऐसी धुनों और रागिनियों

के पीछे सिर धुनता जिन्हें सिवा उसके और कोई न समझ पाता। दूसरो का गाना उसे पसन्द न आता और वह उनके गाने की बराबर आलोचना करता रहता।

वह एक दुबला-पतला आदमी था। आयु पैतालीस के करीब, बालों की एक आवारा लट अर्द्धचक्र ऊर्धचन्द्र की भाति गजी खोपड़ी पर फैली हुई, भारी और काली भौहे जो मूछों की भाति मालूम होती थी। ताम्बे से तपे और बढ़िया नाक नक्शेवाले उसके गैर-रूसी चेहरे पर घनी और नुकीली दाढ़ी खूब फबती थी। लेकिन यह फबन उसकी दाढ़ी में ही थी, तोते ऐसी नाक के नीचे उग आई मूछो में नही जो उसकी भौहो के सामने बिल्कुल फालतू मालूम होती थी। उसकी नीली आँखें एक-दूसरे से भिन्न थीं—बाई आँख दाहिनी से बडी नजर आती थी।

"पाश्का।" मेरी ही भाति काम सीखने वाले साथी से ऊंचे स्वर मे वह कहता।—"जरा शुरू तो करो 'हे दयामय दीनबंधु।' देखो, सब चुप हो कर सुनो!"

कमीज पर बधे गमछे से हाथ पोछते हुए पाश्का शुरू करता:

"हे दयामय..."

"दी-ई-ई-ई-न ब-अ-अ-अ-न्धु .."—अनेक अवाजे एक साथ मिल कर 'दीन बन्धु' को ऊपर उठातीं और विचलित जिखरेव चिल्लाना शुरू करता:

"मेढक की भाति न टर्राओ, सितानोव! अपनी आवाज नीची करो जिससे मालूम हो कि आत्मा की गहराई मे से वह निकल रही है।"

सितानोव ऐसी आवाज मे 'हे दयामय' की खिचडी पका रहा था मानो बैरल को उलट कर वह उसे ढपाढप बजा रहा हो:

"हम हैं दास तिहारे "

"पूह, यह भी कोई ढंग है। 'दयामय' का नहीं, मानो भूकम्प का आवाहन किया जा रहा हो जिससे धरती कांपने लगे, दरवाजे और खिड़कियाँ खड़खड़ाने लगें।"

जिसरेव का रोम-रोम किसी रहस्यमय आवेश में फड़कने लगता, उसकी अजीब-गरीब मूठनुमा भौंहें उठती और गिरतीं, उसकी आवाज लड़खड़ाने लगती, और उसकी उंगलियाँ किसी अदृश्य साज के तारों को झनझनाती मालूम होतीं।

"हम हैं दास तिहारे—क्या तुम इतना भी नहीं जानते कि यह बात ढोल बजा कर ऐलान करने की नहीं है?" भेदभरे अन्दाज में वह कहता।—"ऊपर का खोल उतार कर, एकदम भीतर से आवाज निकालनी चाहिए। लेकिन तुम हो कि प्रभु की छाती पर सवार होकर चिल्लाते हो हम हैं दास तिहारे। भगवान तुम्हारा भला करे, क्या तुम इतना भी नहीं समझते?"

"यह सब समझते तो फिर कहना ही क्या था!" सितानोव किसी तरह बात बनाता।

"तो जाने दो। यह गीत तुम्हारे बस का नहीं!"

वह खीज कर कहता और अपने काम में जुट जाता। वह हम सबसे अच्छा कारीगर था। वह हर तर्ज के चेहरे बना सकता था—यूनानी, फ्रीयाजस्की या इतालवी। देव-प्रतिमा का आर्डर मंजूर करने से पहले लारिओनोविच हमेशा उससे सलाह लेता। मूल देव प्रतिमाओं का वह बहुत बड़ा प्रेमी और पारखी था। चमत्कार दिखाने वाली बहुमूल्य देव प्रतिमाएं—जैसे फओदारोव, स्मोलेन्स्क और कज़ान मरियमों की प्रतिमाएं उसको दी जातीं। लेकिन, मूल प्रतिमाओं या उनके नमूनों का ध्यान से अध्ययन करते हुए, वह जोरों से भुनभुना उठता

"मूल प्रतिमाएं क्या है, मानो खूंटे है जिनसे हम बंधे हैं। देखो न, जरा भी इधर-उधर नही हो सकते। बस, मक्खी पर मक्खी मारे जाओ!"

कारखाने मे सभी उसे मानते थे और उसका दर्जा सब से बडा था। फिर भी, अन्य सब की भांति, वह किसी पर रौब नहीं गाठता और काम सीखने वालो के साथ—पावेल और मेरे साथ—बडी नरमी से पेश आता। ले-देकर वही एक ऐसा था जो हमे अपना हुनर सिखाने मे आनाकानी नहीं करता था।

वह एक अच्छी-खासी पहेली था। कुल मिला कर वह कोई मौजी आदमी नही था। कभी-कभी, पूरे सात दिन तक, वह मुंह न खोलता और गूंगे-बहरे की भाति काम में जुटा रहता। वह नजर उठा कर हमारी ओर देखता भी तो इस तरह मानो कही दूर से किसी अजीब और अनजानी चीज को पहली बार देख रहा हो। यो गाने का वह बहुत शौकीन था, लेकिन जब गाने का अवसर आता तो वह गुमसुम बन जाता, और ऐसा मालूम होता मानो वह बहरा हो गया हो। न वह खुद गाता, न दूसरो के गाने की आवाज उसके कानों को छूती प्रतीत होती। एक-एक कर सभी उसपर अपनी नजर डालते और उसकी पीठ पीछे कनखियों का आदान-प्रदान करते। लेकिन वह था कि प्रतिमा-बोर्ड को आडा कर उसका एक सिरा अपने घुटनो पर और दूसरा मेज के किनारे पर साधे हुए अपने काम मे डूबा रहता, एक क्षण के लिए भी वह अपना सिर न उठाता और जान खपाकर महीन ब्रुश से प्रतिमा के नाक-नक्शा उभारता। काम करते समय खुद उसका चेहरा भी उतना ही अजीब और अजनबी मालूम होता जितना कि प्रतिमा का।

सहसा, बहुत ही दो टूक और आहत से स्वर मे, वह बड़-बड़ा उठता

"'प्रेदतेचा'—क्या मतलब है इसका? प्राचीन स्लाव भाषा में 'तेच' का अर्थ है 'जाना' और 'प्रेद' का 'आगे', तो प्रेदतेचा का अर्थ हुआ वह जो आगे जाए,—अर्थात आगे जानेवाला, या अग्रदूत, बस इतना ही और कुछ नही।"

उसकी बडबडाहट सुन सब चुपचाप हसते, छिपी हुई नजरो से उसे अपनी हसी का निशाना बनाते और उसके मुह से निकले अजीब शब्द खामोशी में गूँजते रहते

"और भेड की खाल का लबादा इसे पहनाया गया है। अग्रदूत और भेड की खाल का लबादा। नही, इसे तो परो से लैस होना चाहिए।"

तभी किसी कोने में से आवाज आती

"क्या हवा से बात कर रहे हो?"

लेकिन वह कुछ जवाब न देता, या तो वह सुनता नही या सुन कर भी अनसुना कर देता। उसके शब्द, निस्तब्धता के गर्भ को वेध कर, एक बार फिर प्रकट होने लगते

"हमें उनकी जीवनियो से परिचित होना चाहिए, लेकिन उन्हे, उन पवित्र पुस्तको को, क्या कोई समझता है? हम क्या जानते है? पर कटे पक्षी की भाति हमारा जीवन बीतता है चेतनाविहीन, आत्माविहीन मूल कृतिया के नमूने ही हमारे पास है, लेकिन हृदय नही।"

इस तरह बडबडा कर जब वह अपने विचार प्रकट करता तो सितानाव को छोड अन्य सब के होठो पर मुसकराहट दौड जाती और उनमें से कोई एक, अदबदा कर, चहकना शुरू करता

"देख लेना, शनिवार के दिन यह शराब के प्याले में गडगच्च नजर आएगा।"

लम्बा और बडियल सितानोव जो बाईस साल का बछेरा था, अपना गोल मटोल और अभी तक दाढी मूछ, बल्कि भौहो तक से

अछूता चेहरा उठा कर उदास और सोच में डूबी नजर से कोने की ओर देखता।

मुझे याद है कि एक वार, फेओदोरोव मरियम की प्रतिलिपि तैयार करने के वाद उसे मेज पर रखते समय, जिखरेव वुरी तरह विचलित हो उठा था और ज़ोरों से उसने कहा था:

"काम सम्पन्न हुआ, जगत जननी, तुम वह घट हो जिसमें आश्रय पाने के लिए पीड़ित मानवता का हृदय उमड़ता-घुमडता है और उसके आँसुओं की धारा वहने लगती है...।"

फिर, जो कोट हाथ लगा उसी को अपने कंधे पर डाल वह वाहर निकल गया—शरावखाने की ओर। युवकों ने खुशी से उछल कर हँसते हुए सीटियाँ वजाईं, वूढ़ों ने ईर्ष्या से लम्वी साँसे भरीं, लेकिन सितानोव चुपचाप उठ कर देव-प्रतिमा के पास पहुँचा, ध्यान से उसे देखा, फिर वोला:

"नशे में गड़गच्च होने के सिवा और चारा भी क्या है? कलाकृति से विदा होने का दु:ख शराव के प्याले में डूव जाएगा। उसके इस दु:ख को भला हर कोई कैसे समझ सकता है?"

जिखरेव हमेशा शनिवार के दिन अपना रंगपानी शुरू करता। और उसका यह रंगपानी, नशे के आदी अन्य मजदूरों के खुल खेलने जैसा नहीं, वल्कि असाधारण होता। उसके रंगपानी की शुरुआत इस तरह होती: सुवह वह एक पुर्जा लिखता और उसे पावेल के हाथ रवाना कर देता, उसके वाद ठीक भोजन के समय से कुछ पहले, लारिओनोविच से कहता :

"आज मुझे हम्माम जाना है।"

"कव तक लौटोगे?"

"सो तो..."

"अच्छी बात है। लेकिन मंगल तक जरूर आ जाना!"

जिखरेव अपनी गंजी खोपड़ी हिला कर हामी भरता, और उसकी भौंहें थिरकने लगतीं।

हम्माम से लौटने के बाद सज-सजा कर वह पूरा सांवरिया बन जाता—कलफचढ़ी बढ़िया कमीज, गले में रूमाल और रेशमी जाकेट की जेब से चांदी की लम्बी चेन लटकती हुई। फिर, चलते समय, पावेल और मुझे डांट पिलाता

"देखो, आज रात वर्कशाप की खूब मेहनत से सफाई करना। लम्बी मेज को रगड़-रगड़ कर धोना। ऐसा न हो कि कोई दाग-धब्बा रह जाए!"

देखते-न-देखते कारखाने में छुट्टी का समां छा जाता। कारीगर अपनी मेजों को झाड़-पोंछ कर कायदे में लगाते, फिर हम्माम जाकर गुसल करते और जल्दी से सांझ का भोजन पेट में डालते। भोजन के बाद बीयर, मदिरा और खाना लेकर जिखरेव प्रकट होता। उसके पीछे-पीछे एक स्त्री आती, आकार-प्रकार और डील-डौल में पूरी बावनगजी, साढ़े छै फुट ऊंची। जब वह आती तो उसके अनुपात में हमारी सारी कुर्सियां और स्टूल खिलौनों की भांति मालूम होते, यहां तक कि लम्बा सितानोव भी उसके सामने निरा बच्चा सा दिखाई देता। उसकी काठी मजबूत और सुघड़ थी, एक छातियों को छोड़ कर जिनका बेतुका उभार उसकी ठोडी को छूता था। उसकी चाल-ढाल भोंडी और ढीली-ढाली थी। आयु हालांकि चालीस की सीमा लांघ चुकी थी, फिर भी घोड़े ऐसी बड़ी-बड़ी आंखों वाले उसके भावशून्य चेहरे पर अभी तक चिकनाई और ताजगी मौजूद थी और उसका छोटा-सा मुंह बाजारू गुड़िया की भांति रंगा-चुना था। होठों पर हंसी लाकर वह सब से अपना चौड़ा और गर्म हाथ मिलाती, और बेमतलब की बात मुंह से निकालती

"मजे में तो हो न? आज वहुत ठंड है। ओह, तुम्हारा कमरा कितना गंधाता है?—रग-रोगन की गध मालूम होती है। और सव तो ठीक-ठाक है न?"

यो देखने में वह अच्छी लगती—चौडे पाट मे वहने वाली नदी की भाति सवल और शान्त, लेकिन जव वह वोलती तो उवकाई आने लगती। हमेशा वेरस और वेकार की वातें उसके मुंह से निकलती। कुछ कहने से पहले वह अपने गुलावी गालो को फुलाती जिससे उसका चेहरा और भी गोल-मटोल हो जाता।

युवक खिलखिलाते और एक-दूसरे से कानाफूंसी करते:

"औरत हो तो ऐसी,—जाने किस सांचे मे ढालकर खुदा ने इसे तैयार किया है!"

"अच्छी-खासी किसी गिरजे की मीनार मालूम होती है!"

होंठो को भीच कर और हाथों को छातियो के नीचे जोड़ कर वह समोवर के पीछे वाली मेज पर वैठ जाती, और अपनी घोड़े ऐसी भली आँखों से एक-एक करके सव पर नजर डालती।

सभी उसका मान करते, और युवको के हृदय उसे देखकर सहमे-सहमे-से हो जाते। ललचाई नजरों से वे उसके भीमाकार शरीर की टोह लेते, लेकिन उसकी सर्वव्यापी नजर की लपेट मे आते ही उनके गाल लाल हो उठते और वे अपनी गरदन झुका लेते। जिखरेव भी उसके साथ अदव से पेश आता, 'हमारी पडोसिन' कह कर कायदे से उसे सम्वोधित करता और मेज से उठ कर जव कोई चीज उसे देता तो झुक कर दोहरा हो जाता।

"ओह, इतनी तकलीफ क्यो करते हो?" वह अलस भाव से मीठे अन्दाज से कहता।—"सच, तुम मेरे लिए वहुत परेशान होते हो!"

उसके हर अन्दाज से फुरसत का भाव टपकता। उसे कभी भी किसी काम की जल्दी नहीं मालूम होती। उसके हाथ केवल कोहनियों

तब हरकत करते। कारण कि कोहनियां से ऊपर का हिस्सा वह दोनों बाजू कस कर सटाए रहती। उसके बदन से तन्दूर से अभी-अभी निकली ताज़ी पाव रोटी की गंध आती जो दिल व दिमाग पर छा जाती।

बूढ़ा गोगोलेव उसे देख कर उलटा हो जाता और उसकी तारीफ करता कभी न अघाता जिसे वह, गरदन को श्रद्धाभाव से झुकाए, इस तरह सुनती मानो किसी पादरी के मुंह से धर्म-पाठ सुन रही हो। जब कभी वह शब्दों में उलझ जाता तो उसकी इस कमी को वह खुद पूरा कर देती

"अरे नहीं, जवानी में हम इतनी सुन्दर नहीं थीं, यह सौन्दर्य तो खेलने-खाने और अनुभवों में बढ़ती होने के साथ-साथ फूटा है। तीस वर्ष की होते न होते हम बिल्कुल चुम्बक बन गईं, बड़े-बड़े सफेद पोश तक मेरी ताक-झांक में रहते, और एक नवाब साहब तो इतने मुग्ध हुए कि हमको अपनी घोड़ा गाड़ी ही भेंट करने लगे ।"

कापेन्दियूखिन जो अब तक नशे में धुत्त और हाल-बेहाल हो चुका था, तीखी नजर से उसे देखते हुए पूछता

"किस चीज़ के बदले में?"

"यह भी कोई बताने की बात है?" वह कहती।—"निश्चय ही हमारे प्रेम के बदले में।"

कापेन्दियूखिन कुछ सकपका जाता। भुनभुनाते हुए कहता

"प्रेम प्रेम क्या मतलब है तुम्हारा?"

"बहुत बनो नहीं," सहज भाव से वह जवाब देती,—"भला यह कैसे हो सकता है कि तुम्हारे जैसे खूबसूरत आदमी से प्रेम की बारहखड़ी छिपी रहे?"

कारखाना सहकारी की आवाज में डोलने लगता और सितानोव कापेन्दियूखिन के कान में बुदबुदाता

"मूर्ख है या उससे भी बदतर। सच कहता हूँ, ऐसी स्त्री से प्रेम करना जान-बूझ कर जजाल मोल लेना है।"

नशे से उसका चेहरा फक पड़ गया था, कनपटी पर पसीने की बूंदे उभर आई थी और उसकी चतुर-चपल आँखों मे आग की लपटे मानो खतरे का सिगनल दे रही थी। खर्राटे के साथ अपनी भोंडी नाक को घुमाते और पनीली आँखो को ऊँगलियो से पोछते हुए वृद्ध गोगोलेव ने पूछा:

"तुम्हारे कितने बच्चे हुए?"

"केवल एक।"

एक लैम्प मेज के ऊपर लटका था और दूसरा तन्दूर के उधर कोने मे। उनकी धीमी रोशनी उन्ही तक सीमित रहती और कारखाने के कोनो मे गहरा अधेरा छाया रहता जिनमे चेहरे-मोहरे-विहीन आकृतियाँ नजर आती। हाथो और चेहरों की जगह अंधकार के सूने धव्वो को देख कर भूत-प्रेतो की दुनिया का गुमान होता और यह भावना ओर भी जोरों से सिर उभारती कि सन्तो के शरीर, इन धुधले कमरो मे अपने रंगीन कपड़ो को छोड़ कर, किसी रहस्यमय ढग से निकल भागे है। काँच की गेदे ऊपर खींच कर छत में लगे हुको से अटका दी गयी थी और वे, धुवे के वादलो के वीच, नीली-नीली-सी चमक रही थी।

जिखरेव को जैसे चैन नही था। सवकी खातिर-तवाजा करता वह मेज के चारो ओर मडरा रहा था। उसकी गंजी खोपडी कभी एक की ओर झुकती तो कभी दूसरे की ओर। उसकी पतली उँगलियाँ, जिनमे केवल चमड़ी ही दिखाई देती थी, वरावर हरकत कर रही थी। वह अव और भी दुवला हो गया था और उसकी तोते सी नाक और भी नुकीली हो गई थी। प्रकाश के सामने से आड़ा होकर

तब वह गुजरता तो उसके गाल पर नाक की काली लम्बी छाया बन जाती।

गूंजती हुई आवाज में वह कहता

"साथियो, खूब छक कर खाओ और पियो!"

और स्त्री, मालकिन की भांति, गुनगुनाती

"तुमने भी हद कर दी, पड़ोसी! इतना तकल्लुफ भी किस काम का? हरेक के पास उसके अपने हाथ और उसका अपना पेट मौजूद है। जिसमें जितनी समात है, उतना ही तो वह खाएगा।"

"परवाह न करो, साथियो! खूब जी भर कर खाओ!" जिगरेव विचलित स्वर में चिल्लाता।—"हम सब उसी एक खुदा के बन्दे हैं। आओ, मिलकर उसका गुण-गान कर 'हे दयामय' ।"

लेकिन 'ह दयामय' का स्वर आगे न बढ़ पाता। सब खाने-पीने में इतना व्यस्त थे कि 'हे दयामय' बहुत पीछे छूट गए। कापेन्दियूखिन ने अपना हरमोनियम सभाला और युवक कीकनर सलाब्तीन, जो कौवे की भांति काला और गम्भीर था, तम्बरिन से गहरी धन्नाटेदार आवाज निकालने लगा। जो कसर रह गयी उसे तम्बूरिन के इर्द-गिर्द पड़े मजीरा की आल्हादपूर्ण ध्वनि ने पूरा कर दिया।

"इसी नृत्य हो जाय!" जिगरेव ने आदेश दिया। फिर बोला "पड़ोसिन! अब आप भी उठने की कृपा कीजिए!"

"आह, मेरे पड़ोसी!" स्त्री ने एक लम्बी सी सांस ली और अलस भाव से उठते हुए कहा —"तुम भी कितना तकल्लुफ करते हो!"

उठ कर वह कमर के बीचो बीच जाकर ठोस घटाघर की भांति वहां खड़ी हो गयी। किरमिची रंग का चौड़ा घाघरा, पीले

रंग की महीन चोली वह पहने थी और सिर पर लाल रंग का रूमाल बांधे थी।

हरमोनियम की सुरीली आवाज़ आती, उसकी छोटी-छोटी घंटियाँ टुनटुनातीं और तम्बूरिन भारी तथा वेरस उसाँसे छोडती जो सुनने मे वडी वुरी मालूम होती मानो कोई पागल आदमी सुबकियाँ और आहें भरता हुआ दीवार से सिर टकरा रहा हो।

जिखरेव नाचना नही जानता था। न उसे ताल का कुछ ज्ञान था, न सुर का। वस योही अपने पाँव उठाता, चमचमाते जूतो की एड़ियों को फर्श पर ठकठकाता, छोटे डग भर कर वकरी की भांति इधर-से-उधर कूदता। ऐसा मालूम होता मानो उसने किसी दूसरे के पाँव लगा लिए हो या उसके पाँवो ने शरीर का साथ न देने का इरादा कर लिया हो। मकडी के जाले मे फंसी मक्खी या मछियारे के जाल मे फंसी मछली की भाति, वहुत ही भद्दे ढंग से, उसका वदन वल खाता, तुड़ता और मुड़ता। लेकिन सभी, वे लोग भी जो नशे मे धुत्त थे, वड़े ध्यान से उसकी इस उछल-कूद का अनुसरण करते। उनकी आँखे, एकटक, उसके चेहरे और हाथो पर जमी रहतीं। जिखरेव के चेहरे का भाव इतनी तेजी से वदलता कि देख कर अचरज होता: कभी कोमल और लजीला, कभी गर्व से भरा, कभी तेज और तीखा, कभी चिंगारियाँ-सी छोडता। सहसा ऐसा मालूम होता जैसे किसी चीज ने उसे आहत कर दिया हो—दर्द से वह चीख उठता और अपनी आँखे वंद कर लेता। जव वह आँखें खोलता तो गहरी उदासी मे डूवा दिखाई देता। वह अपनी मुट्ठियाँ भींच लेता और रेंगता हुआ स्त्री के पास पहुँचता। फिर, फर्श पर पाँव पटक कर घुटनों के वल वैठते हुए वह वाँहे फैलाता और भौंहे उठा कर प्रेम मे पगी मुसकराहट का उसे अर्घ्य चढाता। गरदन झुका कर वह

उसकी ओर देखती, मुसकरा कर उसे कृतार्थ करती, और अपने शान्त अन्दाज में उसे चेताती

"यह क्या, पड़ोसी? इस तरह अपने साथ ज्यादती न करो!"

मोम की भांति पिघल कर वह अपनी आँखें बन्द करने का प्रयत्न करती, लेकिन उसकी सिक्काशाही आँखें इतनी बड़ी थीं कि बंद होने से इन्कार कर देतीं, और इसके फलस्वरूप पड़ी झुरियाँ उसके चेहरे को केवल बदनुमा बनातीं।

नाचने के मामले में वह भी काफी कच्ची थी। उसका भारी-भरकम शरीर केवल धीरे-धीरे झूमता और बिना आवाज किए इधर से उधर थिरकना जानता था। उसके बाएं हाथ में एक रूमाल था जिसे वह अनमने भाव से हिलाती। उसका दाहिना हाथ कूल्हे से चिपका रहता और ऐसा मालूम होता मानो वह कोई भीमाकार जग हो।

और जिसरेव इस बुत-बरोला स्त्री के चारों ओर मंडराता रहता। उसके चेहरे पर विरोधी भाव आते और एक-दूसरे को काटते हुए विलीन हो जाते। ऐसा मालूम होता मानो वह अपने भीतर एक साथ दस आदमी छिपाए हो और उनमें से प्रत्येक अपना एक अलग स्वभाव रखता हो एक संकोची और छुईमुई की भांति लजीला, दूसरा एकदम जंगली और डरावना, तीसरा खुद डरा और सहमा हुआ, ऐसा मालूम होता मानो इस घिनौनी हिडिम्बा के चंगुल से निकल भागने के लिए हाथ पांव पटकते हुए चिचिया रहा हो। सहसा एक दूसरा ही चेहरा नजर आता—घायल कुत्ते का चेहरा जिसके दांत निकले थे और जिसका बदन रह-रह कर बल खा रहा था। यह बदरंग और भद्दा नाच देख कर मेरा हृदय भारी हो गया और सैनिकों, बावर्चियों, धोबिनों तथा कुत्ते-कुत्तियों के निहंग घिनौनेपन की मुझे याद आयी।

सिदोरोव के शान्त शब्द मेरे दिमाग मे घूमते:

"ऐसी चीजों के वारे मे सभी भूठा ढोग रचते है। उन्हे शर्म मालूम होती है, क्योकि असल मे प्रेम-व्रेम कुछ नही होता, केवल मौज की खातिर वे यह सब करते है।"

मेरे मन मे यह वात नहीं जमती कि 'ऐसी चीजों के वारे मे सभी भूठा ढोग रचते है'। क्या रानी मारगोट भी भूठा ढोग रचती थी? और जिखरेव?—निश्चय ही उसे ढोंगियो की पांत मे नहीं रखा जा सकता। और मुझे यह भी मालूम था कि सितानोव राह-चलती किसी हरजाई से प्रेम करता था और इस प्रेम के वदले मे वह एक शर्मनाक वीमारी का शिकार भी हो गया था। उसके साथियों ने सलाह दी कि वह उस हरजाई को मार-पीट कर ठिकाने लगा दे, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया, उल्टे एक कमरा किराये पर लेकर उसे दे दिया, डाक्टर से उसका इलाज कराया, और उसके वारे मे वाते करते समय वह हमेशा भारी लगाव और कोमलता का परिचय देता था।

लम्बे-चौडे डील-डौलवाली स्त्री अभी भी मटक रही थी, और अपने हाथ मे लिए रूमाल को हिला रही थी। उसके चेहरे पर वही एक पेटेन्ट मुसकान जडी थी। जिखरेव भी, इलहामी अन्दाज मे, उसके इर्द-गिर्द उछल रहा था। उन्हें देख कर मुझे खयाल आया: क्या यह घोडनी भी उसी हौवा की औलाद है जिसने खुद खुदा तक को चकमा दिया था! मेरा हृदय घृणा से भर गया।

भयावनी प्रतिमाएँ, आकृति और चेहरे-मोहरे से शून्य, अधेरे कोनो मे से अभी भी झाँक रही थी, खिडकियो से वाहर अधेरी रात घिरती आ रही थी और कारखाने के ऊमस-भरे कमरो के लैम्प अंधेरे को दूर करने के वजाय उसे और भी घना वना रहे थे। पाँवों की थपथपाहट और आवाजो की भुनभुनाहट के वीच हाथ-मुंह धोने के

ताम्बे के बरतन के नीचे रखी बाल्टी में पानी के गिरने की टपाटप आवाज भी सुनाई दे रही थी।

पुस्तकों में चित्रित जीवन से यह सब कितना भिन्न था— भयानक रूप से भिन्न! शीघ्र ही सब झूमने लगे। तभी सोपन्दियुग्नि ने हरमानियम को सलाउतीन के हाथों में पटका और चिल्ला कर बोला

"हां तो साथियो, अब अगियो बताली नाच के लिए तैयार हो जाओ!"

वह बालक स्मिगानोव की भांति नाचता था, ऐसा मालूम होता मानो हवा में उड रहा हो। पावल ओदिन्त्सोव और सोरोकिन के पांव की थापों ने भी तेजी पकडी। यहां तक कि तपेदिक का मारा दावीदोव भी बीच में आ कूदा। धूल और धुवे, वोद्का और जले हुए मासेजों की चमडे ऐसी तीखी गंध से नाक खांसता और खखारता, और इसके बाद फिर थिरकने लगता।

नाचने, गाने और हा-हा-हो-ही का यह सिलसिला चलता रहा। ऐसा मालूम होता मानो वे जीवन की इस घडी को आह्लादपूर्ण बनाने पर तुले हों और एक-दूसरे को उकसाते हुए जिन्दादिली, चपलता और सहनशक्ति की कसौटी पर कस रहे हों।

सितानोव, नशे में धुत्त, एक एक के पास जाकर लडखडाते से स्वर में पूछता

"जरा बताओ तो सही, इस घोडनी के प्रेम में वह कैसे फंस गया?"

लारिओनोविच अपने कडियल कंधों को बिचकाता। जवाब में कहता

"क्यों, इसके पास क्या वह चीज नहीं है जो अन्य स्त्रियों के पास है? पर तुम क्या औंधे मुह गिरे जा रहे हो!"

और जिनके बारे मे वे बातें कर रहे थे, इस बीच न जाने कब वे दोनों गायब हो गए। और मै जानता था कि जिखरेव दो-तीन दिन से पहले नहीं लौटेगा। लौटने पर हम्माम में जाकर पहले वह गुसल करेगा और फिर, करीब दो सप्ताह तक, अपने कोने में जम कर बैठ जाएगा। किसी से न बोलेगा, न चलेगा, बस चुपचाप और अकेला, रोब के साथ अपने काम मे जुटा रहेगा।

"क्या वे चले गये?" उदासी मे डूबी अपनी भूरी नीली ऑखो से समूचे कमरे को छानते हुए सितानोव ने कहा। उसका चेहरा अभी से बूढा हो गया था, और वह जरा भी खूबसूरत नही मालूम होता था, लेकिन उसकी ऑखें बहुत ही स्वच्छ और भली थीं।

वह मेरे साथ मित्रता से पेश आता। इसका कारण कविताओ से भरी मेरी नोटबुक थी। वह खुदा मे विश्वास नही करता था, और सच तो यह है कि एक लारिओनोविच को छोड़ यहाँ ऐसा और कोई नही था जिसके बारे मे यह कहा जा सके कि वह खुदा मे विश्वास करता है, खुदा के साथ उसकी लौ लगी है। खुदा के बारे मे भी वे सब उसी तरह ताने-तिग्नो के लहजे मे बाते करते जैसे कि नौकर अपने मालिको के बारे मे बाते करते है। लेकिन जब वे दोपहर या सॉझ का भोजन करने बैठते तो क्रास का चिन्ह बनाना न भूलते, और रात को सोने से पहले बिला नागा खुदा का नाम लेते, उसके भजन गाते। रविवार के दिन, सब के सब, गिरजा जाते।

सितानोव इनमे से एक भी बात नहीं करता और इसी लिए सब उसे नास्तिक कहते।

"खुदा जैसी कोई चीज नही है," वह अपनी बात पर बल देते हुए कहता।

"खुदा नही है तो यह सारी दुनिया पैदा कैसे हुई?"

"मुझे नही मालूम।"

एक दिन मैने उससे पूछा

"यह तुम कैसे कहते हो कि खुदा नही है?"

"देखो न, खुदा का मतलब है ऊचाई," अपनी लम्बी बाँहो को सिर से ऊँचा उठाते हुए उसने कहा और फिर फर्श की ओर इशारा करते हुए बोला "और मानव का मतलब है निचाई। क्यो, ठीक है न? लेकिन धर्मग्रथ कहते है कि खुदा ने मानव को अपनी छवि के अनुरूप बनाया है। अब तुम्ही बताओ, गोगोलेव म किसकी छवि दिखाई दती है?"

मुझसे कोई जवाब देते न बना। गदा और पियक्कड गोगोलेव, इतना बूढा हो जाने के बाद भी, 'हस्तलाघव' की कुटेव नही छोडता था। रानी की बहन, येरमोखिन और व्यात्का निवासी वह मैनिक— एक-एक कर सभी मेरी आँखो के सामने घूम गए। इन लोगो में खुदा की छवि का भला कौन सा अश देखा जा सकता था?

"सभी इन्सान सूअर है!" सितानोव कहता और फिर तुरत ही मुझे सभालता

"लेकिन चिन्ता न करो, मक्सिमोविच, अच्छे लोग उनमें भी मिल जाएगे, निश्चय ही मिल जाएगे!"

इसके साथ बठने में मुझे जरा भी परेशानी न मालूम होती। जब कोई ऐसी बात आती जिसके बारे में वह कुछ नही जानता तो खुले हृदय से उसे स्वीकार करता।

"म नही जानता," वह कहता,—"मने कभी इस बारे में नही सोचा।"

यह भी उसकी एक असाधारण विशेषता थी। जिन लोगो से म अब तक मिल चुका था, वे सब यही दिखाते कि कोई चीज

ऐसी नहीं है जिसकी उन्हें जानकारी न हो। हर चीज के बारे में वे राय देते, भले या बुरे फतवे कसते।

उसके पास भी एक नोटबुक थी जिनमें हृदय को मथने वाली अत्यन्त प्रभावशील कविताओं के साथ-साथ ऐसी तुकबंदियाँ भी दर्ज थीं जिन्हें पढ़ कर गाल जलने लगते और आँखें शर्म से नीची हो जातीं। यह देख कर मुझे बड़ा अजीब मालूम होता। जब मैं उससे पुश्किन के बारे में बातें करता तो वह 'गावरीलियादा' की ओर इशारा करता जिसे उसने अपनी कापी में उतार रखा था।

"पुश्किन? हल्का-फुल्का कवि है। लेकिन बेनेदीक्तोव,—ओह, मक्सिमोविच, उसे तुम आँखों की ओट नहीं कर सकते,—वह बरबस ध्यान खींचता है। देखो न..."

वह अपनी आँखें बंद कर लेता और धीमे स्वर में गुनगुनाता:

उन्नत उरोज उसके
अद्‍भुत, अति सुन्दर...

निम्न पंक्तियों को वह बड़े ही प्रेम और गर्वपूर्ण आह्लाद से जोर देते हुए बार-बार दोहराता:

उन्नत उरोज
सजग चौकन्ने प्रहरी
हृदय की गुप्त निधि के!

"क्यों कुछ समझ में आया?"

मुझे यह स्वीकार करते बड़ा संकोच मालूम होता कि मैं नहीं समझता वह क्यों इतना खुश हो रहा है।

कारखाने में मेरे जिम्मे कोई बहुत उलझन पैदा करने वाला काम नहीं था। तड़के ही, उस समय जब कि सब सोते होते, कारीगरों की चाय के लिए मैं समोवर गर्म करता। जागने पर रसोई में जाकर सब चाय पीते और मैं तथा पावेल कमरों को झाड़ते-बुहारते, अंडों की सफ़ेदी से ज़र्दी अलग करते जो रंग में मिलाने के काम आती, और इसके बाद मैं दुकान के लिए रवाना हो जाता। साँझ को मैं रंग घोल कर रोगन तैयार करता और अपने उस्तादों के पास बैठ कर उनके काम करने के ढंग का 'अध्ययन' करता। शुरू-शुरू में तो इस अध्ययन में मेरा बड़ा जी लगता, लेकिन शीघ्र ही मैंने अनुभव किया कि करीब-करीब सभी कारीगर दुकान में काम करना पसंद नहीं करते, और यह कि एक असह्य कुंठा उन्हें भीतर ही भीतर खाए जा रही है।

मेरा काम जल्दी ही निबट जाता और साँझ के खाली समय में मैं कारीगरों को अपने जहाज़ी जीवन के किस्से या पुस्तकों में पढ़ी कहानियाँ सुनाता। इस प्रकार, एकदम अनजान में ही, कारखाने में मैंने एक विशेष स्थान ग्रहण कर लिया,—एक तरह से मैं कारखाने का किस्सागो और पुस्तकें पढ़ कर सुनानेवाला बन गया।

मुझे यह मालूम करने में देर न लगी कि मैंने जितना कुछ देखा और जाना है, उतना इन लोगों ने नहीं। इनमें से अधिकांश, एकदम कच्ची उम्र में ही, अपने धंधा के तंग पींजरों में बंद हो गए थे और तब से उसी में बंद चले आ रहे थे। कारखाने में जितने भी लोग थे, उनमें केवल जिखरेव ही एक अकेला ऐसा था जो मास्को हो आया था और बड़े रोब के साथ, भौंहों में बल दे कर, वह इसका जिक्र करता था

"मास्को पर आँसुओ का कोई असर नहीं होता। वहाँ एकदम चौकस रहना पडता है। जरा चूके नहीं कि गए!"

अन्य किसी को गूया या व्लादिमीर मे आगे पाँव रखने का कभी मौका नही मिला था। मै जब कज़ान का ज़िक्र करता तो वे पूछते:

"क्या वहाँ काफ़ी रूसी आबाद है? और वहाँ गिरजे भी है या नहीं?"

वे पेर्म को साइबेरिया समझते और उनके लिए यह विश्वास करना कठिन हो जाता कि साइबेरिया युराल के भी उस पार है।

"युराल की पर्च और स्टर्जन मछलियाँ वहाँ से—कास्पियन सागर से—ही तो आती है? इसका मतलब यह कि युराल कास्पियन सागर मे ही कहीं होगा।"

कभी-कभी ऐसा मालूम होता कि वे मुझे जान-बूझ कर चिढा रहे है। मिसाल के लिए ऐसे मौको पर जब वे कहते कि इंगलैड समुद्र के बीच एक जज़ीरा नही बल्कि उस पार है, और यह कि नैपोलियन का जन्म कलूगा के किसी कुलीन घराने में हुआ था। जब मै उन्हे खुद अपनी आँखों देखी सच्ची चीज़ों के बारे मे बताता तो वे विरले ही यकीन करते, लेकिन रोगटे खड़ी कर देने वाले किस्से और पेचीदा प्लाट वाली कहानियाँ वे बड़े चाव से सुनते। यहाँ तक कि बडे-बड़े लोग भी सत्य की बजाय काल्पनिक कहानियाँ ज्यादा पसंद करते। मै साफ देखता कि कहानी जितनी ही अधिक अनहोनी तथा अघट घटनाओं से भरी होती, उतना ही अधिक ध्यान से वे उसे सुनते। मोटे तौर से यह कि वास्तविकता में उनकी कोई दिलचस्पी नही थी। सब भविष्य के रंगीन सपने देखना और वर्तमान के भोंडेपन तथा गरीबी पर भविष्य की सुनहरी चादर डाल कर उसे आँखो की ओट करना चाहते।

उनका यह रवैया मुझे बड़ा अजीब मालूम होता। इसलिए और भी अधिक कि सत्य और कल्पना को एक-दूसरे से अलग करके देखने की भावना मुझमें तेज़ी से घर करती जा रही थी। मैं उस भेद को अब तेज़ी से पकड़ने लगा था जो मुझे आए दिन के जीवन और किताबी जीवन के बीच दिखाई देता था। मेरी आँखों के सामने असली, जीते-जागते, लोग मौजूद थे, लेकिन किताबों के पन्नों में वे कहीं नहीं दिखाई देते थे,—किताबों में न कहीं स्मूरी नजर आता था, न कोयला झोंकने वाला याकोव, न अलेक्सान्दर, न जिखरेव, न नतालिया जैसी कपड़े धोने वाली स्त्रियां।

दावीदोव के ट्रंक में पोमियालोव्स्की की कहानियों का एक फटा हुआ सा संग्रह, बुल्गारिन कृत "ईवान विजीगिन" और बैरन ब्राम्बियस की रचनाओं का एक संग्रह पड़ा था। ये सब पुस्तकें मैंने कारीगरों को पढ़ कर सुनाईं और वे सुनकर बहुत खुश हुए। लारिओनोविच ने कहा

"किताबें पढ़ने से तू तू मैं-मैं का शोर और आपस में लड़ना-झगड़ना सब साफ हो जाता है, और यह एक अच्छी बात है।'

मैं अब किताबों की टोह में घूमता, और जो भी पुस्तक मेरे हाथ लगती उन्हें पढ़ कर सुनाता। सांझ की वे बैठकें कभी नहीं भूलतीं। कारखाने में आधीरात का सन्नाटा छाया रहता, छत में लटकी कांच की गेंदें सफेद शीतल सितारों की भांति चमकतीं और उनकी किरणें मेज पर झुके हुए गंजे या बिखरे हुए बालों वाले सिरों पर पड़ती रहतीं। शान्त और गम्भीर भाव से वे पुस्तक सुनते, बीच-बीच में लेखक या पुस्तक के नायक की तारीफ में यथोचित शब्द कहते जाते। पुस्तक सुनते समय वे एकदम बदल जाते, उनके सहमे और ध्यानमग्न चेहरे बहुत ही भोले और भले मालूम होते। वे दिन से सर्वथा भिन्न रूप धारण कर लेते। मैं उनसे, और

वे मुझ से, पूर्ण अपनत्व का अनुभव करते। मुझे ऐसा मालूम होता जैसे मैने अपनी जगह पा ली हो।

एक दिन सितानोव बोला,

"पुस्तके वसंती हवा के उस पहले झोंके के समान है जो बंद कमरे की खिडकी खोलने पर शरीर के रोम-रोम मे समा जाता है।"

पुस्तके पाना कठिन काम था। पुस्तकालय से पुस्तके मिल सकती थी, लेकिन यह चीज हमारी कल्पना से बाहर थी। ऐसी हालत मे एक ही रास्ता था। वह यह कि जो भी मिलता, उसी से भिखारी की भाति पुस्तके माग कर काम चलाता। एक बार आग बुझानेवाली दमकल के मुखिया ने मुझे लेर्मन्तोव की कविताओ की एक पुस्तक दी। कविता भी कितनी शक्तिशाली चीज़ होती है, और किस हद तक वह लोगो को प्रभावित कर सकती है, यह मैने इस पुस्तक को पढने के बाद बहुत ही सजीव रूप मे जाना।

मुझे अच्छी तरह याद है कि उस समय जब मैने "राक्षस" शीर्षक कविता पढनी शुरू की तो सितानोव ने उचक कर पहले किताब पर नजर डाली, फिर मेरे चेहरे की ओर देखा। इसके बाद उसने अपना ब्रुश उठा कर नीचे रख दिया और अपनी लम्बी बाँहो को घुटनो के बीच खोस कर, चेहरे पर मुसकराहट लिए, हिडोले की भाति आगे-पीछे झूलने लगा। झकोलो के साथ-साथ उसकी कुर्सी भी चरचराती जाती।

"सुनो भाइयो, चुप होकर सुनो!" लारिओनोविच कहता और अपने हाथ का काम अलग रखते हुए वह भी सितानोव की मेज के पास आ जाता जहाँ मै पुस्तक पढ कर सुना रहा था। कविता मेरे हृदय के तार झनझना देती, मेरी आवाज भर्रा जाती और आँखो मे आँसू आ जाने की वजह से अक्षरो को

साफ-साफ देखना मुश्किल हो जाता। लेकिन कविता से भी अधिक प्रभावित करता मुझे कमरे का निस्तब्ध वातावरण। ऐसा मालूम होता मानो चारों ओर की हर चीज गहरी उसास लेकर फैलती और बढ़ती जा रही हो, मानो कोई शक्तिशाली चुम्बक इन लोगों को मेरी ओर खींच रहा हो। पहला भाग समाप्त करते न करते सभी कारीगर अपनी जगह से उठ कर मेज़ से सट जाते। उनके चेहरे मुसकराते और भौंहें तन जातीं, और अपनी बाँहों को वे एक-दूसरे के गले में डाल लेते।

"रुको नहीं, पढ़े जाओ," पुस्तक के पन्नों पर मेरा सिर धकेलते हुए जिखरेव कहता।

जब मैं पढ़ना समाप्त करता तो वह पुस्तक को अपने हाथ में उठा लेता, आँखों के पास ले जाकर उसका नाम पढ़ता और फिर उसे अपनी बगल में खोंसते हुए कहता

"तुम्हें इसे एक बार फिर पढ़ना होगा। कल सुनाना। तब तक पुस्तक को मैं अपने पास चौकस रखूँगा।"

यह कह कर वह खिसक जाता, अपनी मेज़ की दराज़ खोलता, लेरमोंतोव को उसमें बंद कर बाहर से ताला लगा देता और इसके बाद वह फिर अपने काम में जुट जाता। कारखाने में एक अजीब निस्तब्धता छा जाती। सब चुपचाप अपनी-अपनी जगहों पर पहुँच जाते। सितानोव खिड़की के पास जाकर निश्चल खड़ा हो जाता। उसका सिर खिड़की के शीशे से सटा रहता। जिखरेव एक बार फिर अपना ब्रुश नीचे रखता और कठोर स्वर में कहता

"खुदा के बंदो, यही है वह चीज़ जिसे मैं जीवन कहता हूँ,—हाँ, जीवन इसी को कहते हैं!"

वह अपने कंधे बिचकाता, सिर नीचे झुका लेता और फिर कहता

"नरक" की तस्वीर क्या मैं नहीं बना सकता? मक्खी-सा काला रंग, बेडौल बदन, आग की लपटों जैसे पर — एक दम सिन्दूरी, और चेहरा, हाथ और पाँव सफेद, कुछ नीलापन लिए हुए, ठीक वैसे ही जैसे चांदनी रात में बर्फ होती है!"

भोजन के समय तक, बेचैनी से भरा रहता, वह अपने स्टूल में धंसा रहता। उँगलियों से मेज बजाते हुए वह शैतान के बारे में, औरतों और गिरजों के बारे में, और स्वर्ग तथा मनुष्यों के गुनाहों में फंसने के बारे में; न जाने क्या-क्या बुदबुदाता रहता।

"इसमें जरा भी झूठ नहीं!' वह दम देकर कहता। —"जब अन्त तक पाप में डूबी स्त्रियों के साथ मुंह काला करने से नहीं चूकते तो शैतान को भला-बुरा कहना निश्चय ही फिजूल है। उसका तो काम ही रंगीन डोरे डाल कर अच्छी आत्माओं को अपने जाल में फंसाना है।"

जवाब में कोई कुछ न कहता। शायद अन्य भी, मेरी ही भांति, अभी तक इतने मन्त्रमुग्ध थे कि उन्हें बोलना अखरता था। वे काम कर रहे थे, लेकिन बेमन से, घड़ी पर एक आँख जमाए; और नौ का घंटा बजते ही सब तुरत काम बंद कर देते।

सितानोव और जिखरेव बाहर सहन में निकल आते। मैं भी उनके पास पहुंच जाता। सितानोव सिर ऊंचा उठा कर तारों की ओर देखता, और फिर गुनगुनाने लगता:

है यह कारवाँ
भटका हुआ, खोया हुआ
अथाह शून्य के विस्तार में!

"जरा सोचो, कैसी-कैसी पक्तियाँ लिखते हैं!"
और तेज सर्दी में कुड़-मुड़ाते हुए जिखरेव कहता:

"नहीं, मुझे तो कुछ याद नहीं पडता—कुछ याद नहीं। लेकिन दिखाई सब कुछ पडता है। कितनी अजीब बात है कि मानव शैतान पर भी तरस खाने के लिए बाध्य कर देता है। क्या, ठीक कहता हू न?"

"हाँ," सितानोव सहमति प्रकट करता।

"बस, यही है मनुष्य!" जिखरेव कभी न भूलने वाले अदाज़ में कहता।

लौट कर फाटक पर पहुचते समय वह मुझे ताकीद करता

"देखो, दुकान पर इस किताब का किसी से ज़िक्र तक न करना। निश्चय ही यह उन किताबो में से है जो ज़ब्त हो चुकी है।"

यह सुन कर मेरी खुशी का वारपार न रहता। सो ऐसी होती है वे वर्जित पुस्तकें जिनके बारे में पाप-स्वीकारोक्ति के समय धर्म-पिता ने मुझसे पूछ-ताछ की थी।

साझ के भोजन के समय भी सब खोये-खोये-से रहते। वह चहल-पहल और नोक-झोक गायब हो जाती जो नित्य दिखाई देती थी। ऐसा मालूम होता जैसे किसी अनहोनी और भारी घटना ने सब के दिमाग़ो को उलझा लिया हो। भोजन के बाद जब अन्य सब सोने के लिए चले जाते तो जिखरेव पुस्तक निकालता और मुझसे कहता

"यह लो, इसे फिर पढ कर सुनाओ। लेकिन धीरे-धीरे पढना, बिना किसी उतावली के!"

भनभनाहट सुन उनमें से कितने ही अपने बिस्तरो से चुपचाप उठते और मेज़ के पास आकर उसके इर्द-गिर्द फर्श पर ही पसर जाते। उनके बदन अधनगे होते और घुटनो को मोडकर वे बैठे रहते।

और जब मैं पढ़ना खत्म करता तो जिब्रेव, अपनी उँगलियों से मेज को बजाते हुए, एक बार फिर कह उठता:

"इसे कहते हैं जीवन! ओह् रावान, मेरे रावान... तेरे साथ भी बहुत बुरी बीती, मेरे भाई!"

सितानोव मेरे कंधों पर से उचक कर उन पंक्तियों को पढ़ने की कोशिश करता जिन्हें सुन कर वह उछल पड़ा था। फिर कहता:

"इन्हें मैं अपनी नोटबुक में उतार लूँगा।"

पुस्तक अपने हाथ में लेकर जिब्रेव उठता और अपनी मेज की ओर चल देता। लेकिन एकाएक रुक कर आहत और विचलित से स्वर में कहता:

"जीवन की दलदल में हम उन पिल्लों की भाँति घिसटते हैं जिनकी आँखें कभी नहीं खुलतीं। क्यों और किस लिए, यह कोई नहीं जानता। न खुदा को हमारी जरूरत है, न शैतान को। और कहा यह जाता है कि हम खुदा के बन्दे हैं। जीव खुदा का बन्दा था, और खुदा उससे बातें करता था, उसकी देख-भाल करता था। यही बात मूसा के बारे में भी थी। लेकिन हम... जरा बताओ तो सही कि हम किस खेत की मूली हैं?"

किताब को वह मेज की दराज में बंद कर देता और कपड़े पहनते हुए सितानोव से कहता:

"शराबखाने चलते हो?"

"नहीं, मैं अपनी छोकरी के पास जा रहा हूँ," निश्चल आवाज में वह जवाब देता।

उनके चले जाने के बाद मैं दरवाजे के निकट फर्श पर लेट जाता। पावेल ओदिन्तसोव भी वहीं, मेरे बराबर में ही, पसर जाता। कुछ देर तक तो वह खाँसता-कराहता और करवटें बदलता, फिर एकाएक दबे स्वर में रोना शुरू कर देता।

"क्यो क्या बात है?"

"अब नहीं सहा जाता," वह कहता,—"मुझे इन सब पर रोना आता है। चार साल से मै इनके साथ जीवन बिता रहा हूँ। कुछ भी मुझमें छिपा नहीं है। सभी को मै अच्छी तरह जानता हूँ।"

मुझे भी इन लोगो पर तरस आता और मेरा हृदय दुख से उमडने-घुमडने लगता। काफी रात बीत जाती, लेकिन हमारी आखें नहीं लगतीं। देर तक, फुसफुसा कर, हम उनके बारे म बातें करते रहते। उनमें से हरेक के हृदय में छिपी भलमनसाहत और अच्छाइया की हम याद करते और, दया के वचकाने आवेग में, न जाने कितने नये गुणा का आविष्कार कर डालते।

पावेल ओदिन्तसोव और मै गहरे मित्र बन गए। आगे चल कर वह बहुत ही बढिया कारीगर सिद्ध हुआ, लेकिन इस धधे में वह ज्यादा दिनो तक काम नही कर सका। तीस वष का होते न होते वह पक्का पियक्कड बन गया। इसके कुछ समय बाद मास्को की खित्रोव मार्केट में वह मुझे दिखाई दिया, एक आवारा के रूप में। फिर कुछ ही दिन बीते होंगे कि सुनने में आया, मियादी बुखार ने उसकी जान ले ली। कितने ही अच्छे लोगा से इस जीवन में मेरा वास्ता पडा और उनके जीवन को, बिला किसी मकसद के, धूल म मिलते हुए मने देखा। उनकी जब याद आती है तो रूह कांप उठती है। यो मरने-खपने को तो लोग सभी जगह मरते खपते ह। और यह स्वाभाविक भी है। लेकिन जिस तेजी और बेतुके ढग से वे रूस में मरते-खपते और बरबाद होते ह, उतने अन्य कहीं नहीं ।

उन दिनो पावेल गोल मटोल चेहरे वाला लडका था। मुझसे कोई दो साल बडा होगा। चुस्त, चतुर और ईमानदार। मलाबार

की प्रतिभा से सम्पन्न। बिल्ली, कुत्ते और पक्षियों के चित्र बनाना तो जैसे वह माँ के पेट में ही सीख कर आया था। साथी-कारीगरों के व्यंग-चित्र बनाने में वह कमाल करता और हमेशा परदार पक्षियों के रूप मे वह उन्हें चित्रित करता। सितानोव को वह उदासी में डूबा खुटबढ़ई पक्षी बनाता जो एक टाँग पर खड़ा होता, जिखरेव को वह एक ऐसा मुर्गा समझता जिसकी कलगी छिनरा गई थी और खोपड़ी के बाल झड़ गए थे, और मरियल दावीदोव को वह उदास पीविट पक्षी के रूप मे चित्रित करता। लेकिन सब से बढ़िया व्यग-चित्र बूढ़े गोगोलेव का होता जो खुदाई के बेल बूटे बनाता था। उसे वह चमगादड़ के रूप मे चित्रित करता—खूब बड़े-बड़े कान, डरावनी नाक और छोटे-छोटे पाँव जिनमे छै-छै नुकीले नाखून निकले होते। और उसके गोल चेहरे मे, जिसे वह काला पोत देता, आँखो के सफेद घेरे दूर से दिखाई देते। घेरो के भीतर पुतलियाँ बनी होती। ऐसा मालूम होता मानो लालटेन उलट कर रख दी गयी हो जिससे उसका चेहरा और भी उचक्का तथा शैतानी से भरा दिखाई देता।

कारीगरो को जब वह अपने व्यग-चित्र दिखाता तो वे बुरा न मानते, लेकिन गोगोलेव का चित्र उन सभी को घिनौना मालूम होता। उसे देख कर वे कहते:

"अच्छा यही है कि इसे फाड डालो। अगर बूढे ने इसे देख लिया तो तुम्हारी जान खा जाएगा।"

यह बूढा जो ऊपर से नीचे तक गदगी और कमीनेपन मे डूबा था और चौबीसो घटे नशे मे धुत्त रहता था, देवता बनने का ढोग रचता, दूसरो की कुत्सित निन्दा करते कभी न थकता, दुकान के मुशी के पास जा कर कारखाने के लोगो की चुगली

जाता। मालकिन की भतीजी से दुकान के मुंशी की शादी होने वाली थी और इसलिए वह अभी से अपने आप को कारखाने और उसमें काम करने वाले सभी लोगों का मालिक समझता था। सभी उससे डरते थे और घृणा भी करते थे, और इसी वजह से उसके गुर्गे गोगोलेव की भी सब दूर से ही कन्नी काटते थे।

पावेल ने तो जसे इस बूढे को परेशान करने का इरादा ही कर लिया था। एक क्षण के लिए भी वह गोगोलेव का पीछा न छोडता, और उसे जरा भी चैन से न बैठने देता। इस काम म मैं भी काफी दक्षता का परिचय देता और उसका खूब हाथ बटाता। जब भी हम कोई हरकत करते, जो हमेशा कष्टदायक और अनगढ होती, तो कारखाने में सभी को उसका पता चल जाता। कारीगर मन-ही-मन खुश होते, बल्कि चेतावनी देते

"संभल कर रहना! 'कुज्मा तिलचट्टा' तुम्हें छोडेगा नहीं!"

दुकान के मुंशी को कारखाने में सब 'कुज्मा तिलचट्टा' कहते थे।

इन चेतावनियों को हम सुना-अनसुना कर देते। बूढा गोगोलेव जब सोता होता तो हम अक्सर उसका मुंह रंग देते। एक बार उस समय जब कि वह नशे म धुत्त पडा था, हमने उसकी पकौडे-सी नाक पर सुनहरी रोगन कर दिया जो पूरे तीन दिन तक नाक के रोमों में समाया रहा। लेकिन हमारी शैतानी हरकतों से जब उसके सिर पर गुस्से का भूत सवार होता तो मुझे जहाज़ और व्यात्का के दुइया सैनिक की याद हो आती, मेरी आत्मा मुझे कचोटती और एक घडी चैन न लेने देती। बूढा होने के बावजूद गोगोलेव दम-खम म हम से बढ कर था। वह अक्सर औचक में हमें पकड लेता और इतनी मरम्मत करता कि तबीयत हरी हो जाती। इतना ही नहीं, बल्कि पीटने के बाद, मालकिन के पास जाकर वह हर बात की शिकायत भी करता।

मालकिन को भी नशे की लत थी, और नशे की तरंग मे हमेशा खिलखिलाती और मग्न रहती थी। अपना फुसफुसा हाथ मेज पर पटक कर और चिल्ला कर वह हमे डराने का प्रयत्न करती। कहती:

"शैतान के बच्चो, तुम अपनी शरारत से बाज़ नहीं आओगे? इतना भी नही देखते कि वह वृद्ध आदमी है, और तुम्हे उसकी इज्जत करनी चाहिए। बोलो, उसके शराब के गिलास में स्याही किसने उंडेली?"

"हमने!"

मालकिन ने आँखे मिचमिचा कर देखा।

"हाय भगवान, कैसे शैतानो से पाला पड़ा है। देखो न, किस तपाक से कहते है कि हमने! क्यो, ऐसा कहते तुम्हारी जीभ कट कर नही गिर जाती? क्या तुम्हें इतना भी नहीं मालूम कि बड़े-बूढो की इज्जत करनी चाहिए?"

उस समय तो वह हमे धता बताती और रात को दुकान के मुशी से हमारी शिकायत करती। मुंशी कठोर स्वर मे मुझे डांटता:

"यह क्या हरकत है? तुम पुस्तके पढते हो, बाइबल तक तुम पढ़ लेते हो, फिर भी इस तरह की हरकतें करने से बाज नही आते? जरा सभल कर चलो भाई, नही तो नुक्सान उठाओगे!"

मालकिन का न कोई संगी था न साथी, अकेले सूना जीवन बिताती और उसे देख कर बडी दया आती। कभी-कभी, नशे की मात्रा कुछ ज्यादा हो जाने पर, वह खिडकी पर बैठ जाती और उदास तथा उम्र की मार से डावांडोल स्वर मे गुनगुनाती:

नही कोई ऐसा जो पूछे अपनी बात
नहीं कोई ऐसा जो खोले दिल की गांठ

एक दिन मैने देखा कि दूध से भरा जग हाथ में लिए वह ज़ीने से नीचे उतर रही थी। सहसा उसके घुटनो ने जवाब दे

दिया। वह वहीं ढेर हो गई और एक मोटी में दूसरी मोढ़ी पर गेंद की भांति उछलती नीचे आने लगी। अपने फटे हुए हाथों में वह जग को मजबूती से पकड़े थी, दूध छलक छलक कर उसके कपड़ों पर गिर रहा था, और वह जग का बाकायदा डाट पिला रही थी

"देखता नहीं शैतान, किस बुरी तरह छलक रहा है?"

वह मोटी ताजी थी, किन्तु मुलायम और फुसफुसी थी, उस बूढ़ी बिल्ली की भांति जिसके लिए चूहे पकड़ना बीते दिनों की एक यादगार मात्र रह गया हो और जो, गले तक ठूस ठसाठस भोजन करने के बाद, अलस भाव से एक जगह पड़ कर केवल अतीत के सुहावने राग-रंगों, दावतों और क्रीड़ाओं का ताना-बाना बुन सकती थी।

भौंहों में बल डाल कर सितानोव पुराने दिनों को याद करता

"ओह, उस जमाने में यहाँ का रंग देखते तो दंग रह जाते। यह एक बहुत ही बड़ा कारबार था। कारखाना भी खूब बढ़ा-चढ़ा था और उसकी देख-भाल का काम एक बहुत ही कुशल कारीगर के जिम्मे था। लेकिन अब वह बात कहाँ। अब तो सब कुछ वही चट कर जाता है। सब कुछ 'कुजमा तिलचट्टे' के हाथों में चला गया। हम चाहे जितना सिर खपाएँ, चाहे जितना खून-पसीना एक करें, घूम फिर कर अकेले उसी की चाँदी गरम होती है। सोचकर हृदय बल खाने लगता है, जी करता है कि काम को धता बता कर छत पर चढ जाओ और समूची गर्मियाँ आकाश की ओर ताकते हुए बिता दो।"

सितानोव के विचारों ने पावेल ओदिन्तसोव को भी ग्रस लिया। बड़ों की भांति सिगरेट का धुआँ उड़ाते हुए वह भी खुदा, शराब-

खोरी, स्त्रियों और श्रम की व्यर्थता के बारे में लम्बी-चौड़ी बातें करता :

"कुछ लोग दिन-रात खून-पसीना एक कर के चीजें बनाते हैं और दूसरे, बिना कुछ सोचे-समझे, केवल उन्हें नष्ट करने की ताक में रहते हैं। श्रम करना या न करना सब बराबर हो जाता है।"

जब वह इस तरह की बातें करता तो उसके बच्चों ऐसे चपल सुन्दर और तेज चेहरे पर झुर्रियाँ उभर आतीं और ऐसा मालूम होता मानो वह वृद्धा हो गया हो। रात के समय फ़र्श पर बिछे अपने बिस्तरे पर वह बैठ जाता, घुटनों को अपनी बाँहों में दबोच लेता और उसकी आँखें खिड़की के नीले चौखटों को पार कर शीत-कालीन आकाश में छितरे तारों और सायबान की छत की टोह लेती जो अब बर्फ के बोझ से दबी रहती थी।

कारीगर घर्राटे भरते और नींद में बडबडाते रहते। कोई इस तरह चिल्ला उठता मानो दुःस्वप्न देख रहा हो। सब से ऊपर वाले तख्ते से दावीदोव अपनी ज़िन्दगी का बचा-खुचा अंश खाँसी और बलगम के रूप में थूकता रहता। उधर सामने वाले कोने में 'खुदा के बन्दे' कार्पेन्दियूखिन, सोरोकिन, और पेर्शिन नंगे तथा नींद में निढाल बोरों की भांति एक-दूसरे से सटे पड़े रहते। बे-सिर, बे-हाथ और बे-पाँव वाली प्रतिमाएँ दीवारों के साथ टिकी ताकती रहतीं। तेल, सड़े-गले अंडों और फर्श की दरारों में भरे कूड़े-कचरे की गंध साँस तक लेना दूभर कर देती।

पावेल फुसफुसा कर कहता :

"हे भगवान, इनकी हालत पर मुझे कितना तरस आता है!"

तरस की इस भावना से मेरा हृदय भी भारी और उदास रहता। हम दोनों को, जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ, ये लोग

अच्छे मालूम होते, लेकिन जिस तरह का जीवन वे बिताते थे वह बुरा, उनके लिए सर्वथा अनुपयुक्त तथा कठोर, बेहद बेरस और बोझिल मालूम होता। जब गिरजे की घंटियाँ श्मशानी अन्दाज़ से बजती, बर्फीली आँधियाँ सनसनातीं और घर, पेड़ तथा धरती की हर चीज़ कांपने, कराहने और सुबकने लगती, तब सीसे की भारी चादर की भांति कारखाने पर गहरी उदासी छा जाती। कारीगरों का दम घुटता और ऐसा मालूम होता मानो यौवन का कोई चिन्ह उनमें शेष नहीं रहेगा, सभी कुछ पाले में झुलस और मुरझा जाएगा। घबरा कर वे बाहर निकलते, शराबखाने की ओर लपकते, या स्त्रियों की बाँहों में दुबक जाना चाहते जो, वोडका की बोतल की भांति, उदासी को भूलने में उनका हाथ बटाती।

इस तरह के क्षणों में पुस्तक पढ़ने का कोई असर नहीं होता, पुस्तकों का जादू कुछ काम न करता और मैं तथा पावेल जी बहलाने के अन्य साधनों का सहारा लेते। रंग-रोगन और काजल से हम अपने चेहरों को पोतते, सन की दाढ़ी और मूछ लगाते, अपनी सूझ-बूझ के अनुसार तरह-तरह का हास्याभिनय करते और उदासी के विरुद्ध वीरतापूर्ण संघर्ष करते हुए लोगों को हंसने के लिए बाध्य करते। "एक सैनिक ने किस प्रकार प्योत्र महान की जान बचाई" वाली कहानी मुझे याद थी। इस कहानी को मैंने कथोपकथन के रूप में ढाल लिया। जिस तख्ते पर दावीदोव सोता था, उसे हम अपना मंच बनाते और बड़े उछाह के साथ कल्पित स्वीडनों के सिर कलम करते। इस प्रकार समूची कहानी का हम अभिनय करते और दर्शक हंसते-हंसते दोहरे हो जाते।

चीनी शैतान त्सिंगी-यु-तोंग की कहानी कारीगर बेहद पसंद करते। पाश्का अभागे शैतान का अभिनय करता जिसके मन में, बावजूद इसके कि वह शैतान था, भलाई करने की धुन समा गई

थीं। बाकी सारा अभिनय मैं खुद करता। मुझे स्त्री भी बनना पड़-ता और पुरुष भी, कभी मैं किसी पेड़ का तना बन कर खड़ा हो-ता और कभी किसी भले आदमी की रूह, यहाँ तक कि मुझे वह पत्थर भी बनना पड़ता जिसपर कि शैतान, भलाई करने के अपने हर प्रयत्न की विफलता के बाद, निराश हो कर बैठता था।

देखनेवाले खूब हंसते, और उन्हें इतनी आसानी से खुश देख मुझे अचरज भी होता और दुःख भी। वे चीखते और होते चिल्लाते:

"वाह, मुँह मटकाने में तुम कमाल करते हो! मज़ा आ गया!"

लेकिन इस सब के बावजूद रह-रह कर यह सब बात आँखो के सामने उभरे बिना न रहती कि इन लोगों का रंज से जितना वास्ता था, उतना खुशी से नहीं।

हंसी-खुशी या रंगरलियाँ हमारे जीवन मे केवल दो घड़ी की मेहमान बनकर आतीं और फिर विदा हो जाती। अधिक दिनो तक वे कभी नहीं टिकती, न ही अपने आप मे उनका कोई मूल्य होता। रंज में डूबे रहने के आदी रूसी हृदय को भरमाने के लिये एक कठिन प्रयास के रूप मे, उनका उपयोग किया जाता। उस हंसी-खुशी का क्या भरोसा जिसका अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व न हो, अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाने की जिसमे कोई कामना तक न हो, और केवल जीवन की भयानकता को आँखो की ओट करने के लिए ही जिसकी याद की जाती हो।

और इसीलिए रूसियों की हंसी-खुशी और उनकी रंगरलियाँ, आशा के प्रतिकूल और एकदम अनजान मे ही, अक्सर क्रूर और नि-र्मम नाटक का रूप धारण कर लेतीं। नाचते-नाचते, ठीक उस समय जब कि नृत्यकार अपने बन्धनों को तोड कर उन्मुक्त भाव से हवा मे तैरता और लहराता मालूम होता, एकाएक उसके भीतर का

पशु जाग उठता और रस्सा तुड़ा कर हर व्यक्ति और हर चीज़ पर टूट पड़ता — गरजता, उबलता-उफनता और सभी कुछ मटियामेट करता हुआ ।

जबर्दस्ती के और एकदम बाहरी अवलम्बना पर टिकी इस हंसी-खुशी से मैं इतना भन्ना जाता और इस बुरी तरह झुंझला उठता कि धुन में आकर सभी कुछ ताक पर रख देता, और उसी क्षण जो भी उल्टा-सीधा मन में आता, वही मुंह से उगलने लगता। अभिनय करने में भी मैं इसी तरह पूरी मनमानी का परिचय देता। उन्मुक्त और स्वतःस्फूर्त खुशी का उनमें संचार करने के लिए मैं पागल-सा हो उठता। मेरी कोशिशें पूर्णतया बेकार भी न जातीं। कारीगर चकित हो जाते, मुग्ध भाव से प्रशंसा करते, लेकिन वह निराशा और उदासी जिसे मैं समझता कि गायब हो गई है, वापिस लौट आती और घनी तथा गहरी होती हुई पहले की भांति फिर उन्हें दबोच लेती।

चूहेनुमा लारिओनोविच कोमल स्वर में कहता

"सच, तुम भी एक कयामत हो। खुदा तुम्हें लम्बी उम्र दे!"

"जी हल्का हो जाता है," जिप्सी स्वर में स्वर मिलाता। — "तुम किसी सरकस या नाटक-कम्पनी में क्यों नहीं भर्ती हो जाते? मेरा विश्वास है कि तुमसे बढ़िया जोकर उन्हें ढूंढ़े न मिलेगा!"

कारखाने में काम करने वालों में केवल कापेन्दियूखिन और सितानोव ही ऐसे थे जो नाटक देखने जाते थे। यह बात दूसरी है कि वे साल में दो बार ही नाटक देखते थे — एक तो बड़े दिन के अवसर पर, दूसरे श्रोवटाइड के अवसर पर। जब वे नाटक देख कर लौटते तो बूढ़े कारीगर इस पाप का प्रायश्चित करने पर जोर देते। कहते कि बर्फ में बपतिस्माई गढ़ा खोदकर जब तक जोर्डन

नदी में डुबकी नही लगाओगे, खुदा तुम्हे माफ नही करेगा। लेकिन सितानोव था कि बार-बार मुझसे कहता:

"तुम भी कहाँ आ फसे? छोडो यह सब, और नाटक-कम्पनी में भर्ती हो जाओ!"

वह मुझे "अभिनेता याकोवलेव के जीवन" की दर्दभरी कहानी सुनाता और अन्त में कहता:

"तुम भी वैसे ही बन सकते हो!"

मेरी स्टुअर्ट का, जिसे वह 'लोमडी' कहता था, बड़े चाव से जिक्र करता और "स्पेन का बाका वीर" का जिक्र करते समय तो उसके उछाह का वारापार न रहता। कहता:

"दोन सिजार द-बजान बांके खानदान का एक बाका वीर था! मक्सिमोविच! सचमुच में असाधारण!"

अपने-आप मे वह खुद भी कुछ कम बाका वीर नही था। एक दिन, चौक वाले घटाघर के सामने, आग बुझाने वाले स्टेशन के तीन कर्मचारी मिल कर किसी दहकान पर टूट पड़े। चारों ओर करीब चालीस लोगो की भीड जमा हो गई। दहकान को बचाना तो दूर, भीड़ ने पीटने वालो की पीठ थपथपाना और उन्हे खूब उकसाना शुरू कर दिया। सितानोव ने आव देखा न ताव, लपक कर वहाँ पहुंचा और अपनी लम्बी बाँहो से हमलावरो को मार भगाया। इसके बाद दहकान को उठा कर उसने भीड के ऊपर धकेल दिया और चिल्ला कर बोला:

"ले जाओ इसे!"

अकेला ही वह डटा रहा, तीन-तीन से उसने लोहा लिया और अन्त मे सबको उसने मार भगाया। आग बुझाने का स्टेशन पास ही था, केवल बीस-एक कदम पर। आग बुझानेवाले अगर मदद के लिए चिल्लाते तो उन्हे साथी मिलने मे जरा भी कठिनाई

न होती, और वे मितानोव को ऐसी मार पिलाते कि वह भी याद रखता। गनीमत यही थी कि उनके औसान खता हो गए और वे उलटे पाँव भागते नजर आए।

"हरामी कुत्ते!" उन्हें भागता हुआ देख मितानोव चिल्लाया।

रविवार के दिन कारखाने के युवक कारीगर पेतरापाव्लाव्स्क कब्रिस्तान के उस पार इमारती लकड़ी की टाल में जाते और सफाई दल के लोगों और आसपास के गाँवों के दहकानों से घूसेबाजी का खेल खेलते। सफाई दल में मोरदाविया निवासी एक प्रसिद्ध घूसेबाज था—देव की भांति डील-डौल, छोटा सा सिर, और चुंधी आँखें। उसे ही वे सब से आगे खड़ा करते और वह, फैली हुई अपनी टाँगों को मजबूती से धरती पर जमाए, गंदी कमीज की आस्तीन से अपनी रिसती हुई आँखों को पोंछता और सहज भाव से गहरी आवाज़ में ललकारता:

"चले आओ जिसे आना हो। जल्दी करो, अभी मामला गर्म है। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी बाट देखते देखते मैं ठंडा पड़ जाऊँ!"

कापेन्दियूखिन आगे बढ़ता। हमारी ओर से एक वही उससे भिड़ता और मोरदाविया निवासी हर बार उसके अंजर पंजर ढीले कर देता। खून और मिट्टी में वह रंग जाता और हाँफता हुआ चिल्लाया करता:

"देख लेना, एक दिन मैं भी ऐसे दाँत खट्टे करूंगा कि मोरदाविया वाला उम्र भर याद रखेगा!"

और अब मोरदोविया निवासी के दाँत खट्टे करना ही उसके जीवन का लक्ष्य हो गया। इसके लिए, पूरी गर्मी में वह अपने को साधना और तैयार करता। वह अब शराब न पीता, ज्यादातर मांस ही खाता और हर गर्मी का सारा स पहर, वह स जाता बदन रगड़ता, बाँहों की मांसपेशियाँ निखारने के लिए

दोहरा होकर मन-भर पक्का बोझ उठाता। लेकिन मोरदोविया निवासी को वह फिर भी नही पछाड़ सका। अन्त मे अपने दस्तानो में उसने सीसे के टुकड़े भर लिए, और सितानोव से शेखी बघारते हुए बोला:

"अब उसका अन्त ही समझो!"

सितानोव की भौंहों मे बल पड गए। कड़े स्वर मे बोला:

"सीसे के टुकड़े निकाल डालो, नही तो मैं भिड़न्त से पहले ही सारा भंडा फोड कर दूंगा।"

कापेन्दियूखिन को विश्वास नहीं हुआ कि वह ऐसा करेगा। लेकिन ठीक भिड़न्त से पहले सितानोव ने एकाएक मोरदोविया निवासी से चिल्ला कर कहा:

"जरा ठहरो, वसीली ईवानोविच। कापेन्दियूखिन से पहले मेरी भिड़न्त होगी!"

कजाक का चेहरा लाल पड गया। चिल्ला कर बोला:

"मै तुमसे नही लड़ूंगा! चले जाओ यहाँ से!"

"लडोगे कैसे नही?" सितानोव ने कहा और निरस्त्र कर देने वाली नजर गड़ाए उसकी ओर बढ चला। एक क्षण के लिए कापेन्दियूखिन सकपकाया, फिर तेजी से उसने अपने दस्ताने उतार डाले और उन्हे अपने कोट के भीतर वाली जेब में खोसता हुआ वहाँ से नौ-दो ग्यारह हो गया।

दोनों पक्षो में से एक भी इस तरह की घटना के लिए तैयार नही था। उन्हे अचरज भी हुआ और दु:ख भी। भिड़न्त का सारा मजा ही किरकिरा हो गया। भली-सी शक्ल के एक आदमी ने सितानोव से झुंझला कर कहा:

"यह कायदे के खिलाफ है। सार्वजनिक खेल मे तुम निजी झगड़ो का भुगतान नही कर सकते!"

सितानोव पर चारों ओर से बौछार होने लगी। काफी देर तक तो वह चुप रहा। फिर भली-सी शक्लवाले आदमी से बोला

"तुम्हारा मतलब यह कि खेल में खून-खराबा हो तो उसे भी होने दिया जाए,—क्या?"

भली सी शक्लवाला आदमी तुरत सारा मामला समझ गया, और टोपी उतार कर मुसकराते हुए बोला

"अगर ऐसी बात है तो अपने पक्ष की ओर से हम तुम्हें धन्यवाद देते हैं।"

"लेकिन इस बात का ढोल पीटने की जरूरत नहीं। अपनी जुबान बंद ही रखना।'

"मैं जुबान का ढीला नहीं हूं। कापेन्दियूखिन क्या कोई मामूली घूसेबाज है? और कोई होता तो इतनी बार मात खाने के बाद भाग खड़ा होता। यह उसकी हिम्मत है जो डटा हुआ है। हम यह सब समझते और उसकी कद्र करते हैं। लेकिन अब हम, भिड़न्त से पहले, उसके दस्तानों को जरूर देख लिया करेंगे।"

"यह तुम जानो, जो ठीक समझो, करो।"

भली-सी शक्ल वाला आदमी जब चला गया तो हमारे पक्ष के लोगों ने सितानोव को आड़े हाथों लेना शुरू किया

"तुम भी निरे बुद्धू हो! आखिर तुम्हें बीच में टांग अड़ाने की क्या जरूरत थी? कापेन्दियूखिन ने आज सारी कसर निकाल ली होती। लेकिन अब तुमने हम सब के मुंह पर कालिख पोत दी।"

देर तक और बिना दम लिए, रस ले-लेकर, वे सितानोव को कोसते रहे।

सितानोव केवल लम्बी सांस खींच कर रह गया और बोला

"आह, कमीने ।

इसके बाद, एकाएक, मोरदोविया निवासी को ललकार कर उसने सभी को चकित कर दिया। चुनौती सुनते ही मोरदोविया निवासी आगे आ कर जम गया और घूंसा हिलाते हुए हंस कर बोला :

"अच्छी बात है। आओ, आज तुम्हारे साथ ही बदन को थोड़ा गरमा लिया जाए।"

पास खड़े लोगों में कई ने हाथ-में-हाथ डाल कर एक बड़ा-सा घेरा बना लिया। भीड़ घेरे से बाहर हो गई, और लड़ने वाले उसके भीतर।

इसके बाद घूंसों की कुश्ती शुरू हो गई। एक-दूसरे के चेहरे पर नजर गड़ाए, बाएं हाथ की बंधी मुट्ठी सीने पर रखे और दाहिने हाथ का घूंसा ताने, भंवर की भांति वे घेरे के भीतर चक्कर काटने लगे। पारखी दर्शकों ने तुरत भांप लिया कि सितानोव की बांहें मोरदोविया निवासी की बांहों से ज्यादा लम्बी हैं। सभी पर सन्नाटा-सा छा गया। लड़ने वालों के पांवों के नीचे बर्फ के कचरने के सिवा अन्य कोई आवाज नहीं आ रही थी। तभी किसी ने, सन्नाटे के तनाव से उकता कर, शिकायती स्वर में बड़बड़ाते हुए कहा :

"इतनी देर से खाली चक्कर लगा रहे हैं . ।"

सितानोव का दाहिना घूंसा घूम गया, मोरदोविया निवासी ने अपने बचाव में बायां घूंसा उठाया और तभी, एकाएक, सितानोव ने बाएं घूंसे से सीधे उसके पेट में प्रहार किया। कराहता हुआ वह पीछे हटा और मुग्ध भाव से बोला :

"मैं तुम्हें कच्ची उम्र का ही समझ था, लेकिन तुम तो छिपे रुस्तम निकले।"

इसके बाद अखाड़ा गरमा गया। घूंसे जोरों से हवा में झूलते और एक-दूसरे की पसलियां चूर-चूर करने के लिए लपलपाते। देखते-

वह सदा न्याय और ईमानदारी का पक्ष लेता, और ऐसा मालूम होता मानो यह सब करना उनका कर्तव्य मात्र था। लेकिन कार्पेन्दियूखिन जब भी मौका मिलता उसका मज़ाक उड़ाता।

"वाह सितानोव, तुमने तो अब ज़मीन पर चलना ही छोड़ दिया, हमेशा हवा में ही उड़ते रहते हो!" वह कहता।—"और अपनी आत्मा को रगड़-रगड़ कर तुमने इतना चमका लिया है कि क्या कोई समोवर को चमकाएगा। इस तरह सब जगह घूमते हो, मानो इस दुनिया मे तुम्हीं से उजाला हो। लेकिन सच बात यह है कि तुम्हारी आत्मा पीतल की है और तुम तुरत ऊबा देने वाले व्यक्ति हो।"

सितानोव जरा भी टस से मस न होता। वह सीधे अपना काम करता या नोटबुक में लेर्मन्तोव की कविताएं उतारता। अपना सारा खाली समय वह कविताएँ उतारने मे ही बिताता। एक दिन मैंने उससे पूछा:

"तुम्हारे पास पैसे की कमी नही। अपने लिए पुस्तक क्यो नही खरीद लाते?"

"नही, अपने हाथ की लिखावट मे नकल उतारना कही ज्यादा अच्छा है," वह जवाब देता।

वह बहुत ही सँभाल कर अक्षर बनाता। पन्ना भर जाने पर वह स्याही सूखने का इन्तज़ार करता, और धीमे स्वर मे गुनगुनाता हुआ पढता:

तुम बगैर किसी रंज और पछतावे के
इस जमीन से अपना मुँह मोड़ लोगी
जहाँ सारी मसर्रत एक साब है
जिसका हुसन बस एक दिन का है।

"इस मे सचाई है," आँखो को सिकोड़ते हुए वह कहता,—"देखो न, कितने अच्छे ढग से कवि ने सत्य को उभार कर रखा है!"

कापेन्दियूखिन की सभी हरकतो के बावजूद सितानोव उसके साथ इतनी भलमनसी से पेश आता कि देख कर अचरज होता। नशे में बेसुध, आते ही जब वह सितानोव से लडने के लिए झपटता तो सितानोव बहुत ही ठडे हृदय से उसे रोकने की कोशिश करता

"भले आदमी, ऊपर क्या गिरे पडते हो। जरा दूर रहो!"

लेकिन वह बाज न आता, और अत में सितानोव इतनी बेरहमी से उसकी मरम्मत करता, कि सारा नशा झड जाता, यहा तक कि अन्य कारीगर, झडप देखने का प्रबल मोह होने पर भी, आगे बढ कर दोनो को खीच कर एक-दूसरे से अलग कर देते।

"यह तो कहो कि हमने ऐन मौके पर उसे छुडा लिया,"— वे कहते,—"नही तो सितानोव उसे मार ही डालता और इस बात की जरा भी परवाह न करता कि बाद में उसका क्या होता है।"

नशे की हालत में ही नही, बल्कि होश-हवास ठीक होने पर भी कापेन्दियूखिन सितानोव को एक घडी चन न लेने देता, उसके कविता प्रेम तथा हरजाई स्त्री से उसके लगाव की दुखद घटना की खिल्ली उडाता, और ईर्ष्या की आग में उसे झुलसाने के लिए गंदी-से-गंदी, मगर बेकार हरकते करने से न चूकता। उसके चिढाने और खिल्ली उडाने का सितानोव कभी जवाब न देता, न ही कभी उत्तेजित होता, बल्कि कभी-कभी तो कापेन्दियूखिन के साथ-साथ खुद भी अपनी खिल्ली उडाने में शामिल हो जाता, और खूब हसता।

वे पास पास ही सोते, और गई रात तक न जाने क्या-क्या फुसफुसाते रहते।

रात के सन्नाटे में उन्हे इस तरह फुसफुसा कर बातें करते देख मुझे बड़ा अजीब मालूम होता। मेरी समझ में न आता कि एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न प्रकृति के ये दो आदमी, आखिर किस चीज के बारे मे इतना घुल मिल कर बाते कर रहे है! जब कभी भी मैं उनके निकट पहुंचने की कोशिश करता, कापेन्दियूखिन तुरत टोकता:

"यहाँ क्यो आए हो?"

और सितानोव तो मेरी ओर नजर तक उठा कर न देखता।

लेकिन एक बार खुद उन्होने मुझे अपने पास बुलाया।

"मक्सिममोविच," कापेन्दियूखिन ने कहा,—"अगर तुम्हारे पास ढेर सारा धन हो तो तुम क्या करोगे?"

"पुस्तके खरीदूंगा।"

"और क्या करोगे?"

"और क्या करूगा, यह तो मै भी नही जानता।"

कापेन्दियूखिन ने एक लम्बी साँस खीची और निराशा से मुंह फेर लिया।

"देखा तुमने!" अब सितानोव का शान्त स्वर सुनाई दिया।—"यह कोई नही बता सकता—चाहे किसी बूढे आदमी से पूछ देखो, चाहे जवान से। मै तुमसे कहता न था कि धन का अपने-आप मे कोई महत्व नही है। अपने-आप मे वह बेकार है। महत्व की चीज धन नही, बल्कि वह है जो धन से पैदा होती है, या जिसके लिए धन का उपयोग किया जाता है।"

"तुम लोग किस चीज के बारे मे बातें कर रहे थे?" मैने पूछा।

"किसी खास चीज के बारे मे नही। नीद आ नही रही थी, इसलिए समय काट रहे थे!" कापेन्दियूखिन ने कहा।

इसके बाद मुझे उनकी बातें सुनने की छूट मिल गई। और मैंने देखा कि रात में भी वे उन्हीं चीज़ों के बारे में बात करते थे, जिनके बारे में लोग दिन में बात करते हैं खुदा, न्याय, खुशहाली, स्त्रियों की मूर्खता और उनकी चालाकी, धनी लोगों की लालसा और लोलुपता, और यह कि जीवन ने मोटे तौर में एक ऐसे गडबडझाले का रूप धारण कर लिया है, जिससे कोई पार नहीं पा सकता।

मैं बड़े चाव से सुनता और उनकी बातचीत मेरे हृदय में गहरी हलचल का संचार करती। मुझे यह देख कर खुशी होती कि मेरी तरह वे भी इस जीवन को बुरा मानते और उसे बदलने की इच्छा रखते हैं। लेकिन इसी के साथ-साथ मैंने यह भी देखा कि जीवन को बदलने की यह इच्छा निरी इच्छा ही थी, और इस इच्छा के फलस्वरूप किसी पर कोई जिम्मेदारी आयद नहीं होती थी, और न ही इस इच्छा से कारखाने के जीवन में तथा कारीगरों के बीच उनके आपसी सम्बन्धों में कोई अन्तर पड़ता था। यह सारी बातचीत जीवन को देखने समझने का इतना अवसर प्रदान नहीं करती जितना कि एक प्रकार के भयावह शून्य और खोखलेपन को प्रकट करती जिसमें लोग, पोखर की सतह पर पड़े सूखे पत्तों की भांति, बिना किसी लक्ष्य या उद्देश्य के, तेज़ हवा के झोंके खाकर इधर से उधर तैरते, घूमते तथा चक्कर खाते हैं। खुद अपने ही मुंह से जीवन की इस लक्ष्य तथा उद्देश्य हीनता की वे शिकायत करते, उसे लेकर रोते और झींकते।

कारीगर हमेशा या तो रोगी बयाग्त दिखाई देते, या पश्चाताप करते अथवा किसी के सिर दोष मढ़ते नजर आते। ज़रा-ज़रा-सी बातों को लेकर वे बुरी तरह झगड़ते, खून-खराबी तक पर उतर आते। उन्हें चिन्ता थी तो यह कि मर जाने के बाद उनका क्या

होगा। और यहां, दरवाजे के पास रखे गंदे पानी के टोब के निकट, फ़र्श का एक तख्ता गलसड़ कर खत्म हो गया था और उसकी जगह एक भभाकड़ा खुल गया था जिसमें से सीलन और सड़ी हुई मिट्टी की गंध से भरी ठंडी हवा आती थी और हमारे पांव एकदम सुन्न हो जाते थे। पावेल और मैंने घासफूस और चिथड़ों से भभाकड़ा बंद कर दिया। नया तख्ता लगाने की बात तो सब करते, लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकलता, और भभाकड़ा दिन-दिन बड़ा होता जाता। आंधी-पानी के दिनों में ठंडी हवा का जैसे नलका-सा खुल जाता और सब खांसी-जुकाम में जकड़ जाते। रोशनदान की खिड़की की पखी इतने बेहुदा ढंग से चीं‌ची करती कि लोग गंदी-से-गंदी गालियों की उसपर बौछार करते। लेकिन जब मैं उसमें तेल डालता तो जिखरेव के कान चौकन्ने हो जाते, और मुंह बिचका कर वह कहता·

"चींची की आवाज़ का अभाव तो और भी उदास मालूम होता है!"

हम्माम से लौट कर वे अपने गंदे बिस्तरों पर पड़े रहते। गंदगी और सडांध की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। इसी तरह अन्य कितनी ही छोटी-मोटी चीज़ें थीं जो जीवन की कटुता को बढाती थीं और जिन्हें आसानी से ठीक किया जा सकता था। लेकिन कोई हाथ न हिलाता। वे अक्सर कहते:

"लोगों के लिए किसी के हृदय में तरस नहीं है। नहीं, खुदा तक उनपर तरस नहीं खाता!"

लेकिन जब पावेल और मैं गंदगी तथा जुओं से परेशान दम-तोड़ते दावीदोव की सफ़ाई-धुलाई करते तो वे हमारा मज़ाक उड़ाते, 'तेल मालिश' की आवाज़ लगा कर हमें चिढाते, जुवें मारने के लिए अपनी गंदी कमीज़ें उतार कर हमारे सामने डाल देते और,

मोटे तौर से, इस तरह हमें उल्लू बनाते मानो हम कोई शम-नाक और बहुत ही हास्यस्पद काम कर रहे हो।

बड़े दिन से लेकर चालीस दिन के व्रत तक अपने तख्ते पर लेटा दावीदोव बराबर खासता और खून तथा बलगम की कुल्लियाँ करता रहा। कूड़े की बाल्टी का निशाना साध कर वह थूकता, लेकिन अक्सर चूक जाता और बलगम तथा खून के थक्के फर्श पर आ गिरते। रात को जब वह चीखता-चिल्लाता तो हमारी आँखें खुल जाती।

करीब-करीब हर रोज, बिला नागा, वे कहते

"इसे अस्पताल ले जाए बिना काम नही चलेगा।"

लेकिन वह कभी अस्पताल नहीं पहुच सका। सब से पहले तो यह हुआ कि उसके पासपोर्ट की तारीख बीत चुकी थी और उसे नया कराने की जरूरत थी। जब तक यह न होगा, अस्पताल वाले उसे भर्ती न करेंगे। इसके बाद उसकी तबीयत कुछ ठीक मालूम हुई, और अस्पताल जाने की बात फिर टल गई। अन्त में उन्होने कहा

"अस्पताल ले जाकर ही क्या होगा? दो दिन का यह मेहमान है। चाहे यहाँ मरे, चाहे अस्पताल में, बात एक ही है।"

"हा भाई, टिकट कटने में अब देर नही है," खुद मरीज भी उनकी बात की पुष्टि करता।

वह एक बहुत ही खामोश किस्म का हसोड व्यक्ति था, और कारखाने की उदासी को तितर-बितर करने में अपनी ओर से कोई कसर नही छोडता था। अपने काले और अत्यन्त क्षीण चेहरे को तख्ते से नीचे लटका कर भरभरी आवाज में वह घोषणा करता

"भले लोगो, अब इस आदमी की भी आवाज सुनो जिसे खुदा ने इतने ऊचे सिहासन पर पहुँचा दिया है।"

इसके बाद, भारी-भरकम अन्दाज में, वह इस तरह की कोई वीभत्स तुकबन्दी सुनाना शुरू करता:

मैं यहाँ हूँ अपने तख्ते पर पड़ा
और कोई गड़बड़ नहीं करता
अगरचे मैं सोता हूँ और जागता हूँ
तिलचट्टे मेरा गोश्त चाटते रहते हैं।

"यह कभी अपना जी छोटा नहीं करता," उसके श्रोता मुग्ध भाव से कहते।

कभी-कभी पावेल और मैं उसके तख्ते पर चढ़ जाते, और वह जबरन खुशी से कहता:

"तुम्हारी क्या खातिर करूँ, मेरे भले दोस्तो! अगर पसन्द हो तो बढ़िया, एक दम तर व ताज़ी, मकड़ी पेश कर सकता हूँ।"

बहुत ही धीरे-धीरे, तिल-तिल करके, मृत्यु उसे दबोच रही थी, और इससे वह और भी उकता जाता था।

"मौत भी मेरे पास फटकना नहीं चाहती!" तंग आकर वह कहता, और अपनी परेशानी को छिपाने का ज़रा भी प्रयत्न नहीं करता।

मौत की वह इस तरह याद करता, मानो वह उसकी गहरी मित्र हो। उसे ज़रा भी डर न मालूम होता। मौत के प्रति उसके इस निडर रवैये से पावेल का हृदय दहल जाता। रात को वह चौंक उठता, और मुझे जगाते हुए फुसफुसा कर कहता:

"मक्सिमोविच, कहीं वह मर तो नहीं गया... मुझे लगता है कि ऐसे ही किसी दिन रात में वह मर जाएगा, और नींद में हमें पता तक नहीं चलेगा। हे भगवान, मरे हुए आदमियों से मुझे कितना डर लगता है!"

या फिर कहता:

"आखिर इसने जन्म ही क्या लिया? बीस वर्ष का भी न हो पाया कि अब विदा ले रहा है।"

एक रात, जब कि चादनी खिली हुई थी, उसने मुझे जगाया। उसकी आँखें भय से फटी हुई थी। फुसफुसा कर बोला

"कुछ सुनाई देता है?"

ऊपर तख्ते पर दावीदोव की सास भरभरा रही थी, और जल्दी-जल्दी, साफ सुन पडने वाले शब्दो में वह बडबडा रहा था

"इधर, यहा ले आओ, यह देखो इधर।"

इसके बाद खासी का दौरा शुरू हो गया।

"वह मर रहा है। सच कहता हूँ, वह मर रहा है।" पावेल ने विचलित स्वर में फुसफुसा कर कहा।

हमारा अहाता बर्फ से अटा था। उसे हटाना और बाहर खेतो में ले जाकर डालना था। आज दिन-भर बर्फ की लदाई-ढुवाई करनी पडी थी। मै बुरी तरह थक गया था, और आँखो में नींद उमडी आ रही थी।

"तुम्हे मेरी कसम, साओ नही," पावेल ने अनुरोध किया, —"मुझपर दया करो, और सोओ नही।"

सहसा वह उछल कर खडा हो गया, और वहशियाना अन्दाज में चिल्ला उठा

"उठो, उठो, दावीदोव मर गया!"

उसकी आवाज सुनकर कितने ही कारीगरो की नींद उचट गई। कुछ बिस्तरा छोड कर खडे हो गए, और चिडचिडा कर पूछने लगे कि बात क्या है। कापेन्दियूखिन तख्तो पर चढ गया, और चकित स्वर में बोला

"सचमुच, लगता तो ऐसा ही है मानो यह मर गया,— हालाकि बदन में अभी भी कुछ गरमाई मालूम होती है।"

सब पर एक सन्नाटा-सा छा गया। जिराल्ड ने क्रास का चिन्ह बनाया, और कम्बल को और भी कस कर तानते हुए बोला:

"भगवान उसकी आत्मा को शान्ति दे!"

"अच्छा हो कि इसे यहाँ से उठा कर फाटक के गलियारे में ले जाएँ," किसी ने सुझाव दिया।

कापेन्यिूखिन नीचे उतर आया, और खिड़की में से झांकते हुए बोला:

"नहीं, सुबह तक इसे यहीं रहने दो, जीते-जी इसने किसी का रास्ता नही छेका। मरने के बाद फाटक के गलियारे में ले जाकर डालना ठीक न होगा।"

पावेल तकिये में मुँह छिपा कर सुबकियाँ भरने लगा।

सितानोव बेसुध सोता रहा, वह मसका तक नहीं।

१५

नीचे खेतो मे जमी बर्फ और ऊपर आकाश में सर्दी के बादल गल रहे थे, और भीगी हुई बर्फ तथा बारिश के छीटे धरती पर गिर रहे थे। सूरज की गति धीमी हो गई थी, और दिन की यात्रा पूरी करने मे अब उसे काफ़ी समय लगता था। हवा मे उतनी ठिठुरन नही रही थी। ऐसा मालूम होता था मानो वसन्त आ तो गया है, लेकिन अभी नगर से बाहर खेतो मे छिपा हुआ आँख-मिचौनी का खेल खेल रहा है। किलकारियाँ मारता और चौकड़ियाँ भरता किसी समय भी वह नगर मे दाखिल हो जाएगा। बाजारों में लाल मटियाली कीचड छाई थी। फुटपाथो पर पानी की छोटी-छोटी धाराएँ छलछल करती बह रही थी। आरेस्तानत्स्काया चौक मे बर्फ-पिघले खण्डो के ऊपर चिड़े-चिड़ियाँ खुशी से चहक

और फुदक रहे थे। चिड़े-चिड़ियों की भांति लोग भी उमग से भरे थे। चारों ओर वसन्त की सुहावनी भनभनाहट सुनाई देती और गिरजे की घटियाँ, सुबह से साँझ तक जा करीब-करीब हर घड़ी बजती रहती, हृदय को हल्के-हल्के भकारे देतीं। उनकी टुनटुनाहट में, बूढ़े लोगों की आवाज की भाँति, टीस छिपी होती। उनकी ठंडी उदास ध्वनि में उन दिनों की गूँज सुनाई देती जो पीछे, बहुत पीछे, छूट गए थे और जिनके लौटने की अब कोई उम्मीद नहीं थी।

मेरे जन्म दिन के अवसर पर कारीगरों ने मुझे मुद्दा के प्यारे सन्त अलेक्सी की एक छोटी-सी और बहुत ही सुन्दर रंगी-चुनी प्रतिमा भेंट की। जिखरेव ने, गम्भीर मुद्रा में, एक लम्बा भाषण दिया जिसके शब्द सदा के लिए मेरी स्मृति में अंकित हो गए।

"अभी तुम क्या हो," भौंहों को चढ़ाने और अपनी उँगलियों से मेज को ठकठकाते हुए उसने कहा,—"कुल तेरह बरस की तुम्हारी उम्र है, न तुम्हारे माँ है और न बाप। फिर भी मैं, उम्र में तुमसे चार गुना बड़ा होने पर भी, तुम्हारी सिफारिश और तारीफ करता हूँ। जानते हो क्यों? इस लिए कि इतनी कच्ची उम्र होते हुए भी तुमने जीवन से मुँह नहीं मोड़ा, सीधे तन कर उसका सामना किया। और ऐसा ही होना भी चाहिए,—हमेशा अपने पाँव पर जीवन का सामना करो।'

उसने गुरु के दास और गुरु के सेवकों का जिक्र किया, लेकिन दास और सेवक में क्या भेद है, यह मेरी समझ में कभी नहीं आया, और मेरा खयाल है कि इस भेद को वह खुद भी नहीं समझता था। उसका भाषण थकाने और ऊबा देने वाला था, और सब उसका मजाक उड़ा रहे थे। लेकिन प्रतिमा हाथ में लिए मैं गुम-सुम खड़ा था, मेरे हृदय में उथल-पुथल मची थी और

परेशानी में कुछ सूझ नही पड़ रहा था कि क्या करूँ, क्या न करूँ। आखिर कापेन्दियूखिन से नहीं रहा गया। झुंझला कर चिल्ला उठा:

"मालूम पड़ता है किसी मुर्दे के सिरहाने फ़ातिहा पढ़ा जा रहा है। बन्द करो अब इसे, सुनते-सुनते कान पक गए!"

इसके बाद मेरी पीठ थपथपाते हुए, खुद उसने भी राग अलापना शुरू कर दिया।

"तुममें सब से अच्छी बात यह है कि सभी से घुल-मिलकर रहते हो। तुम्हारी यह बात मुझे पसंद है, लेकिन इसकी वजह से तुम्हें पीटना या डांटना मुश्किल हो जाता है—उस समय भी जब तुम सचमुच कसूर करते हो!"

सब के सब, आँखों मे चमक भरे, मेरी ओर देख रहे थे। उनके चेहरे खिले हुए थे और मुझे गुम-सुम खड़ा देख मुस्करा रहे थे। मेरा हृदय, भीतर-ही-भीतर, उमड़-घुमड़ रहा था। अगर यह सिलसिला कुछ देर और चलता तो मैं अपने को रोक न पाता, मेरी आँखों से आँसू बहने लगते—निरे आनन्द के आँसू। इस भावना से कि ये लोग इस हद तक मुझे अपना समझते है, मेरा हृदय भर आया था।

लेकिन उसी दिन सवेरे ही, मेरी ओर सिर हिलाते हुए दुकान-मुशी ने प्योत्र वसीलीयेविच से कहा था:

"यह पूरा बदमाश। काम करते उसकी जान निकलती है।"

सदा की भाति उस दिन भी, तड़के ही मैं दुकान पर काम करने गया था। लेकिन अभी दोपहर हो भी न पाई थी कि मुंशी ने कहा:

"घर जाओ और बाड़े की छत पर से बर्फ बटोर कर कोल्ड-स्टोरेज वाले तहखाने मे जमा दो।"

उसे मालूम नहीं था कि आज मेरा जन्म दिन है, और मेरा

ख्याल था अन्य सब भी यह नहीं जानते। कारखाने में जब बधाइया का सिलसिला खत्म हो गया तो मैंने कपड़े बदले, भाग कर अहाते में पहुँचा, और वर्फ बटोरने के लिए बाड़े की छत पर चढ़ गया। इस बार जाड़ों में खब जम कर वर्फ पड़ी थी। लेकिन उतावली में मैं तहखाने का दरवाजा खोलना भूल गया और मशीन की भांति फावड़े से खोद कर वर्फ डालता रहा। नतीजा यह कि तहखाना वर्फ के ढेर के नीचे छिप गया। जब मुझे अपनी गलती मालूम हुई तो दरवाजे का पता लगाने के लिए मैं तुरन्त इस ढेर को खोदने में जुट गया। लेकिन वर्फ नम थी और खूब कड़ी जम गई थी, और फावड़ा लोह का न हो कर लकड़ी का था, जैसे ही ज्यादा दबाव पड़ा, वह टूट गया। इसी समय फाटक पर दुकान का मुंशी दिखाई दिया और मुझे यह रूसी कहावत याद हो आई कि "खुशी के साथ हमेशा दुःख का पुछल्ला लगा रहता है"।

"यह बात है!" दुकान का मुंशी मेरे निकट आया और गुस्से में भनभनाते हुए बोला।—"क्या इसी तरह काम किया जाता है, शैतान के पिल्ले! खोपड़ी पर ऐसा हाथ जमाऊँगा कि भेजा बाहर निकल आएगा ।"

उसने फावड़े का टूटा हुआ हत्था उठा लिया और कस कर हाथ घुमाया। लेकिन मैं डुबकी लगा गया और गुस्से में उफनकर बोला

"अहाता साफ करना मेरी नौकरी में कतई शामिल नहीं है, समझे!"

लकड़ी का हत्था उसने मेरे पांवों में फेंक कर मारा। लपक कर मैंने वर्फ का एक ढेला उठाया और पूरे जोर से ऐन उसके मुँह पर दे मारा। सिटपिटा कर वह भाग खड़ा हुआ। मैं भी अधबीच में ही काम को छोड़ कर कारखाने में लौट आया। इसके कुछ मिनट बाद दुकान के मुंशी की मंगेतर सीढ़ियों से उतर कर

भागती हुई आई। वह एक कागूबाजू युवती स्त्री थी और उसका बेरंग मुंह मुंहासो से भरा था। आते ही बोली:

"मक्सिमोविच, तुम्हें ऊपर बुलाया है।"

"जाकर कह दो कि वह नहीं आता," मैंने कहा।

तभी लारिओनोविच ने शान्त स्वर में, चकित भाव से पूछा·

"यह क्या,—ऊपर जाने से इन्कार क्यों करते हो?"

मैंने उसे सारा किस्सा बता दिया। मेरी जगह वह खुद ऊपर गया। उसकी भौहें परेशानी में कुछ तन गई थी। जाते समय दबे स्वर मे बोला:

"तुम कुछ ज्यादा आगे बढ गए, मेरे लड़के!"

कारख़ाना मुशी के खिलाफ़ ताने-तिश्नो से गूँज उठा।

"तुम्हे अब वे छोड़ेंगे नही। निश्चय ही निकाल बाहर करेंगे।" कापेन्दियूखिन ने कहा।

लेकिन इसका मुझे डर नही था। मुंशी से मेरी तनातनी काफी दिनो से चल रही थी और सभी सीमाएँ पार कर चुकी थी। उसकी घृणा ने ज़िद्द का रूप धारण कर लिया था जो दिनो-दिन बढती जाती थी। मेरी घृणा भी उतनी ही हठीली और जोरदार थी जो कम होने का नाम न लेती थी। लेकिन जिस तरह की हरकते वह मेरे साथ करता था, वे इतनी बेतुकी होती थी कि मै चकरा जाता था।

वह जान-बूझ कर कुछ रेजगारी फर्श पर गिरा देता जिससे फ़र्श साफ करते समय उसपर मेरी नजर पड़े। मै उसे उठाता और हमेशा काउण्टर पर रखे भिखारियों वाले प्याले मे डाल देता। अन्त मे इस तरह रेजगारी बिखरने का रहस्य जब मेरी समझ में आया तो मैंने उससे कहा:

"रेजगारी का जाल बिछा कर तुम मुझे नही फाँस सकते। तुम्हारी सारी कोशिशें बेकार जाएँगी।"

उसका चेहरा लाल हो गया और एकाएक चिल्लाते हुए बोला

"मुझे ज्यादा सबक पढ़ाने की कोशिश न करो! मैं क्या करता हूँ और क्या नहीं, यह मैं तुमसे ज्यादा अच्छी तरह जानता हूँ!'

फिर कुछ सभल कर बोला

"क्या तुम समझते हो मैं रेजगारी जान-बूझ कर फर्श पर गिराता हूँ। नहीं भाई, इस तरह की बात तो अनजाने में ही होती है।"

उसने मुझपर रोक लगा दी कि दुकान में पुस्तकें न पढ़ूँ। कहने लगा

"ये पुस्तकें तुम्हारे लिए नहीं हैं। क्या धर्मशास्त्री बनने का शौक चर्राया है, परोपजीवी कहीं का।"

मुझे रेजगारी-चोर बनाने की अपनी कोशिश में उसने ढील नहीं डाली। मुझे लगा कि अगर किसी दिन बुहारते समय कोई सिक्का लुढ़क कर किसी दराज में चला गया तो उसे चोरी का इलजाम लगाने जरा भी देर नहीं लगेगी। एक बार फिर मैंने उसे टोका कि मेरे साथ इस तरह का खेल न खेले। लेकिन वह क्यों बाज आने लगा। उसी दिन जब मैं कहवाखाने से उबलते हुए पानी से भरी केतली लेकर लौटा तो मेरे कानों में उसकी आवाज की भनक पड़ी। पड़ोसी दुकानदार के नये मुंशी से यह कह रहा था

"तुम उससे सांठ-गांठ करके धर्मगीतों की पुस्तक चोरी करने के लिए कहो। आजकल में ही एकदम नयी तीन पेटी पुस्तकें हमारे यहाँ आने वाली हैं।'

मुझे यह भाँपने में देर न लगी कि वे मेरे ही बारे में बात कर रहे थे। कारण कि [illegible]।

पड़ोसी दुकानदार का मुंशी चालाक आँखों और सुर्ख गालों वाला गुँथे हुए मजबूत शरीर का जवान था। वह एक ही, घाट-घाट

दिनों के लिए काम करता था। दुकान के काम में वह होशियार था, लेकिन पूरा पियक्कड़ था। जब कभी पीने का भूत उसके सिर पर सवार होता तो मालिक उसे नौकरी से अलग कर देता, और इसके वाद फिर रख लेता। यों देखने से वह काफ़ी विनम्र और अपने मालिक के हल्के से इशारे को भी माननेवाला मालूम होता था, लेकिन अपने मुंह के कोने में सदा एक व्यंगपूर्ण मुसकराहट छिपाए रहता और तीखे छींटे कसने मे रस लेता। उसके मुँह से गध आती, ठीक वैसी ही जैसी कि गंदे दांतो वाले लोगो के मुँह से आती है, हालाकि उसके दांत भले-चगे और सफेद थे।

हाल ही में उसके साथ हुए कुछ अनुभवों ने मेरा यह सन्देह और भी ज्यादा पुष्ट कर दिया कि हमारी दुकान के मुशी से मिल कर वह मेरे खिलाफ जाल रच रहा है।

एक दिन वहुत ही प्यार-भरी मुसकराहट के साथ वह मेरे पास आया और इसके वाद, एकाएक, उसने मेरी टोपी उतार कर दूर फेक दी और मेरे वालो को अपने हाथों में दवोच लिया। फिर क्या था हम दोनो गुत्थमगुत्था हो गए। गलियारे से धकेलता हुआ वह मुझे दुकान मे ले आया और धक्का देकर मुझे कुछ वड़ी प्रतिमाओ पर गिराने की कोशिश करने लगा जो फ़र्श पर रखी थी। अगर वह सफल हो जाता तो इसमें सन्देह नही कि प्रतिमाओ का कांच टूट जाता, उनके वेल वूटे झड जाते और कीमती चित्रकारी चौपट हो जाती। लेकिन वह कुछ ताकतवर नहीं था। शीघ्र ही मैंने उसे अपने कावू मे कर लिया। इसके वाद फ़र्श पर वह पसर गया और अपनी आहत नाक को सहलाते हुए फुक्का मार कर रोने लगा। इस दाढीवाले आदमी को रोता देख कर मै हक्का-वक्का-सा रह गया।

अगले दिन, सुवह के समय जव हमारे मालिक कही चले गए थे और हम दोनो अकेले थे, एक ऑख के नीचे नाक के सूजे

म्मे को सहलाते हुए उसने बड़े ही मित्र भाव

क्या तुम समझते हो मैं अपनी मर्जी से तुम्हारे ऊपर झपटा ा, मैं इतना मूर्ख नहीं हूं। मैं जानता था कि तुम मुझसे और शीघ्र ही मुझे दबोच लोगे। मुझमें ताकत कहाँ है, लत ने मुझे खोखला बना दिया है। असल में खुद मालिक ा से मैंने वह हरकत की थी। मालिक ने कहा 'जाकर लपट जाओ और इस तरह लड़ो कि उससे दुकान में ज्यादा- ा तोड़-फोड़ हो जाय और भारी नुकसान पहुंचे।' अगर ने मुझे मजबूर न किया होता तो अपने-आप मैं कभी ऐसी न करता। देखो न, तुमने मेरे तोबड़े का क्या हाल बना है।"

मुझे उसकी बात सच मालूम हुई और मेरा हृदय तरस की से भर गया। यह मैं जानता था कि उसे बहुत कम पैसा है जिससे उसकी गुजर नहीं होती। तिस पर उसकी पत्नी जरूर थी कि बराबर उसे पीटती रहती थी। फिर भी मैंने पूछा

"अगर वे तुमसे किसी को जहर देने के लिए कहें, तो तुम सचमुच जहर दे दोगे?"

"वे कुछ भी करा सकते हैं," उसने दयनीय मुसकराहट के धीमे स्वर में कहा,—"वे मुझसे कुछ भी करा सकते हैं।"

ऐसे ही एक दिन, मौका देख कर, वह मुझसे कहने लगा

"मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है, घर का चूल्हा ठंडा पड़ा है ाने के लिये एक दाना तक नहीं है, और मेरी बूढ़ी स्त्री एक के लिये चैन नहीं लेने देती। अगर तुम अपने स्टोर रूम में ्ष प्रतिमा चुपचाप उठा कर दे दो तो मैं उसे बेच कर कुछ

पैसे खड़े कर लूंगा। दोनों मुझपर इतनी दया करोगे न? प्रतिमा उठाना सम्भव न हो तो फिर धर्मगीतों की पुस्तक ही सही। क्यों ठीक कहता हूं न?"

मुझे जूतों की दुकान और गिरजे के चौकीदार की बात याद हो आई और ऐसा लगा कि निश्चय ही यह आदमी भेदिया है। लेकिन मुझसे इन्कार करते नहीं बना। मैंने उसे एक प्रतिमा उठा कर दे दी। धर्मगीतों की पुस्तक काफ़ी कीमती थी और मुझे लगा कि उसे उठा कर देना ज्यादा बड़ा पाप होगा। कीमत के कम व अधिक होने के हिसाब से पाप के बड़े या छोटे होने की यह भावना भी अजीब थी। असल में यह उसी व्यापारिक गणना का नतीजा थी जो, जाने या अनजाने, हम सभी मे प्रवेश कर गई थी। कोई भी उससे अछूता नहीं बचा था। हमारे समूचे "दण्ड-विधान" का वट वृक्ष, न्याय और धर्म की चादर मे लिपटा होने पर भी, अपने हृदय मे इसी गणना का नन्हा बीज छिपाए था,—व्यक्तिगत सम्पत्ति का दानव उसके पीछे अट्टहास कर रहा था।

पड़ोस की दुकान के इस दयनीय मुंशी से जब मैंने अपनी दुकान के मुंशी को यह कहते सुना कि वह मुझे धर्मगीतों की पुस्तक चुराने के लिए बहकाये तो मेरा हृदय सहम गया। यह साफ था कि हमारी दुकान के मुंशी से मेरी उस उदारता की बात भी नहीं छिपी है जिससे प्रेरित होकर मैंने दुकान से प्रतिमा की चोरी की थी। दूसरे शब्दों मे यह कि पड़ोसी दुकान का मुंशी सचमुच मे भेदिया था।

दूसरो की जेब काट कर उदारता दिखाने के सस्तेपन तथा उनके षड्यंत्र के कमीनेपन ने मेरे हृदय को कचोटना शुरू किया, और विक्षोभ तथा घृणा के भावो से मैं भर गया। मुझे अपने ऊपर भी गुस्सा आता और दूसरो के ऊपर भी। कई दिन तक मैं एक

अजीब झमलाहट मे फसा रहा। नयी पुस्तका के आने तक मेरी बुरी हालत हो गई। आखिर पुस्तके आईं। स्टोररूम में जाकर मैंने उन्हे खोलना शुरू किया। तभी पडोस की दुकान का मुशी मेरे पास आया और धर्मगीतो की पुस्तक मागने लगा।

"क्या तुमने देवप्रतिमा चुराने की बात मालिक से कही थी?" मैंने उससे पूछा।

"हा," गरदन लटकाते हुए उसने स्वीकार किया,—"क्या करू, मेरे पट में बात पचती नही।"

सुन कर मै सन्न रह गया। पुस्तकों की पेटी खोलना छोड मै फर्श पर बैठ गया और उसके चेहरे की ओर ताकने लगा। अस्तव्यस्त और अत्यन्त दयनीय मुद्रा में वह जल्दी-जल्दी बडबडा रहा था

"तुम्हारे मालिक ने भाप लिया, या यह कहो कि मेरे मालिक ने भाप लिया, और तुम्हारे मालिक से ।"

मुझे लगा कि अब खैर नही है। इन लोगो के जाल में म फस गया हू और अब, निश्चय ही, बाल-अपराधिया के किसी जेल म मुझे बद कर दिया जाएगा। लेकिन जहा सेर, वहा सवा सेर, जब यही सब होना है तो फिर अन्य किसी चीज की चिन्ता क्यो की जाए। चुल्लू-भर पानी में डूब कर मरने से तो यह कही अच्छा है कि गहरे पानी में डूब कर मरा जाए। सो मैंने धर्मगीता की एक पुस्तक उठाई और मुशी को दे दी। उसने उसे कोट के भीतर छिपा दिया और वहाँ से चल दिया। कुछ भी देर न हुई होगी कि वह फिर लौट आया और पुस्तक मेरे पावो के पास आ गिरी।

"मैं इसे नही ले सकता। तुम मुझे कहीं का न छोडोगे।" कहते हुए वह चला गया।

मै उसकी बात समझ नही सका। यह क्या बात हुई कि मैं उसे कही का न छोडूगा? जो हो, यह जानकर मुझे भारी खुशी

हुई कि उसने पुस्तक लौटा दी। इसके बाद हमारी दुकान का कोताकद मुंशी मुझे और भी ज्यादा दुश्मनी तथा सन्देह की नज़र से देखने लगा।

मालकिन के बुलाने पर भी जब मैं नहीं गया और मेरी जगह लारिओनोविच ने ज़ीने से ऊपर जाना शुरू किया तो ये सब बातें मेरे दिमाग में घूम गईं। वह जल्दी ही ऊपर से लौट आया, पहले से भी ज्यादा उदास और एकदम गुमसुम। उस समय उसने कुछ नहीं कहा। लेकिन साँझ के भोजन से ठीक पहले, उस समय जब कि मैं और वह अकेले थे, वह मुझसे बोला:

"मैंने बहुत कोशिश की कि दुकान के काम से छुड़ा कर तुम्हें केवल कारखाने में काम करने दे। लेकिन मुझे सफलता नहीं मिली। कुजमा कोई बात सुनने के लिए तैयार नहीं था। न जाने तुमसे क्या खार खाए बैठा है...।"

इस घर में मेरा एक दुश्मन और था—दुकान के मुंशी की मंगेतर, एक खिलाड़िन युवती। कारखाने के सभी युवक उससे खेलते और छेड़छाड़ करते। वे फाटक के गलियारे में खड़े होकर उसका इन्तजार करते और जब वह आती तो खूब छीना-झपटी करते। वह जरा भी बुरा न मानती, पिल्ले की भांति दबे स्वर में केवल कूँ-काँ करती रहती। सुबह से लेकर सोने के समय तक उसका मुँह चलता रहता—मिठाई खाती या लैमनजूस चूसती जो उसकी जेबों में सदा भरी रहतीं। भूरी आँखों से युक्त उसका बेरंग चेहरा देखने में बड़ा बुरा मालूम होता। वह अपनी आँखों को बराबर टेरती रहती। जब भी वह आती, मापेन और मुझसे ऐसी पहेलियाँ बूझती जिनके जवाब गंदे होते या ऐसी ध्वनियों और शब्दों का जल्दी-जल्दी एक साँस में उच्चारण करने के लिए कहती जिनके मिलने से कोई न कोई गंदा अर्थ निकलता।

बूढ़े कारीगरो में से एक ने उससे कहा

"क्यो, तुम्हे लाज नही आती?"

वह खिलखिला कर हँसी और जवाब में एक गदे गीत की यह पक्तियाँ गुनगुनाने लगी

रगीली शरमा जायेगी,
तो हाय मलती रह जायेगी!

इस तरह की लडकी मैने पहले कभी नही देखी थी। वह मुझे बडी घिनौनी मालूम होती, और उसके भोडे तौर-तरीको को देख कर मै सहम जाता। जब उसने देखा कि मै उससे कतराता और बचता हू तो वह और भी जोरो से मेरे पीछे पड गयी।

एक दिन नीचे तहखाने में वह अचार के मर्तबानो को भाप दे रही थी। पावेल और मै भी उसकी मदद के लिए वहाँ मौजूद थे। तभी उसने कहा

"लडको, क्या तुम्ह मालूम है कि चुम्बन किस तरह लिया जाता है? चाहो तो मै तुम्ह सिखा सकती हू।"

"तुम क्या सिखाओगी, म तुमसे ज्यादा अच्छी तरह जानता हू?" हल्की हँसी हसते हुए पावेल ने कहा और शराफत का थोडा ताव पर रख, मैने उसे सलाह दी कि यह कला अपने उस युवक को सिखाए जिससे उसकी सगनी हो चुकी है। मेरी बात सुन वह झुझला उठी। गुस्से में बोली

"तुम निरे सूअर हो! यह तक नहीं जानते कि एक लडकी से किस तरह पेश आना चाहिए। मै तो इतनी मेहरबानी से पेश आती हू, लेकिन तुम मेरा अपमान करने पर तुले हो!"

इसके बाद उगली हिलाते हुए बोली

"तुम्हें इसका भुगतान करना पड़ेगा। मैं आसानी से छोड़ने वाली नहीं हूँ।"

पावेल ने मेरा पक्ष लिया। बोला:

"अगर तुम्हारे उस युवक को इन हरकतो का पता चल गया तो फिर देखना, किस तरह तुम्हारे गाल लाल करता है।"

मुँहासे भरे अपने मुँह को उसने घृणा से सिकोड़ा और फनफनाते हुए बोली:

"मुझे उसका जरा भी डर नहीं है। इतने भारी दहेज के साथ एक नही बीस पति मुझे मिल जाएँगे, उससे लाख दर्जे अच्छे! जब तक विवाह का जुवा गरदन पर नहीं लदता तभी तक लड़की को दो घड़ी मौज करने का मौका मिलता है।"

इसके बाद वह पावेल से खेल करने लगी और मुझसे ऐसी कुढी कि फिर सीधी न हुई। जब भी मौका मिलता, मेरे खिलाफ इधर-की-उधर लगाती।

दुकान पर काम करना मेरे लिए एक मुसीबत हो गया, और जैसे-जैसे दिन बीतते मेरी मुसीबत बढती जाती। मैं बुरी तरह ऊब चला। कितने भी धर्मग्रंथ वहाँ थे, सभी मैंने पढ डाले और धर्मशास्त्रियों के तर्क-कुतर्क सुनते-सुनते मैं तंग आ गया। उनकी बातों मे कभी कोई नवीनता नहीं होती, हमेशा और हर बार उन्हीं घिसी-पिटी बातों को दोहराते। केवल प्योत्र बसीलीयेविच ही एक ऐसा था जो अभी भी मुझे कुछ आकर्षक मालूम होता था। मानव-जीवन की धारा के काले पक्ष का उसे गहरा अनुभव था और बहुत ही दिलचस्प तथा उत्साहपूर्ण ढंग से वह अपनी बातों को व्यक्त करता था। कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता मानो पैगंबर येलिसी ने भी, इसी प्रकार एकदम एकाकी, हृदय मे गहरी जलन और बदले की भावना लिए, इस धरती का चप्पा-चप्पा छाना होगा।

लेकिन जब कभी मैं उसे लोगों के बारे में अपने अनुभव या विचार बताता तो वह बडी तत्परता से सुनता और इसके बाद सारी बात दुकान के मुशी के सामने दोहरा देता जो या तो मुझे झिडकता अथवा मेरा मजाक उडाता।

एक दिन वृद्ध के सामने मैंने अपना यह भेद प्रकट कर दिया कि उसकी कही हुई बातों को भी मैं अपनी उसी नोटबुक मे दर्ज करता जाता हूँ जिसमें कि मैंने कविताएँ और पुस्तकों के अश उतार रखे हैं। यह सुन कर उसकी सिट्टी गुम हो गई, तेजी से वह मेरी ओर झुका और भयभीत-सा होकर मुझसे पूछने लगा

"तुम ऐसा क्यो करते हो! यह ठीक नहीं है, मेरे लडके! क्या तुम उनका रोजनामचा रखना चाहते हो! अरे नही, तुम्हे ऐसा नहीं करना चाहिए, मेरे नन्हे शैतान! देखो, अपनी वह नोटबुक मुझे दे दो। क्यो, दोगे न?"

बहुत देर तक और जम कर वह इस बात पर जोर देता रहा कि मैं नोटबुक उसके हवाले कर दू, या कम-से-कम उसे जला दूँ। इसके बाद, विचलित स्वर में, वह दुकान के मुशी से फुसफुसाता रहा।

घर लौटते समय दुकान के मुशी ने मुझसे कहा

"मुझे पता चला है कि तुम कोई रोजनामचा रखते हो। मैं तुमसे कहे देता हूँ कि अपनी यह हरकत बद करो। सुन रहे हो न? केवल भेदिया और खुफिया पुलिस के लोग ऐसा काम करते हैं!"

और सितानोव?" अनायास ही मेरे मुँह से निकल गया,—"उसके बारे में तुम क्या कहोगे? वह भी तो रोजनामचा रखता है।"

"क्या वह भी रखता है? बेवकूफ नहीं तो!"

कुछ देर वह चुप रहा। फिर कुत्सित नरमाई से दोहरा हो भेद भरे अन्दाज में बोला

"एक बात सुनो। मुझे अपनी नोटबुक दिखा दो, और सितानोव की भी। मैं तुम्हें आधा रूबल दूंगा। लेकिन देखो, यह काम चुपचाप करना। किसी के कान में भनक तक न पड़े, सितानोव के भी नहीं!"

उसे जैसे पक्का विश्वास था कि उसकी बात मैं टालूंगा नहीं। उसने अपना सुझाव रखा और इसके बाद, बिना किसी दुविधा या झिझक के, अपनी छोटी टांगों से दुलकी चाल चलता हुआ गायब हो गया।

घर पहुंचते ही मुंशी ने जो कुछ कहा था, वह सब मैंने सितानोव को बता दिया। सुन कर उसकी भौंहों में बल पड गए।

"तुमने उससे कहा ही क्यों? अब वह किसी-न-किसी तरह हमारी नोटबुकें उड़ा लेगा,—मेरी भी और तुम्हारी भी। लेकिन ठहरो, अपनी नोटबुक तुम मुझे दे दो। मैं उसे कहीं छिपा दूंगा। वह तुम्हारे पीछे पडा है। देख लेना, वह तुम्हें निकाल कर ही दम लेगा!"

मुझे भी इसमें सन्देह नहीं था, और मैंने निश्चय कर लिया कि नानी के घर लौटते ही मैं यह नौकरी छोड दूंगा। नानी बलाखना में थी। सारे जाडे वहीं रही, किसीने अपनी लडकियों को बेल-बूटों की कढाई सिखाने के लिए बुला लिया था। नाना अब फिर कुनाविनो मे ही आ बसे थे। मैं कभी उनसे मिलने नही जाता, और भूले-भटके अगर कभी उनका नगर आना होता तो वह खुद भी मुझसे नही मिलते। एक दिन अनायास ही बाजार में उनसे मुलाकात हो गई। रैकून का भारी-भरकम कोट पहने रौब के साथ सामने से वह आ रहे थे, मानो कोई पादरी चला आ रहा हो। जब मैंने अभिवादन किया तो ठिठक गए, एक हाथ उठा कर अपनी आँखों पर साया किया और खोए हुए से अन्दाज में बोले:

जीवन की कुरूपता और दमघोट भयानकता का, लोगों की मुसीवतो और हर उस चीज का जिसके विरुद्ध मेरा हृदय इतने ज़ोरो से उबाल खाता था, जव मै नानी से जिक्र करता तो उनके मुँह से सिवा इसके और कुछ न निकलता कि हममे सहने की क्षमता होनी चाहिए।

लेकिन सहना मेरी प्रकृति के विरुद्ध था और अगर ढोर-डगरों, काठ और पत्थरों के इस गुण का कभी-कभी मै प्रदर्शन करता भी था तो केवल अपने-आपको जाँचने-परखने के लिए, अपनी उस शक्ति और दृढता का अन्दाज लगाने के लिए जिसके सहारे इस धरती पर मेरे पाँव जमे थे। ठीक वैसे ही जैसे कि अपनी वचकानी मूर्खता के जोश अथवा अपने से वडों की शक्ति से ईर्ष्या के चक्कर मे पड कर युवक अपने हाड-माँस और पुट्ठों की सकत से भी भारी बोझा उठाने की कोशिश करते और कभी-कभी इसमे सफल भी हो जाते है, जैसे कि शेखी मे वे नामी पहलवानो की भाति मन-मन-भर का वजन उठाने की कोशिश करते है।

मै भी ऐसा ही करता—शाव्दिक अर्थ मे भी, और भावनात्मक अर्थ मे भी। शारीरिक और आत्मिक, दोनो रूपो मे मै अपनी शक्ति की जाँच करता और इसे मेरा सौभाग्य ही समझिए जो इस जाँच के दौरान मे घातक चोट खाने या जन्मभर के लिए पगु होने से वच गया। और अगर सच पूछो तो दुनिया मे अन्य कोई चीज आदमी को इतने भयानक रूप मे पगु नही वनाती जितने भयानक रूप मे कि सहना और परिस्थितियो की वाध्यता स्वीकार कर उनके सामने सिर झुकाना आदमी को पंगु वनाता है।

अपनी कोशिशों के फलस्वरूप अगर अन्त मे पगु होकर मुझे धरती माता की शरण लेनी पड़ती तो, जायज गर्व के साथ, कम से कम यह तो मेरे पास कहने के लिए होता कि करीव चालीस

वर्ष तक मैंने परिस्थितियों के खिलाफ अडिग संघर्ष किया, उन भले लोगों के खिलाफ संघर्ष किया जो सहन करने की जंजीरों से जबरन मुझे जकड़ कर मेरी आत्मा को कुंठित कर देना चाहते थे।

कोई न कोई तमाशा करने, लोगों का जी बहलाने और उन्हें हँसाने की मेरी इच्छा रह-रह कर जोर पकड़ती। और यह काम भी मैं पूरी सफलता के साथ करता। लोअर मार्केट के सौदागरों का वर्णन करने और उनकी नकल उतारने में मैं बेजोड़ था। मैं दिखाता कि दहकान और उनकी स्त्रियाँ किस तरह देव-प्रतिमाएँ खरीदते और बेचते हैं, किस सफाई से दुकान का मुंशी उन्हें ठगता और धोखा देता है, और किस तरह धर्मशास्त्री बहसें करते हैं।

कारखाने के लोग हँसते-हँसते दोहरे हो जाते, हाथ का काम छोड़ कर मुझे नकलें उतारता हुआ देखते। जब तमाशा खत्म हो जाता तो लारिओनोविच कहता

"यह सब तमाशा साँझ के भोजन के बाद किया करो, जिससे काम में हर्ज न हो।"

इस तरह के प्रदर्शनों के बाद मैं सदा बहुत हल्का अनुभव करता, ऐसा मालूम होता मानो मेरे सीने पर से कोई भारी बोझ उतर गया हो। घंटे डेढ़ घंटे तक मेरा दिमाग इतने अद्भुत रूप में रीता और स्वच्छ मालूम होता जैसे उसका सारा कूड़ा कबाड़ साफ़ हो गया हो, लेकिन कुछ देर बाद वह फिर कील-काँटों से भर जाता और उनकी दुखद चुभन का मैं अनुभव करता।

मुझे ऐसा मालूम होता जैसे मेरे चारों ओर सड़ा हुआ दलिया खदबद रहा हो और उसकी सड़ांध, धीरे-धीरे, मुझे भी अपने चंगुल में दबोच रही हो।

"क्या मेरा समूचा जीवन इसी तरह बीतेगा?" मैं सोचता।— "और क्या मैं भी, इन्हीं लोगों की भांति, कुछ देखे और जाने बिना, अच्छे जीवन की झलक पाए बिना, इसी तरह खप हो जाऊँगा?

जिखरेव जो मुझे ध्यान से देख रहा था, बोला.

"क्या बात है, मक्सिमोविच, तुम इधर कुछ चिड़चिड़े होते जा रहे हो?"

सितानोव भी अक्सर पूछता:

"क्यो, क्या हुआ है तुम्हे?"

मेरी समझ मे न आता कि उन्हे क्या जवाब दूँ।

जीवन के औघड़पन ने, हठीली बेरहमी के साथ, अपने ही डाले हुए श्रेष्ठतम चिन्हो को मेरे हृदय से मिटा दिया और उनकी जगह, मानो खीज कर, कुत्सित और निकम्मे कीरम-काटे डाल दिए। गुस्से मे भर कर मै हाथ-पाँव पटकता, अडिग रूप से जीवन की हिसा का विरोध करता। अन्य सब की भाति मै भी उसी नदी मे बह रहा था, लेकिन उसका पानी मुझे अधिक सुन्न करता, मेरी सारी स्फूर्ति हर लेता और कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता मानो मै उसकी अतल गहराई मे डूबा जा रहा हूँ।

फिर भी लोगों का मेरे साथ अच्छा बरताव था। वे मुझपर कभी नही चिल्लाते, जैसा कि वे पावेल के साथ करते थे, न ही वे मुझपर रौब झाडते या मनमाना हुक्म चलाते। मेरे नाम के साथ वे कोई खिलवाड़ नही करते और अपना सम्मान दिखाने के लिए पूरा नाम लेकर मुझे पुकारते। यह सब मुझे अच्छा लगता, लेकिन यह देख कर मुझे दुख होता कि किस हद तक और कितनी बड़ी मात्रा मे वे वोडका पीते है, पीने के बाद वे कितने घिनौने हो जाते है, और कितने गिरे हुए तथा विकृत सम्बध स्त्रियो के साथ रखते है। यह जानते हुए भी कि वोडका और स्त्री के सिवा मन बहलाने का अन्य कोई साधन इस जीवन ने उनके पास नही छोड़ा है, मेरा जी भारी हो जाता।

उदास भाव से नतालिया कोजलोवस्काया की मैं याद करता। अपने आप में वह काफी समझदार और साहसी स्त्री थी। लेकिन वह भी स्त्रियों को निरे मन बहलाव की चीज समझती थी।

फिर नानी का मुझे खयाल आता, रानी मारगोट की मैं याद करता।

रानी मारगोट की याद करते समय मेरा हृदय सहम-सा जाता। अन्य सब से, चारों ओर की हर चीज से, वह इतनी भिन्न और अलग थी कि लगता जैसे मैंने उसे सपने में देखा हो।

स्त्रियों के बारे में मैं जरूरत से ज्यादा सोचने और यहाँ तक मन्सूबे बाँधने लगा कि अन्य सब की भाँति अगली छुट्टी का दिन मैं भी किसी स्त्री के साथ आनन्द से बिताऊँगा। किसी शारीरिक आकांक्षा से प्रेरित होकर मैं ऐसा नहीं सोचता था। मैं स्वस्थ और बेहद स्वच्छता पसन्द था। लेकिन कभी-कभी किसी कोमल और सहानुभूतिशील स्त्री को हृदय से लगाने और उसके सामने अपनी समूची वेदना उँडेलने के लिए मैं बुरी तरह बेचैन हो उठता। मेरी यह कामना बहुत कुछ वैसी ही थी जैसे कि एक बच्चा अपनी माँ की गोद में जाकर कुनमुनाने के लिए ललक उठता है।

पावेल पर मुझे ईर्ष्या होती। एक रात जब कि हम दोनों पास-पास लेटे हुए थे, उसने मुझसे अपने उस प्रेम का जिक्र किया जो कि सड़क के उस पार रहने वाली नौकरानी से चल रहा था।

"क्या बताऊँ, भाई, महीना-भर पहले तक मैं उसे बर्फ की गेंदों से मार-मार कर दूर भगा देता था और उसकी ओर आँख तक उठा कर नहीं देखता था। लेकिन अब जब वह बाहरवाले बेंच पर मुझसे सट कर बैठती है तो उसका स्पर्श ऐसा लगता है मानो दुनिया में उस जैसा और कोई नहीं है।"

"तुम उससे क्या बातें करते हो?"

"सभी तरह की बातें होती हैं। वह मुझे अपने बारे में बताती है, और मैं उसे अपने बारे में बताता हूँ। और फिर हम चुम्बन करते हैं... केवल वह... बस, हाथ नहीं रखने देती... वह इतनी भली है कि तुम कल्पना तक नहीं कर सकते... तुम आदमी हो या इंजन, हर वक्त धुवाँ उड़ाते रहते हो!"

धुवाँ तो मैं बेहद उड़ाता था। तम्बाकू का नशा मेरे दिमाग पर छा जाता, और मेरी परेशानी को कुछ कम कर देता। इसके साथ-साथ अगर मुझे वोडका का भी चस्का पड़ जाता तो मैं कहीं का न रहता। लेकिन उसके ज़ायके और गंध से मैं दूर भागता था। पावेल अलबत्ता खूब पीता था। नशे में धुत्त होने के बाद वह सुबकियाँ-सी भरता और रोनी आवाज़ में रट लगा देता:

"मैं घर जाना चाहता हूँ, मुझे घर भेज दो!"

वह अनाथ था। उसके माँ और बाप एक मुद्दत हुई मर गए थे। उसके घर पर न कोई बहन थी, और न भाई। आठ वर्ष की आयु से ही वह अजनबियों के बीच जीवन बिताने लगा था।

मेरा हृदय रह-रह कर ऊब उठता और कहीं भाग जाने को जी चाहता। वसन्त के आगमन ने मेरी इस भावना को और भी मुँह ज़ोर बना दिया। आखिर मैंने एक बार फिर जहाज़ पर काम करने का निश्चय किया जिससे, अस्त्राखान पहुँचने के बाद वहाँ से फारस के लिए तिड़ी हो जाऊँ।

याद नहीं पड़ता कि फारस जाने की यह बात मेरे मन में कैसे समा गई। इसका कारण शायद यह था कि निजनी नोवगोरोद के मेले में फ़ारस के सौदागरों को मैंने देखा था और वे मुझे बहुत अच्छे लगे थे। धूप में बैठे हुए वे हुक्का गुड़गुड़ाते रहते — पत्थर के बुतों की भांति। उन्होंने अपनी दाढ़ियाँ रंग रखी थीं, और ऐसा

मालूम होता मानो उनकी बड़ी-बड़ी काली आँखें सभी कुछ जानती हैं, उनसे कुछ भी छिपा नहीं है।

भागने का मैंने सचमुच निश्चय कर लिया था और शायद मैं भाग भी जाता, अगर बीच में एक घटना न हो जाती। ईस्टर सप्ताह के दौरान में जब कुछ कारीगर अपने-अपने गाँव चले गए थे और बाकी पीने-पिलाने में मगन थे, अपने भूतपूर्व मालिक—नानी की बहन के लड़के—से मेरी भेंट हो गई। ओका नदी के चढाव की एक ओर एक खेत में वह घूमने निकला था। धूप खिली हुई थी और वह सामने से चला आ रहा था भूरे रंग का हल्का कोट पहने, हाथ पतलून की जेबों में डाले, दाँतों में सिगरेट दबाए और अपनी टोपी को, बाँके अन्दाज़ से, पीछे खिसका कर गुद्दी पर जमाए। निकट पहुँचने पर मित्रतापूर्ण मुसक्राहट से उसने मेरा अभिवादन किया। उसका यह मौजी और आज़ादी पसन्द रूप देख कर मैं मुग्ध हो गया। खेत में उसके और मेरे सिवा अन्य कोई नहीं था।

"आह पेश्कोव! प्रभु ईसा तुम्हें सुखी रखे!"

ईस्टर के उपलक्ष्य में एक-दूसरे का मुँह चूमने के बाद उसने मुझसे पूछा कि कहो, कैसी गुज़र रही है। मैंने उसे साफ़ साफ़ बता दिया कि कारखाने से, इस नगर से, और हर चीज़ से मैं बुरी तरह ऊब उठा हूँ और फारस जाने का मैंने निश्चय कर लिया है।

"अपने इस निश्चय को धता बताओ!" उसने गम्भीर स्वर में कहा।—"फारस जाकर क्या स्वर्ग में पहुँच जाओगे। मैं कहता हूँ, उसे जहन्नुम रसीद करो। समझे भाई, तुम्हारी उम्र में मैं खुद भी इसी तरह भागने के लिए बेचैन रहता था, जिधर भी शैतान खींच ले जाए।"

शैतान को वह इस बेफिक्री के साथ उछालना जैसे लड़के खेल में गेंद को इधर-से-उधर उछालते है। उसका यह अन्दाज़ मुझे बड़ा अच्छा लगा। बहुत ही उन्मुक्त और वसन्त की उमंग में पगा हुआ। उसकी हर चीज मे एक अजीव उमग और बेफिक्री फूटी पड़ती थी।

"सिगरेट पिओगे?" मोटी सिगरेटों से भरा चाँदी का केस मेरी ओर बढ़ाते हुए उसने पूछा।

उसकी इस बात ने मुझे अब पूरी तरह् वश मे कर लिया।

"सुनो, पेत्कोव, मेरे साथ फिर काम करने के बारे में तुम्हारी क्या राय है? इस साल मेले के लिए मैने कोई चालीस हजार के ठेके लिए है। मै तुम्हे बाहर, मेले के मैदान में ही, काम दूँगा। एक तरह् से तुम ओवरसीयर का काम करोगे। जो निर्माण-सामग्री आए उसे सभालना, इस बात की निगरानी रखना कि हर चीज ठीक समय पर सही जगह् पहुँच जाए, और यह कि मजदूर चोरी-चकारी न करे। क्यो, यह् ठीक रहेगा न? वेतन—पाँच रूबल महीना, और पाँच कोपेक भोजन के लिए। घर की स्त्रियो से तुम्हारा कोई वास्ता नहीं पड़ेगा। सुबह ही तुम काम पर निकल जाओगे, और रात को लौटोगे। स्त्रियों से कोई मतलव नही। लेकिन इतना करना कि इस भेंट के बारे मे उनसे भूल कर भी जिक्र न करना। वस, सन्त थौमसवाले रविवार के दिन चुपचाप चले आना,—मानो तुम आकाश से टपक पड़े हो। क्यों, ठीक है न?"

गहरे मित्रो की भांति हमने एक-दूसरे से विदा ली। उसने मुझसे हाथ मिलाया और दूर पहुँच जाने के वाद भी काफी देर तक टोपी हिलाता रहा।

जब मैने कारीगरो के सामने नौकरी छोड़ने का ऐलान किया तो क़रीव-करीव सभी ने दुःख प्रकट किया। अपने प्रति उनका यह

लगाव मुझे बडा प्रिय मालूम हुआ और मैं खुशी मे फूल गया। पावेल खास तौर से अस्तव्यस्त हो उठा। शिकायत के स्वर में बोला

"भला सोचो तो, हम लोगो को छोड कर उन दहकानो के बीच तुम रहोगे? वहाँ बढई होगे, रग साज होगे पूह, इसी को कहते है आसमान से गिर कर ताड में अटक जाना!"

जिखरेव बडबडाया

"जवानी में आदमी वैसे ही मुसीबत खोजता है जैसे मछली पानी में गहराई खोजती है।"

कारीगरो ने मुझे विदाई दी जो बहुत ही बेरस और बुरी तरह उबा देने वाली थी।

नशे में धुत्त जिखरेव ने कहा

"निश्चय ही जीवन में कभी तुम यह करोगे और कभी वह, लेकिन अच्छा यही है कि एक चीज़ को पकड लो और शुरू से आखिर तक उसी से चिपके रहो!"

"मतलब यह कि सब कुछ भूलकर उसी के साथ दफन हो जाओ!" शान्त भाव से लारिआनोविच ने भी अपना स्वर छेडा।

मुझे लगा कि इस तरह की बाते वे बेमन से कर रहे है, मानो किसी रिवाज की पूर्ति कर रहे हो। वह धागा जो हमें रीति-रिवाजो से बाधे था, चाहे जैसे भी हो, गल चुका था और उसे टूटने म देर नही लगी।

नशे में धुत्त गोगोलेव ऊपर तख्ते पर पडा हाथ पाँव पटक रहा था। बैठे हुए गले से वह बडबडा उठा

"अगर म चाहू तो तुम सब को जेल में बन्द करा सकता हूँ। मुझे एक भेद मालूम है यह कि तुम ईश्वर में विश्वास नहीं करते। अहा-हा-हा!"

आकृतिविहीन अधूरी देव-प्रतिमाएं अभी भी दीवार के सहारे टिकी थीं और कांच की गेंदें छत से चिपकी थीं। इधर कुछ दिनों से बिना कृत्रिम रोशनी के हम काम कर रहे थे, इसलिए गेंदों की जरूरत नहीं होती थी और उनपर धूल तथा कालिख की भूरी तह चढ़ गई थी। हर चीज मेरे स्मृति-पट पर इतनी गहराई से नक्श थी कि आज दिन भी, केवल आंखें बन्द करते ही, वह अंधेरा कमरा और उसकी मेजें, खिड़कियों की ओटक पर रखे रंग के डब्बे, रंग करने के ब्रुश, देव-प्रतिमाएं, हाथ-मुंह धोने के ताम्बे के बरतन के नीचे कोने में रखी गंदे पानी की बाल्टी जो आग बुझाने वालों की टोपी की भांति दिखती थी और तख्ते के ऊपर से नीचे लटकी गोगोलेव की टांग जो लाश की भांति नीली पड़ गई थी, मेरी कल्पना में मूर्त हो उठती है।

मेरा बस चलता तो विदाई के बीच में ही उठ कर मैं भाग जाता। लेकिन यह सम्भव नहीं था—उदास क्षणों को लम्बा खींचने का रूसियों को कुछ चाव होता है। नतीजा यह कि विदाई का जल्सा बाकायदा मातमी सर्विस—तेरहीं आदि का—रूप धारण कर लेता है।

जिखरेव ने, भौंहें चढ़ा कर, मुझसे कहा:

"मैं तुम्हें वह पुस्तक—"राक्षस"—नहीं लौटा सकता। अगर तुम चाहो तो इसके लिए बीस कोपेक ले सकते हो।"

लेर्मन्तोव की पुस्तक को अपने से अलग करना कठिन था, खास तौर से इसलिए भी कि उसे मुझे आग बुझाने वालों के वृद्ध मुखिया ने भेंट किया था। लेकिन जब मैंने, कुछ विरोध सा दिखाते हुए पैसे लेने से इन्कार कर दिया तो जिखरेव ने उन्हें चुपचाप अपने बटुवे में रख लिया और निश्चल अन्दाज में बोला:

"जैसी तुम्हारी मर्जी। लेकिन यह जान रखो कि मैं पुस्तक

नही लौटाऊँगा। वह तुम्हारे लिए नहीं है। उस तरह की पुस्तक रख कर तुम किसी समय भी मुसीबत में फंस सकते हो।"

"लेकिन वह तो बाजार में बिकती है। मैंने खुद अपनी आँखो से उसे पुस्तकों की दुकान पर देखा है।"

"इससे क्या हुआ? बाजार में तो पिस्तौल भी बिकते हैं।" उसने दृढता से जवाब दिया।

और उसने पुस्तक कभी नहीं लौटाई।

मालकिन से विदा लेने जब मैं ऊपर गया तो रास्ते में उसकी भतीजी से भेंट हो गई।

"सुना है कि तुम हमें छोड़ कर जा रहे हो," उसने कहा।

"हां, जा तो रहा हूं।"

"अच्छा है कि तुम अपने-आप जा रहे हो, नही तो वे खुद तुम्हें निकाल देते," कुछ उद्धत लेकिन सच्चे हृदय से उसने कहा।

सदा नशे में धुत्त रहनेवाली मेरी मालकिन बोली

"अच्छी बात है, जाओ! खुदा तुम्हारा भला करे। तुम बहुत बुरे और मुहफट लड़के हो। हालांकि मैंने तुम्हारा बुरा पक्ष कभी नही देखा, लेकिन सब यही कहते हैं कि तुम अच्छे नहीं हो!"

एकाएक उसने रोना शुरू कर दिया और आंसुओं के बीच बुदबुदाते हुए कहने लगी

"अगर मेरा पति—भगवान उसकी आत्मा को शान्ति दे—आज जीवित होता तो वह तुम्हारे कान लाल करता और मार-मार कर सिर का सारा कचूमर निकाल देता, लेकिन तुम्हे यहीं रखता और इस तरह भागने न देता। अब तो सभी कुछ बदल गया है। जरा-सी बात हुई और तुम बिस्तरा गोल करके चल दिए! दइया रे! इस ढंग से तो पता नहीं तुम कहां-कहां की धूल छानोगे!"

मेले के मैदान में वसन्त की बाढ़ का पानी भरा था। पत्थर की बनी मेले की दुकानों और इमारतो के दूसरे तल्ले तक पानी चढ आया था। मै अपने मालिक के साथ नाव में बैठा था। नाव मेले की इमारतों के बीच से गुजर रही थी। मै डॉड चला रहा था और मालिक, नाव के पिछले हिस्से में बैठा, एक डॉड से पंखे का काम लेते हुए पानी काट रहा था। हमारी नाव नाक उठाए, बन्द और तरगविहीन, उनींदे से मटमैले पानी में हिचकोले खाती इस बाजार से उस बाजार मे चक्कर लगा रही थी।

"इस साल वसन्त मे कितनी भारी बाढ आई है, शैतान चट कर जाए इसे! यह हमे अपना काम भी वक्त पर पूरा करने नही देगी!" मालिक ने बडबडाते हुए अपना सिगार जलाया, जिसके धुवे से चिथडे जलने ऐसी गंध आती थी।

एकाएक वह भय से चीख उठा:

"अरे बचना, नाव रोशनी के खम्बे से टकराना चाहती है!"

लेकिन नाव टकराई नही। उसे संभालने के बाद बोला:

"कम्बख्तो ने नाव भी हमें छाँट कर दी है! हरामी कही के!"

फिर हाथ से इशारा करते हुए उसने वह जगह दिखाई जहाँ से, बाढ का पानी कम होते ही, दुकानो को मरम्मत का काम शुरू किया जाएगा। सफाचट चेहरा, छंटी हुई मूछे और दाँतो के बीच सिगार, कोई यह नही कह सकता था कि वह ठेकेदार है। उसके बदन पर चमडे की जाकेट, पावो मे घुटनो तक के जूते, कंधे पर शिकारियो वाला थैला और सामने पावो के पास लेवेल मार्का छर्रे वाली कीमती बन्दूक पडी थी। सिर पर चमड़े की टोपी

रखी थी जिसे, होंठो को भींचते हुए आगे की ओर खींच कर कभी वह आँखो पर भुका लेता और चौकन्ना सा होकर अपने चारा ओर देखता, कभी खिसका कर पीछे गुद्दी की आर कर लेता। एकाएक उसके चेहरे पर युवको ऐसी चपलता भलक उठती और मूछों में इस तरह मुसकराता मानो कोई मजेदार कल्पना उसके दिमाग में आ गई हो। मन की मौज और तरगो में उसे इस तरह वहता देख कर एक क्षण के लिए भी ऐसा नही लगता कि वह कोई व्यापारी आदमी है, काम-काज के बोझ और बाढ के कम न होने की चिन्ता में डूबा हुआ।

और जहाँ तक मेरा सम्बन्ध था, अचरज की निश्चल भावना का बोझ मेरे हृदय पर लदा था। मुझे बडा अजीब मालूम होता जब मैं जीवन की चहल पहल से शून्य इस मेला-नगर पर नजर डालता। चारो ओर पानी ही पानी, सूनी खिडकिया वाली इमारतो की पाँत, और कब्रिस्तान जसी शान्ति। ऐसा मालूम होता माना समूचा नगर पानी में तरता हुआ हमारी नाव के पास से गुजर रहा हो।

आसमान में बादल छाए थे। सूरज बादलो की भूलभुलयाँ में उलभा था। कभी-कभी, उडती हुई सी नजर डाल कर, वह नीचे की ओर देखता और फिर बादलो में खो जाता चादी के बडे थाल की भाति शीतल और ठडा।

पानी भी, आसमान की ही भाति, मैला और ठडा था। एकदम थिर और गतिविहीन। ऐसा मालूम होता मानो वह वहीं एक जगह जाम हो गया ह और सूनी इमारता तथा दुकानो की पीली मटमैली पाँतो के साथ-साथ नींद ने उसे भी अपने चगुल में दबोच लिया है। जब कभी रुपहला सूरज बादलो के पीछे से झाँक कर देखता तो हर चीज पर एक धुधली सी चमक छा जाती,

पानी मे बादलों का अक्स उभर आता और ऐसा मालूम होता मानो हमारी नाव दो आसमानो के बीच अधर लटकी हो। पत्थर की इमारतें भी सिर उभारतीं और बे-मालूम से अन्दाज में वोल्गा तथा ओका नदी की ओर बहने लगतीं। टूटे हुए पीपे, बक्से और टोकरे-टोकरियाँ, लकडी के छोटे-मोटे टुकड़े और घास-फूस के तिनके पानी की सतह पर डूबते-उतराते, और कभी-कभी लकड़ी के लट्ठे और बाँस, मुर्दा साँपों की भांति तैरते हुए निकल जाते।

भूले-भटके, कही-कही इक्की-दुक्की खिडकियाँ खुली थी। दुकानो के बराण्डो की छतो पर कपडे सूख रहे थे और रेलिंग के सरियो के बीच कपड़े के जूते रखे हुए थे। एक खिड़की मे से कोई स्त्री गरदन निकाले बाहर गंदे पानी की ओर ताक रही थी। बराण्डा लोहे के खम्बो पर टिका था और एक खम्बे के सिरे से एक नाव बधी थी। उसके लाल रंग का तिरमिरेदार अक्स पानी मे ऐसा मालूम होता मानो माँस का लोथडा तैर रहा हो।

जीवन के इन चिन्हो को देख कर मेरा मालिक सिर हिलाता और मुझे बताना शुरू करता:

"देखा तुमने, यहाँ मेले का चौकीदार रहता है। खिड़की मे से रेग कर वह छत पर चढ़ जाता है, फिर अपनी किश्ती मे बैठ कर चोरो की ताक में किश्ती को इधर-से-उधर खेता रहता है। अगर अन्य कोई चोर नजर नही आता, तो वह खुद चोरी करने लगता है।"

वह अलस और निस्सग भाव से बोल रहा था, और उसका दिमाग कही और उलझा था। हर चीज सन्नाटे मे डूबी; सूनी और सपने की भांति अजीब मालूम होती थी। वोल्गा और ओका नदी के पानी ने मिल कर एक भीमाकार झील का रूप धारण कर लिया था। उधर, टेढे-मेढे पहाड पर नगर का रग-विरग दृश्य

नजर आता था। बाग-बगीचे इसकी शोभा बढाते थे। बगीचो की कोख अभी सूनी थी,—एक भी फल कही नजर नहीं आता था। लेकिन उनकी टहनियाँ बौरो से लदी थीं और घर तथा गिरजे सब हरयाली में लिपटे मालूम होते थे। ईस्टर की घटियो की समृद्ध ध्वनि पानी पर से तैरती हुई आ रही थी और, इतनी दूर होने पर भी, नगर के हृदय की धडकन का हम अनुभव कर सकते थे, लेकिन यहाँ हर चीज उस उजाड गिरजे की भाति सन्नाटे में डूबी थी जिसे लोगो ने भुला दिया हो।

काले पेडो की दो पाँतो के बीच मुख्य रास्ते मे हमारी नाव पुराने गिरजे की ओर जा रही थी। मालिक के मुँह में लगे सिगार का धुआँ उसकी आखो को कडुवा रहा था और नाव पेडो के तनो से टकरा कर जब गेंद की भाति उछलती थी तो खीज कर वह चिल्ला उठता था

"क्या वाहियात नाव है!"

"पानी काटना बद कर दो।"

"यह कैसे हो सकता है?" वह भुनभुनाता,—"जब नाव में दो आदमी होते है तो एक खेता और दूसरा पतवार सभालता है। अरे वह देखो, उधर चीना बाजार है।

मेले के मैदान के चप्पे-चप्पे से म परिचित था, और दुकानो की वह पाँत मेरी खूब जानी-पहचानी थी जिसकी छते अजीब-व-गरीब थीं और जिनके कोना पर पलास्तर की बनी चीनी लागा की मूर्तियाँ पालथी मारे बैठी थी। एक बार मेरे साथी खिलाडियो और मैंने उनपर पत्थरो से निशानेबाजी की थी और मेरे कुछ निशाने इतने सधे हुए और सही बैठे थे कि उनमें से कई के सिर और हाथ गायब हो गए थे। लेकिन अब मुझे अपनी इस हरकत पर गर्व का अनुभव नहीं होता था।

"देखा इन दड़बों को।" इमारतों की ओर संकेत करते हुए उसने कहा।—"अगर मेरे पास इनका ठेका होता ..।"

सीटी बजाते हुए उसने अपनी टोपी को पीछे खिसका कर गुद्दी की ओर कर लिया।

लेकिन, न जाने क्यों, मुझे लगा कि अगर उसे इन इमारतों का ठेका मिला होता तो वह भी उन्हें बनवाने में उतनी ही बेगार काटता, और इनके लिए जगह भी यही चुनता जो, नीची होने के कारण, वसन्त के दिनों मे दो नदियों की बाढ में आए साल डूब जाती थी। इस तरह उसके दिमाग की टकसाल से भी जो चीज निकलती, वह चीना बाज़ार से कुछ कम भयानक न होती।

अपने सिगार को उसने पानी मे फेंक दिया और खीज मे भर कर पानी में थूक की पिचकारी छोड़ते हुए बोला.

"अब तुम्ही बताओ पेश्कोव, इसे भी क्या तुम जीवन कहोगे—एकदम बेरस और बेरग! पढे-लिखे लोगों का यहाँ अकाल है। दो घडी बात करने के लिए भी कोई नही मिलता। कभी-कभी रौब झाड़ने के लिए मन ललक उठता है, लेकिन तुम्हीं बताओ, अगर कोई रौब झाडे भी तो किसके सामने? कोई है ऐसा? नही, कोई नही। यहाँ तो केवल बढ़ई है, रगसाज है, दहकान है, चोर और उचक्के है...।"

दाहिनी ओर, पानी मे डूबी पहाडी के ढलुवान पर, खिलौने की भाति सुन्दर एक मसजिद थी। मालिक ने कनखियों से उसकी ओर देखा, और इस तरह बोलता रहा मानो किसी भूली हुई बात को याद कर रहा हो:

"एक जर्मन की भाति मै भी बीयर पीने और सिगार का धुआँ उड़ाने लगा। जर्मन पक्के व्यापारी होते है—एकदम कुड़क मुर्ग! बीयर पीना तो खैर एक अच्छा शगल है, लेकिन सिगार से

पटरी बैठती नहीं मालूम होती। सिगार मुह से लगाया नही कि बीबी जान खाने लगती है आज यह चमडे जैसी गध कहाँ मे आ रही है? उसे क्या पता कि जीवन को थोडा सरस बनाने के लिए क्या कुछ करना पडता है लेकिन यह लो, अपनी पतवार अब तुम खुद सभालो।"

उसने डाँड उठाकर नाव के एक बाजू रख दिया, अपनी बन्दूक उठाई और छत पर पालथी मारे बैठी प्रतिमाओ में से एक को अपना निशाना बनाया। चीनामैन की प्रतिमा को कोई नुकसान नहीं पहुचा, छर्रे दीवार और छत पर बिखर कर रह गये। धूल का एक बादल सा उठा, और हवा में विलीन हो गया।

"निशाना चूक गया!' बन्दूक में फिर से छर्रे भरते हुए उसने लापर्वाही से कहा।

"लडकियो से तुम्हारी कैसी पटती है? अभी तक तुम्हारा राजा टूटा या नहीं? नही? अरे, मै तो तेरह वर्ष की उम्र से ही प्रेम की नदी में गोते लगाने लगा था।'

उसने अपनी पहली प्रेमिका के बारे में इस तरह बताना शुरू किया मानो वह किसी सपने की याद कर रहा हो। वह एक नौकरानी थी। जिस नक्शा-नवीस के यहा वह खुद काम करता था, उसी के घर पर वह भी काम करती थी।

वह अपने प्रथम प्रेम की कहानी सुना रहा था और उसकी आवाज के साथ-साथ इमारतो के कोनो से पानी के टकराने की धीमी छपछप भी सुनाई पड रही थी। गिरजे के उस पार, दूर-दूर तक, पानी ही पानी झिलमिला रहा था जिसमें जहाँ-तहाँ, बेंत वृक्ष की काली टहनियाँ और सरकडे सिर उठाए थे।

देव प्रतिमाओ के कारखाने में कारीगर अक्सर छात्रों का एक गीत गाया करते थे

नीला सागर, नीली लहरें, नीला उसका पानी नील
अम्बर उसका साथी खेले खेल तूफानी!

चारों ओर फैले इस छोटे सागर का जब यह हाल था, त
नीले रंग मे डूबा वह सागर कितना बेरस और बोझिल होता होगा।

"रात को मुझे नींद न आती," मेरे मालिक ने कहा,—
"बिस्तरे से उठ कर मै उसके दरवाजे पर जा खड़ा होता और पिल
की भांति कॉपता रहता। उसका घर क्या था, पूरा बर्फ़खाना थ
उसके मालिक को भी उससे साठ-गाठ थी और अक्सर रात क
वह भी उसके पास जाता था। इस बात का पूरा अन्देशा था कि क
वह मुझे उसके घर पर रगे हाथ न पकड़ ले। लेकिन मै उस
डरता नहीं था...।"

वह कुछ सोचता हुआ सा बोल रहा था, मानो किन्ही पुरा
कपडो को निकाल कर उनकी जॉच कर रहा हो कि इन्हे अब फि
पहना जा सकता है या नही।

"वह मुझे दरवाजे के बाहर खडा देखती और उसे तरस अ
जाता। दरवाजा खोल कर कहती: 'भीतर चले आओ, नटखट लड़के!'

इस तरह की इतनी कहानियाँ मैने सुनी थी कि मेरा म
उनसे पूरी तरह ऊब चुका था। इन सब कहानियो मे, समान रू
से, अगर कोई अच्छी बात थी तो यह कि लोग अपने प्रथम-प्रे
का किस्सा बयान करते समय डीग नहीं मारते थे, अश्लीलता औ
गदगी से उसे बचाते थे और एक कसक के साथ बड़े चाव से उस
की याद करते थे। ऐसा मालूम होता मानो अपने जीवन के श्रेष्ठत
क्षणो की वे याद कर रहे हों। और इसमे कोई शक नही कि कित
ही लोग इस तरह प्रथम प्रेम का जिक्र करते मानो सिवा उसके
अपने जीवन मे अन्य किसी अच्छी चीज से उनका वास्ता नही पड़ा

हँसते और अपने सिर को हिलाते हुए मालिक ने अचरज में भर कर कहा

"अरे जाप रे, मेरी जान भले ही चली जाए, लेकिन पत्नी के सामने इसका कभी ज़िक्र नहीं कर सकता। नहीं, कभी नहीं! यों मैं इसे पाप या बुरा नहीं समझता। फिर भी उसके सामने जाते ही जैसे मुँह बद हो जाता है, जबान खोलने का साहस नहीं होता। मतलब यह ।"

मुझसे नहीं मानो अपने-आपसे वह यह सब कह रहा था। अगर वह चुप रहता तो म बोलता होता। उस निस्तब्धता और शून्य में बातचीत करना, गाना और हरमोनियम बजाना, कुछ न कुछ करना जरूरी था। नही तो डर था कि वह मुर्दा नगर कही हमें भी अपनी चिर निद्रा में न खींच ले, उस ठडे और मले पानी की समाधि म कही हम भी डूब कर न रह जाएँ।

"सब से पहली बात तो यह कि कभी कम उम्र में विवाह न करना!" उसने मुझे सीख देनी शुरू की।—"विवाह, मेरे भाई, अत्यन्त महत्वपूर्ण मजिल है! चाहे जहाँ और चाहे जिस रूप म भी तुम क्या न रहते हो,—चाहे तुम फारस के मुसलमान हो अथवा मास्को के पुलिसमन, तुम बुनकर का काम करते हो, चाहे चोरी-चकारी, हर जगह और हर रूप में चीजों को तुम्हे बदलना पडता है जो तुम्हारी रुचि की नही होतीं। लेकिन अपनी पत्नी को तुम नहीं बदल सकते। पत्नी, भाई मेरे, ऋतु की भाति है, जिससे बदलना सभव नहीं। उसे तुम, पाव की जूती की भांति, जब मन में आए उतार कर रख या फेंक नहीं सकते!"

उसके चेहरे पर से एक छाया सी गुजर गई। भौंहो में बल डाले वह एकटक मले पानी की ओर ताकते और अपनी कुबडी नाक को उँगली से खुजलाते हुए बुदबुदाता रहा

"हाँ, भाई... यह काफी नाजुक मामला है। हो सकता है कि हवा के थपेडे आएँ और तुम्हारा कुछ न विगाड़ सकें। फिर भी, कौन जाने, किस के लिए कहाँ और किस रूप मे जाल विछा है। जरा चूके नही कि गए...।"

हमारी नाव मेश्चेर्स्कोए झील मे उगी झाडियो के वीच से गुजर रही थी जिसका पानी अव वोल्गा से गले मिल रहा था।

"जरा धीरे डॉड चलाओ!" मेरे मालिक ने फुसफुसाकर कहा और वन्दूक उठा कर झाड़ियो की ओर निशाना साधा।

मरियल सी दो-चार मुर्गावियो का शिकार करने के वाद वोला:

"अव सीधे कुनाविनो चलो। आज साँझ वहीं रग रहेगा। तुम घर हो आना। मेरे वारे मे पूछे तो कहना कि मुझे एक ठेकेदार से काम था सो मै वही फस गया।"

वस्ती की एक सडक पर मैने उसे छोड दिया। यहाँ भी वाढ का पानी भरा था। इसके वाद, मेले के मैदान को पार कर, मै स्त्रेल्का लौट आया। नाव को एक जगह वाँध कर मै दोनों नदियो के सगम का, नगर का, छोटे-मोटे जहाजो और आसमान का, नजारा देखने लगा। आसमान मे अव सफेद वादल छितरे थे और ऐसा मालूम होता था मानो वह किसी भीमाकार पक्षी का पख हो। वादलो के वीच नीली झिरियो मे से सुनहरा सूरज झलक रहा था जिनकी एक किरण समूची दुनिया का रग वदलने के लिए काफ़ी थी। चारो ओर खूव चहल-पहल थी, हर चीज़ मे अव गति और जीवन का स्पन्दन दिखाई देता था। डोगों की अन्तहीन पाँते, तेज गति मे वहाव की ओर लपक रही थीं। डोगो पर दाढीवाले दहकान खडे थे और लम्वे वांसों से डाड और चप्पुओं का काम ले रहे थे। वे अपास में चुहलें कर रहे थे, एक-दूसरे को जोरो से पुकार रहे थे और पास से गुजरने वाले जहाजों पर आवाजे कस

रहे थे। एक छोटा-सा जहाज चढाव की ओर एक खाली बजरे को खीच रहा था। नदी का पानी उसे उछालता, पटकनी देकर गिरा देना चाहता और वह, मछली की भाति बल खाकर, फिर सीधा हो जाता। उसकी साँस फूल जाती, वह हाफता और भभकारे लेता, लेकिन पीछे न हटता, पानी को चीरता और उसके निर्मम थपेडो मे जूझता आगे बढ चलता। बजरे पर कधे से-कधा सटाए चार दह-कान बैठे थे, और अपनी टाँगो को नीचे पानी में लटकाए थे। उनमें से एक लाल कमीज पहने था और वे, सब के सब, गा रहे थे। गीत के बोल पकड में नही आते थे, लेकिन उसकी धुन जानी-पहचानी थी।

मुझे लगा कि यहा, नदी के इस वातावरण में, एक भी चीज़ ऐसी नही है जो अजनबी हो, जिससे मेरा लगाव न हो और जो मुझे अनजान तथा अनबूझ मालूम होती हो। लेकिन बाढ में डूबा वह नगर जिसे म छोड आया था, मानो एक दु स्वप्न था, मेरे मालिक के दिमाग की उपज, खुद उसी की भाति अनबूझ।

नदी के दृश्य से खूब तप्त और भरा-पूरा होने के बाद मने नाव खोली और घर लौट आया। पूरी शक्ति का मैंने अनुभव किया और मुझे लगा कि कोई भी काम ऐसा नहीं है जिसे म न कर सकू। रास्ते में ग्रेमलिन पहाडी पडती थी। वहाँ रुक कर मने एक बार फिर वाल्गा का नज़ारा देखा। ऊँचाई से धरती का विस्तार और भी सीमाहीन तथा आशा और उमगा से और भी भरा-पूरा मालूम हुआ।

घर लौटने पर खूब पुस्तके पढता। रानी मारगोट वाले फ्लैट में अब एक बडा परिवार रहता था। पाच लडकियाँ, एक से एक सुदर, इस परिवार की शोभा बढाती थीं। दो लडके थे जो जिम-नाशियम में पढते थे। ये सब पुस्तको के शौकीन थे, और पढने

में पढ़ गया। उनके लिखने का ढंग अद्भुत था: एकदम सादगी लिए, हर बात साफ-साफ समझ में आनेवाली, शरद की नदी की भांति स्वच्छ और पारदर्शी। ऐसे ही उनके पात्र थे, छूते डर लगता कि कहीं मैले न हो जाएँ, निर्मल और पवित्र। उनकी हर चीज, जिसे वह अत्यन्त विनम्र भाव से प्रतिपादित करता, सुन्दर थी — सुन्दर और अद्भुत। मैं पढ़ता और चकित रह जाता।

मैंने पोम्यलोव्स्की कृत "सेमिनारी" उपन्यास पढ़ा। उसके पन्नों में देव-प्रतिमाओं के कारखाने जैसा जीवन इतने सजीव और हू-बहू रूप में चित्रित था कि मैं दंग रह गया। यह एक ऐसा जीवन है जिसमें मैं खुद डूब-उतरा चुका था, जिसकी जान-लेवा ऊब और घुटन से जो क्रूर हरकतों में फूट कर जी हल्का करती थीं, मैं बुरी तरह परिचित था।

रूसी पुस्तकें बड़ी अच्छी मालूम होतीं, बड़े चाव से मैं उन्हें पढ़ता। उनमे मुझे सदा अपनत्व और एक खास तरह की उदासी का अनुभव होता, मानो ईस्टर से पहले व्रत-उपवासो के दिनो मे बजनेवाली गिरजे की घंटियों की ध्वनि उनमें बंद हो। पन्ने खोले नही कि उनका धुधला सगीत प्रवाहित होने लगा।

गोगोल कृत "मुर्दा आत्माएँ" मैंने पढ़ी, लेकिन बेमन से। इसी तरह "मुर्दा घर के पत्र" पढ़ने मे भी मेरा जी नहीं लगा। "मुर्दा आत्माएँ", "मुर्दा घर", "मौत", "तीन मौतें", "जिन्दा लाश" — ये सब पुस्तके एक ही थैली के चट्टे-बट्टे मालूम होतीं और उनके नामो को देख कर ही मेरा मन उनकी ओर से फिर जाता। "जमाने की करतूत", "कदम-ब-क़दम", "क्या करे", "स्मूरिन गाव की कहानी" तथा इसी ठप्पे की अन्य पुस्तके भी मुझे अच्छी नही लगी।

लेकिन डिकेन्स और वाल्टर स्काट के उपन्यास मै बडे चाव से पढता। उनकी पुस्तका को मैं दो-दो और तीन-तीन बार पढता और हर बार खुशी से छलछला उठता। वाल्टर स्काट की पुस्तकें पढ कर छुट्टी या उत्सव के दिन किसी शानदार गिरजे में प्रार्थना के लिए जमा लोगों की भीड याद हो आती। प्रार्थना जरूर कुछ लम्बी और उकता देने वाली मालूम होती, लेकिन गिरजे का वातावरण सदा छुट्टी या उत्सव के उछाह में डूबा रहता। और डिकेन्स के प्रति मेरा गहरा लगाव तो आज दिन तक बना है, जब भी उसे पढता हूँ, मुग्ध हो उठता हू। वह एक ऐसा लेखक था जो कठिनतम कला में—जनता से प्रेम करने की कला में—अत्यन्त दक्ष था, और जिसने इस कला को उच्चतम शिखर पर पहुचा दिया था।

हम लोगो का एक बडा सा दल साझ होने ही बराडे में जमा हो जाता रानी मारगोट के फ्लैट में रहनेवाले भाई और पाँचो बहने, व्याचेस्लाव सेमाश्को नामक एक पिचकी हुई नाक वाला छात्र और कई अय। कभी-कभी एक बडे अफ्सर की लडकी भी हमारे साथ आ बठती। इस अफ्सर का नाम प्तित्सिन था। पुस्तको और कविताओ के बारे में, जो मुझे अत्यन्त प्रिय थी और जिनमें मेरी अच्छी गति थी, वे बाते करते। मै इन सब से ज्यादा पुस्तके पढ़ चुका था। लेकिन अक्सर वे स्कूल की बाते करते, अपने शिक्षको का रोना रोते। म उनकी बात सुनता और मुझे लगता कि मेरा जीवन उनसे ज्यादा उन्मुक्त है। मुझे अचरज होता कि वे यह सब कैसे बरदाश्त कर लेते है। लेकिन, यह सब होने पर भी, मै उनसे ईर्ष्या करता क्या कम बडी बात थी कि वे अध्ययन कर रहे थे।

मेरे सगी-साथी उम्र में मुझसे बडे थे लेकिन मुझे लगता कि मैं उनसे ज्यादा परिपक्व और अनुभवी हूँ। यह भावना मुझे भीतर

ही भीतर कचोटती और उनके तथा मेरे बीच एक दीवार सी खड़ी कर देती। इस दीवार को तोड़ने के लिए मैं बेचैन हो उठता और उनके साथ घुल-मिल कर रहना चाहता। दिन-भर मैं काम करता और काफी सांझ बीते, धूल और गर्द से लथपथ हृदय में सर्वथा भिन्न दुनिया की गहरी और विचित्रतापूर्ण छाप लिए, घर लौटता। इसके प्रतिकूल मेरे संगी-साथियों के अनुभव, कुल मिला कर, सदा एक से होते। लड़कियों के बारे में सब बातें करते, पहले एक से प्रेम चलता फिर दूसरी से। वे कविताएं लिखना चाहते, और इसके लिए अक्सर मेरे पास आते। मैं बड़े चाव से तुकबन्दियों पर हाथ आजमाता। मैं तुक जोड़ने में दक्ष था, गीत की कड़ियां अपने-आप गुथ जातीं, लेकिन जाने क्यों मेरी कविताएं हमेशा हास्य रस की रचनाएं बन जातीं। ज्यादातर कविताएं प्तितसिन की लड़की को लक्ष्य कर लिखी या लिखवाई जाती और मैं, अदबदा कर, किसी सब्जी से—आम तौर से प्याज से—उसकी तुलना करता।

सेमाश्को कहता:

"इन पंक्तियों को तुम कविता कहते हो? ये कीलें हैं, कीलें, जिन्हें चमार जूतों में ठोकते हैं!"

अन्य किसी से पीछे न रहने की होड़ में मैं भी प्तितसिन की लड़की से प्रेम करने लगा। यह तो याद नहीं पड़ता कि मैं अपने प्रेम को किस तरह उसके सामने व्यक्त करता था, लेकिन इस प्रेमचक्र का अन्त दुःखद ढंग से हुआ। एक दिन मैंने उससे कहा कि चलो, ज्वेज्दिन कुंड चलें। कुंड के बंद और गंदे पानी पर एक तख्ता तैर रहा था। तय किया कि उसी पर बैठ कर कुंड की सैर की जाएगी। वह इसके लिए तैयार हो गई। तख्ते को खींच कर मैं किनारे पर ले आया और उसपर खड़ा हो गया। तख्ता काफी मजबूत था और मजे में मेरा बोझ संभाल सकता था। लेकिन

लड़की ने जो बेल-बूटों और फीता से सजी बिल्कुल गुड़िया बनी हुई थी, सैंकड़ों बल खाते हुए जब तख्ते के दूसरे सिरे पर पाँव रखा तो कम्बख्त तख्ता धचका खा गया और वह कुंड में जा गिरी। मैं भी सच्चे प्रेमी की भाँति उसके साथ ही साथ कूदा और पलक झपकते उसे पानी से बाहर निकाल लाया। लेकिन भय और पानी की हरी काई ने लिपट कर उसे बिल्कुल चोचा का मुरब्बा बना दिया था, और उसके सारे सौन्दर्य का बिगाड़ डाला था।

कीचड़ में लथपथ उसने अपना घूसा ताना और दाँत पीसते हुए बोली

"तुमने जान-बूझ कर मुझे पानी में धक्का दिया!"

मैंने बहुतेरी माफी मांगी, लेकिन उसपर कोई असर नहीं हुआ और वह मेरी पक्की दुश्मन बन गई।

नगर का जीवन कुछ ज्यादा दिलचस्प नहीं था। बूढ़ी मालकिन अभी भी मुझसे कुढ़ती और छोटी सन्देह की नजर से देखती। बीवतर के चेहरे पर भरे धब्बों की झालर अब और भी घनी हो गई थी, जो भी उसके सामने पड़ता उसीपर फनफना उठता, मानो सभी से खार खाए बैठा हो।

मालिक के पास नक्शा बनाने का इतना अधिक काम था कि वह और उसका भाई दोनों मिल कर भी उसे नहीं निबटा पाते थे। इसलिए उसने मेरे सौतेले पिता को भी हाथ बंटाने के लिए बुला लिया।

एक दिन, मेले के मैदान से, मैं कुछ जरूरत से ज्यादा जल्दी लौट आया। भोजन के कमरे में पाँव रखा ही था कि एक ऐसे आदमी पर मेरी नजर पड़ी जिसे मैं, बहुत पहले ही, अपने दिमाग से खारिज कर चुका था। मेरे मालिक के साथ वह चाय की मेज पर बैठा था। मुझे देखते ही उसने अपना हाथ बढ़ाया। बोला

मुझसे यह सहन नही होता। नगर के अपढ और जाहिल निवासी जिस बुरी तरह बुद्धिजीवियों की टांग खींचते और उन्हे नाहक कोचते थे, उसने मुझे अपने सौतेले पिता का पक्ष लेने के लिए मजबूर कर दिया। इन लोगों से तो टोकरटम्, कुकुरमुत्ते ही अच्छे। जहरीले जरूर होते है, लेकिन कम से कम देखने मे खूबसूरत तो लगते है।

इन लोगो की दमघोट संगत में मेरे सौतेले पिता की करीब-क़रीब वैसी ही हालत थी जैसी कि मुर्गियो के दड़बे में फसी मछली की। कहाँ मुर्गियो का दड़बा और कहाँ मछली, — लेकिन यह तुलना भी उतनी ही बेजोड और बेढगी थी, जितना बेजोड और बेढगा जीवन हम बिता रहे थे।

मुझे लगा कि मेरे सौतेले पिता में भी वैसे ही गुण मौजूद है जो कि मैने कभी 'वाह भाई खूब' मे देखे थे, जिन्हे मैं कभी नही भूल सकता। 'वाह भाई खूब' और रानी मारगोट मेरी नजर मे मानो उस समूचे सौन्दर्य के मूर्तिमान रूप थे जो मैने पुस्तको से प्राप्त किया था। अपने हृदय के श्रेष्ठतम तत्वो और सुन्दरतम कल्पनाओ से मैने उन्हे सजाया था। पुस्तके पढने पर एक से एक सुन्दर चित्र मेरे दिमाग मे उभरते और सब जैसे उनके साथ सम्बद्ध हो जाते। मेरा सौतेला पिता भी 'वाह भाई खूब' की भांति उतना ही अकेला और उतना ही अनचाहा था। घर में हरेक के साथ वह समानता का व्यवहार करता, अपनी ओर से कभी किसी बात मे टांग नहीं अड़ाता और सक्षेप मे तथा विनम्रता के साथ सभी सवालों के जवाब देता। जब वह मेरे मालिक को सीख देता तो उसकी बातें सुनने मे बडा मजा आता। मेज़ के पास खड़ा हुआ वह करीब-करीब दोहरा हो जाता, दबीज और भारी कागज को उगली के लम्बे नाखून से ठकठकाता और शान्त स्वर मे समझाना शुरू करता :

"देखो, इस जगह शहतीर में एक टाट डालने की जरूरत है, जिससे कि मारा दबाव इसीपर न पड़े। अगर ऐसा न किया तो शहतीर मय दीवार के भरभरा कर गिर पड़ेगा।"

"बात तो ठीक ह, लेकिन कौन मगज़ मारे!" मालिक बडबडाता।

जब सौतेला पिता चला जाता तो उसकी पत्नी उसे कोचती

"तुम भी कसे आदमी हो? जो भी आता है, वही कान पकड कर सबक पढाना शुरु कर देता है।"

साँझ के भोजन के बाद सौतेला पिता बिला नागा अपने दात माँजता और सिर पीछे की ओर फेंक कर इस तरह गरारे करता कि उसका टेंटुवा निकल आता। मालकिन, न जाने क्यो, यह देखकर जल-भुन कर कलावत्तू हो जाती। जब नही रहा जाता तो कहती

'मेरी समझ में इस तरह गरदन उठा कर गरारे करना तुम्हारे लिए घातक हो सकता है, येवगेनी वसीलीयेविच!"

वह केवल मुसकराता और विनम्र स्वर में पूछता

"क्या, तुम ऐसा क्या सोचती हो?"

"इसलिए कि मुझे कुछ ऐसा ही मालम होता है।"

इसके बाद हड्डी की एक छोटी-सी कनी लेकर वह अपनी उगलियो के नीले-नीले नाखून साफ करता और उसकी पीठ फिरते ही मालकिन चहक उठती

"देखा न, यह अपने नाखून तक साफ करता है। एक पाँव कब्र में लटका है, लेकिन फिर भी ।"

"अरी मुड़क मुर्गियो!" मालिक लम्बी साँस खींचते हुए कहता।—"क्या सारी बेवकूफी तुम्हारे ही हिस्से में आई है!"

उसकी पत्नी पाँव पटकती

"ऐसी बात मुँह से निकालते तुम्हारी ज़बान गल कर नहीं गिर जाती!"

रात को बूढ़ी मालकिन ख़ुदा के कान खाती:

"मेरी छाती पर मूंग दलने के लिए अब वे इस मरदुए को घर मे ले आए है, भगवान! मेरे वीक्तर को कोई नही पूछता।"

वीक्तर ने भी मेरे सौतेले पिता का रंग-ढग अपनाना शुरू कर दिया, वैसे ही धीमे अन्दाज़ मे वह चलता, उसकी भाति ही रईसाना और सुनिश्चित अन्दाज मे हाथो को हरकत देता, उसी की भांति अपनी टाई मे गांठ लगाता और वैसे ही बिना चटख़ारे लिए और चपाचप की आवाज किए, खाना खाने की कोशिश करता। फिर, अकखड़ अन्दाज़ मे, पूछता:

"मक्सिमोव, फ़्रान्सीसी भाषा मे 'घुटने' को क्या कहते है?"

"मेरा नाम येवगेनी वसीलीयेविच है," मेरे पिता शान्त भाव से उसकी भूल सुधारते।

"कोई बात नहीं। और 'छाती' के लिए फ़्रान्सीसी भाषा मे क्या शब्द है?"

साँझ को जब खाने बैठता तो अपनी माँ पर उल्टे-सीधे फ़्रेंच शब्दो की झड़ी लगा देता:

"मा मेर, दोन्ने मुअज़न्कोर सूअर का गोश्त!"

बड़ी मालकिन की बाछे खिल जाती। कहती:

"अरे ओ, फ़्रास की दुम!"

मेरा सौतेला पिता, बिना किसी परेशानी के गूंगे और बहरे आदमी की भाति अपना माँस चबाता रहता। न वह किसीकी बात सुनता, न मुँह से बोलता, न किसीकी ओर आँख उठा देखता।

एक दिन बड़ा भाई छोटे भाई से बोला:

"बीक्तर, फ्रेंच भाषा बोलना तो तुम सीख गए, अब कोई छाकरी भी ले आओ तो अच्छा हो।"

मेरे सौतेले पिता ने जब यह सुना तो उसके चेहरे पर शान्त मुसक्राहट फैल गई। इससे पहले और बाद में भी, मैंने उसे मुसकराते नहीं देखा।

लेकिन मेरे मालिक की पत्नी यह सुनकर आग-बगूला हो गई। चम्मच को मेज पर पटक्ते हुए भुभला कर चिल्लाई

"तुम तो सारी हया-शर्म घाट कर पी गए हो! घर की स्त्रियो के सामने इस तरह की बाते करते तुम्हे जरा भी शर्म नहीं आती!"

पिछल दरवाजे के पास, तिदरी के जीनें के नीचे, मैं सोता था। जीने में एक खिडकी थी जहाँ बठ कर म पुस्तके पढता था। कभी-कभी मेरे सौतेले पिता घूमते हुए उधर आ निकलते।

"क्या, पढ रहे हो?" एक दिन उसने पूछा और इतने जोरो से सिगरेट का कश खीचा कि उसके सीने के भीतर जलती हुई लकडी के चटखने जसी आवाज सुनाई दी। फिर बोला "कौनसी पुस्तक है?"

मैंने उसे पुस्तक दिखा दी।

"ओह!" उसने पुस्तक के शीर्षक पर नजर डाली और बोला "इसे तो शायद मै भी पढ चुका हू। सिगरेट पियोगे?"

हम दोनो सिगरेट का धुवाँ उडाते और खिडकी में से गदे अहाते की ओर देखते रहे।

"कितनी बुरी बात है कि तुम्हारी पढाई-लिखाई का कोई [illegible] नहीं है," उसने कहा,—"मुझे तो तुम काफी होशियार [illegible]म होते हो।"

"लेकिन पढता तो हू। देखो न ।"

"यह काफी नही है। तुम्हें स्कूली शिक्षा की जरूरत है, जिसका एक ढग और कायदा होता है।"

मेरे मन में हुआ कि उससे कहूँ:

"तुमने तो वाकायदा स्कूली शिक्षा पाई थी, भले आदमी। लेकिन देखो न, क्या हाल हो गया है तुम्हारा!"

उसने मानो मेरे मन की वात भाप ली। वोला:

"अगर हृदय में किसी अच्छे लक्ष्य और उद्देश्य का वल हो तो स्कूली शिक्षा वड़ी मदद देती है। केवल पढ़े-लिखे लोग ही इस जीवन का चोला वदल सकते है।"

वह अक़्सर सलाह देता:

"अच्छा हो कि तुम यह जगह छोड दो। यहाँ पड़े रहने मे कोई तुक या लाभ नही है।"

"लेकिन मजदूर और कारीगर मुझे अच्छे लगते है।"

"किस मानी मे?"

"वे दिलचस्प होते है।"

"हो सकता है...।"

एक दिन कहने लगा:

"जो हो, हमारे ये मालिक दरिन्दे है, पूरे दरिन्दे।"

मुझे उन क्षणो और परिस्थितियो की याद हो आई जव कि मेरी माँ ने सौतेले पिता के विरुद्ध, ठीक इन्ही शव्दों का प्रयोग किया था। मुझे ऐसा मालूम हुआ जैसे मेरा पाँव अगारे पर पड़ गया हो।

"क्यो, क्या तुम मुझसे सहमत नही हो?" मुस्कराते हुए उसने पूछा।

"पूरी तरह सहमत हूँ।"

"ठीक है, तुमसे मै इसीकी आशा करता था।"

"लेकिन मुझे अपना मालिक फिर भी पसन्द है।"

"यों तो मुझे भी वह अच्छे हृदय का आदमी मालूम होता है। लेकिन बेवकूफ है।"

मैं उससे पुस्तकों के बारे में बातें करना चाहता था, लेकिन इस ओर उसमें कोई खास लगाव नहीं दिखाई दिया।

"पुस्तकों में इतना ज्यादा दिमाग खपाने की जरूरत नहीं," वह अक्सर कहता, — "तिल का ताड़ बनाना पुस्तकों की विशेषता है। कोई चीजों की लम्बाई के रुख खींचतान करता है, और कोई चौड़ाई के रुख। लेखक भी, ज्यादातर, हमारे इन मालिकों की भांति है ओछे लोग!"

जब वह इस तरह की बातें करता तो मुझे लगता कि वह कोई बहुत ही साहसपूर्ण काम कर रहा है, और मुंह बाये मैं उसकी ओर देखता रहता।

"क्या तुमने गोंचारोव के उपन्यास पढ़े हैं?" एक दिन उसने पूछा।

" "फ्राइगेट पल्लादा" पढ़ा है," मैंने जवाब दिया।

" "पल्लादा" तो ऊबा देने वाला उपन्यास है। लेकिन मोटे तौर से गोंचारोव रूस के अत्यन्त समझदार लेखकों में से है। तुम उसका "ओब्लोमोव" उपन्यास जरूर पढ़ना। यह एक अत्यन्त साहसपूर्ण और सचाई से भरा उपन्यास है। और घुल मिला कर सी साहित्य में इसका श्रेष्ठतम स्थान है।"

डिकेन्स के बारे में वह कहता

"एकदम कूड़ा मेरी यह राय सोलहों आने सही है। िन आजकल "न्यु टाइम्स" के सप्लीमेण्ट में एक बहुत ही िनचस्प चीज छप रही है। इसका नाम है "सन्त एन्थोनी का ामना-चक्र"। तुम जरूर पढ़ना। गिरजे और दीन-धर्म की बातों

मे तुम्हारी दिलचस्पी तो काफी मालूम होती है। "कामना-चक्र" से तुम्हे काफी लाभ पहुँचेगा।"

सप्लीमैण्टो का एक अच्छा-खासा ढेर खुद उसने लाकर मेरे सामने रख दिया और फ्लावर्ट की इस दैवी कृति को मै पढ गया। उसे देख कर मुझे उन अनगिनती सन्तो की जीवनियाँ याद हो आई जिन्हे मै पढ चुका था। धर्मशास्त्री के मुँह से भी उस तरह के अनेक किस्से और कहानियाँ सुन चुका था। जो भी हो, उसका मेरे हृदय पर कोई गहरा असर नही पडा। उससे ज्यादा आनन्द तो मुझे उपिलियो फैमाली नामक एक पशु-पालक के सस्मरण पढ़ने में आया जो इन्ही सप्लीमैण्टो मे छपे थे।

अपने सौतेले पिता के सामने जब मैने यह बात स्वीकार की तो शान्त स्वर में उसने कहा.

"इसका मतलब यह कि अभी तुम्हारी उम्र इस तरह की पुस्तके पढने लायक नही है। जो हो, उस पुस्तक को भूलना नहीं।"

कभी-कभी वह मेरे पास घटों बैठा रहता, मुँह से एक शब्द न कहता, केवल जब-तब खाँसता, और सिगरेट के धुवे के बादल उडाता रहता। उसकी सुन्दर आँखो मे कुछ ऐसी चमक थी कि देख कर डर लगता। चुप-चाप बैठा हुआ मै उसकी ओर देखता रहता, और इस बात का मुझे जरा भी ध्यान नहीं रहता कि यह आदमी जो इतनी खामोशी के साथ तिल-तिल करके गल रहा है और जिसके मुँह से शिकायत का एक शब्द भी नहीं निकलता, किसी जमाने मे मेरी माॅ के तन-मन का स्वामी था, और माँ के साथ क्रूरता से पेश आता था। मै जानता था कि आजकल किसी दरजिन से उसकी आशनाई है, और जब कभी उस दरजिन का मुझे खयाल आता तो तरस और अचरज की भावना से मेरा हृदय भर जाता था। मै यह सोच कर स्तब्ध रह जाता कि

उसकी लम्बी हड्डियो के आलिगन में बधना और उसका मुंह चूमना जिसमें से हर घडी सडाध निकलती थी, वह कसे बरदाश्त करती होगी।

'वाह भाई खूब' की भाति मेरा सौतेला पिता भी एकाएक ऐसी टिप्पणियाँ कसता जो अपनी मौलिकता में बेजोड होती।

"शिकारी कुत्ते मुझे बेहद पसद है, वे बेवकूफ होते है, लेकिन फिर भी मुझे अच्छे लगते है। वे बहुत ही सुन्दर होते है। सुन्दर स्त्रियाँ भी अक्सर बेवकूफ होती है।"

कुछ गर्व का अनुभव करते हुए मै मन ही मन सोचता

"रानी मारगोट को अगर तुमने देखा होता तो कभी इस तरह की बात न करते।"

एक दिन उसने कहा

"जो लम्बे अर्से तक एक साथ रहते है, धीरे-धीरे शक्ल में भी एक से हो जाते है।"

उसका यह कथन मुझे इतना अच्छा लगा कि मैने उसे अपनी नोटबुक में दर्ज कर लिया।

मै उसकी ओर ताकता और उसके मुंह से निकलने वाले शब्दो और वाक्यो की इस तरह प्रतीक्षा करता मानो शीघ्र ही सौन्दर्य की कोई मूर्तिमान प्रतिमा प्रकट होने वाली हो। इस घर में जहाँ लोग, एक सिरे से, बेरग और बेरस, घिसी पिटी और जगखाई भाषा में बाते करते उसके मुंह से मौलिक शब्दो और वाक्यो को सुन कर हृदय खुशी से नाच उठता।

मेरा सौतेला पिता माँ के बारे में मुझसे कभी बात नही करता। बात करना तो दूर, मेरे सामने उसने माँ का एक बार भी नाम तक नही लिया। यह अच्छा ही था। एक तरह से कृतज्ञता और आदर के भाव का मैने उसके प्रति अनुभव किया।

एक दिन, यह तो याद नहीं पड़ता कि किस सिलसिले में, मैंने उससे खुदा के बारे में सवाल किया। उसने एक नजर मुझे देखा और फिर बहुत ही निश्चल अन्दाज में बोला:

"मुझे नहीं मालूम। मैं खुदा में विश्वास नहीं करता।"

मुझे सितानोव का ध्यान हो आया। अपने सौतेले पिता से मैंने उसका जिक्र किया। जब मैं अपनी बात पूरी कर चुका तो सौतेले पिता ने वैसे ही निश्चल अन्दाज में कहा:

"वह हर चीज को बुद्धि और तर्क की कसौटी पर कसना और समझना चाहता है, और जो लोग ऐसा करते हैं वे हमेशा किसी-न-किसी चीज में विश्वास करते हैं। लेकिन मैं किसी चीज में विश्वास नहीं करता।"

"लेकिन यह तो एक असम्भव बात है।"

"क्यों, असम्भव क्यों है? मैं तुम्हारे सामने मौजूद हूं, तुम अपनी आँखों से देख सकते हो कि मैं किसी चीज में विश्वास नहीं करता।"

लेकिन मुझे केवल एक ही चीज दिखाई देती थी: यह कि वह तिल-तिल करके मौत का निवाला बन रहा है। यह तो नहीं कहा जा सकता कि मेरे हृदय में उसके प्रति तरस की भावना थी, लेकिन एक साथी-मानव की मौत ने, खुद मौत के रहस्य ने, पहली बार इतनी गहराई से मेरे हृदय का स्पर्श किया।

वह मेरे पास, एकदम बराबर में ही, बैठा था। उसका घुटना मेरे घुटने का स्पर्श कर रहा था। संवेदनशील और बुद्धिमान, लोगों को वह उस नाते की नज़र से देखता जिससे कि वह उनके साथ बंधा या नहीं बंधा था, हर चीज के बारे में वह इस विश्वास से बातें करता मानो उसे राय देने और नतीजे निकालने का अधिकार हो। मुझे ऐसा अनुभव होता मानो वह उन तत्वों को अपने भीतर

छिपाए हो जो मेरे लिए आवश्यक थ या जो कम से कम अनावश्यक चीजों को मुझसे दूर रखते थे। वह एक ऐसा जीव था जो शब्दो द्वारा व्यक्त न की जा सकने वाली पचीदगी से भरा था, सही अर्थों में विचारो का ज्वालामुखी। उन तमाम भावो और विचारो के बावजूद जो मेरे हृदय में उसके लिए मौजूद थे, वह जैसे मेरा ही अश था, एक ऐसा जीव जो मेरे अन्तर के किसी कोने में निवास करता था, मेरे चिन्तन का केन्द्र, मेरी आत्मा का सहज साथी। कल वह विलीन हो जाएगा पूर्णतया विलीन हो जाएगा, सब उन सब बातो और भावनाओ के जो उसके हृदय और मस्तिष्क में छाई थी और जिनकी एक झलक मुझे उसकी सुन्दर आंखो में दिखाई देती थी। जब वह विलीन हो जाएगा, कुछ भी उसका शेष नही रहेगा, तो जीवन के उन सूत्रो में से एक सूत्र खडित हो जाएगा जो मुझे इस दुनिया से बाधे हुए है, उसकी केवल एक स्मृति भर रह जाएगी, लेकिन यह स्मृति पूर्णतया मेरे ही अन्तर म रहेगी, परिवर्तनहीन और कभी न नष्ट होने वाली, जब कि जीवित और परिवर्तनशील, उसके मानवीय शरीर का, कुछ भी शेष नही रहेगा ।

लेकिन ये केवल भावनाए और विचार मात्र ह, इनमे भी परे वह अनबूझ चीज है जिसके गर्भ म विचार जन्म लेते, बढते और पलते है, एक ऐसी चीज जिसका आदेश टाला नही जा सकता और जो हमें जीवन के घटनाक्रम पर सोचने के लिए बाध्य करती है, और इस सवाल का जवाब माँगती है कि क्यो, ऐसा क्या है?

"ऐसा लगता है कि शीघ्र ही मुझे बिस्तर की शरण लेनी होगी," एक दिन जब कि बूदा-बादी हो रही थी मेरे सौतेले ने कहा,—"और मेरी इस कमजोरी की लाटसाहबी तो देखो, कोई काम करने को जी नही चाहता।"

अगले दिन, चाय के समय, उसने मेज और अपने घुटनों पर से जूठन के कण साफ करने में कमाल कर दिया, और देर तक इस तरह हाथों को हरकत देता रहा मानो किसी अदृश्य गंदगी को भगाने और भाड़ने का प्रयत्न कर रहा हो। बूढ़ी मालकिन ने पलकों के नीचे से उसकी ओर देखा, और अपनी वहू से फुसफुसा कर बोली:

"देखो न, किस तरह अपने परों और बालों को नोच और भाड़-पोंछ कर सवार रहा है...।"

इसके दो दिन बाद वह काम पर नहीं आया, और एक दिन बूढ़ी मालकिन ने मुझे एक बड़ा सा सफ़ेद लिफाफ़ा देते हुए कहा:

"यह लो, कल दोपहर के क़रीब एक लड़की इसे लेकर आई थी, लेकिन मैं भूल गई और तुम्हें देना याद नहीं रहा। लड़की जवान और सुन्दर थी। मेरी समझ में न आया कि तुम्हारे नाम इस तरह खर्रे लिखने की उसे क्यों सूझी?"

लिफाफे के भीतर, बड़े-बड़े अक्षरों में, अस्पताली कागज पर निम्न संदेश लिखा था:

"एकाध घंटे का समय मिल सके तो आना। मैं मारतीनो-वस्काया अस्पताल में हूँ।—ये०म०।"

अगले दिन सवेरे ही मैं अस्पताल पहुँच गया और एक वार्ड में अपने सौतेले पिता के पायताने जाकर बैठ गया। वह बिस्तरे से भी लम्बा था, और उसके पाँव जिनमें वह भूरे रंग के फ़टे-पुराने मोज़े पहने थे, पलग के पायताने से बाहर निकले थे। उसकी खूबसूरत आँखें पीली दीवारों का चक्कर लगातीं और मेरे चेहरे तथा उस लड़की के छोटे-छोटे नाजुक हाथों पर आकर टिक जातीं जो उसके सिरहाने एक स्टूल पर बैठी थी। जब कभी उसके तकिये पर वह अपने हाथ रखती तो मेरा सौतेला पिता, मुँह बाए, अपने

गाल से उन्हे सहलाता। लडकी गुदगुदे वदन की थी, और गहरे रग की सादी पोशाक पहने थी। उसके अटाकार चेहरे पर आसुओ की भडी लगी थी और उसकी नीली आँखें सौतेले पिता के चेहरे पर, उसके गालो की बुरी तरह उभरी हड्डियो पर, पिचकी हुई नाक और बेरग, मुर्दनी छाए मुँह पर, जमी थी।

"अगर इस आखिरी वक्त खुदा का नाम इसके कानो में पड जाता," एकाएक वह फुसफुसाई,—"लेकिन यह है कि पादरी का मुह तक नही देखना चाहता। इसे कोई कसे समझाए ।"

उसने तकिए से अपने हाथ उठा लिए और उन्हे इस तरह अपनी छातिया पर रखा मानो खुदा की याद कर रही हो।

एक क्षण के लिए मेरे सौतेले पिता में कुछ चेतना का सचार हुआ। भौंहे चढा कर उसने छत की ओर ताका मानो किसी चीज की याद कर रहा हो। इसके वाद उसने अपना क्षयग्रस्त हाथ मेरी ओर फला दिया।

"ओह तुम तुम आ गए बहुत, बहुत शुक्रिया देखो न ्या वेवकूफी की हालत है यह भी ।"

यह कहते-कहते वह थक गया और उसने अपनी आँखें मूद लीं। नीले नाखून वाली उसकी लम्बी और सर्द उगलियो को मने सहलाया, और लडकी ने धीमे स्वर में फिर अनुरोध किया

"येवगेनी वसीलीयेविच, मेरी खातिर मान जाओ। पादरी का ।"

सौतेले पिता ने आँखें खोली और उसकी ओर इशारा करते हुए मुझसे बोला

"इसे जानते हो? यह बहुत प्यारी ।"

उसकी जुबान रुक गई, मुह और भी ज्यादा खुल गया, और एकाएक भरभराई सी आवाज में कौवे की भाति चीख उठा। वह

बुरी तरह से छटपटाया, कम्बल उतर कर अलग हो गया और पलग पर बिछे गद्दे को उसने अपने हाथो मे दबोच लिया। लड़की के हृदय से भी एक चीख निकली और कुचले हुए उसके तकिए मे सिर गडा कर सुबकियाँ भरने लगी।

सौतेले पिता को मरने मे जरा भी देर नहीं लगी। बदन के ठडा पडते ही उसके चेहरे पर एक अद्‌भुत शान्ति छा गई, और उसकी आकृति का समूचा सौन्दर्य लौट आया।

लडकी को अपनी बाँह का सहारा दिए मै अस्पताल से चल दिया। वह रो रही थी और उसके पाँव इस तरह लडखडा रहे थे मानो बहुत दिनो की बीमार हो। उसके हाथ में एक रुमाल था जिसे दबा-सिकोड कर उसने गेद बना लिया था, और रह रह कर उससे पहले एक आँख के आँसू सोखती थी और फिर दूसरी के। रुमाल के इस गेंद को उसका हाथ बराबर कस और दबोच रहा था, और इस तरह वह उसे सभाले थी मानो वह उसकी आखिरी और जान से भी ज्यादा प्रिय निधि हो।

एकाएक वह ठिठक कर खड़ी हो गई और निढाल सी हो कर मेरे बदन से टिक गई। फिर वेदना और शिकायत में डूबे स्वर मे बोली:

"जाडों तक भी तो वह जीवित नही रहा... आह मेरे भगवान, तूने यह क्या किया... क्यो तू इस तरह लोगो को मरने देता है, मेरे भगवान?"

इसके बाद, आँसुओ मे भीगा अपना हाथ उसने मेरी ओर बढाया और बोली:

"अच्छा तो मै अब चलती हूँ। वह हमेशा तुम्हारी तारीफ करता था। कल उसकी मिट्टी...।"

"चलो, तुम्हे घर तक तो छोड आऊँ।"

उसने एक नज़र इधर-उधर देखा। फिर बोली

"क्या ज़रूरत है? अभी काफी उजाला है।"

एक नुक्कड पर खडा हुआ मै देर तक उसे देखता रहा। उसके डग बहुत ही अनमने भाव से सडक पर पड रहे थे। ऐसा मालूम होता था मानो जीवन में उसके लिए अब कोई सार न रहा हो, उसकी समूची दिलचस्पी और लगाव छिन्न-भिन्न हो गया हो।

वह अगस्त का महीना था। पेडो से पत्ते झड-झड कर गिर और हवा में उड रहे थे।

अपने सौतेले पिता के आखिरी क्रिया-कर्म में मै शामिल नहीं हो सका, और न ही उस लडकी से फिर कभी मेरी भेंट हुई ।

१७

हर रोज सुबह के छ बजे ही मै मेले के मदान की ओर रवाना हो जाता, जहाँ मै काम करता था। वहाँ काफी दिलचस्प लोगा से मेरी मुठभेड होती। सफेद बालो वाला बढई ओसिप जिसकी जबान छुरी की धार की भाति तेज थी। वह बहुत ही होशियार कारीगर था और देखने मे बिल्कुल सन्त निकोलाई मालूम होता था। कुबडा येफीमुश्का जो छत छाने का काम करता था, रगसाज प्योत्र जो पक्का भगत था, हमेशा कुछ न कुछ सोचता रहता था और देखने में किसी सत की भाति मालूम होता था। प्लास्तरसाज ग्रिगोरी शिशलिन जो देखने में खूबसूरत था सुनहरी दाढ़ी, नीली आँखें, और चेहरे पर शात तथा भले स्वभाव की चमक।

नक्शानवीस के यहाँ अपनी नौकरी के दूसरे दौर में ही म र लोगो से परिचित हो गया था। हर इतवार को वे आते और न ही रोगीन तथा ठाठदार अन्दाज में रसोईघर में प्रवेश करते। हुत ही बढ़िया ढग से वे बात करत और रगीने तथा लच्छेदार

शब्दों की झड़ी लगा देते। उनकी बातों में मुझे एक नयापन और अजीब ताजगी दिखाई देती। भारी-भरकम डीलडौल वाले ये दहकान मुझे सिर से पाँव तक भले मालूम होते। वे सभी, अपने-अपने ढंग से, दिलचस्प थे और कुल मिलाकर कुनाविनो के कमीने, नशेबाज़ तथा चोर व्यापारियों से लाख दर्जे अच्छे थे।

शिशलिन नामक प्लास्तरसाज से मेरी खूब पटती थी। वह मुझे बहुत अच्छा लगता। एक दिन तो मैंने उससे यह तक कहा कि काम सिखाने के लिए मुझे अपना शागिर्द बना ले। लेकिन उसने मंजूर नहीं किया। गोरी-चिट्टी उँगलियों से अपनी सुनहरी भौंहों को खुजलाते हुए नर्मी से बोला:

"अभी तुम्हारी उम्र बहुत कम है। हमारा धंधा आसान नहीं है, अभी एक-दो साल और ठहर जाओ।"

इसके बाद, अपने खूबसूरत सिर को जरा पीछे की ओर फेंकते हुए, बोला:

"क्यों, जीवन बहुत कठोर मालूम होता है, क्या? लेकिन कोई बात नहीं। बस डटे रहो, अपने पर जरा काबू रखो, सब ठीक हो जाएगा।"

यह तो नहीं कह सकता कि उसकी इस भली सीख से क्या कुछ लाभ मैंने उठाया, लेकिन मुझे अब तक वह सीख याद है और उसके प्रति कृतज्ञता से मेरा हृदय भरा है।

यह लोग हर रविवार की सुबह अब भी मेरे मालिक के घर जमा होते, रसोईघर में खाने की मेज के चारों ओर बेंच पर बैठ जाते और दिलचस्प बातें करते हुए मालिक के आने का इन्तज़ार करते। मेरा मालिक आता, जोरों से, खुश होकर उनका अभिवादन करता, उनके मज़बूत हाथों को अपने हाथ में लेकर हिलाता और देवमूर्ति वाले कोने की तरफ बेंच पर बैठ जाता। इसके बाद सप्ताह-भर का हिसाब-किताब शुरू हो जाता, दहकान अपने बिलों

और फटी-पुरानी बहियो को निकाल कर मेज पर फैला लेते, नोट की गड्डियो और रसीदो का आदान-प्रदान होता।

मेरा मालिक उन्हे और वे मेरे मालिक को धोखा देने के लिए जी भर कर कड़वी-मीठी बातो का सहारा लेते कभी हँसते, कभी चुटकियाँ लेने और ताने कसते। कभी-कभी खूब भिक-भिक होती, गहरे झगड़े तक की नौबत आ जाती, लेकिन आम तौर से हसी-खुशी और एक-दूसरे के साथ छेड-छाड के वातावरण में ही वे सारा हिसाब निबटा लेते।

"वाह मित्र, मालूम होता है कि किसी बहुत ही चालाक दाई ने तुम्हे घुट्टी पिलाई थी," वे मेरे मालिक से कहते।

झेंपती सी हँसी हँसते हुए वह जवाब देता

"तुम्ही कौन कम हो—जरा आँख बची कि माल यारो का! क्यो, ठीक कहता हू न, कुडक मुर्गो!"

येफीमुश्का ताईद करता

"ठीक कहते हो। इसके सिवा और हो भी क्या सकता है?"

हर घडी विचारो में डूबा रहने वाले भगत प्योत्र ने कहा

"चोरी से कमाये-बचाये माल पर ही तो आजकल गुजारा है। ईमानदारी की सारी आमदनी तो खुदा और जार के चढावे में चली जाती है।"

"तब तो तुम्हारी थोडी-बहुत हजामत बना लेना कोई पाप नहीं है," मेरा मालिक हसते हुए कहता।

वे भी मजाक में ही जवाब देते

"इसका मतलब कि हमको उल्लू बनाना चाहते हो?"

"हममे चार सौ बीसी!"

ग्रिगोरी शिशलिन ने अपनी झाडदार दाढी पर हाथ फेरा जो नीचे पेट तक फैली हुई थी। फिर गुनगुनाते हुए बोला

"क्यो भाइयो, अगर हम एक-दूसरे को धोखा दिए विना अपना कारवार करें तो कैसा हो? एकदम ईमानदारी से। न कोई झंझट, न झगडा। सारा काम इतनी सहूलियत से हो कि पता तक न चले। वोलो, भले लोगो, तुम्हारी क्या राय है इस वारे मे?"

यह कहते-कहते उसकी नीली आँखे तरल और गहरी हो उठी। इस समय उसके चेहरे की चमक देखते ही वनती थी। उसके सुझाव ने सभी को उलझन मे डाल दिया और एक-दूसरे से आँखे वचाते वे इधर-उधर देखने लगे।

रगे-चुने ओसिप ने आखिर अपनी जुवान खोली और तरस-सा खाते हुए दहकानों की वकालत मे वोला:

"दहकानो की वात छोडो, वे अगर चाहे तो भी लोगो को ज्यादा धोखा नही दे सकते।"

काला और गोल कधोंवाला रगसाज झुक कर मेज पर दोहरा होते हुए वोला:

"गुनाह गहरी दलदल की भाति है, उसमे पॉव रखा नहीं कि आदमी धसता ही जाता है।"

मालिक ने भी, उनके ही अन्दाज को अपनाते हुए, जवाव दिया:

"मै तो अपनी सारगी के स्वर तुम्ही लोगो की आवाज के साथ फिट करता हूँ।"

कुछ देर तक वे इसी तरह दीन-दुनिया की वाते करते और इसके वाद फिर एक-दूसरे को चकमा देने पर उतर आते। हिसाव-किताव निवट जाने पर वे उठते, थके हुए से और पसीने मे सरावोर, और चाय के लिए कहवेखाने की ओर चल देते। साथ मे मेरे मालिक को भी खीच ले जाते।

मेले के मैदान मे मेरा काम इस वात की निगरानी रखना

था कि ये लोग कील-काँटे, ईंटें और इमारती लकड़ी चुरा कर न ले जाएँ। कारण कि मेरे मालिक के साथ काम करने के अलावा इन लोगों ने खुद भी ठेके ले रखे थे और जब भी उन्हें मौका मिलता, आँखों में धूल झोंक कर माल तिड़ी कर देते थे।

मेरे साथ वे खूब मिली भगत दिखाते और बड़ी मित्रता से पेश आते। लेकिन सिटालिन कहता

"क्या, तुम्हें याद है न वह दिन जब तुमने काम सीखने के लिए मेरा शागिर्द बनने के लिए कहा था? आज मामला इतना उलट-पुलट गया है कि शागिर्द न होकर अब तुम मेरे ओवरसियर हो!"

"ओह, कोई मुजायका नहीं," ओसिप ने चुटकी ली,— "करे जी भर कर चौकसी और जासूसी।"

प्योत्र के स्वर में तीखापन था। बोला

"सवाल यह है कि इस जवान मारस को बूढ़े चूहों की निगरानी पर क्या रखा गया?"

बहुत ही टेढ़ा और बेरहमी से भरा काम मेरे जिम्मे था। इन लोगों के सामने जाते मुझे शर्म मालूम होती, मेरा सिर नीचे झुक जाता। मैं इन लोगों को अपने से बड़ा और किसी ऐसे रहस्य और ज्ञान का धनी समझता था जो मेरे लिए दुर्लभ था। फिर भी मुझे उनकी इस तरह चौकसी करनी पड़ती मानो वे चोर और उचक्के हों। शुरू-शुरू में तो यह काम मुझे एक बहुत बड़ा सवाल मालूम होता। मेरी समझ में न आता कि मैं क्या करूँ। तभी ओसिप ने, मेरी उलझन का अन्दाज लगाते हुए, मेरी बाँह पकड़ी और ओट में ले जाकर बोला

"सुनो लड़के, तुम्हारी यह सूरत क्या लटकी हुई है? इस तरह गुमसुम रहने से काम नहीं चलेगा,—समझे?"

ओसिप ने आंखें सिकोड कर इस तरह मुझे देखा मानो वहुत दूर से देख रहा हो, और इसके बाद उसने ऐसे शब्द कहे जो कभी नहीं भूले जा सकते

"हां, वह भला आदमी है। काहिल लोगों के लिए भला बनना सब से आसान काम है। समझे बचुआ, दिमागी पूंजी का जब दिवाला निकल जाता है, तभी आदमी भला बनता है।"

"और अपने बारे में तुम क्या कहते हो?" मैंने उससे पूछा।

हल्की-सी हँसी के साथ उसने जवाब दिया

"अभी तो मैं एक लडकी की भांति हूं। सफेद बाल और एकाध दरजन नाती-पोते हो जाने के बाद जब मैं नानी अम्मा बन जाऊंगा, तब तुम्हे बताऊंगा कि मैं कैसा था। तब तक तुम्हें इन्त-जार करना होगा। या फिर अपने दिमाग से काम लो और पता लगाओ कि मैं कैसा हूं। मेरी ओर से तुम्हे पूरी छूट है।"

उसने मेरे उन तमाम अन्दाजों को उलट-पुलट कर दिया जो मैंने उसके और दूसरों के बारे में लगा रखे थे। उसने जो कुछ बताया था, उसमें सन्देह करने की गुंजायश नहीं थी। मैं नित्य देखता कि यकीमुश्का, प्योत्र और ग्रिगोरी भी इस साफ-सुथरे बूढे आदमी को अपने से ज्यादा चतुर और दुनियावी मामलों का जान-कार समझते हैं। वे हर बात और हर मामले में उससे सलाह लेते। उसकी बातों को ध्यान से सुनते और हर तरह से उसका मान करते।

"जरा बताओ तो सही कि इस मामले में हम क्या करें," वे उससे अक्सर कहते और वह अपनी सलाह देता। लेकिन ऐसे ही एक दिन अपनी सलाह देने के बाद जब ओसिप चला गया तो रंगसाज ने ग्रिगोरी से दबे स्वर में कहा

"नास्तिक है, नास्तिक!"

इतने से सन्तुष्ट न होने पर त्रिगोरी ने हँसते हुए कहा:

"ढोंगी है, पूरा बहुरूपिया!"

ख्वालतराज ने, दोस्ती का भाव जताते हुए, मुझे चेताया:

"मक्सिमोविच, कहीं इस बूढ़े के चक्कर में न फँस जाना। इससे बहुत होशियार रहने की जरूरत है। पलक झपकते अपनी कनकी उँगली में वह तुम्हें ऐसे लपेट लेगा जैसे चिथड़ा लपेटा जाता है। इन बूढ़े खूसटों से जिनके जबड़े हमेशा चलते रहते हैं, भगवान ही बचाए!"

इसकी बात का सिर-पाँव मेरी कुछ समझ में नहीं आया।

मुझे ऐसा मालूम होता कि रंगसाज इनमें सब से अधिक ईमानदार और नेक था। वह हमेशा धीरे से बात करता और इसके शब्द सीधे हृदय में पैठ जाते। इसके विचार, बहुतकर, खुदा, मौत और नरक के चारों ओर मंडराते रहते।

"आह भाइयो, आदमी चाहे जितने हाथ-पाँव मारे और चाहे जितने मन्सूबे बाँधे, आखिर डेढ़ हाथ कफन और इस धरती की मिट्टी की उसे शरण लेनी पड़ती है।"

वह पेट के किसी रोग का शिकार था। कभी-कभी तो ऐसा होता कि कई-कई दिन बीत जाते और वह मुँह में एक दाना तक न डालता, अगर जरा-सा कण भी उसके पेट में चला जाता तो दर्द के दौरों और मतलियों के मारे उसका बुरा हाल हो जाता।

कुबड़ा येफीमुश्का भी भला और ईमानदार मालूम होता था, लेकिन था कुछ बेढाल का बूदम, और कभी-कभी अपने-आप को एकदम अल्लाह-मियाँ पर छोड़ कर इस तरह घूमता मानो उसने होश-हवास खो दिए हों। वह हमेशा किसी न किसी स्त्री के प्रेम में पागल रहता और इन स्त्रियों में से हरेक का समान शब्दों में वर्णन करता:

"मै झूठ नही बोलता, वह स्त्री नही बल्कि मलाई के पौधे का फूल है, चिकना और मुलायम।"

जब धुनाबिनो की मुँहजोर स्त्रियाँ दुकानो के फर्श धोने आती तो येफीमुश्का छत से नीचे उतर आता और किसी कोने में खडा हो कर मगन भाव से मन ही मन गुर्राता। अपनी चमकदार आँखो को वह कस कर सिकोड लेता और उसका मुँह, प्रसन्नता में, इस कान से उस कान तक फैला जाता।

"आह, कितने रसीले निवाले खुदा ने मेरे मार्ग में छितरा दिए है! जीवन का सुख मानो अपने-आप उमडता हुआ मेरी ओर चला आ रहा है। जरा उसे देखो, कितना बेजोड फूल है। समझ में नही आता कि किन शब्दो में मै अपने इस भाग्य की सराहना करू जिसने इतना बढिया उपहार मुझे भेंट किया है। इसका सौन्दर्य क्या है मानो चिंगारी है जो जल्दी ही मुझे भस्म कर डालेगी।"

यह सुन स्त्रियाँ खिलखिला कर हसती और एक-दूसरे को टहोका मारते हुए कहतीं

"हाय राम, इस बुड्ढे को तो देखो, क्या गलगल हुआ जा रहा है!"

उनकी इस छेडछाड का उसपर कोई असर न होता। उभरे हुए जबडेवाला उसका चेहरा धीरे-धीरे उनींदा-सा हो जाता, अपनी आवाज पर जैसे उसका कुछ काबू न रहता और रसीले शब्दो की मदमत्त धारा उसके मुह से प्रवाहित होने लगती। स्त्रियो पर एक नशा-सा छा जाता और अन्त में बडी आयु की कोई स्त्री अचरज में भर कर कह उठती

"यह दहकान तो बडा रंगीला मालूम होता है। देखो न क्या सुर अलाप रहा है!'

"मानो कोई पंछी चहचहा रहा हो।"

यह सुन बड़ी आयु वाली स्त्री तीखे स्वर में कहती:

"या कोई भिखारी गिरजे के दरवाजे पर भीख माँग रहा हो!"

लेकिन बात कुछ जमती नही। येफीमुश्का भिखारी ज़रा भी नहीं मालूम होता। हट्टे-कट्टे तने की भाति उसके पाँव मजबूती से धरती पर जमे होते, उसकी आवाज़ का जादू हर घड़ी फैलता और बढ़ता जाता और उसके शब्दों का मोहिनी मन्त्र अपना पूरा ज़ोर दिखाता। स्त्रियो का बोलना बद हो जाता और वे ध्यान से सुनती। ऐसा मालूम होता मानो शहद में लिपटे अपने शब्दो से वह कोई मोहक जाल बुन रहा हो।

और परिणाम होता कि रात के भोजन के समय या सोमवार की सुबह को वह लौटता, अपना भीमाकार चौकोर सिर हिलाते हुए और अचरज मे भर कर अपने साथियों से कहता:

"आह कितनी प्यारी कितनी मधुर स्त्री थी वह... एकदम शहद! जीवन में पहली बार मैंने इतनी मिठास देखी!"

स्त्रियो को अपने वश मे करने के किस्से जब वह सुनाता तो अन्य लोगो की भाति न तो वह शेखी बघारता और न उन स्त्रियो का मजाक उड़ाता। वह केवल हँस देता और उसकी आँखे प्रसन्नता तथा कृतज्ञता-पूर्ण अचरज के भाव से खुली-की-खुली रह जाती।

सिर हिलाते हुए ओसिप कहता.

"वाह, आदम की औलाद, जरा एक बार फिर तो बताओ कि तुम्हारी उम्र कितनी है?"

"चार ऊपर चालीस। लेकिन उम्र से क्या होता है? आज मुझे ऐसा मालूम होता है मानो मेरी उम्र पाँच साल घट गई। आज मैं ने वैतरणी में गोता लगाया है और जीता-जागता तुम्हारे सामने

मौजूद हूँ। मेरा हृदय फूल की भाति खिला है। और भगवान ने स्त्रिया को भी खूब बनाया है!"

रगसाज़ ने कडे स्वर में कहा

"मेरी बात गाठ-बाध लो,—अभी भले ही तुम्हे हरियाली दिखाई दे, लेकिन पचास की रेखा पार करते ही तुम्हारी यह हरकत तुम्हें खून के आँसू रलाएगी!"

ग्रिगोरी शिशलिन ने भी लम्बी साँस खीची

"तुमने तो बेशर्मी की हद कर दी, येफीमुश्का!"

शशिलिन खूबसूरत और जवान था। मुझे लगा कि अपने मुकाबिले में कुबडे को बाज़ी मारते देख वह अब अपने जी की जलन मिटा रहा था।

ओसिप ने अपनी मुडी हुई रुपहली भौहो के नीचे से झाक कर सब पर एक नजर डाली। हसते हुए बोला

"तुम्हारी सभी लडकियाँ कोई न कोई चारा चाहती है, बिना लासे के जाल में नही फसती। कोई मिठाई के पीछे लपकती है तो कोई मोती के। लेकिन इसमें क्या, वे मिठाई खाए या मोती चुग, देखते न देखते वे सब नानी-अम्मा बन जाएगी।"

शिशलिन विवाहित था। लेकिन उसकी पत्नी देहात में रहती थी। फर्श साफ करने वाली स्त्रिया को देख कर उसका मन भी ललक उठता। उन्हें पाना कुछ मुश्किल न था। कारण कि उनमें से प्रत्येक, कुछ फालतू आय की खातिर, खिलौना बनने के लिए तैयार थी। गरीबी में जकडे इस समाज में आमदनी का यह तरीका भी उसी तरह चालू था जैसे कि अन्य। लेकिन वह खूबसूरत दहकान स्त्रियो से हाथ नही लगाता था, चेहरे पर एक अजीब भाव लिए वह उन्हें दूर से ही देखता रहता था। ऐसा मालूम होता मानो उसे उनपर, या अपने पर, तरस आ रहा हो। और जब वे खुद

उससे छेड़छाड़ करती या उसे उकसाना शुरू करती तो वह परेशान-सा हो जाता और हँसकर टालता हुआ अपना पीछा छुड़ाता:

"अरे यह क्या, देखो न...।"

येफीमुश्का को उसकी इस हरकत पर एकाएक विश्वास न होता। उसे कोंचता हुआ कहता:

"तुम आदमी हो या घनचक्कर? इतना अच्छा मौका भी भला कोई अपने हाथ से जाने देता है?"

ग्रिगोरी अपनी सफाई देता:

"भाई मेरे, मैं विवाहित आदमी हूँ।"

"तो इससे क्या हुआ? उसे सपने में भी इसका पता नहीं चलेगा।"

"पत्नी को धोखा नहीं दिया जा सकता, भाई! अगर पति इधर-उधर मुँह मारता है तो पत्नी इसका हमेशा पता लगा लेती है।"

"सो कैसे?"

"यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन अगर खुद उसके आँचल में कोई दाग नहीं लगा है तो वह जरूर पता लगा लेगी। इसी तरह अगर मैं पाक-साफ रहता हूँ और मेरी पत्नी बदकारी पर उतर आती है, तो मुझे इसका पता लग जाएगा।"

"सो कैसे?" येफीमुश्का फिर चिल्ला कर पूछता।

ग्रिगोरी शान्त स्वर में बोला:

"यह मैं नहीं जानता।"

येफीमुश्का ऊब उठता। हाथ हिलाते हुए कहता:

"भला यह भी कोई बात हुई ...पाक-साफ ...नहीं जानता... तुम आदमी हो या घनचक्कर!"

शिशलिन की देखरेख में कुल मिलाकर सात मजदूर काम करते थे। वे खूब मौज करते, उन्हें मालूम तक न होता कि वह उनका

वह हर घडी कुछ न कुछ सोचता रहता। कभी-कभी ऐसा होता कि उसे पता तक न चलता और मेले के मैदान की सूनी सडकों मे से किसी एक को पार करता हुआ वह ओवबोदनी नहर के पुल पर पहुँच जाता और वहाँ बाड़े पर झुका हुआ घटो पानी की ओर ताकता, आकाश अथवा ओका नदी के पार खेत-खलिहानो की थाह लेता। सयोग से अगर कोई उस समय वहाँ पहुँच जाता और उसे देख कर टोकता—"यहाँ क्या कर रहे हो? तो वह चौंक उठता और परेशानी मे मुसकरा कर कहता:

"अरे, कोई खास बात नही। यो ही जरा सुस्ताने और इधर-उधर का दृश्य देखने के लिए खडा हो गया था।"

वह अक्सर कहता:

"खुदा ने भी हर चीज़ क्या ठीक-ठिकाने से बनाई है। आसमान और यह धरती जिसपर नदियाँ बहती है और नदियो मे डोंगे, नाव और बजरे तैरते है। उनमे बैठ कर चाहे जहाँ चले जाओ—रियाजान, रिबिन्स्क, पेर्म या अस्त्राखान। एक बार मैं रियाजान गया था। नगर बुरा नहीं है, लेकिन उदासी मे डूबा हुआ,—निजनी नोवगोरोद से भी ज्यादा उदास। हमारा निजनी तो फिर भी मजे की जगह है। और अस्त्राखान? वह और भी मनहूस है। कल्मिक जाति के लोग वहाँ इस तरह भरे है जैसे सिर मे जुवें भरी रहती है। मुझे वे जरा भी अच्छे नहीं लगते। कल्मिक हो, चाहे मोरदोवियन, तुर्क हो चाहे जर्मन, गैर देशो में जन्मे सभी लोग मुझे बेकार की बला मालूम होते है।"

वह बहुत धीरे-धीरे बोलता। ऐसा मालूम होता मानो उसके शब्द सावधानी से डग रखते, किसी ऐसे आदमी को ढूंढ रहे हो जो उससे सहमत हो सके। रगसाज़ प्योत्र ऐसा ही आदमी था जो, आम तौर मे, उसीके स्वर मे स्वर मिलाता था।

"गैर देशों में जन्मे नहीं, हवा में जन्मे कहो," प्योत्र और भी नमक छिड़कता,—"जिनका न कोई देश होता है, न धर्म, न ईमान।"

ग्रिगोरी का चेहरा खिल उठता

"कुछ भी कहो, मुझे तो भाई, खालिस रूसी खून पसन्द है, सीधा और सच्चा, मिलावट का जिसमें नाम नहीं। यहूदी भी मुझे बेकार लगते हैं। मैंने तो बहुतेरा सिर मारा, लेकिन मेरी समझ में नहीं आया कि खुदा ने इन गैर जातियों को क्या पैदा किया? जरूर इसमें कोई गहरा राज है।"

रंगसाज भुनभुनाता

"हो सकता है कि इसमें कोई गहरा राज हो, लेकिन दुनिया में ऐसी चीजों की कमी नहीं है जिनके बिना भी हमारा काम चल सकता है।"

ओसिप चुपचाप बैठा था। अब उससे नहीं रहा गया। तीखे शब्दों में धज्जियाँ उखेरता हुआ बोला

"इस दुनिया में और किसी चीज की जरूरत हो चाहे न हो, लेकिन एक चाबुक की जरूरत अवश्य है जिससे तुम्हारी बोलती बंद की जा सके। हमेशा बेतुकी बात तुम्हारे मुँह से निकलती है, बिना सिर-पाँव की और विरोधों से भरी हुई।"

ओसिप सब से अलग रहता, और कभी यह जाहिर न होने देता कि उसका किससे विरोध है। कभी कभी तो ऐसा मालूम होता कि वह हर चीज और हर आदमी से सहमत है। लेकिन अक्सर वह हर चीज से तंग और उकताया हुआ नजर आता और कभी का, एक सिरे से, सर्व [illegible]।

"तुम [illegible] तुम [illegible] सूअर की औलाद हो!" यह प्योत्र, ग्रिगोरी और यशोमुच्का, सभी को एक ही पट्टे में लपेटता।

सुन कर वे एक लघु हँसी हँसते, न तो वहुत प्रसन्नता से और न वहुत उछाह से, लेकिन हँसते जरूर।

मेरा मालिक खुराक के लिए मुझे पाँच कोपेक रोज देता था। इसमे पूरा न पडता और मै अक्सर भूखा रह जाता। यह देख कर कारीगर दोपहर और साँझ का भोजन करते समय मुझे भी बुला लेते और कभी-कभी ठेकेदार चाय पीने के लिए मुझे अपने साथ कहवेखाने ले जाते। मै उनके वुलावों को खुशी से मंजूर कर लेता, और उनके बीच वैठ कर उनकी अलस वातो और अनोखे किस्सो को मजे से सुनता। धार्मिक पुस्तकों की मेरी जानकारी सुनकर वे वहुत खुश होते।

"कोई रोटी खाता है और तुम पुस्तके खाते हो,—वल्कि हडप कर जाते हो। पुस्तकों से तुम्हारा पेट गले तक अटा है और अव फटा ही चाहता है!" अपनी नीली आँखो से मुझे बींधते हुए ओसिप कहता। उसकी आँखे एक अजीव-सा रूप धारण कर लेती, ऐसा मालूम होता मानो उसकी पुतलियाँ पिघल कर आँखो की सफेदी के साथ एकाकार होती जा रही हों।

"जो हो, अपने ज्ञान को वटोर और सजो कर रखना, उसे जाया न होने देना। वक्त पर काम आएगा। वड़े होने पर तुम पादरी वन सकते हो। लोगो को सान्त्वना देना और उनके दुःखते हृदयो पर मधुर शव्दो से मरहम लगाना। या फिर तुम धनपति वन जाना।"

"धनपति नही, धर्मपति!" रगसाज ने चोट खाई हुई सी आवाज मे कहा।

"क्या?" ओसिप ने पूछा।

"धनपति नहीं, उन्हे धर्मपति कहते है। तुम इसे जानते हो और वहरे भी नही हो।"

"अच्छी बात है, धर्मपति बन कर नास्तिकों और धर्मद्रोहियों की दुम उखाड़ना। या फिर खुद धर्मद्रोहियों की पाँत में शामिल हो जाना। यह भी बुरा नहीं रहेगा। असल चीज तो दिमाग है। अगर तुम उससे काम लोगे तो धर्मद्रोह से भी बहुत कुछ पैदा कर लोगे और मजे से जीवन बिता सकोगे।"

ग्रिगोरी अचकचा कर मिमियानी-सी हंसी हंसता और प्याज भरी दाढ़ी में बुदबुदाता

"लालबुझक्कड़ और झाड़-फूंक करने वाले भी तो मजे में रहते हैं। इसी तरह और भी कितने ही धर्मद्रोही लोग हैं।"

'लेकिन लालबुझक्कड़ और ओझा पढ़े-लिखे नहीं होते, — ज्ञान से उनका भला क्या वास्ता?" ओसिप जवाब देता और फिर सभी ओर मुँह करते हुए कहता

"सुनो, मैं तुम्हें एक किस्सा सुनाता हूँ। किसी जमाने में हमारे गाँव में एक अकेला आदमी रहता था। तुश्किनोव उसका नाम था। यों ही बेकार-सा आदमी था, जिसे कोई नहीं पूछता था। जिधर हवा ले जाती, सूखे पत्ते की भांति उधर ही उड़ कर जा गिरता। न तो वह मजदूर था, और न आवारा। एक दिन, जब और कुछ नहीं समझ में आया तो, तीर्थ-यात्रा के लिए निकल पड़ा। पूरे दो साल तक उसकी खबर नहीं दिखाई दी। इसके बाद एकाएक जब वह लौटा तो उसका हुलिया ही एकदम बदला हुआ था — सिर से पाँव तक, पादरियों जैसी गोल टोपी [illegible] से चिपकी हुई, बदन पर [illegible] की भांति लटका हुआ चोगा या लबादा। भिखारियों [illegible] बार-बार कहता — 'ईश्वर का नाम लो, तौबा करो!' और तौबा करने वाले [illegible], बाढ़ उमड़ पड़ती। इस बाढ़ के [illegible] कौन रोकता? उसने दोनों हाथों से पैसा बटोरा। तुश्किनोव

को खाना मिला। तुग्किनोव को शराब मिली। तुग्किनोव को स्त्रियाँ मिलीं, जिसपर नजर डालता, वही उसके सामने बिछ जाती...।"

"भोजन और शराब से कुछ नहीं आता-जाता," रंगसाज ने बीच में ही झुंझलाकर टोका।

"तो फिर किस चीज़ से आता-जाता है?"

"असल चीज है शब्द—वाणी!"

"उसके शब्दो को तो मैने उलट-पुलट कर नहीं देखा। यों शब्द तो मेरे दिमाग की पिटारी मे भी इतने है कि मै भूलभुलैयाँ मे पड जाता हूँ। समझ मे नही आता कि उनका क्या करूँ।"

"उस तुग्किनोव दिमित्री वसीलीयेविच को मै जानता हूँ," आहत स्वर मे प्योत्र ने कहा।

ग्रिगोरी ने चुपचाप अपनी आँखे झुका ली, और मेज पर रखे चाय के गिलास की ओर देखता रहा। ओसिप बात बढाने के पक्ष मे नही था। समझौते के स्वर मे बोला:

"बहस में पड़ने का मेरा इरादा नही है। मै तो एक मिसाल देकर मक्सिमोविच को केवल रोटी-रोजी कमाने के रास्ते बता रहा था।"

"जिनमे से कुछ सीधे जेल की हवा खिलाते है!"

"कुछ क्यो, बल्कि ज्यादातर," ओसिप ने सहमति प्रकट की।—सन्तपन की ओर ले जाने वाले रास्ते तो चिराग लेकर ढूढ़ने पर गिनती के दो-चार ही मिलेंगे। असल चीज है पकड़ाई मे न आना। तुम्हे मालूम होना चाहिए कि अपना दामन किस तरह बचाया जा सकता है।"

प्लास्तरसाज या रगसाज जैसे भगत लोगों के प्रति उसके व्यवहार मे व्यग का कुछ पुट मिला रहता। शायद वह उन्हे पसद नहीं करता था, लेकिन वह इतना चौकस था कि अपने भावो को

प्रकट नहीं होने देता था। मोटे तौर से यह कि लोगो के प्रति उसके रवये का पता लगाना कठिन था।

येफीमुश्का के साथ वह ज्यादा नर्मी और मुलामियत से पश आता जा, अपने अन्य साथिया की भाति सामचीय जीवन के अभिशापा, पाप-पुण्य, खुदा और विभिन्न पथो से सम्बधित बहसा में हिस्सा नहीं लेता था। वह कुर्सी को वाजू के रुख आडी कर के वठ जाता ताकि उसका कूब कुर्सी की पीठ से रगड न खाए, और एक के बाद एक चाय के गिलास खाली करता रहता। न वह किसी से बोलता, न चालता, बस चुपचाप चाय पीता रहता। फिर, एकाएक चेतन और चौकन्ना होकर, वह अपनी आंखें उठाता और सिगरेट का धुवाँ-भरे कमरे में इधर-उधर देख कर कुछ खोजता हुआ सा नजर आता। उसके कान खडे हो जाते और भाति भाति की आवाजा के बीच वह कुछ सुनने का प्रयत्न करता। अन्त में वह उछल कर खडा होता और तेजी से गायब हो जाता। यह इस बात का सूचक था कि कहवेखाने म किसी ऐसे आदमी का आगमन हो गया है जिससे येफीमुश्का ने कर्ज ले रखा था, और उनमें से कुछ तो ऐसे थे जो मारपीट के जरिये अपना कर्ज वसूल करने के आदी थे। नतीजा यह कि वह निश्चल होकर नहीं बैठ सकता था, हमेशा भागता नजर आता था।

"देखो न कम्बख्ता को, किस मजे से आस्तीनें चढा कर मेरे पीछे पडे ह," वह अचरज में भर कर कहता,—"वे इतना भी नहीं समझते कि अगर मेर पास पैसा होता तो मैं अपने-आप खुशी से अदा कर दता!"

'पूह कुत्ते की दुम!" ओसिप ढेला सा फेंक कर मारता।

कभी-कभी येफीमुश्का विचारा में खोया वठा रहता। न वह कुछ देखता, न सुनता। उसका चौडा चेहरा ढीला पड जाता और उसकी भली आखें और भी भली हा उठतीं।

"किस सोच में पड़े हो, मित्र?" वे उससे पूछते।

"मैं सोच रहा हूं कि अगर मैं धनी होता तो असली, सचमुच में भली, किसी कर्नल की लड़की या ऊंचे कुल की ऐसी ही किसी अन्य स्त्री से विवाह करता जिसका दामन भी उतना ही पाक-साफ होता जितना कि मेरा। और मित्र, मैं उससे इतना प्रेम करता कि तुम सोच तक नहीं सकते। भगवान जाने, उसका स्पर्श पाकर उसके प्रेम की आग में मैं वैसे ही जलता जैसे कि मोमबत्ती जलती है। यकीन न हो तो सुनो। एक बार देहात में किसी कर्नल ने घर बनवाया और इस घर पर नयी छत डालने का काम उसने मुझे सौंपा। इस कर्नल की एक...।"

"बस-बस, रहने दो!" प्योत्र ने झुंझला कर बीच में ही टोका।—"इस कर्नल और उसकी विधवा लड़की का सारा किस्सा हमें मालूम है। उसे सुनते-सुनते कान पक गए।"

लेकिन येफ़ीमुश्का पर इसका कोई असर न पड़ता। हथेलियों से अपने घुटनों को सहलाते और बदन को आगे-पीछे की ओर झकोले देते समय हवा को अपने कूब से छितराते हुए वह कर्नल की लड़की का किस्सा सुनाता:

"वह अक्सर बगीचे में निकल आती, एकदम सफेद बुर्राक कपड़े पहने, गुदगुदी और मुलायम। मैं छत पर से उसे देखता और मन-ही-मन सोचता: यह सूरज, और यह सारी दुनिया, सब इसके सामने हेच हैं। अगर मैं कबूतर होता तो उड़कर उसके पास पहुंच जाता। वह फूल थी, जैसे नीला कमल,—कीचड़ में उगनेवाला कमल नहीं, मलाई के कुण्ड में उगने वाला प्यारा और मीठा कमल। आह, भाइयो, ऐसी स्त्री मिले तो समूचा जीवन एक लम्बी सुहाग रात बन जाए!"

"ठीक है। फिर खाने-पीने की भी कुछ जरूरत नहीं रहेगी?"

प्योत्र रूखे स्वर मे कहता। लेकिन प्योत्र का यह वार भी खाली जाता। येफीमुश्का अपने ही धुन में कहता

"हे भगवान, लोग कुछ नहीं समझते। पेट भरने के लिए हमें क्या रोटियो के पहाड की जरूरत होगी? फिर, बडे घर की लडकी के लिए धन की क्या कमी?"

ओसिप हंस कर कहता

"अरे रसिक येफीमुश्का! तुम्हारी इन्द्रियाँ कब जवाब दे देंगी?"

येफीमुश्का स्त्रियो के सिवा अन्य किसी चीज के बारे में बात नहीं करता, और जम कर काम करना उसके लिए दूभर हो जाता। कभी वह फुर्ती से और अच्छा काम करता, और कभी एकदम बेगार काटता। उसके हाथ ढीले पड जाते, दिमाग किसी दूसरी दुनिया की सैर करता और अपनी लकडी की पटिया को इतने उल्टे-सीधे ढग से चलाता कि छत में दराजें छूट जाती। वह हमेशा क्लवर-तेल से गधाता, लेकिन उसकी एक अपनी प्रकृत गध भी थी, सुहावनी और स्वस्थ गध, बहुत कुछ वैसी ही जैसी कि ताजे कटे हुए पेड की लकडी से आती है।

ओसिप हर चीज और विषय पर बातें करता था और उसकी बात सुनने में बडा मजा आता। उसकी बात मजेदार होती, लेकिन भली नहीं। उसके शब्द हमेशा कोई कुरेद पैदा करते और यह समझना कठिन हो जाता कि वह अपनी बात मजाक में कह रहा है अथवा गम्भीर होकर।

ग्रिगोरी खुदा के बारे में बडे चाव से बात करता। यह उसका प्रिय विषय था। खुदा से वह प्रेम करता था और उसमें उसका गहरा विश्वास था। एक दिन मैंने उससे पूछा

"ग्रिगोरी, क्या तुम जानते हो कि इस दुनिया में ऐसे लोग भी हैं जो खुदा में विश्वास नहीं करते?"

वह लघु हँसी हँसा:

"वे क्या करते हैं?"

"वे कहते हैं कि खुदा ऐसी कोई चीज नहीं है।"

"ठीक, मैं जानता हूँ।"

उसने अपना हाथ इस तरह हिलाया मानो किसी अदृश्य मक्खी को उड़ा रहा हो। फिर बोला:

"क्या तुम्हें हज़रत डेविड का वह कथन याद है? उन्होंने कहा था: 'मूर्ख हैं वे जो अपने मन में कहते हैं कि खुदा नहीं है'। देखा तुमने, इस तरह के जाहिल और पथ से भटके लोगों के बारे में हज़रत डेविड बहुत पहले ही फैसला कर गए हैं। खुदा के बिना तुम एक डग भी आगे नहीं रख सकते!"

और ओसिप ने, अपने विचित्र अन्दाज़ में, उसमें सहमति प्रकट करते हुए टिप्पणी जड़ी:

"हम तो तब जानें जब तुम प्योत्र को खुदा में उसके विश्वास से डिगा कर दिखाओ। जरा कोशिश तो करो, फिर देखना कि तुम्हारी वह क्या गत बनाता है!"

शिशलिन का सुन्दर चेहरा गम्भीर हो गया, अपनी दाढ़ी को उसने उँगलियों से स्पर्श किया जिनके नाखूनों पर प्लास्तर परत चढ़ी थी। फिर रहस्यमय अन्दाज़ में बोला:

"हाड-माँस के हर पुतले में खुदा मौजूद है। आत्मा और अन्तर्मन खुदा की देन हैं।"

"और गुनाह?..."

"गुनाह का सम्बंध सिर्फ हाड-माँस से है। वह खुदा की नहीं, शैतान की देन है। वह केवल ऊपरी, बाहर की चीज़ है, जैसे चेहरे पर चेचक के दाग। बस, इससे ज्यादा कुछ नहीं। वही सब से ज्यादा गुनाह करता है जो गुनाह के बारे में सब

से ज्यादा सोचता हूं। अगर दिमाग में गुनाह का खयाल न हो तो गुनाह करने की कभी नौबत न आए। शैतान जो हाड-मांस के हमारे बदन पर हावी होता है, हमारे दिमागों में गुनाह के बीज बोता है।"

रंगसाज के मन में बात कुछ जमी नहीं। दुविधा प्रकट करते हुए बोला

"पता नहीं क्या, मुझे लगता है कि ठीक इसी तरह नहीं होता जैसे तुम ।"

"बिल्कुल इसी तरह, इसमें जरा भी सन्देह की गुंजायश नहीं। खुदा गुनाहों से मुक्त है, उसने इन्सान को अपनी छवि में ढाला और उसे अपनी सादृश्यता प्रदान की है। हाड-मांस से बनी यह छवि ही गुनाह करती है, सादृश्यता गुनाहों से मुक्त और अछूती है। सादृश्यता ही वह चीज है जिसे हम रूह या आत्मा कहते हैं।"

वह इस तरह मुसकराता मानो उसने बाजी जीत ली हो। लेकिन प्याज फिर बुदबुदा उठता

"मुझे लगता है कि ठीक इसी तरह नहीं ।"

अब ओसिप जुबान खोलता। कहता

"तुम्हारे हिसाब से अगर गुनाह नहीं तो तोबा करने की भी जरूरत नहीं, और जब तोबा नहीं तो मुक्ति या पचड़ा भी नहीं। क्या, ठीक है न?"

"हां, ठीक है। एक पुरानी कहावत के अनुसार 'शैतान नहीं तो गुनाह भी नहीं'। एक नजर से ओझल हो जाए तो दूसरे का फिर खयाल तक न आएगा।"

निकासिर पीने का आदी नहीं था। दो घूंटों ने ही उसपर अपना रंग चढ़ा दिया। उसके चेहरे पर गुलाबी दमक छा गई,

आँखो मे वचपन का भोलापन उभर आया, और आवाज हिलोरें लेने लगी:

"ओह मेरे भाइयो, कितना अद्‌भुत जीवन है हमारा। हमसे जो वनता है, थोडा-वहुत काम कर लेते है, और इतना भोजन मिल जाता है कि भूखो मरने की नौवत नही आती। ओह, शुक्र है उस भगवान का जिसकी वदौलत हम इतना अद्‌भुत जीवन विताते है।"

और वह रोना शुरू कर देता। उसकी आँखो से आँसू निकलते और गालो पर से होते हुए उसकी रेशमी दाढी मे अटक जाते और मोतियो की भाति चमकते।

उसके इन पथराए हुए से आँसुओं और जिस ढग से वह इस जीवन की भडैती करता उससे मेरा हृदय भन्ना जाता, और मुझे वडी घिन मालूम होती। मेरी नानी भी इस जीवन के लिए खुदा के दरवार मे शुकाना भेजती थी, और इस जीवन की तारीफ के गीत गाती थीं, लेकिन उनके गीत और प्रशसा कहीं अधिक विश्वसनीय और सीधे-सादे होते थे। वह इस तरह औंधे मुँह गिर कर भडैती नही करती थी।

उनकी ये वाते मेरे हृदय मे वरावर खुदवुद मचाए रहती, कभी न खत्म होनेवाले तनाव का मै अनुभव करता, और धुधली तथा अज्ञात आशकाएँ मुझे घेर लेती। दहकानो के वारे मे अनेक कहानियाँ और किस्से मै पढ चुका था और कितावों के दहकानो मे तथा सचमुच के दहकानो मे भारी अन्तर मुझे दिखाई देता था। कितावो के दहकान, सव के सव, दुख और मुसीवतो मे फसे अभागे जीव थे जिनमे, वे भले हों चाहे वुरे, विचारो और वाणी की वह समृद्धता एक सिरे से गायव थी जो कि सचमुच के जीवित दहकानो की एक खास विशेषता थी। कितावो के दहकान खुदा, विभिन्न पंथो और गिरजे के वारे मे कम वाते करते थे और अपने

में ऊँचा, जमीन, जीवन के अन्याय और मुसीबतों के बारे में ज्यादा। किताबों के दहकान स्त्रियों के बारे में भी कम बात करते थे, और अगर उन्हें बातें करते दिखाया भी जाता था तो इस तरह मानो उनके हृदय में स्त्रियों के प्रति अधिक इज्जत हो, और उनके लिए कभी भी गंदे या औघड़ शब्दों का इस्तेमाल न करते हों। सचमुच के दहकानों के लिए स्त्री मन बहलाने का एक साधन थी, लेकिन एक खतरनाक साधन जिसके साथ काफी चालाकी और चतुराई बरतने की जरूरत थी, अन्यथा वह उनपर हावी होकर उनके जीवन को नष्ट कर देती। किताबों के दहकान या तो बुरे होते या भले, और इन दोनों ही सूरतों में उन्हें काफी सिधाई के साथ किताबों में पेश किया जाता, लेकिन सचमुच के दहकान न भले होते और न बुरे, बल्कि दिलचस्प होते हैं। उनकी तमाम बातें सुनने के बाद भी यह भावना बनी रहती कि कुछ है जो अनकहा रह गया है, जिसे उन्होंने अपने हृदय में छिपा कर रख छोड़ा है, और कौन जाने कि ठीक वह अंश ही जो अनकहा रह गया है, उनके व्यक्तित्व का असली तत्व हो।

किताबों के दहकानों में मुझे प्योत्र नाम का बढ़ई सब से ज्यादा पसंद था। "कार्पेण्टर्स आर्टेल" नामक पुस्तक में उसका किस्सा दिया हुआ था। वह मुझे इतना अच्छा लगा कि मैं उसे अपने साथियों को पढ़ कर सुनाने के लिए बेचैन हो उठा। एक दिन, मैंने क मैदान में काम पर जाते समय, उस पुस्तक को भी मैं अपने साथ लेता गया। अक्सर ऐसा होता कि दिन भर काम करते करते मैं बुरी तरह थक जाता और घर लौटने की हिम्मत न होती। ऐसी हालत में मैं कारीगरों के किसी एक बाड़े में चला जाता और रात उनके साथ बिताता। इस तरह मेरी ज्यादातर रातें वहीं पर काम बीततीं।

मैने जव उन्हे यह वताया कि मेरे पास वढ़ई लोगों के वारे मे एक किताव है तो उनकी, और खास तौर से ओसिप की, दिलचस्पी का वारपार नही रहा। उसने मेरे हाथ से किताव ले ली और अपने सन्तनुमा सिर को हिलाते हुए इस तरह उसके पन्ने पलटने लगा, मानो उसे यकीन न आ रहा हो। वोला:

"तो यह हमारे वारे मे लिखी गई है। कुछ सुना तुमने, हमारे वारे मे! किसने लिखा है इसे?—क्या कहा, किसी रईसजादे ने? ठीक, मै भी ऐसा ही समझता था। रईसजादे और सरकारी अफसरो के क़दम जहाँ न पहुँचे, थोडा है। खुदा से जो कसर रह जाती है, उसे यही लोग पूरा करते है। खुदा ने मानो इसीलिए इन्हे इस दुनिया मे भेजा है।"

"खुदा के वारे मे वातें करते समय तुम कुछ सम्मान का भाव नही दिखाते," प्योत्र ने टोका।

"ठीक है, ठीक है। मेरे शब्दो से खुदा का उतनी ही दूर का नाता है जितना कि मेरा वर्फ के उस कण से जो आसमान से गिर कर मेरी गजी चिन्दियों पर आ विराजता है। घवराओ नहीं, हम-तुम जैसे लोगो की खुदा तक कोई रसाई नही है।"

उसे तमतमाते और गर्म लोहे की भाति चिंगारियाँ छोड़ते देर नही लगती। एकाएक वह भभक उठता और तेज तथा तीखे शव्दों की वौछार करने लगता। हर वह चीज़ जो उसे नापसंद होती थी, जिससे वह घृणा करता, उसके शव्दो से झुलस कर रह जाती। दिन मे कई वार उसने मुझसे पूछा:

"क्यो, मक्सिमोविच, कुछ पढ़कर सुनाओगे न? ठीक, वहुत ठीक। तुमने वहुत ही वढिया प्रोग्राम वनाया है।"

जव काम समाप्त हो गया तो साँझ का खाना उसी के वाड़े मे हुआ। खाने के वाद प्योत्र भी आ गया। उसके साथ एक कारीगर

और आया जिसका नाम अरदालियोन था। फोमा नामक एक लड़के का साथ लिए शिशलिन भी आ गया। मायरान के नीचे, जहां कारीगर सोते थे, एक लम्प जला कर रख दिया गया और मैंने पढ़ना शुरू किया। बिना हिले-डुले या मुंह से एक शब्द कहे वे सुनते रहे। एकाएक अरदालियोन खीज कर बोला

"मैं तो चलता हूं। सुनते सुनते ऊब गया।"

वह चला गया। सोनेवाला म ग्रिगारी सब से पहले चित्त हो गया। वह मुंह बाये सो रहा था, और ऐसा मालूम होता था मानो उसका मुंह अचरज के मारे खुला का खुला रह गया हो। उसके बाद अन्य बढ़ई भी चित्त हो गए। लेकिन प्योत्र, ओसिप और फोमा मेरे और निकट खिसक आए तथा गहरे ध्यान और उत्सुकता से सुनते रहे।

जब मैं खत्म कर चुका तो ओसिप ने तुरत लैम्प बुझा दिया। तारे आधी रात बीत जाने की सूचना दे रहे थे।

प्योत्र ने अंधेरे में पूछा

"इस किताब में नुक्ते की बात क्या है? यह किनके खिलाफ लिखी गई है?"

ओसिप जूते उतार रहा था। बोला

"बातें न करो। अब सो जाओ।"

फोमा चुपचाप खिसक कर एक ओर लेट गया।

"मेरी बात का जवाब दो न,—यह किनके खिलाफ लिखी गई है?" प्योत्र ने फिर बल देकर पूछा।

एक मांची पर अपना बिस्तरा लगाते हुए ओसिप ने कहा

"यह लिखनेवाले जानें। हमें मायापच्ची करने से क्या फायदा?'

"क्या यह सौतेली माताओं के खिलाफ लिखी गई है? नहीं, इसमें ऐसी कोई बात नहीं है। इस तरह की किताब सौतेली

माताओं का सुधार नहीं कर सकती," रंगसाज ने जोर देते हुए कहा।—"या फिर यह प्योत्र के ख़िलाफ लिखी गई है जो इसका हीरो है,—प्योत्र वटई। लेकिन यह उसे भी अधर में ही लटका रहने देती है। आखिर उसका हश्र क्या होता है? वह हत्या करता है, और उसे काले पानी की सजा देकर साइबेरिया भेज दिया जाता है। बस, किस्सा ख़त्म! यह किताब उसे भी कोई मदद नहीं देती——दे भी नहीं सकती, नहीं, बिल्कुल नहीं। इसीलिए तो मैं पूछता हूँ, यह किसके लिए लिखी गई है?"

ओसिप चुप रहा। उसने कोई जवाब नहीं दिया। रंगसाज ने अपनी बात खत्म करते हुए कहा:

"इन लेखकों के पास अपना कुछ काम तो है नहीं, सो दूसरों की आँख में उँगली डालते फिरते हैं, बैठकबाज निठल्ली स्त्रियों की भांति जिनका काम ही पास-पड़ोस के किस्से बखान करना होता है। अच्छा तो अब सोओ, काफी देर हो गई।"

दरवाज़े के बाहर चौक में, नीली चाँदनी छिटकी हुई थी। एक क्षण के लिए वह ठिठक कर खड़ा हो गया और बोला:

"क्यों ओसिप, तुम्हारा क्या ख़याल है?"

ओसिप अधसोया सा कुनमुना कर रह गया।

"ओह, नींद आ रही है। अच्छा तो सोओ।"

शिशलिन जिस जगह बैठा था, वहीं फ़र्श पर पसर गया। फोमा मेरे पास ही पुआल पर लेट गया। समूची बस्ती पर सोता छाया था। कहीं दूर से इंजन की सीटियों के बजने, लोहे के भारी पहियों के गड़गड़ाने और गाड़ियों को जोड़ने वाले काँटों के खड़खड़ाने की आवाज़ आ रही थी। सायबान हल्के-भारी और मद्धिम—सभी प्रकार के खर्राटों की आवाज से गूँज रहा था। मेरा हृदय बड़ा सूना-सा हो रहा था। मैं आशा करता था कि पुस्तक ख़त्म

होने के बाद कोई दिलचस्प बहस होगी। लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ।

एकाएक ओसिप ने धीमी किन्तु साफ सुन पडने वाली आवाज़ में कहा

"उसकी बातो को मन म बैठाने की जरूरत नही। तुम अभी कम-उम्र हो, और सारा जीवन तुम्हे पार करना है। दिमाग़ का कोठा खुद अपने विचारो से भरते जाओ। उधार लिए सौ विचारो से अपना एक विचार कही ज्यादा कीमती होता है। क्या फोमा, क्या तुम सो गए?"

"नही," फोमा ने तत्परता से कहा।

"तुम दोनो पढना जानते हो, सो बराबर पढते रहना। लेकिन इतना नही कि पुस्तको में ही डूब कर रह जाओ और उनकी हर बात पर भरोसा करने लगो। आज उनका बोलबाला है, ताकत उनके हाथ में है, सो जो मन मे आता है छाप डालते है।"

उसने माची पर से अपनी टागें नीचे लटका लीं और दोनो हाथो से उसकी बाँह दबोच कर हमारी ओर झुकते हुए बोला

"किताब—आखिर किताब होती क्या है? भेदिया की भाति वह सब का भेद खोलती है। सच, किताब भेदिये का काम करती है। आदमी मामूली हो चाहे बडा, वह सभी का भेद बताती है। वह कहती है—देखो, बढई ऐसा होता ह। या फिर वह किसी रईसजादे को सामने खडा कर कहती ह—देखो, रईसजादा ऐसा होता ह। मानो ये अन्य सब से भिन्न, अनोखे और निराले हो। और किताबें यो ही, बेमतलब, नहीं लिखी जाती। हर किताब किसी न किसी की हिमायत करती ह।"

"प्यात्र ने ठीक किया जो उस ठेकेदार को मार डाला," फोमा ने भारी आवाज में कहा।

"ऐसी वात मुँह से नही निकालते। आदमी की हत्या करना क्या कभी ठीक कहा जा सकता है? मै जानता हूँ कि ग्रिगोरी से तुम्हारी नही वनती, तुम उससे नफरत करते हो। लेकिन यह ठीक नही। हममें कोई भी धन्ना सेठ नहीं है। आज मै मुखिया कारीगर हूँ, लेकिन कल मुझे अन्य सभी मजदूरो की भाति काम करना पड़ सकता है।"

"मै तुम्हारे वारे मे थोड़े ही कह रहा था, चचा ओसिप।"

"इससे कोई फर्क नही पड़ता। वात तो वही है।"

"तुम तो सच्चा आदमी हो।"

"ठहरो, मै तुम्हे वताता हूँ कि यह किताव किसके लिए लिखी गई है," ओसिप ने फोमा के क्षोभ भरे शब्दो को अनसुना करते हुए कहा।—"इस पुस्तक मे पूरी चालाकी भरी है। इसमे एक रईस विना दहकान के है और एक दहकान विना रईस के। तिस पर मजा यह कि न तो रईस के साथ अच्छी वीतती है, न दहकान के साथ। रईस के लिए उसका जीवन भार हो जाता है और वह दुवला पडता जाता है, दहकान शराव मे डूव जाता है और हृदय मे शिकायत लिए अंट-संट वकता रहता है। यही सारी कहानी का निचोड़ है। वह यह दिखाती है कि जमीदार के यहाँ अर्धदास वन कर रहना अच्छा है। रईस दहकान को अपनी ओट में लेता और दहकान रईस को ओट प्रदान करता है। दोनों मज़े से एक गोल चक्कर मे घूमते और आँख-मिचौनी का खेल खेलते। दोनो के पेट भरे और दोनो खुश। ओह, मै इस वात से इन्कार नहीं करता कि अर्ध-दास-प्रथा के अन्तर्गत जीवन मे इतना खटराग नहीं था। जमीदारो को गरीव दहकानो की ज़रूरत न थी। उन्हें तो ऐसे दहकानों से फायदा था जिनके शरीर भरे-पूरे और दिमाग खाली होते थे। अपनी आँखो-देखी, खुद-भुगती वात मै कहता हूँ।

कौन नहीं जानता कि चालीस साल तक मैं ज़मीनदारों का बन्धक रहा हूं? कोड़ों की मार ने मेरी चमड़ी पर जो लिखावट लिखी है, वह क्या किसी किताब से कम है?"

मुझे उस बूढ़े गाड़ीवान की याद हो आई जिसका नाम प्यात्र था और जिसने अपना गला काट डाला था। खानदानी रईसों और कुलीनों के बारे में वह भी इसी तरह की बातें करता था। ओसिप की तथा उस कुत्सित बूढ़े की बातों में यह सादृश्य मुझे बड़ा अटपटा मालूम हुआ।

ओसिप का हाथ मेरे घुटने पर रखा था और वह कह रहा था

"किताबों और दूसरी लिखावटों के आर पार देखना और उनका भीतरी मतलब समझना जरूरी है। तुममें इसकी योग्यता होनी चाहिए। बिना मतलब कोई कुछ नहीं करता। चाहे कोई कितना ही छिपाए, लेकिन मतलब सब के पीछे होता है। और किताबें लिखने का मतलब होता है दिमाग को चक्कर में डालना, उसे गड़बड़ाना। और दिमाग एक ऐसी चीज है जो लकड़ी काटने से लेकर जूते चमकाने तक, हर जगह काम देता है ।"

वह बहुत देर तक बात करता रहा। कभी वह बिस्तरे पर सीधा लेट जाता और कभी उछल कर बैठ जाता, और रात की निस्तब्धता तथा अंधेरे में अपने साफ सुथरे शब्दों को मुलायमियत से बिखेरता जाता।

"कहते हैं कि ज़मीनदार और दहकान में भारी अंतर और भेद है। लेकिन यह बात सच नहीं है। हम दोनों एक हैं, सिवा इसके कि वह ऊंचाई पर है। यह सही है कि वह अपनी किताबों से सीखता है, और मैं अपनी कमर पर पड़े नीले निशानों से। उसकी कमर पर कोई निशान नहीं होते। लेकिन उजली कमर उस कोई

ज्यादा उजला नहीं बनाती, ओह नहीं, मेरे नन्हे साथी, इससे
उजला नही बन जाता। जरूरत इस बात की है कि नये सांचे
इस दुनिया को ढाला जाए। किताबों को गोली मारो, उन्हें
फेको, और अपने से पूछो: आखिर मै क्या हूँ?—एक इन्स
और जमींदार क्या है?—वह भी एक इन्सान है। फिर दोनो
भेद क्या है? क्या खुदा ने यह कह कर उसे दुनिया मे भेजा
कि मै तुमसे पाँच कोपेक ज्यादा वसूल करूँगा, जाकर किसी जम
दार के घर मे जन्म लो, या जैसे बने जमींदार बन जाओ। लेि
नहीं, खुदा के दरबार में सब एक है, सब को एक सा भुग
करना पड़ता है...।"

अन्त मे जब रात का अंधेरा छंट चला, और तारों की रो
मद्धिम पड़ गई तो ओसिप ने कहा:

"आज तो मैने हद कर दी। न जाने क्या-क्या कह ग
ऐसी-ऐसी बाते दिमाग मे आई कि जिनके बारे में इस जीवन
मैने पहले कभी सोचा तक नही था। लेकिन मेरी बातो पर ज्य
ध्यान न देना। नींद आ नहीं रही थी, सो जो मन में आय
उल्टा-सीधा कहता गया। जब आँख नही लगती तो अजीब-अज
बाते सूझती है और दिमाग बातो का कारखाना बन जाता है,
मनमानी बाते गढता रहता है। बहुत पहले की बात है। एक कं
था। मैदानो से उड़कर वह पहाड़ो की खबर लाता, कभी
खेत का चक्कर लगाता तो कभी उस खेत पर जा बैठता,
इस तरह उड़ते-उड़ते उसके सारे पर झड़ गए, शरीर सूख च
और एक दिन वह खत्म हो गया। अब तुम्ही बताओ, कौवे
इस कहानी में क्या तुक है? है न, बिलकुल बेमानी और बे
कहानी? हाँ तो अब सो जाओ। जल्दी उठ कर काम पर भी
जाना है...।"

बीते दिनों में जिस तरह कोयला झोंकने वाला जहाजी याकोव मेरे हृदय पर छा गया था, उसी तरह ओसिप भी मेरी आँखों में समाता, फैलता और बढ़ता गया और अन्य सभी को उसने ओझल कर दिया। उसमें और जहाजी याकोव में बहुत कुछ समानता थी, इसके अलावा उसे देख कर मुझे अपने नाना, धर्मशास्त्री प्योत्र वसीलीयेविच और बावर्ची स्मूरी की भी याद हो आती थी जो सब मेरी स्मृति में अत्यन्त गहराई से अंकित थे। लेकिन ओसिप की अलग गहरी छाप रही। जिस तरह तेजाब पीतल को काटता हुआ उसे आत्मसात करता जाता है वैसे ही वह भी मेरे अन्तर्मन की गहराइयों में प्रवेश करता और मेरे रोम-रोम में समाता जा रहा था। ओसिप के दो रूप साफ नजर आते थे। दिन का रात के ओसिप से भिन्न होता था। दिन में काम करते समय उसके दिमाग में फुर्ती आ जाती, दो टूक और अधिक व्यावहारिक ढंग से वह सोचता और उसकी बात समझने में अधिक दिक्कत न होती। लेकिन रात को जब उसे नींद न आती या सांझ को मुझे साथ लेकर जब वह मालपूये बेचनेवाली अपनी परिचिता से मुलाकात करने नगर जाता, वह दूसरा ही रूप धारण कर लेता। रात को वह विशेष ढंग से सोचता और उसके विचार लालटेन की लौ की भांति अंधेरे में खूब उज्ज्वल तथा चारों ओर से खूब चमकते दिखाई देते, और यह पता लगाना कठिन हो जाता कि उनका सीधा पक्ष कौन सा है और उलटा कौन सा, या यह कि उनमें से किसे वह पसंद करता है और किसे नहीं।

अब तक जितने भी लोगों से मिला था, मुझे वह उन सब से ज्यादा दिलचस्प और चतुर मालूम होता। उसे पकड़ने और

समझने की व्यग्रता हृदय मे लिए मैं उसके चारों ओर भी उसी तरह मंडराता जैसे कि जहाजी याकोव के चारों ओर, लेकिन वह सपक सुई की भांति बल खाकर निकल भागता और पकड़ में न

ऐसा मालूम होता जैसे वह छलावा हो। मैं मुंह बाये उसे देखता रहता और समझ न पाता कि अपने असली और सच्चे रूप को वह कहाँ छिपाए है? उसका वह पहलू कौन सा है जिसे सच्चा समझ कर ग्रहण किया जा सके?

मुझे उसका यह कथन रह-रह कर याद आता:

"या फिर अपने दिमाग़ से काम लो और पता लगाओ कि मैं क्या हूं। तुम्हे इसकी पूरी छूट है।"

यह मेरे मान पर चोट थी, मान से अधिक मेरे आत्मविश्वास पर चोट थी। मुझे ऐसा मालूम होता कि इस बूढ़े आदमी के रहस्य का उद्‌घाटन किए बिना मैं जीवन मे एक डग भी आगे नहीं बढ सकूंगा। उसे समझना मेरे लिए जीवन का आधारभूत प्रश्न बन गया।

छलावे की भांति वह दिखाई देता, जैसे ही मैं उसे पकड़ने की कोशिश करता, वह गायब हो जाता। लेकिन, इस छलावेपन के बावजूद, वह एक थिर व्यक्तित्व का आदमी था। मुझे ऐसा मालूम होता कि अगर वह सौ साल और जीवित रहे तो भी उसका रंग-रूप ऐसा ही बना रहेगा, गिरगिट की भांति सौ-सौ रंग बदलने मे अत्यन्त दक्ष लोगो के बीच रहते हुए भी अडिग और अपरिवर्तनशील। धर्मशास्त्री प्योत्र ने भी मेरे हृदय मे थिरता के कुछ ऐसे ही भावों का सचार किया था, लेकिन उसकी यह थिरता मुझे अच्छी नहीं मालूम होती थी। ओसिप की थिरता दूसरे प्रकार की थी, एक तरह की ताज़गी और सुहावनापन लिए हुए।

यह थिरता मानव-जीवन से बराबर गायब होती जा रही थी, और उसके गायब होने के चिन्ह हर कदम पर दिखाई देते

थे। लोग इतनी आसानी और आकस्मिकता से चोला बदलते और मेंढक की भांति उछल कर इस बाज़ू से उस बाज़ू पहुंच जाते कि देखकर बड़ा अटपटा मालूम होता। उनकी यह चोला-बदलौवल, जिसे मैं पहले कौतुक और अचरज से देखा करता और दंग रह जाता था, अब ऊब और झुंझलाहट पैदा करती थी। नतीजा इसका यह कि पहले जिस उत्साह से मैं लोगों में दिलचस्पी लेता था, धीरे-धीरे उसमें पाला मार गया, लोगों के प्रति मेरा प्रेम एक अजीब दलदल में पड़ गया।

जूलाई के शुरू में एक दिन एक घोड़ागाड़ी जिसके अंजर-पंजर ढीले हो चुके थे, खड़खड़ करती आई और जहां हम काम कर रहे थे, वहां आकर रुक गई। कोचवान की गद्दी पर नशे में धुत्त एक दाढ़ीवाला इज़वोज़चिक बैठा था। वह उदासी से हिचकियां भरता था। उसका सिर नंगा था, होठों से खून बह रहा था, पीछे की सीट पर नशे में मदहोश ग्रिगोरी शिशलिन लुढ़क रहा था, और डबलरोटी सी मोटी लाल गल्लों वाली एक लड़की उसे अपनी बांहों में थामे थी। वह तिनके का हैट पहने थी। हैट गुलाबी फीता और छोटे-छोटे चमकदार घुंघरुओं की झालर से सजा था। जूता की जगह पांवों में खाली गलोश पहने थी। वह गाड़ी के धचकोलों से लुढ़क रही थी, और खाली हाथ में छतरी हिलाते हुए हंस-हंस कर चिल्ला रही थी

"शैतान, पकड़ा देने के लिए क्या मैं ही मिली थी? सारी दुकानें बंद पड़ी हैं। न कोई मेला है, न ठेला। मेरी मिट्टी पलीद करने के लिए नाहक मुझे यहां खींच लाया!"

ग्रिगोरी की बुरी हालत थी। यह उसने की भांति मालूम होता था जिस गुर भभाड़ा और नाश गराया गया हो। रंग पर

वह गाडी से बाहर निकला और जमीन पर पसर कर बैठ गया। फिर, आँखों में आंसू भरे, बोला:

"यह देखो, मैं तुम्हारे सामने घुटनों के बल पड़ा हूं। मुझे माफ करना, मैंने गुनाह किया है, तिसपर मजा यह कि भूल कर या अनजान में नहीं, बल्कि सोच-समझ कर और पूरी तैयारी के साथ। येफीमुश्का ने मुझे उकसाया: ग्रिगोरी, ग्रिगोरी... और उसका उकसाना भी गलत नहीं था। कहने लगा... लेकिन मुझे माफ करना... मैं इसका प्रायश्चित करना चाहता हूं... यानी, तुम सबकी दावत मेरे जिम्मे... येफीमुश्का की बात गलत नहीं थी। उसने ठीक ही कहा था: हम केवल एक बार जीते हैं. . केवल एक ही बार, अधिक नहीं, केवल एक ही बार...।"

लड़की हंसते-हंसते दोहरी हो गई और फिरकी सी घूमने लगी। उसके गालोश पाँव से निकल कर दूर जा गिरे। इजवोजचिक ने भी शोर मचाना शुरू किया:

"चलो, जल्दी करो! आओ, जल्दी आओ! देखते नहीं, घोड़ा रास तुड़ा कर भागना चाहता है!"

लेकिन बूढा और मरियल घोडा, जिसके मुंह से झाग निकल रहे थे, रास तुडा कर भागना तो दूर अडियल टट्टू की भांति वहीं जाम हो गया था और टस-से-मस नहीं होना चाहता था। समूचा दृश्य कुछ इतना बेढगा और औघड़ था कि हंसी रोके न रुकती थी। अपने मालिक, उसकी छैल-छबीली प्रेमिका तथा हक्के-बक्के से कोचवान को देख कर ग्रिगोरी के मजदूरों के पेट में बल पड़ गए।

लेकिन फोमा इस हंसी में शामिल नहीं हुआ। वही एक ऐसा था जो हंस नहीं रहा था, और दुकान के फाटक पर मेरे पास खड़ा बडबडा रहा था:

"कम्बख्त उरटाग हो गया! और मजा यह कि घर पर बीवी मौजूद है,—सच, इतनी सुन्दर कि लाखा में एक!"

इजवोजचिक जल्दी मचाता रहा। अन्त में लडकी नीचे उतरी, और ग्रिगोरी को खीच कर उसने गाडी में डाल दिया जहाँ वह, सीट से नीचे उसके पाँवो के पास ही ढह गया। फिर अपना छाता फहराते हुए बोली

"अच्छा, हम तो चले!"

फोमा ने कारीगरा को जोर से झिडका। मालिक को खुद अपने हाथो सबके सामने इस तरह उल्लू बनते देख वह आहत हो उठा था। सकपका कर और अपने मालिक पर दो-चार भले से छीटे कसते हुए कारीगर फिर अपने काम में जुट गए। साफ मालूम होता था कि अपने मालिक के प्रति उनके हृदय में घृणा से अधिक ईर्ष्या के भाव थे।

"मालिक क्या ऐसे होते है?" फोमा बडबडाया। —"पन्द्रह-बीस दिन की ही तो बात थी। अपना काम खत्म कर हम सब गाँव पहुच जाते। लेकिन कम्बख्त से इतने दिन भी नही रुका गया !"

झुंझलाहट तो मुझे भी कुछ कम नहीं आ रही थी। कहाँ ग्रिगोरी और कहाँ कुमकुमा की झालरवाली वह गावदुम लडकी!

म अक्सर सोचता और उलझन में पड जाता कि ग्रिगोरी शिशलिन म ऐसी क्या बात है जो वह तो मालिक है, और फोमा तुचकोव एक साधारण मजदूर।

फोमा घुघराले बालो वाला हट्टा-कट्टा युवक था। चादी जैसा उसका रग था, हुक्दार नाक, कजी आखें, और गोल चेहरा। उसकी आखो म बुद्धि की चमक थी। उसे देख कर कोई यह नही कह सकता था कि वह देहकान है। यदि उसके कपडे अच्छे होते तो वह

किसी वडे कुल के व्यापारी का लड़का मालूम होता। गम्भीर और चुप्पा स्वभाव, केवल मतलव की वात करता। पढ़ना-लिखना जानता था, इसलिए ठेकेदार ने हिसाव-किताव रखने और तख़मीने वनाने का काम उसे सौंप रखा था। वह अपने साथी मजदूरों से काम लेने मे दक्ष था, हालांकि खुद काम से जी चुराता था।

"एक जीवन मे सव काम नही किए जा सकते," वह शान्त भाव से कहता। पुस्तको से उसे चिढ़ थी। वह अपनी खीज प्रकट करता:

"हर अलाय-वलाय छापे में आ जाती है। चाहो तो मै तुम्हे अभी हाथ-के-हाथ कहानी गढ कर सुना सकता हूँ। यह जरा भी मुश्किल काम नहीं है।"

लेकिन जव कोई वात कही जाती तो वह वड़े ध्यान से सुनता, और अगर वह उसे अच्छी लगती तो उस समय तक चैन न लेता जव तक कि उसका सारा व्योरा न वटोर लेता। इसके वाद वह खुद अपने नतीजे निकालता, अपने निजी माप से उन्हें जाँचता परखता।

एक वार मैने फोमा से कहा कि तुम्हे तो ठेकेदार होना चाहिए था। उसने अलस भाव से जवाव दिया:

"अगर एकदम शुरू से ही खनखनाते हुए हजार रूवल की आय हो तो यह सौदा कुछ वुरा नही, लेकिन दो-चार ठीकरों के लिए ढेर सारे कारीगरों को डडे से हाँकने की जहमत कौन उठाए? मुझे तो इसमे कोई तुक नही दिखाई देती। नहीं, भाई, मुझे तो समय काटना है। इसके वाद मै ओरान्की मठ का रास्ता नापूँगा। इतना हट्टा-कट्टा मेरा शरीर है, देखने मे भी खूवसूरत हूँ। अगर किसी धनी सौदागर की विधवा मुझपर लट्टू हो गई तो सारे पाप कट जाएंगे। ऐसा अक्सर होता है। सेरगाची के एक निवासी

को मठ में भर्ती हुए मुश्किल से दो साल ही बीते होंगे कि उसकी जाड बैठ गई। और सोने म सुहागा यह कि वह शहर की लडकी थी। वह उस दल में था जो मरियम की प्रतिमा का घर-घर ले जाता है। तभी दोनो की नजरें एक दूसर मे मिलो और वह उसपर लट्टू हो गई ।"

उसने ऐसा ही मन्सूबा बाँध रखा था। इस तरह की अनेक कहानिया वह सुन चुका था जिनमे लोग नव-दीक्षित साधु के रूप में मठ में भर्ती होने के बाद किसी धनी स्त्री के नज़र-हिंडोले पर चढ़ कर मजे का जीवन बिताते थे। मुझे ऐसी कहानिया से चिढ थी और फोमा के दृष्टिकोण मे भी। लेकिन यह बात मेरे मन में जम गई कि फोमा एक दिन निश्चय ही किसी मठ का रास्ता पकडेगा।

और जब मेला शुरू हुआ तो फोमा ने सभी को चकित कर दिया—कहवेखाने में वेटर का काम उसने शुरू कर दिया। उसकी इस कलाबाजी ने उसके साथियो को भी चकित किया, यह कहना तो कठिन है, लेकिन वे उसका खूब मज़ाक बनाते। रविवार या छुट्टी के दिन जब कभी चाय का प्रोग्राम बनता तो वे आपस मे हसते हुए कहते

"चलो, चाय पीने चले। फोमा की आमदनी का कुछ डौल हो जाएगा।'

और कहवेखाने में पाव रखते ही रौब के साथ वे आवाज़ लगाते

"ऐ वेटर, क्या सुनता नहीं, ओ घुघराले बाल वाले, लपक कर इधर आ!"

ठोडी को ऊपर उठाए वह निकट आता और पूछता

"कहिए, क्या लेंगे?"

"क्या तुम पुराने साथियो को नही पहचानते?"

"नही, मुझे इतनी फुरसत नही है...।"

उससे यह छिपा नहीं था कि उसके साथी उसे नीची नजर से देखते है, और उनका एकमात्र लक्ष्य उसे चिढाना है। इसलिए वह उन्हे पथराई सी आँखो से देखता और उसका चेहरा एक खास मुद्रा मे जाम हो जाता। वह जैसे कहता प्रतीत होता.

"जल्दी कहो जो कहना हो, और फिर दफ़ा हो जाओ यहाँ से!"

"अरे, तुम्हे बख्शीश देना तो भूल ही गए!" वे कहते और अपने बटुवे निकाल कर देर तक उन्हे टटोलते, कोने-कोने दाब कर देखते और अन्त मे बिना कुछ दिए ही गायब हो जाते।

एक दिन मैने फ़ोमा से पूछा कि तुम तो मठ में भर्ती हो कर साधु बनना चाहते थे, बेटर कैसे बन गए।

"गलत बात है। मै कभी साधु बनना नही चाहता था," उसने जवाब दिया,—"और यह बेटरी भी कुछ दिनों की मेहमान है।"

लेकिन इसके चार साल बाद, 'जारित्सीन मे जब मेरी उससे मुलाकात हुई तो उस समय भी वह बेटर का ही काम कर रहा था, और अन्त मे समाचारपत्र मे यह खबर पढी कि फोमा तुचकोव किसी घर मे सेंध लगाते पकडा गया।

रगसाज अरदालियोन ने मुझे खास तौर से प्रभावित किया। प्योत्र के कारीगरो मे वह सब से पुराना और सब से अच्छा मजदूर था। हँसमुख और काली दाढी वाले चालीस वर्षीय इस दहकान को देख कर भी मै उसी उलझन मे पड जाता कि मालिक उसे होना चाहिए था, न कि प्योत्र को। वह बिरले ही शराब पीता था, और जब पीता था तो कभी मदहोश नही होता था।

अपने धंधे का वह उस्ताद था, और लगन के साथ काम करता था। उसके हाथों का स्पर्श पाते ही ईंटों में जैसे जान पड जाती थी और कबूतर की भांति सर्र से उड कर ठीक-ठिकाने पर जा बैठती थीं। उसके सामने मरियल और सदा रोगी प्योत्र की कोई गिनती नहीं थी। प्योत्र बड़े चाव से कहता

"मैं दूसरों के लिए ईंटों के घर बनाता हूं जिससे अपने लिए एक लकडी का घर—ताबूत—बना सकूं।"

अरदालियोन आह्लादपूर्ण उत्साह से ईंटें चुनता जाता और चिल्ला कर कहता

"आओ साथियो, आओ! खुदा की इस सृष्टि को सुन्दर बनाने में हाथ बटाओ!"

और वह उन्हें, अपने साथी कारीगरों को, बताता कि अगले बसंत में उसका इरादा तोम्स्क जाने का है। वहाँ उसके साले ने एक गिरजा बनाने का ठेका लिया है और उसे न्योता दिया है कि तोम्स्क आकर निर्माण-कार्य में मुखिया का काम संभाले।

"सब कुछ तय हो चुका है। गिरजों का निर्माण करना—सच, यह मेरा प्रिय कार्य है," वह कहता और इसके बाद मुझे सम्बोधित करता "चलो, तुम भी मेरे साथ चलो। साइबेरिया अच्छी जगह है, खास तौर से उनके लिए जो पढना-लिखना जानते हैं। मजे में कटेगी। पढे-लिखे लोगों की दर वहाँ काफी ऊंची है।"

मैं उसके साथ चलने को राजी हो गया। अरदालियोन खुशी से उछल पड़ा। बोला

"तुमने तबीयत खुश कर दी। लेकिन सचमुच चल रहे हो न, यों ही मजाक तो नहीं कर रहे?"

सिगारी और प्योत्र के साथ उसके रवैये में एक तरह की

सहनशील उपेक्षा का भाव रहता, कुछ-कुछ वैसा ही जैसा कि बड़े लोगों में बच्चों की तरफ होता है। ओसिप ने यह कहता:

"बातों के शेर! अपने दिमाग के हर फितूर को ताश के पत्तों की भांति एक-दूसरे के सामने फटकारते हैं। एक कहता है: देखो, कितने बढ़िया पत्ते हैं! दूसरा कहता है: लेकिन मेरे पत्ते देखोगे तो कलाबाजी खा जाओगे!"

"मुझे तो इनमें कोई बुराई नहीं मालूम होती," ओसिप रहस्यमय रूप में जवाब देता,—"शेखी बघारना मानव का स्वभाव है। कौन लड़की ऐसी है जो अपना सीना उभार कर नहीं चलना चाहती?"

लेकिन अरदालियोन इतने पर ही बस न करता। हृदय की खुजली मिटाते हुए कहता:

"उठते-बैठते, खाते-पीते, वे खुदा की रट लगाते हैं; लेकिन एक-एक कौड़ी दाँत से पकड़ने और माया जोड़ने में इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।"

"ग्रिगोरी के पास तो मुझे कभी फूटी कौड़ी भी नजर नहीं आती। माया वह कहाँ से जोड़ेगा?"

"मैं दूसरे की बात कर रहा हूँ। माया-मोह छोड़ कर इस बुढ़ापे में वह जंगल की शरण क्यों नहीं लेता जहाँ केवल वह होगा और उसका खुदा, न किसी का झगड़ा न झंझट। सच कहता हूँ, मैं तो यहाँ की हर चीज़ से उकता गया हूँ। वसन्त आते ही साइबेरिया के लिए चल दूँगा!"

अन्य कारीगर ईर्ष्या की नजर से अरदालियोन की ओर देखते। फिर कहते:

"तुम्हारे साले की भांति अगर हमारा भी वहाँ कोई खूंटा होता तो साइबेरिया क्या, हम जहन्नुम में भी पहुंच जाते!"

इसके बाद, एकाएक, अरदालियोन गायब हो गया। रविवार के दिन वह कारखाने से गया और तीन दिन तक कुछ पता नहीं चला कि वह कहाँ लाप गया, या उसका क्या हुआ।

उन्होंने भय और आशंका से भरी अटकलें लगानी शुरू कीं

"कहीं किसीने मार तो नहीं डाला?"

"हो सकता है कि नदी में तैरते-तैरते डूब गया हो?"

अन्त में येफीमुश्का आया और कुछ सकपकाता-सा बोला

"अरदालियोन नशे में गटगच्च पडा है।"

"यह झूठ है!" प्योत्र अविश्वास से चिल्लाया।

"नशे में गडगच्च, बेसुध और बेखबर। भुस में आग लगने पर जिस तेजी से चिंगारियाँ ऊपर उठती हैं, ठीक वैसे ही फुर्र हो गया। आँखें बंद कर शराब के प्याले में ऐसा कूदा, मानो उसकी बीवी मर गई हो और उसका गम गलत करने के लिए ।"

"उसकी बीवी क्या आज मरी है? उसे रँडुवा हुए तो एक मुद्दत हो गई। लेकिन वह है कहाँ?"

प्योत्र झुंझला कर उठा, अरदालियोन को उबारने के लिए चल दिया, और उसके हाथों खूब पिट कर लौटा।

उसके बाद आसिप ने होंठ भींचे, अपनी जेबों में हाथ डाल उन्हें तान लिया और बोला

"मैं जाता हूँ, और खुद अपनी आँखों से देख कर पता चलाता हूँ कि आखिर मामला क्या है। जरूर कोई अनहोनी बात हुई है।"

मैं भी उसके साथ हो लिया।

"देखा तुमने, आदमी भी कितना अजीब जन्तु है," उसने रास्ते में कहा,—"अभी कल तक इतना भला था, कि क्या मजाल जो कोई उँगली भी उठा सके, बिल्कुल देवता की भाँति। लेकिन

एकाएक जाने क्या बुखार चढ़ा कि दुम उठा कर कूड़े के ढेर में मुंह मारने लगा। अपनी आँखें खुली रखो, मनिमिमोविच, और जीवन से सबक लो।"

कुनाविनो की 'इन्द्रपुरी' में—टकियल वेश्याओं के काठ-बाज़ार में—हम पहुंचे। वहाँ एक खूसट स्त्री हमारे सामने आ खड़ी हुई जो देखने में चोट्टी मालूम होती थी। ओसिप ने उसके कान में कुछ फुसफुसा कर कहा और वह हमें एक छोटी-सी खाली कोठरी में ले गई। कोठरी में अंधेरा था और खूब गंदगी फैली थी। लगता था जैसे यहाँ जानवर बधते हों। कोने में एक खटिया पड़ी थी जिसपर एक मोटी स्त्री नींद में ऐंड रही थी। बूढ़ी स्त्री उसे झझोड़ते और कोहनियाते हुए बोली:

"निकल यहाँ से,—सुनती नहीं चुड़ैल, निकल यहाँ से!"

स्त्री घबरा कर उछल खड़ी हुई और आंखों को मलते हुए मिमियाई:

"हाय भगवान, यह क्या मुसीबत है? लोग दो घड़ी भी पलक नहीं झपकने देते!"

"खुफ़िया पुलिस वाले धावा बोल रहे हैं!" ओसिप ने गम्भीरता से कहा।

स्त्री, मुंह बाये, नौ-दो ग्यारह हो गई। ओसिप ने उसके पीछे घृणा से थूक की पिचकारी छोड़ी। फिर बोला:

"ये लोग शैतान का मुकाबिला कर सकती हैं, लेकिन खुफिया पुलिस का नहीं।"

दीवार पर एक छोटा-सा आईना लटका था। बुढ़िया ने उसे उतारा और छींटदार कागज का पर्दा उठाते हुए बोली:

"इधर देखो। क्या यही तो नहीं है?"

ओसिप ने 'खिड़की' में से देखा।

"हाँ, यही है। पहले उस लड़की को दफा करो।"

मैंने झाँक कर देखा। यह कोठरी भी उतनी ही अँधेरी और गंदी थी जितनी कि यह जिसमें हम खड़े थे। खिड़की के दरवाजे कस कर बंद थे और उसकी चौखट पर एक लम्प जल रहा था। लम्प के पास एक ऐंचीतानी नंगी तातार लड़की खड़ी थी। वह अपनी फटी हुई चोली में टाँके लगा रही थी। उसके पीछे दो तकियों पर अरदालियोन का सूजा हुआ चेहरा नजर आ रहा था। उसकी काली और कड़े बालों वाली दाढ़ी बेतरतीबी से चौगिर्द बिखरी थी। आहट पाकर तातार लड़की चौकन्नी हो गई, अपनी चोली को खींच कर उसने ठीक किया, और बिस्तरे के पास से गुजरते हुए एकाएक उस कोठरी में गई जहाँ हम खड़े थे।

ओसिप ने एक नजर उसकी ओर देखा और फिर थूक की पिचकारी छोड़ी।

"पूह, बेशर्म कुतिया!"

"और तुम, — बूढ़े भगत!" खिलखिल करते हुए उसने जवाब दिया।

ओसिप भी कुछ हँसा और दूर से उँगली हिला कर उसे कोंचा।

हमने तातार लड़की के दड़बे में प्रवेश किया। बूढ़ा ओसिप अरदालियोन के पाँवों के पास जम गया और उसे चेताने के लिए देर तक उससे जूझता रहा। अरदालियोन रह-रह कर बड़बड़ाता

"ओह, क्या मुसीबत है . . . एक मिनट ठहरो, बस एक मिनट . . . अभी चलता हूँ . . . ।"

आखिर वह उठा, वहशियाना आँखों से उसने ओसिप और मेरी ओर देखा और इसके बाद अपनी लाल अंगारा-सी आँखों को, जिनके पपोटे सूज आए थे बंद करते हुए बुदबुदाया

"हाँ तो...।"

"तुम्हीं सुनाओ, तुम्हारे साथ क्या गुज़री?" ओसिप ने शान्त और रुखे, लेकिन शिकायत के भाव से मुक्त, स्वर मे पूछा।

"दीन-दुनिया सब भूल गया," अरदालियोन ने वैठे हुए गले से खखार कर कहा।

"सो कैसे?"

"ख़ुद देख तो रहे हो।"

"तुम्हारा हुलिया तो काफी विगड़ा हुआ मालूम होता है।"

"मैं जानता हूँ...।"

अरदालियोन ने मेज से वोडका की एक कार्ग-खुली वोतल उठाई और उसे अपने गले में उँडेलना शुरू कर दिया। फिर ओसिप की ओर वोतल वढाते हुए वोला:

"यह लो, तुम भी क्या कहोगे। और देखो, पेट मे डालने के लिए भी उस रकावी में कुछ होगा।"

वूढ़े ओसिप ने एक चुस्की ली, मुँह विचकाते हुए तीखी वोडका को गले के नीचे उतारा और पाव रोटी का एक टुकडा लेकर उसे वड़े ध्यान से चवाने लगा। अरदालियोन लनतरानी के अन्दाज़ में कहे जा रहा था:

"यो हुआ... एक तातार लड़की के साथ उल्लू वन गया। यह सारी येफीमुश्का की कारिस्तानी है। वोला, जवान लडकी है—कासीमोवो की रहने वाली—न उसके माँ है, न वाप, उसे मेले ले चलेंगे और...।"

दीवार की 'खिड़की' मे से, टूटी-फूटी जुवान मे, मुँहफट शब्द सुनाई दिए:

"तातार में जा मज़ा है वह और कहीं नहीं,—एकदम चूजे की भांति। और यह बूढा क्या तेरा बाप है जो यहां बैठा है। इसे निकाल बाहर कर।"

"यही वह लडकी है," चुधी-सी आंखो से दीवार की ओर ताकते हुए अरदालियोन ने कहा।

"मैने देखा है," ओसिप बोला।

फिर अरदालियोन मेरी ओर मुडा

"देखो न भाई, मैंने अपनी क्या दुर्गत कर डाली है ।"

मेरा खयाल था कि ओसिप अरदालियोन को खूब भिडकेगा, या उसे लैक्चर पिलाएगा, और गुनाह पर तोबा करवाए बिना उसे नही छोडेगा। लेकिन उसने ऐसी कोई हरकत नही की। दोनो कधे-से-कधा सटाए लगे-बधे अन्दाज में बाते करते रहे। उन्हें अधेरे और गदगी-भरे दडबे में इस तरह बैठा देख मेरा जी भारी हो गया और मैं उदासी में डूबने-उतराने लगा। तातार लडकी अभी भी टूटी-फूटी जुबान में दीवार के पीछे से बक-झक रही थी। लेकिन उसकी आवाज़ उनपर कोई असर नहीं हो रहा था। ओसिप ने मेज पर से एक सूखी हुई मछली उठाई, अपने जूते से टकरा कर उसके अजर-पजर ढीले किए, और फिर उसके छिलके उतारने लगा।

"क्या तुम्हारे गाठ में अब कुछ नही है?" उसने पूछा।

"प्योत्र को मैंने कुछ उधार दिया था। बस, वही अब बचा है।"

"तुम तोम्स्क जाने वाले थे न? अब कैसे जाओगे?"

"वह नहीं सकता। अभी कुछ निश्चित नही है।"

"क्या, क्या इरादा बदल दिया?"

"बात यह है कि वे मेरे रिश्तेदार ।"

"क्या-आ-आ?"

"मेरी बहिन और उसका पति ...।"

"तो उससे क्या हुआ?"

"नहीं, अपने रिश्तेदारों की चाकरी बजाने में कोई मजा नहीं है।"

"मालिक मालिक सब एक से, चाहे रिश्तेदार हों या गैर रिश्ते-दार।"

"फिर भी...।"

वे इस हद तक घुल-मिल कर और गम्भीर भाव से बतिया रहे थे कि चिड़चिड़ाने और उन्हें चिढ़ाने में तातार लड़की को अब कोई तुक नहीं दिखाई दी और वह चुप हो गई। दबे पाँव वह कमरे में आई, खूटी पर से चुपचाप उसने अपने कपड़े उतारे, और फिर गायब हो गई।

"लड़की जवान मालूम होती है," ओसिप ने कहा।

अरदालियोन ने उसकी ओर देखा और फिर सहज भाव से बोला:

"यह सब येफीमुश्का की पसंद है। स्त्रियाँ ही उसका ओढ़ना और बिछौना है.. वैसे यह तातार लड़की है मजेदार, खूब हँसमुख और बेतुकी बातों की पिटारी!"

"लेकिन जरा होशियार रहना, कहीं ऐसा न हो कि वह तुम्हें चेअपनी इस पिटारी में ही बंद करके रख ले!" ओसिप ने उसे चेताया और मच्छी का आखिरी निवाला मुँह में रखने के बाद वहाँ से चल दिया।

लौटते समय मैंने उससे पूछा:

"आखिर तुम आए किस लिए थे?"

"हाल-चाल देखने। वह मेरा पुराना मित्र है। एक-दो नहीं, इस तरह की अनेक घटनाएँ मैं देख चुका हूँ। आदमी भला-चंगा

जीवन बिताता है और फिर, एकाएक, इस तरह हवा हो जाता मानो जेल के सीखचे तोड कर भागा हो।" उसने अपनी पहली वाली बात को दोहराया और इसके बाद बोला "तुम वाडका से दूर रहना।"

कुछ क्षण बाद उसकी आवाज फिर सुनाई दी

"लेकिन इसके बिना जीवन सूना हो जाएगा।"

"वोटका के बिना?"

"हाँ, एक चुस्की लेते ही ऐसा मालूम होता है जैसे हम दूसरी दुनिया मे पहुच गए।"

और अरदालियान पर वोडका और उस तातार लडकी का कुछ ऐसा रग चढा कि वह उत्तर कर न दिया। कई दिन बाद वह काम पर लौटा, लेकिन जल्दी ही वह फिर गायब हो गया और उसका कुछ पता नही चला। वसन्त म एकाएक उससे मेरी भेंट हो गई। कुछ अन्य आवारा लोगो के साथ वह एक बजरे के चौगिर्द जमा बर्फ काट रहा था। बडे तपाक से हम मिल, एक-दूसरे को देख कर हमारे चेहरे खिल गए और चाय पीने के लिए एक कहवेखाने में हम पहुचे।

"तुम्हें तो याद होगा कि मै कितना बढ़िया कारीगर था," चाय की चुस्किया के साथ उसने शेखी बघारना शुरू किया।—"इससे कोई इन्कार नही कर सकता कि मुझे अपने काम में कमाल हासिल था। अगर मै चाहता तो वारे-न्यारे कर देता।"

"लेकिन तुम तो कोरे ही रहे।"

"हाँ, मै कोरा ही रहा।" उसने गर्व से कहा।—"और यह इसलिए कि मै किसी से बध कर नही रह सकता—नहीं, अपने धधे से भी नही!"

वह कुछ ऐसे ठाट से बोल रहा था कि कहवेखाने में बैठे कितने ही लोग उसकी ओर देखने लगे।

"चुप्पे चोर प्योत्र की बात तो तुम्हें याद है न? काम के बारे मे वह कहा करता था: 'दूसरो के लिए ईटो के पक्के घर, और अपने लिए फकत लकड़ी का एक ताबूत!' ऐसे धंधे के पीछे कोई क्यों जान दे!"

"प्योत्र तो रोगी आदमी है," मैंने कहा,—"मौत की बात सोच कर हर घड़ी काँपता रहता है।"

"रोगी तो मै भी हूँ," वह चिल्ला कर बोला,—"मेरी आत्मा मे घुन लगा है।"

रविवार के दिन शहरी चहल-पहल से दूर मैं 'लखपति बाजार' पहुँच जाता जहाँ भिख-मंगे और आवारा लोग रहते थे। मैंने देखा कि अरदालियोन तेज गति से नगर की इस तलछट का अंग बनता जा रहा है। एक साल पहले की ही तो बात है जब कि वह उछाह और उमंग से भरा एक समझदार कारीगर था। लेकिन अब उसने छिछले तौर-तरीके अपना लिए थे, झूमता और सब से टकराता हुआ चलता था, और आँखो में हर किसी को ठेंगे पर मारने तथा हर किसी से गुत्थमगुत्था होने का भाव खेलता रहता था।

"देखो न, लोग किस तरह कान लगा कर मेरी बाते सुनते है," वह शेखी बघारता।

जो भी वह कमाता, उसे अपने आवारा साथियों को खिलाने-पिलाने मे उटा देता। जब वह किसी को जुवे हारता देखता तो आस्तीने चढ़ा लेता और उसकी खातिर लड़ने-मरने को तैयार हो जाता। चिल्ला कर कहता:

"यह धोखा-धड़ी ठीक नही साथियो, तुम्हें ईमानदारी से काम लेना चाहिए!"

ईमानदारी की उसकी इस गुहार से उसके सभी सगी-साथी परिचित थे,—यहा तक कि उन्होने उसका नाम 'ईमानदार' रख छोडा था। वह इस नाम को सुन कर बहुत खुश होता।

मैं इन लोगो को समझने की कोशिश करता जो ईंट-पत्थरो की इस सत्ती में—जर्जर और गदे लसपति बाजार में—अटे पड़े थे। यहा जीवन की मुख्य धारा से छिटके हुए लोग बसते थे, और ऐसा मालूम होता मानो उन्होंने अपने जीवन की एक अलग धारा का निर्माण कर लिया था, एक ऐसी धारा का जो अपने-आप में स्वतन्त्र थी और मौज-मजे में छलछलाती हुई बहती थी। इन लोगों में साहस था, और स्वच्छन्दता थी। उन्हें देख कर मुझे नाना से सुनी वोल्गा के मल्लाहों की याद हो आती जिन्हें डाकू या साधु बनते देर नहीं लगती थी। जब उनके पास कोई काम-धधा न होता तो वे बजरो और जहाजो पर हाथ साफ करते और जो भी छोटी-मोटी चीज हाथ लगती, उसे उड़ाने से न चूकते। उनकी यह हरकत मुझे जरा भी अटपटी या बुरी न मालूम होती। नित्य ही मैं देखता कि जीवन का सारा ताना-बाना ही चोरी के धागो से बुना है। लेकिन इसी के साथ-साथ मैं यह भी देखता कि कभी-कभी—जब आग लगती या नदी पर जमी बर्फ तोड़ने या लदाई का कोई फौरी काम आ पड़ने पर—ये लोग भारी उत्साह से काम करते, अपनी जान तक की परवाह न कर आग की लपटों में कूद जाते, अपनी शक्ति का एक अणु-भर भी बचा कर न रखते। कुल मिला कर यह कि अन्य लोगो के मुकाबिले में ये कहीं ज्यादा जिन्दादिल और मौजी जीव थे।

लेकिन जब ओसिप ने यह देखा कि मैं अन्द्रालियोन से बहुत मिलता-जुलता हूं तो उसने बुजुर्गों की भांति मुझे सीख देनी शुरू की

"सुनो मेरे लड़के, क्या यह सच है कि आजकल तुम उन लखपतियों के पास जरूरत से ज्यादा आते-जाते हो? मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि जरा अपने को बचाए रखना, ऐसा न हो कि तुम चौपट हो जाओ।"

मैंने उसे, जितना भी मुझसे हो सकता था, बताया कि ये लोग मुझे अच्छे लगते हैं—एकदम स्वच्छन्द और काम-धंधे की चिन्ता से मुक्त।

"हाँ, एकदम पक्षियो की भांति स्वच्छन्द!" उसने हँसते हुए बीच मे ही टोका।—"यह इसलिए कि वे काहिल और निठल्ले है। उनके लिए काम करना मानो एक सजा है।"

"सजा नहीं तो क्या आनन्द की चीज है? पुरानी कहावत है: पसीने की कमाई से महल नहीं खड़े होते।"

इस कहावत को मै इतनी बार सुन चुका था और मुझे कुछ इतनी सचाई मालूम होती थी कि बडे चाव से मैं इसे दोहरा गया। लेकिन ओसिप इसे सुनकर भभक उठा और तेजी से चिल्लाया:

"इस तरह की बाते किसके मुँह से निकलती है? मूर्खो और कामचोरो के मुँह से। और तुम हो कि पिल्ले की भांति दुम हिलाते इस तरह की बाते रट लेते हो! इस तरह की बेतुकी बातें वही करते है जिनके हृदय मे कीना होती है या जिन्हे जीवन मे सफलता नही मिलती। उडने की कोशिश करने से पहले कुछ पर तो उग आने दो! और जहाँ तक 'लखपतियो' से तुम्हारी दोस्ती का सम्बध है, उसके बारे मे मै तुम्हारे मालिक से कहूँगा, और इसका दोष खुद तुम्हारे ही सिर होगा।"

और उसने सचमुच मेरे मालिक से शिकायत की। मेरे मालिक ने—ओसिप भी उस समय मौजूद था—मुझ से कहा:

"लखपति बाजार के चक्कर लगाना बंद करो, पेश्कोव। वहाँ सब ऐसे ही लोग रहते बसते हैं — चोर-उचक्के और वेश्याएँ, और वहाँ जाने के बाद सीधे जेल या अस्पताल की हवा खानी पड़ती है। उनका पीछा छोड़ो।"

लखपति बाजार तो मैं अब भी जाता, लेकिन लुक-छिप कर। इसके कुछ ही समय बाद एक ऐसी घटना घटी जिससे मेरा वहाँ जाना बंद हो गया।

लखपति बाजार में एक बासा था जिसके अहाते में सायबान पड़ा था। एक दिन अब्दालियान, उसका साथी 'बच्चा' और मैं इस सायबान की छत पर चढ़े थे और बच्चा दोन नदी के किनारे स्थित नगर रोस्तोव से मास्को तक की अपनी पैदल यात्रा का मनोरंजक हाल सुना रहा था। वह भूतपूर्व सैनिक था, और इंजीनियरों की ... में नियुक्त था। संत जाज पदक से वह विभूषित था और ... साथ युद्ध में उसका घुटना घायल हो गया था। इस चोट ने उसे जन्म भर के लिए पंगु बना दिया था। नाटा और गठा हुआ उसका बदन था। उसके हाथ बहुत ही मजबूत और शक्तिशाली थे, लेकिन उसका पंगु होना आड़े आता था और अपने हाथों की इस शक्ति का वह कोई उपयोग नहीं कर पाता था। किसी रोग की वजह से उसके सिर और दाढ़ी के बाल झड़ गए थे, और उसका सिर छोटे बच्चों के सिर की भाँति साफ और चिकना हो गया था।

अपनी लाल आँखों को चमकाते हुए वह कह रहा था

"इस तरह मैं सेर्पुखोव पहुँचा। वहाँ एक पादरी पर मेरी नजर पड़ी जो अपने घर के पिछवाड़े आँगन में बैठा था। मैं उसके पास पहुँचा और बोला: तुर्की युद्ध के इस वीर की कुछ मदद करो, बाबा ...।'

अरदालियोन ने सिर हिलाया और बीच में ही बोल उठा:

"ओह, झूठों के सरदार...।"

"क्यों, इस में झूठ क्या है?" बच्चा ने, बुरा न मानते हुए, सहज भाव से पूछा। लेकिन अरदालियोन ने उसकी बात नहीं सुनी, और लनतरानी के अपने अन्दाज़ में बोला:

"तुम्हें ईमानदारी से काम लेना चाहिए। दुनिया में और भी तो लंगड़े हैं, या तुम अकेले ही लंगड़े हुए हो। उन सब की भांति तुम भी चौकीदारी-दरबानी का काम कर सकते थे। लेकिन नहीं, काम करने के बजाय तुम अपनी लंगड़ी टाँग लिए जाने कहाँ-कहाँ हाथ फैलाते और झूठ का तूमार बाँधते-घूमते हो।"

"यह सब तो मैं योंही मजे में आकर करता हूँ—लोगों को हँसाने के लिए।"

"तुमको अपने पर हँसना चाहिये...।"

तभी अहाते में, जिसमें रुपहला मौसम होने के बाद भी ... रा था और खूब कूडा-कचरा फैला था, एक स्त्री ... सिर से ऊपर अपना हाथ उठाकर कोई चीज हिलाते हुए ... चिल्ला कर कहने लगी:

"लड़कियो, यह घाघरा बिकाऊ है। बोलो, कौन चाहे..."

स्त्रियाँ अपने-अपने दड़बे में से रेंग कर बाहर निकल आईं, और घाघरा बेचनेवाली के चारों ओर जमा हो गईं। मैंने उसे तुरत पहचान लिया। यह नतालिया थी। छत से कूद कर मैं अभी नीचे पहुँचा ही था कि पहली बोली बोलनेवाली स्त्री के हाथ घाघरा बेच वह आँगन से बाहर निकलती दिखाई दी। मैं लपक कर आगे बढ़ा, और फाटक के बाहर उसके निकट पहुँचते हुए चिल्ला या:

"अरे, जरा सुनो तो!"

"क्या क्या है?" कनखियों से देखते हुए वह बोली। फिर एकाएक ठिठक कर खड़ी हो गई, और नाराज़गी में भर कर चीख उठी

'हाय भगवान, तुम यहाँ कैसे?"

उसके इस तरह चौंक कर चीख उठने ने मुझे बड़ा प्रभावित किया, और साथ ही एक अजीब परेशानी का भी मैंने अनुभव किया। उसके चेहरे की समझदारी से भरी रेखाओं में भय और अचरज के भाव साफ दिखाई देते थे। मुझे समझने में देर नहीं लगी कि मुझे यहाँ, इस जगह में देख कर, वह आशंकित हो उठी है। मैंने तुरत सफाई देनी शुरू की कि मैं यहाँ नहीं रहता, योंही कभी-कभी इधर चला आता हूँ।

"कभी-कभी चला आता हूँ!" उसने व्यंग से मेरी बात
और तीखे स्वर में बोली "आखिर किसलिए? बोलो,
की जेब साफ करने के लिए या लड़कियों के जम्पर में
कर उनकी गुप्तनिधि की टोह लेने के लिए?'
चेहरा मुरझा गया था, होठों की ताज़गी विदा हो
और आँखों के नीचे काले घेरे पड़े थे।
खाने के दरवाज़े पर वह रुकी और बोली

'चलो, एक एक गिलास चाय पी ली जाए। कपड़े तो तुम साफ-सुथरे पहने हो, इस जगह में रहने वाले लोगों जैसे नहीं फिर भी, जाने क्या, तुम्हारी बात मानने को जी नहीं चाहता।'

कबेगारे के भीतर पाँव रखते न रखते सन्देह और अविश्वास की यह दीवार मुझे ढहती मालूम हुई जो उसके हृदय में अनायास ही मेरे प्रति खड़ी हो गई थी। गिलास में चाय उड़ेलने के बाद उसने मुझे बैठाया और सामने चाय से बनाना शुरू किया कि मुश्किल

से एक घंटा पहले ही वह सो कर उठी थी, और यह कि उसके पेट में अभी तक कुछ भी नहीं पड़ा है।

"पिछली रात जब मैं सोने के लिए अपने बिस्तर पर गई तो पूरी मवुवा बनी हुई थी। लेकिन यह याद नहीं पड़ता कि मैंने कहाँ और किसके साथ पी।"

उसे देख कर मुझे बड़ा दुःख हुआ, और उसकी मौजूदगी में एक तरह की बेचैनी का मैं अनुभव करने लगा। उसकी लड़की का हाल जानने के लिए मैं बेहद उत्सुक था। चाय और वोडका से कुछ गरमाने के बाद उसने अपनी उसी सहज चपलता और ढंग से बोलना शुरु किया जो इस जगह में रहने वाली सभी स्त्रियों की खासियत थी। लेकिन जब मैंने उसकी लड़की के बारे में पूछा तो वह तुरत गम्भीर हो गई और बोली:

"तुम्हें उससे मतलब? लेकिन यह मैं बताए देती हूँ, [illegible] तुम जिन्दगी-भर एड़ियाँ रगड़ो, मेरी लड़की पर कभी [illegible] डाल सकोगे, — समझे बचुवा!"

उसने एक और चुस्की ली, और फिर बोली:

"मेरी लड़की का अब मुझसे कोई वास्ता नहीं। [illegible] ओर आँख तक उठा कर नहीं देखती। और मेरी औकात [illegible] है? कपड़े धोने वाली, एक नीच धोबिन उस जैसी लड़की के लिए मैं भला कैसे माँ बन सकती हूँ? वह पढ़ी-लिखी और विद्वान है। और मेरे भाई, यह कोई मामूली बात नहीं है। सो उसने मुझे बता बताया और अपनी सहेली के पास चली गई। उसकी सहेली किसी बड़े घर की लड़की है, खूब पैसे वाली। मेरी लड़की उसके घर गवर्नेस्नी बन कर रहेगी।"

कुछ रुक कर उसने फिर धीमे स्वर में कहा:

"कपडे धोने वाली धोबिन को कोई नहीं पूछता। हाँ चलती-फिरती वेसवा की लोगो को तलाश रहती मालूम होती है।"

उसने ऐसी वेसवा का धधा अपना लिया है, यह मैं उसे देखते ही भाप गया था। इस वस्ती की सभी स्त्रियाँ यही धधा करती थी। लेकिन जब उसने खुद अपने मुह से यह बात कही तो मेरे हृदय पर गहरा आघात लगा और मेरी आखो में लज्जा तथा तरस के आँसू उमड आए। नतालिया के मुह से उस नतालिया के मुह से जो अभी पिछले दिनो तक एक साहसी, चतुर और अपने में आज़ाद स्त्री थी, यह सुन कर मैं स्तब्ध रह गया।

"मेरे नन्हे सैलानी," उसने एक लम्बी साँस भरी और एक नजर मुझे देखते हुए बोली।—"यह बस्ती तुम्हारे लायक नहीं है। मेरी सलाह है,—मै तुमसे विनती करती हू—भूल कर भी इस [illegible]में पाँव न रखना। नहीं तो यह तुम्हे चट कर जाएगी।"

[illegible]सके बाद मेज पर दोहरी होकर और अपनी उगली से [illegible] रेखाए खीचते हुए, धीमे और असम्बद्ध स्वर में, मानो [illegible]से ही वह कहने लगी

[illegible]कन मै कौन होती हू तुम्हें सलाह देने वाली? जिस [illegible] मैने अपनी छाती का दूध पिलाया, उसी ने जब मेरी [illegible]नहीं सुनी तो तुम्हीं क्या मानने लगे। मैं उससे कहती 'अपनी सगी माँ को तुम धता नहीं बता सकती, नहीं, तुम मुझे छोड कर नहीं जा सकती।' लेकिन वह जवाब देती 'मै गले में फदा डाल कर मर जाऊगी।' वह नहीं मानी, और कज़ान चली गई। उसे नर्स बनने की धुन थी। वह तो सैर कज़ान चली गई, लेकिन मै कहाँ जाती? मेरा जो हुआ, तुम्हारी आँखो के सामने है। सडक पर मै निकल आई, और राह चलत लोगो पर डोरे डालने लगी। उनके सिवा मेरा और कौन सहारा है?"

वह अब चुप बैठी थी, विचारों मे खोई-सी। उसके होंठ हिल रहे थे, लेकिन कोई आवाज़ नहीं कर रहे थे। उसे किसी बात की सुध नहीं थी, मेरी भी नही जो उसके सामने बैठा था। उसके होंठो के कोने झुक आए थे, और उसके मुंह की रेखा दूज के चाँद की भांति फैली थी, हंसिये जैसी गोलाई लिए। उसके हाथों में बल पड़ रहे थे, और उसके गालो की झुर्रियाँ थरथरा रही थीं। ऐसा मालूम होता था मानो वे मूक भाषा मे कुछ कह रही हों। देख कर मेरा हृदय कसमसा उठा। उसका चेहरा आहत् और बच्चों ऐसा भोलापन लिए था। बालों की एक लट गाल के नीचे निकल कर गाल पर उतर आई थी, और छल्ला-सा बनाती उसके नन्हे-मुन्ने कान के पीछे लौट गई थी। तभी आँख की कोर से ढुलक कर आँसू की एक बूंद ठंडी चाय के गिलास मे आ गिरी। यह देख उसने गिलास दूर खिसका दिया, अपनी आँखों को कस कर [illegible] और आँसू की बाकी दो बूंदें और निचोड़ते हुए गाल के [illegible] उन्हें पोंछ लिया।

मेरा हृदय बुरी तरह उमड़-घुमड़ रहा था। मै [illegible] अधिक नही बैठा रह सका। चुपचाप उठ खड़ा हुआ।

"अच्छा तो मै अब...।"

"जाते हो? जाओ, तुम भी जहन्नुम में जाओ!" उसने [illegible] और सिर उठाए बिना हाथ हिला-हिला कर मुझे दफ़ा करने लगी। शायद उसे अब यह भी सुध नहीं थी कि मै कौन हूँ।

अरकालियोन की खोज में मै फिर अहाते में लौट आया। उसके साथ तय हुआ था कि दोनों झींगा-मछली का शिकार करने चलेंगे। फिर मैं उसे नतालिया के बारे मे भी बताना चाहता था। लेकिन वह और बच्चा दोनों छत पर नहीं थे। कूड़ा-कबाड़ छितरे अहाते में मैं उन्हें खोज ही रहा था कि तभी कुछ हल्ला-गुल्ला

सुनाई दिया। यहाँ के लोगो में, नित्य की भांति, कोई झगडा उठ खडा हुआ था।

मैं लपक कर भागता हुआ फाटक के बाहर पहुँचा, और नतालिया से टकराते-टकराते बचा जो अंधो की भांति लुढकती-पुढकती पटरी पर चली आ रही थी। वह नाक से सुबक रही थी और उसका चेहरा बुरी तरह नोचा-खरोंचा हुआ था। एक हाथ में शाल का छोर थामे वह अपना चेहरा पोछ रही थी, और दूसरे हाथ से अपने उलझे हुए बालो को पीछे की ओर खिसका रही थी। उसके पीछे-पीछे अरदालियान और बच्चा चले आ रहे थे।

"अभी कसर रह गई," बच्चा चिल्ला कर कह रहा था, —"आओ, इसे थोडा मजा और चखा दें।"

अरदालियोन ने घूसा ताना, और वह घूम गई। उसका चेहरा [illegible] रहा था, और आँखो से घृणा की चिगारियाँ निकल रही [illegible]ला कर बोली

[illegible]ओ, मारो मुझे।"

[illegible] अरदालियोन का हाथ दबोच लिया। चकित नजर से उसने [illegible]ाला

[illegible]ा, तुम्हारे सिर पर यह क्या भूत सवार हुआ?"

"इसे हाथ न लगाना," मैंने अस्फुट स्वर में कहा।

वह खिलखिला कर हसा। बोला

"क्या तुम इसपर लट्टू हो गए हो? ओह नतालिया, खुदा बचाए तेरे हरजाईपन से, तूने इस बाल-ब्रह्मचारी को भी अपने जाल में फसा लिया!"

बच्चा भी फनफना कर खम ठोक रहा था। दोनो ने मिल कर मुझे कोचना और गालियाँ देना शुरू किया। नतालिया को मौका मिला, और वह खिसक गई। कुछ देर तक तो मैं उनकी गाली-गलौज

सुनता रहा। लेकिन जब बर्दाश्त से बाहर हो गया तो बच्चा की छाती मे मैने इतने जोर से सिर मारा कि वह गिर पड़ा। उसके गिरते ही मै नौ-दो ग्यारह हो गया।

इसके बाद, एक लम्बे अर्से तक, मैने लखपति बाजार का रुख नही किया। लेकिन अब्दालियोन से मेरी एक बार फिर भेंट हो गई, इस बार एक डोंगे पर।

"कहो, क्या हाल है?" उसने प्रसन्नता से चिल्ला कर कहा। —"इतने दिनो तक कहाँ गायब रहे?"

मैने उसे बताया कि जिस तरह उसने नतालिया को पीटा और मेरा अपमान किया, वह मुझे बडा बुरा मालूम हुआ और मेरा मन उससे फिर गया। यह सुन कर वह सहज प्रसन्नता से हंसा और बोला:

"क्या तुम समझते हो कि हम सचमुच मे तुम्हारा अप[illegible] करना चाहते थे? अरे नही, हम तो केवल तुम्हे चिढा[illegible] और जहाँ तक उसका सम्बध है, उसे मारना क्या गुनाह[illegible] मै[illegible] टकियल हरजाई के लिए इतना दर्द क्यो? अगर इन्स[illegible] बीवी को पीट सकता है तो फिर उस जैसी छिनाल कि[illegible] [illegible] मूली है। लेकिन छोडो यह सब। हम तो केवल मजाक [illegible] मार-पीट से कोई नहीं सुधरता, यह मै भी खूब जानता हूँ[illegible]

"लेकिन यह तो बताओ कि तुम उसका सुधार क्या [illegible] तुम खुद भी तो उससे अच्छे नहीं हो!"

उसने अपनी बाँह मेरे गले मे डाल दी और चाव से मुझे झंझोडा।

"यही तो मुसीबत है," उसने सुडकते हुए कहा,—"इस दुनिया मे कोई किसी से अच्छा नही है। मेरे भी आँखे है, भाई, सभी कुछ मै देखता हूँ। मुझे भीतर का भी सब हाल मालूम है, और बाहर का भी। मै निरा कोल्हू का बैल नहीं हूँ।"

वह नशे की तरंग में था, और मेरी ओर प्रेमभरी सहनशीलता से देख रहा था। उसकी आँखों में कुछ वैसा ही भाव था जैसा कि किसी सहृदय शिक्षक की आँखों में अपने कूड़-दिमाग शिष्य को पढ़ाते समय तैरता रहता है।

पावेल ओदिन्त्सोव से कभी-कभी मेरी मुलाकात हो जाती थी। हमेशा से ज्यादा उद्धाह उसमें नजर आता था, वह छैला बना घूमता था और बड़े-बूढ़े की तरह से मेरे साथ पेश आता। एक बार उसने शिक्षा-सी देते हुए कहा

"मेरी समझ में नहीं आता तुमने यह धंधा कैसे पसंद किया? मेरी बात गाँठ बाँध लो कि उन देहकानों के साथ काम करके तुम्हारे पल्ले कभी कुछ नहीं पड़ेगा।

[illegible] बाद उदास भाव से उसने वर्शिनाप के समाचार सुनाए [illegible] अभी भी उस घुन्मुट्टी के चक्कर में फँसा है। [illegible] हृदय में भी कोई घुन लग गया है, — वह अब जम्ह-[illegible] नशे में धुत्त रहता है। गागानव को भेड़िये चट कर [illegible] की छुट्टियों में वह घर गया था। वहाँ नशे में इतना [illegible] गया कि भेड़िये उसकी बोटी-बोटी चबा गए!"

अपनी इस कहानी पर पावेल खूब खिलखिला कर हँसा, फिर कल्पना की रास ढीली छोड़ते हुए बोला

"सच, भेड़िये उसकी बोटी-बोटी चबा गए। लेकिन उसने इतनी पी रखी थी कि खून की जगह उसकी नसों में शराब दौड़ रही थी। सो भेड़ियों को भी नशा हो गया और अपनी पिछली टाँगों पर खड़े होकर सरकस के कुत्तों की भाँति जंगल में नाचने तथा कुहराम मचाने लगे। वे इतने चीखे-चिल्लाए कि बेदम होकर गिर पड़े, और अगले दिन मरे हुए पाए गए!"